सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६३

(१ जून से २ नवम्बर, १९३६)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

प्रस्तुत खण्ड (१ जूनसे २ नवम्बर, १९३६) गाधीजी के ग्रामोद्धार-कार्यक्रममे प्रगतिके एक नये चरणको प्रतिबिम्बित करता है। गाधीजी अल्प कालके विश्रामके उपरान्त मसूर-स्थित नन्दी हिलसे लौटे तो दीन-दुखियोके बीच रहने और उन्हे जीनेका ढग सिखाने के लिए वर्धाके निकट सेगाँव नामक एक छोटे-से गावमें जा बसे, जिसकी आबादी मुश्किलसे ६०० थी (पृ० ४५०)। उन्होने देखा कि अज्ञान और जडतासे ग्रस्त "बेचारे गाँववालो को" यह चीज कोरे उपदेशोसे नही, बल्कि सेवा द्वारा और "व्यक्तिगत दृष्टान्त पेश" करके ही सिखाई जा सकती थी (पृ० ३७८)। वे यह सकल्प लेकर सेगाँव गये थे कि "चाहे प्राण भी क्यो न खतरेमें हो", वहाँसे हटना नही है (पृ० ३२२), और उन्होने इस सकल्पको पूरा करके दिखाया। कुछ लोगोको वे पहले ही वचन दे चुके थे, जिन्हे पूरा करने के लिए जूनके आरम्भमे दो सप्ताहके लिए और अक्तूबरके अन्तमे सप्ताह-भरके लिए उन्हे बाहर जाना पडा। शेष समय वे सेगाँवमे जमे रहे—युगो पुराने अज्ञान, रोग तथा अन्धविश्वासोसे लडते रहे, और एक गाँवको मनुष्यके रहने योग्य बनाने के लिए उनसे जो-कुछ बन पडा, वह करते रहे। उनके लिए "यह एक साधना" थी। इस नये और कठिन जीवनने उनके स्वास्थ्यको प्रभावित किया, और वे मलेरियासे ग्रस्त हो गये। अन्तमे यदि वे वर्धाके एक अस्पतालम दाखिल हुए तो इसलिए कि ऐसा न करने पर उनके "कुछ मित्रोके दिलको चोट" पहुँचती (पृ० ३२०)।

इस बीच यूरोपके सिर सकटके बादल मँडराने लगे थे। जुलाईमे स्पेनका गृहयुद्ध छिड चुका था और द्वितीय विश्वयुद्धका सामान जुटाया जाने लगा था। भारतमे भी काग्रेसके अन्दर एक समाजवादी दल गठित हो चुका था, जो वर्ग-सघर्षके माध्यमसे आर्थिक पुनर्निर्माणका कार्यक्रम लेकर सामने आया था। पिछले अप्रैल महीनेमे जवाहर-लाल नेहरूने काग्रेसका अध्यक्ष-पद सँभाला था। अब वे भी उक्त समाजवादियोके कार्यक्रमकी जोरदार हिमायत करने लगे। गाधीजी नेहरूकी नीतिके सामान्य लक्ष्योसे सहमत थे। उन्होने दो विदेशी अतिथियोको बताया, "वे जो वैज्ञानिक समाजवादकी बात कर रहे है उसके साथ मेरा कोई झगडा नही है। जिस प्रकारकी जिन्दगी आज वे सारे हिन्दुस्तानको जीते देखना चाहते है, मै उसी प्रकारका जीवन १९०६ से व्यतीत कर रहा हूँ" (पृ० २२५)। किन्तु भारतकी वास्तविक स्थितिकी अपनी समझ और

ग्रामाभिमुख अर्थव्यवस्था मे अपनी दृढ आस्थाके कारण गाधीजी उन सब चीजोका अनुमोदन नही कर पाये जिनकी हिमायत नेहरू करते जान पडते थे। उनके नाम एक पत्रमे अपना दृष्टिकोण समझाते हुए गाधीजी ने लिखा, "मेरी कठिनाई सुदूर भविष्यके बारेमे नही है। अगर वतमानको सँभाल लिया जाये तो भविष्य अपने-आप सँभल जायेगा" (पृ० १९६)। गाधीजी और जवाहरलालके दृष्टिकोणोके इस अन्तरके कारण दोनोके पारस्परिक स्नेहमे कोई कमी नही आई। समाचारपत्रोमे इस आशयकी एक खबर आई थी कि गाधीजी का कहना- है, नेहरूके कार्यक्रमने मेरे जीवन-भरके कार्यको नष्ट कर दिया है। इसका प्रतिवाद करते हुए गाधीजी ने इसे "सफेद झठ" बताया (पृ० २२४)। इसी प्रकार उन्होनें इस कथनका भी जोरदार खण्डन किया कि गाधी और नेहरू एक-दूसरेके प्रतिस्पर्धी हैं। उन्होने कहा "अगर हम एक-दूसरेके प्रतिस्पर्धी है भी तो हमारी प्रतिस्पर्धा एक ही ध्येयकी प्राप्ति के प्रयत्नमे लगे दो व्यक्तियोकी एक-दूसरेसे प्रेम करने की प्रतिस्पर्धा है" (पृ० १८१)।

गाधीजी की ही तरह काग्रेस-कार्यसमितिके कुछ सदस्योको भी जवाहरलाल नेहरू के समाजवाद-विषयक विचार स्वीकार्य नही थे। उन लोगोने कार्यसमितिसे त्यागपत्र दे दिये। इससे राष्ट्रीय राजनीतिमे एक छोटा-मोटा सकट पैदा हो गया। अन्तमे गाधीजी के ही हस्तक्षेपसे यह सकट टल सका। एक ओर तो उन्होने सदस्योको समझा-बुझाकर त्यागपत्र वापस लेनेपर राजी किया, और दूसरी ओर पारस्परिक स्नेह तथा विश्वासजनित स्पष्टवादितासे काम लेते हुए उन्होने जवाहरलाल नेहरूको बताया कि किस प्रकार वे लोग उनकी अधीरता और तुनक-मिजाजीसे घबराते थे। उन्होने लिखा "वे तुम्हारी झिडकियाँ और तुम्हारे हाकिमाना ढगके व्यवहारपर कुढते है, और सबसे अधिक इस बातसे कि उनके खयालसे तुम अपने-आपको अचूक और श्रेष्ठ ज्ञानवाला समझते हो।" यही कारण था कि गाधीजी के समझाने पर भी वे लोग जवाहरलालसे "साफ-साफ और निडर होकर बात" नही कर पा रहे थे (पृ० १५७)।

इसी प्रकार खादीके प्रश्नपर भी गाधीजी और नेहरूके मतभेदको काफी उछाला गया। खादीके सम्बन्धमे नेहरूकी बातोसे कुछ लोगोके मनमे ऐसी धारणा बन गई कि वे उसे कोई महत्त्व ही नही देते। गाधीजी ने इसे "झूठ-मूठका डर" बताकर इस विषयमे भी लोगोकी भ्राति दूर की। वस्तुत नेहरू ऐसा मानते थे कि "हमारे आजके कायक्रममे खादी एक महत्त्वकी चीज है" लेकिन वे यह नही स्वीकार करते थे कि "खादी हमारी गरीबीकी समस्याको अन्तत हल कर सकेगी।" वे "बडे-बडे कल-कारखानोके" पक्षमे थे, यद्यपि उन्हे दिखाई दे रहा था कि "औद्योगीकरणके विकासके साथ भी हिन्दुस्तानमे गृह-उद्योगोके प्रसारके लिए काफी गुजाइश रहेगी" (पृ० १७)। इसके विपरीत, गाधीजी की राय थी कि "भविष्यके बारेमे जितनी दूरतक हम सोच

सकते है, खादीकी प्रधानता रहेगी।" यह सच था कि खादी मिलके बने कपडेसे होड नही ले सकती, क्योकि "खुले बाजारमे तो एक ज्यादा सगठित उद्योग सदा ही अपनेसे कम सगठित उद्योगको खत्म कर सकता है ।" किन्तु शरीर-श्रमके स्थानपर शक्ति-चालित यन्त्रोको प्रतिष्ठित करना मनुष्यके लिए कितना हानिप्रद हो सकता है, इसका खयाल रखना भी जरूरी था। गाधीजी के ही शब्दोमे "गाँवोको तबाह करने का इससे अधिक चतुराई-भरा और लाभप्रद उपाय तो कोई चगेजखाँ भी नही निकाल सकता।" इस शोषकनीतिके फलस्वरूप ग्रामीण लोगोमे "कोई काम करने का, सोचने का, बल्कि जिन्दा रहने तकका उत्साह तेजीसे नष्ट होता जा रहा" था। "जिन्दा होते हुए भी वे मानो मृत" थे (पृ० ८६)। इसलिए खादी तथा ग्रामोद्योगोके माध्यमसे गाधीजी एक नये अर्थशास्त्रकी रचना कर रहे थे, क्योकि "देश-देशका अथशास्त्र अलग होता है गरीब और अमीरका अर्थशास्त्र भी अलग अलग होता है" (पृ० १०५)।

वर्तमानकी जिस दूसरी समस्याकी ओर गाधीजी ने विशेष ध्यान दिया, वह थी अस्पृश्यता-निवारणकी समस्या। यह तत्त्वत एक धार्मिक समस्या थी, किन्तु प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकडॉनाल्डके साम्प्रदायिक निर्णय (कॉम्युनल एवार्ड)ने उसे राजनीतिक रूप प्रदान कर दिया था (देखिए खण्ड ५१)। हिन्दुस्तानके विभिन्न "धर्मोके नेता हरिजनोको अपने-अपने धर्ममे मिलाने के लिए आपसमे प्रतिस्पर्धा करने" लग गये थे, और अम्बेडकर तथा कुछ अन्य लोग हरिजनोका सामूहिक धर्मान्तरण करके उन्हे शेष हिन्दू-समाजसे अलग कर देनेका प्रयत्न कर रहे थे। डॉ० मुजे-जैसे कुछ हिन्दू नेता इस धर्मान्तरणको समथन देनेको तैयार थे, बशर्ते कि हरिजन हिन्दू धर्म छोडकर किसी अन्य धर्मको नही, बल्कि सिंख धर्मको स्वीकार करे। मानो "हरिजन लोग मनुष्य नही, कोई माल-असबाब हो", इस तरह उनके धमको बदल देनेकी इस कूट-योजनापर गाधीजी ने गहरा दु ख व्यक्त किया, और इसमे लगे "स्वयभू नेताओ" से पूछा कि वे "हरिजनोकी धार्मिक स्वतन्त्रताका सौदा करनेवाले होते कौन है?" इस समस्याके मर्मको उद्घाटित करते हुए उन्होने लिखा कि इसे "राजनीतिक या आर्थिक" दृष्टिसे देखकर "वे तो धमके महत्त्वको घटा रहे है। उचित तो यह है कि खुद राजनीति और अन्य बातोका मूल्याकन धर्मकी दृष्टिसे हो" (पृ० २५४-५५)।

अम्बेडकरने अस्पृश्यताको लेकर हिन्दू-धर्म पर तीन आरोप लगाये थे—"हरिजनोके साथ निर्दयतापूण व्यवहार किया जाता है, निर्दयतापूर्ण व्यवहार करनेवाले अपने इस व्यवहारको निर्लज्जतापूवक उचित ठहराते है, और हिन्दुओके शास्त्रोमे इस प्रकारके निदय व्यवहारका समर्थन किया जाता है" (पृ० १४८)। गाधीजी ने इन

आरोपोको विशुद्ध धार्मिक दृष्टिकोणसे उचित माना। सच तो यह है कि काफी दिनो से गाधीजी स्वय ही यह अनुभव करते और कहते आ रहे थे कि "यदि अस्पृश्यता कायम रही तो हिन्दू-धर्म मिट जायेगा", बल्कि इससे भी आगे बढकर उन्होने कहा, "अगर मानवतापर लगा हुआ यह कलक दूर न हुआ तो इस धर्मको नष्ट ही हो जाना चाहिए" (पृ० ५६)। किन्तु वे जानते थे कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मका अग नही है। जिन धम-ग्रन्थोको अम्बेडकरने अपने आरोपोके समर्थनमे उद्धृत किया था उन्हे पूर्णत प्रामाणिक मानने से इनकार करते हुए गाधीजी ने कहा, "यथार्थत जो शास्त्र कहे जा सकते है उनका सम्बन्ध शाश्वत सत्योसे ही हो सकता है, और वे अन्तरात्मा, यानी ऐसे हर हृदयको स्पश करेगे जिसके ज्ञान-चक्षु खुल गये हो। ऐसी किसी बातको ईश्वरका वचन नही माना जा सकता जिसकी तर्क-बुद्धि द्वारा परीक्षा न हो सके या आध्यात्मिक रूपमे जिसका अनुभव न किया जा सकता हो।" गाधीजी का कहना था कि धर्मका आधार विद्वत्ता नही, वरन् "सन्तो और ऋषियोके अनुभव, उनके जीवन और उपदेश" होते है, और इसीलिए किसी धर्मकी अच्छाई-बुराईका "निर्णय उसके सबसे बुरे नमूनोसे नही, बल्कि उसके सर्वोत्तम नमूनोसे ही किया जा सकता है, क्योकि उस धमके सर्वोत्तम नमूनोको ही ऐसा आदर्श माना जा सकता है जिससे आगे न जा सके तो भी उसतक पहुँचने की आकाक्षा तो करनी ही चाहिए" (पृ० १६७-६८)।

गाधीजी ने सत्य और अहिंसाको हिन्दू-धर्मका सार बताया, किन्तु साथ ही उन्होने धर्मके क्षेत्रमे मानवीय आदर्शोसे युक्त सजीव प्रतीकोके महत्त्वको भी स्वीकार किया। उनका दृढ मत था कि "जो आदमी राम और कृष्णको ईश्वरके रूपमे नही मानता वह हिन्दू नही है।" स्वय गाधीजी उन "जीवत राम और कृष्ण" के उपासक थे "जो सत्य, शिव और पूर्णताके अवतार है", "जो आज मौजूद है, जो सदासे मौजूद रहे है, जो" मनुष्य के "अन्तरतमके विचारोको जानते है और" उसकी "गलतियोको हमेशा सुधारते रहते है" (पृ० ५०-५१)। इसलिए गाधीजी की दृष्टिम मन्दिरमे जाकर पूजा-उपासना करना कोई अन्धविश्वास नही था। उन्हे ऐसा अनुभव होता था कि "जो श्रद्धा लाखो मनुष्योको प्रेरित करके मन्दिरोमे ले जाती है, उसमे कही कोई पुनीत और सत्यका तत्त्व अवश्य विद्यमान है" (पृ० ४४)। इस प्रकार, उनके विचारसे, मन्दिर-प्रवेश अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनका आवश्यक अग था। वे उन लोगोसे सहमत नही थे जो मानते थे कि "सारी हरिजन-समस्या आखिर एक आर्थिक समस्या ही है" उनके विचारसे यह मुख्यत "हिन्दू-धर्ममे मौजूद एक रोगको दूर करने की समस्या" थी (पृ० ५०)। और यह रोग सारे मन्दिरोके द्वार हरिजनोके लिए खोल दिये जाने पर ही दूर हो सकता था।

हरिजनो तथा गरीबोकी सेवा गाधीजी के लिए ईश्वरकी खोजका ही अग थी। श्रमिकोकी एक सभामे बोलते हुए उन्होने कहा, "मेरा आनन्द तो एक ही बातमे है -- ईश्वर-दर्शनमे है। यह दर्शन गरीबोम ओतप्रोत होनेसे ही होगा। कगाल देशके गरीबोमे अगर मै ओतप्रोत हो जाऊँ तो सारी दुनियाके साथ ओतप्रोत हो सकता हूँ।" (पृ० ४४०)। मॉरिस फ्राइडमनको उन्होने बताया, "मनुष्यका अन्तिम उद्देश्य है ईश्वरका साक्षात्कार -- उसकी अनुभूति प्राप्त करना। उसके राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी कार्य इस अन्तिम उद्देश्य -- ईश्वरानुभूति -- को ध्यानमे रखकर ही सम्पादित होने चाहिए।" उन्होने आगे बताया, "और यह तो सबकी सेवा द्वारा ही हो सकता है।" दूसरी ओर सबकी सेवा अपने देशभाइयोकी सेवा द्वारा ही हो सकती है, क्योकि वे हमारे "सबसे नजदीकी पडोसी" है (पृ० २६१)। यही बात उन्होने एक साधुके सामने इन शब्दोमे रखी, "हम केवल परमात्माकी सृष्टिके उस भागकी सेवा कर सकते है जो हमारे सबसे अधिक नजदीक हो और जिसके विषयमे हमे अधिकसे-अधिक ज्ञान हो" (पृ० २५३)। स्वयको इस प्रकार सम्पूण रूपसे सेवार्पित कर देनेके लिए अपने अन्दर यह बोध जगाना वे आवश्यक मानते थे कि "जीव-मात्र अन्तमे एक ही है। अनेकता आभास-मात्र है। एकके दोषकी जिम्मेदारी हम सबपर आती है" (पृ० १२८-२९)।

स्वयको गरीबोसे एकाकार कर देनेकी आकाक्षा ही गाधीजी को खीचकर सेगाँव मे बसने ले गई थी -- ऐसे स्थानमे जो भारतीय गाँवोका एक सच्चा नमूना था, "जहाँ न डाकघर" था "न अच्छी भोजन-सामग्रीका भण्डार, न चिकित्सा-सुविधा, और जहाँ वर्षा-कालमे पहुँच सकना अत्यन्त कठिन" था (पृ० ७७)। फ्राइडमन यह मानने को तैयार नही थे कि "आध्यात्मिक उन्नतिके लिए असुविधा-भरे गन्दे जीवनसे एकरूप" होना आवश्यक है। उनका समाधान करते हुए गाधीजी ने कहा, "शारीरिक सुख और शान्ति एक हदतक" आवश्यक हो सकती है, लेकिन "शारीरिक जरूरतोको, बल्कि उसकी व्यक्तिगत बौद्धिक जरूरतोको भी एक हदतक पहुँचने के बाद रोकना ही चाहिए, नही तो वे शारीरिक तथा बौद्धिक विलासमे परिणत होने लग जायेगी", और मनुष्यकी सारी शक्तिके सेवामे नियोजित किये जानेके मार्गमे बाधक बन जायेगी (पृ० २६२)।

गाधीजी का विचार था कि आध्यात्मिक दृष्टिसे अगीकार की गई दीनजनोकी सेवाके लिए तथ्यो और तफसीलोका पूरा ध्यान रखना आवश्यक है, किसी भी सुधार के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि तद्विषयक तथ्योकी पूरी तसवीर सामने हो। इसलिए सेवकोको अतिशयोक्ति कभी नही करनी चाहिए (पृ० १२९)। एक पत्रके उत्तरमे उन्होने लिखा, "शाश्वत सत्योको ध्यानमे रखकर बारीकियोका विचार

करनेपर ही हम उन सत्योतक पहुँच सकते है। कमसे-कम मुझे तो जो-कुछ सत्यकी झाँकियाँ मिली है वे पूणत नही तो मुख्यत " सत्य और अहिसा तथा सेवाके "उस महत्तम उद्देश्यको सामने रखते हुए छोटी-छोटी बारीकियोपर ध्यान देनेसे ही मिली है" (पृ० १३८)। मीराबहनके रूपमे गाधीजी को एक ऐसी ही आदर्श सेविका प्राप्त हुई थी। उन्होने अपने लिए सेगॉवमे जो झोपडी बनाई थी वह "दरअसल और सच्चे अर्थमे उसकी झोपडी" थी—नक्शा और निर्माण, सब उनका अपना था। वह मात्र झोपडी नही, एक कविता थी। उसकी "एक-एक चीजमे ग्राम्य मनोवृत्तिकी सुदर झलक देखकर" गाधीजी की "आँखोमे आनन्दाश्रु भर आये" (पृ० १६५)। उन्होने हरिजन-सेवकोसे अपना काम इसी समर्पण-भावसे करने का आग्रह किया। उनको गाधीजी की सलाह थी कि वे हरिजनोके पास जाये और स्वय हर तरहसे सच्चे अर्थोमे हरिजन बन जाये—अर्थात् उनकी सेवा करे, उनके सुख-दु खको अपना सुख-दु ख बनाये (पृ० ५६), उन्हीकी तरह हर "सुबह झाडू, फावडा, टोकरी आदि लेकर" निकल पडे और "झाडने-बुहारने, पाखाना उठाने और उसे गाडने का सब काम" करे (पृ० १७७)। किन्तु नैतिक पवित्रता भी उतनी ही आवश्यक थी, क्योकि "चाहे जितना होशियार आदमी चरित्रहीन हो तो उसकी गन्दगीके छीटे सार्वजनिक जीवनपर तो पडते ही है" (पृ० ३१४)। गाधीजी मानते थे कि जब "हमारे पास" ऐसे "नि स्वाथ और धार्मिक भावना रखनेवाले कार्यकर्त्ता काफी" सख्यामे होगे तभी वह हृदय-परिवतन सम्भव होगा जो अस्पृश्यताको मिटाने के लिए आवश्यक है (पृ० १९७)।

जब हमे अपने बीच ईश्वरकी उपस्थितिकी अनभृति न होती हो तब उसमे विश्वास रखने का क्या मूल्य हो सकता है—इस प्रश्नका उत्तर उपनिषदोकी भाषामे देते हुए गाधीजी ने लिखा, "अपनी इन्द्रियो द्वारा तो हम उसे कभी नही पा सकते, क्योकि वह उनसे परे है। अगर हम चाहे तो उसका अनुभव अवश्य कर सकते है, पर इसके लिए हमे इन्द्रियोसे ऊपर उठना होगा।" उन्होने आगे कहा, "दैवी सगीत हमारे अन्दर हमेशा गूँजता रहता है । परन्तु इन्द्रियोके कोलाहल और हलचलमे वह नाजुक सगीत विलीन हो जाता है" (पृ० ६४-६५)। स्वय गाधीजी को आत्माके अस्तित्वका अनुभव प्रतिक्षण होता रहता था, और इसलिए उन्हे "कभी-कभी दिव्य सगीतकी गूँज भी सुनाई पड जाती" थी। उनका अनुभव था कि स्वय प्रयत्न करने पर इसे कोई भी सुन सकता है, किन्तु यह ऐसा सगीत नही है कि कोई और सुनवा सके" (पृ० १५२)। इतने ही विश्वासपूर्वक गाधीजी यह भी मानते थे कि "अहिसा ही हमारे जीवनका आदि स्रोत और अन्तिम लक्ष्य है। अगर अहिसा या प्रेम हमारा जीवन-धर्म न होता तो इस मृत्यु-लोकमे हमारा जीवन कठिन हो जाता।

जिस दिन उसका आचरण सार्वभौम हो जायेगा, उस दिन स्वर्ग लोक इस भूमिपर ही अवतीण हो जायेगा।" गाधीजी मानते थे कि "स्वर्ग और पृथ्वी सब हमारे ही अन्दर है।" लेकिन दु खकी बात यह है कि "हम पृथ्वीसे तो परिचित है, पर अपने अन्दरके स्वगसे हम बिलकुल अपरिचित है।" किन्तु यदि कुछ लोगोके लिए स्वर्गको भूमिपर उतारना, प्रेमका आचरण करना सम्भव है, तो वास्तवमे वह सबके लिए सम्भव होना चाहिए। लेकिन इस प्रेम-धमको वे ऐसा धर्म नही मानते थे "जिसे दलीलसे सिद्ध किया जा सके।" उनका कहना था कि "यह तो उन लोगोके प्रत्यक्ष जीवनसे सिद्ध हो सकता है जो परिणामोकी ओरसे निरपेक्ष बनकर इस धर्मका अपने जीवनमे पालन करते है" (पृ० ३४८-४९)।

गुजराती साहित्य परिषद्के अध्यक्षके आसनसे बोलते हुए गाधीजी ने साहित्यकारो को जनसाधारणके प्रति उनके कत्तव्यका स्मरण कराया। सेगाँव और वहाँके अस्थि-पजरोका ध्यान आनेपर उन्हे बरबस यह स्वीकार करना पडा कि हमारा "साहित्य निकम्मा है" वे ऐसा साहित्य और ऐसी कला चाहते थे जो करोडो आम लोगोके लिए हो (पृ० ४४९)। सस्ते और वासनामय साहित्यके प्रति अपना विरोध प्रकट करते हुए उन्होने कहा कि "जब आप स्त्रीके बारेमे लिखने के लिए कलम उठाये तो अपनी जननीको अपनी नजरके सामने रखे। यदि आप इस बातका विचार करते हुए लिखेगे तो आपकी लेखनीसे जो साहित्य निकलेगा, वह जैसे सुन्दर आकाशसे वर्षाकी बूदे झरती है, उसी तरह नि सृत होगा और जैसे वर्षाकी बूँदे धरतीका पोषण करती है उसी प्रकार वह भी स्त्री-रूपी धरतीका पोषण करेगा" (पृ० ४५४)। गाधीजी के अनुसार, लेखन-मात्र एक कला नही था, उसके पीछे ईमान-दारीका होना जरूरी था। एक व्यक्तिने 'हरिजन' मे प्रकाशनार्थ कुछ लेख भेजे थे। उसे उत्तर देते हुए उन्होने लिखा, "सदात्मा व्यक्तियोका सीधा-सादा लेखन प्रभाव-कारी होता है, जबकि केवल चतुर व्यक्तियोका प्रतिभाशाली लेखन भी प्रभावहीन सिद्ध होता है। लगता है, लेखक या वक्ताका अपना ओज शब्दोमे उतर आता है" (पृ० १९३)।

गत मई महीनेमे गाधीजी के मित्र डॉ० अन्सारीका निधन हो गया था। कुछ ही दिन बाद ९ जूनको उनके एक अन्य मुसलमान मित्र अब्बास तैयबजी का भी देहान्त हो गया, जो "कोई साधारण मुसलमान नही थे", जो "भारत-सेवक भी इसीलिए थे कि वे मनुष्य-जातिके सेवक थे", तथा जो "ईश्वरको दरिद्रनारायणके रूपमे' देखते थे (पृ० ८४-८५)। लगभग इसी समय एक और भी व्यक्तिगत व्यथा ने गाधीजी की परीक्षा ली। उनके ज्येष्ठ पुत्र हरिलालने इस्लाम स्वीकार कर लिया था। गाधीजी को स्वय इस धर्मान्तिरणका कोई दु ख नही था। यदि "किसी सासारिक

स्वार्थसे उसका कोई वास्ता न होता तो" उनका "उससे कोई झगडा नही" होता, क्योकि उन्हे विश्वास था कि "इस्लाम भी वैसा ही सच्चा धर्म है जैसाकि मेरा अपना धर्म है।" गाधीजी को चोट यह देखकर पहुँची थी कि कुछ मुसलमानोने इस प्रसगपर किस प्रकार सावजनिक रूपसे आनन्दोत्सव मनाया था। "इस प्रदर्शनके पीछे" गाधीजी को कही "कोई धर्मकी भावना" दिखाई नही दी (पृ० ६-७)। उन्होने अपनी इस व्यथाको वाणी देते हुए "मुसलमानोके नाम जो पत्र लिखा वह", गाधीजी के ही शब्दोमे, अपने "हृदयरक्त-रूपी स्याहीमे डुबोई हुई कलमसे लिखा" था (पृ० ५३)। एक मुसलमान मित्रको लिखा, "धर्म और इस दुखी देशकी खातिर इस विचित्र स्थितिपर तुम गौर करो, उसमे रुचि लो" (पृ० २६)।

ईसाई मिशनरियोकी एक मडलीके साथ हुई चर्चाके दौरान गाधीजी ने धर्मान्तरणके सम्बन्धम अपना दृष्टिकोण सक्षेपमे इन शब्दोमे प्रस्तुत किया, "आप अपनी माताको पूजती है, इसलिए आप यह इच्छा नही कर सकती कि दूसरे लोग भी आपकी माताकी सन्तान हो जाये" (पृ० १००)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी है

सस्थाएँ गाधी स्मारक निधि तथा सग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली, साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय, अहमदाबाद।

व्यक्ति श्री ए० के० सेन, कलकत्ता, श्री बी० डी० म्हात्रे, बम्बई, श्री चन्द त्यागी, दिल्ली, श्रीमती एफ० मेरी बार, कोट्टागिरि, श्रीमती गगाबहन वैद्य, बोचासण, श्री घ० दा० बिडला, कलकत्ता, श्री जी० एन० कानिटकर, श्री जी० वी० केतकर, श्री काशिनाथ एन० केलकर, पूना, श्री कान्तिलाल गाधी, बम्बई, श्री कनुभाई एन० मशरूवाला, अकोला, श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई, श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया, श्री मुन्नालाल जी० शाह, सेवाग्राम, श्री नारायण देसाई, बारडोली, श्री नारायण जे० सम्पत, अहमदाबाद, श्रीमती शारदाबहन जी० चोखावाला, अहमदाबाद, श्रीमती प्रेमाबहन कटक, सासवड, श्री पुरुषोत्तम बावीशी, श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, मद्रास, तथा श्रीमती विजयाबहन एम० पचोली, सनोसरा।

पुस्तकें 'बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० 'गगाबहेनने', '(ए) बच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'गाधीजी और राजस्थान', 'गीतापदार्थकोष', 'इसीडेंट्स ऑफ गाधीजीज़ लाइफ', 'महात्मा द लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गाधी', खण्ड – ४, 'माई डियर चाइल्ड', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद' एव 'सम्पादकके पच्चीस वर्ष'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'गुजराती', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'सर्चलाइट', 'हरिजन', 'हरिजनसेवक', 'हरिजनबन्धु' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालय का अनुसन्धान और सन्दर्भ-विभाग, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इडिया), नई दिल्ली, और कागज-पत्रोकी फोटो-नकल तैयार करने मे सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण-मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गाधीजी के स्वाक्षरोमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोकी स्पष्ट भूलोको सुधारकर दिया गया है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करने मे अनुवादको मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूले सुधारने के बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमे प्रयुक्त शब्दोके सक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजी ने अपने गुजराती लेखोमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजी के कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषण और भेटकी रिपोर्टोके उन अशोमे, जो गाधीजी के नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमे की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वषके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहा किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान लगाया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खण्डका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है, वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१ भाषण बंगलोरकी नगरपालिका बस्तीमें[1]

[३१ मई, १९३६ के पश्चात्][2]

पिछले दिनो मुझे कोलारके स्वर्ण-क्षेत्रके मजदूरोकी झोपडिया दिखाने ले जाया गया। उन्हे देखकर मुझे बरबस कहना पडा कि ये मनुष्यके रहने लायक नही है। खान-कम्पनी ३० से ४० प्रतिशतका लाभाश घोषित करे और कम्पनीके साझेदारोके लिए इतना लाभ कमाकर देनेवाले लोगोको गन्दी ओर टूटी-फूटी झोपडियोमे रखा जाये, यह तो मुझे सरासर क्रूरता लगी। यहाँ आपने जो झोपडिया बनाई है वे बेशक उनसे अच्छी है। वे हवादार भी है ओर ठीक जगह बनी हुई है। लेकिन अविवाहित लोगो तथा विवाहित जोडो ओर जिन विवाहित जोडोके पास बच्चे भी हो, उनकी अलग-अलग आवश्यकताओको ध्यानमे रखकर झोपडियोको एक न्यूनतम स्तरके मुताबिक बनाना चाहिए। हमे यह समझना चाहिए कि पति-पत्नीको बच्चोके साथ एक ही कमरेमे नही रहना चाहिए। इन झोपडियोमे किसीको एकान्त-जैसी कोई चीज नही मिल सकती। नगरपालिकाएँ अपने गरीब कर्मचारियोको फुटोमे नापकर घरके लिए जमीन दे, यह बात तो मेरी समझमे नही आती। इनमे से प्रत्येक झोपडीमे एक और कमरा तथा एक बरामदा होना नितान्त आवश्यक है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप हरिजन-कर्मचारियोको भी ये सुविधाएँ देने का इरादा रखते है लेकिन जब उनके लिए घर बनवाने लगे तो कृपया इस सुझावको ध्यानमे रखे। मुझे दुःखके साथ यह कहना पडता है कि अब भी ऐसी अनेक नगरपालिकाएँ है जिन्होने अपने सबसे कम वेतन पानेवाले कर्मचारियोको ये सुविधाएँ नही दी है। पता नही, अपने सबसे आवश्यक सेवकोके प्रति अपने कर्त्तव्यका भान हमे कब होगा। अगर हम ऐसा नही करते तो शीघ्र ही हमारे समाजका नाश हो जायेगा और जो समाज अपने दोष दूर नही करता, उसका नाश तो होना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-७-१९३६

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। यह भाषण गाधीजी ने उस समय दिया था जब वे नगरपालिका द्वारा अपने कर्मचारियोके लिए बनाये गये २५० घरोकी एक बस्ती देखने गये थे।

२ भाषणमें कोलारके स्वर्ण क्षेत्रके उल्लेखसे स्पष्ट है कि गांधीजी यहाँ ३१ मई, १९३६ के बाद गये थे। देखिए खण्ड ६२।

२. तार : दिल्ली हिन्दू सभाके मन्त्रीको[1]

१ जून, १९३६

हिन्दू सभा
मार्फत कालिया, दिल्ली

धन्यवाद। इस तरह की मार्गभ्रष्टताकी उससे अधिक चिन्ता नहीं करनी चाहिए जितनी धर्मको उसमें निहित सभी दोषोंसे मुक्त करने के लिए जो जरूरी हो।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३. पत्र : मीराबहनको

बंगलोर सिटी
१ जून, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा ३० मईका पत्र मेरे सामने है। मुझे खुशी है कि तुम निरन्तर प्रगति कर रही हो। अगर तुम बराबर अपने शरीरमें कुछ शक्ति बचाकर रखोगी तो मलेरियासे बची रहोगी।

हाँ, कलका दिन बहुत थकानेवाला था। फिर भी मुझे कोई नुकसान नहीं हुआ। सरदारको रास्तेमें तेज जुकाम हो गया, और आज भी ठीक नहीं हुआ है। लड़के-लड़कियाँ सोनेकी खाने देखने के लिए पीछे रह गये। आज लौटेंगे। दाहिना हाथ खूब काम देता रहा है। इसलिए मैं उसे आराम दे रहा हूँ।

गुजराती पत्रोंमें हरिलालकी करतूतोंकी[2] खूब चर्चा है।

१ यह निम्नलिखित तारके उत्तरमें दिया गया था "हरिलालके धर्मान्तरणसे हिन्दुओंको गहरा आघात लगा है। कृपया बतायें कि हम भटके हुए भाईको कैसे रास्ते पर लायें।"

२ उन्होंने इस्लाम धर्म अपना लिया था और अपना नाम अब्दुल्ला रख लिया था।

अगर तुम स्थानीय शिमलेमे[1] रहोगी, तो वहाँ सम्पर्कका कोई स्थानीय साधन भी होना ही है। और मुझे आकर्षित करने के लिए दोनो स्थानोके तापमानोमें अन्तर भी होना जरूरी है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१० से भी

४. पत्र . सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१ जून, १९३६

प्रिय सतीश बाबू,

आपने तो मुझे अपने स्वास्थ्यका सन्तोषजनक विवरण लिख भेजा है, पर प्यारेलालका कुछ और ही कहना है। वह कहता है कि आपका हृदय कमजोर है और आप बराबर अपनी शक्तिसे अधिक काम करते रहते है। मै चाहता हूँ कि आप इस बातको समझ ले कि शरीरके साथ ऐसा दुर्व्यवहार निश्चित रूपसे पाप है।

आप जिस अकालके सिलसिलेमे काम कर रहे है वह क्या वही है जिसके सम्बन्धमे प्रफुल्ल बाबू काम कर रहे है, या कोई और?

प्रत्येक प्रदर्शनीके बाद पीछे कोई स्थायी चीज छोड जाने के बारेमे मुझे कई अडचने दिखती है। हमे कभी भी ऐसी जमीन नही मिलती जहाँ कोई पक्की इमारत बन सके। फिर, यह भी जरूरी है कि [स्थानीय][2] लोगोमे ऐसी इच्छा हो जिससे वे उसकी कीमत चुका सके और उसे अच्छी हालतमे रख सके। हम अगली काग्रेस ठेठ देहातमे करेगे। आपका सुझाव क्या है? कितनी कम लागतमे प्रबन्ध हो सकता है? आपको पता है कि लखनऊकी [प्रदशनी][3] अन्तत स्वावलम्बी सिद्ध हुई।

हम लोग बगलोर सिटीसे सम्भवत इसी १२ तारीखको रवाना होगे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६३०) से।

१ तात्पर्य मीराबहनके लिए बरोडामें, जिसे गांधीजी ने अपने एक पिछले पत्र (खण्ड ६२, पृ० ४९६)में "नाममात्र की पहाड़ी"की सज्ञा दी थी, बननेवाली झोंपड़ी से है।

२ और ३ साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है।

५. पत्र : अमृतकौरको

१ जून, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

हम कल ही नीचे आये और काम चालू हो गया। हमने कल दिन-भर स्वर्ण-क्षेत्रका दौरा किया, हजार रुपयेसे ऊपर हरिजन-कोषके लिए इकट्ठा किया, ओर रात दस बजेके बाद जब लौटे तब ज्यादा थकान नही थी।

नन्दी हिलकी अपेक्षा बगलोरमे कुछ गर्मी है। ओर नन्दी हिलकी स्फूर्तिदायक हवा और शान्तिके बाद कोई जगह नही भाती। मेरे लिए तो जो आकषण वहाँ है वह किसी और पवतीय स्थलपर नही। मैने एक लम्बी आहके साथ नन्दी छोडा। सरदार तो लगभग पस्त हो गये है। वे टहलने के लिए भी बाहर नही गये। मै तो रोजकी तरह घटा-भर घूम आया। नि सन्देह बगलोरका मोसम आजकलके दिनोमे सुखद ही होता है। बात सिर्फ इतनी है कि हमारी आदत तो नन्दीने बिगाड दी।

मुझे खुशी है कि तुम फिरसे कातने लग गई हो।

हॉ, तुम्हारा लिफाफा अच्छा है पर तुमको उनके लिए इतनी भारी कीमत नही चुकानी चाहिए। यह काम तो घरके किसी ऐसे व्यक्तिको करना चाहिए जिसके पास घटे-भरका खाली वक्त हो, या उनको देना चाहिए जो मेहनतका आना-दो-आना कमा सके तो शुक्र मानेगे।

तुम निराशाका अनुभव क्यो करती हो? दिन-भरमे जितना कर सको उसी पर पूरा सन्तोष क्यो नही मानती? अगर तुम किसी बातमे लापरवाही करो तो बेशक अपने पर क्रोध करो, पर जब तुम्हारे पास समय ही न हो, तब तुम क्या कर सकती हो?

तुमने पढा होगा कि हरिलालने इस्लाम अपना लिया है। उसको तो कुछ सनसनी चाहिए और चाहिए धन। उसे दोनो मिल गये है। मै सोच रहा हूँ, मुसलमान मित्रोके नाम एक आम पत्र[1] लिखू्। देखता हूँ, क्या बन पाता है। बेचारी बा और बेचारा कान्ति[2] दोनो ही बहुत उद्विग्न थे।

सप्रेम,

तानाशाह

१ देखिए "वक्तव्य समाचारपत्रोंको", २-६-१९३६।
२ हरिलाल गांधीके पुत्र।

[पुनश्च]

कामकाजके व्यवस्थित नियमो पर न चलने की हमारी आदतोके बारेमें तुम्हारा मत ठीक ही है। जिनमे यह दोष दिखे उनकी खबर लेना।

श्री राजकुमारी अमृतकौर
मैनर विले
शिमला प०

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२९) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८८५ से भी

६ पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१ जून, १९३६

चि० नरहरि,

तुम सब खूब अच्छे होकर वापस आ चुके होगे। मणिबहनको[1] कैसा लगता रहा? क्या अब वह बिलकुल चगी हो गई है? वनमाला[2] और मोहनका[3] शरीर कुछ सुधरा? सब लोग खूब घूमते थे न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९४) से।

७. पत्र : हीरालाल शर्माको

१ जून, १९३६

चि० शर्मा,

१२ मइका तुमारा खत कल रातको बगलुर पहोचने पर मिला। अब तो खुर्जा पहूचे होगे। प्रकृति अच्छी होगी। मै वर्धा १५ तारीखको अवश्य पहोचूगा। तब आ जाना। दरम्यान मुझे बगलोर सिटी[4] लिखो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २५१ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१, २ और ३ नरहरि भाईकी पत्नी, पुत्री और पुत्र।
४ मूलमें ये दो शब्द अंग्रेजी लिपिमें है।

८. वक्तव्य : समाचारपत्रोको[1]

बगलोर
२ जून, १९३६

अखबारोमें खबर छपी है कि करीब पन्द्रह दिन हुए, मेरे सबसे बडे लडके हरिलालने, जिसकी उम्र इस समय लगभग ५० सालकी है, इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया है और गत शुक्रवार, २९ मईको बम्बईकी जुम्मा मसजिदमे एक भारी मजमेमे उससे तुमुल हर्षध्वनिके बीच इस्लाम ग्रहण करने की घोषणा कराई गई। उसका भाषण खत्म होने पर उसके प्रशसकोने उसे चारो तरफसे घेर लिया, और उससे हाथ मिलाने के लिए आपसमें वे सब होडा-होडी करने लगे। अगर उसका यह धर्म-परिवतन शुद्ध हृदयसे होता, और किसी सासारिक स्वार्थसे उसका कोई वास्ता न होता, तो मुझे उससे कोई झगडा नही था, क्योकि मेरा विश्वास है कि इस्लाम भी वैसा ही सच्चा धर्म है जैसाकि मेरा अपना धर्म है।

मगर यह धर्म-परिवर्तन शुद्ध हृदयसे किया गया है, और इसके पीछे किसी तरहका कोई स्वार्थ नही है, इस बारेमे मुझे बहुत गहरा सन्देह है। मेरे पुत्र हरिलालको जो लोग जानते है, उन्हे यह मालूम है कि उसे बरसोसे शराब पीनेकी लत लगी हुई है और वह वेश्यालयोमे जाता रहा है। कुछ सालोसे वह उन मित्रोके दानपर जिन्दगी बसर कर रहा है, जिन्होने उसकी अत्यन्त खुले दिलसे मदद की है। वह कुछ पठानोका कर्जदार भी है, जिनसे उसने ऊँचे सूद पर रुपया लिया है। अभी कुछ ही दिन पहले तक जिस बम्बईमें अपने पठान ऋणदाताओके कारण उसे अपनी जानतक का डर था, आज उसी बम्बई शहरमे वह महापुरुष माना जा रहा है। उसकी पत्नी अत्यन्त पतिभक्त थी। उसने उसके अनेक पापोको, और उसकी बेवफाई तकको हमेशा माफ किया। इसकी तीन सयानी सन्तानें है——दो लडकियाँ और एक लडका, जिनके भरण-पोषणका भार वह बहुत पहले ही छोड चुका है।

कुछ ही सप्ताह पहले उसने अखबारोमें हिन्दुओके——न कि हिन्दू-धर्मके——विरुद्ध शिकायत लिखी थी, और यह धमकी दी थी कि या तो वह ईसाई हो जायेगा या मुसलमान। उसके उस पत्रकी भाषासे यह साफ मालूम होता था कि वह सबसे ऊँची बोली बोलनेवाले धर्मकी ओर जायेगा। उस पत्रका जो मशा था वह पूरा हुआ। एक हिन्दू पार्षदकी कृपासे नागपुर-नगरपालिकामे उसे एक नौकरी मिल गई। इसके

१ "टु माई न्यूमरस मुस्लिम फ्रेंड्स" (अपने अनेक मुसलमान मित्रोंसे निवेदन) शीर्षकसे **हरिजन**में प्रकाशित यह वक्तव्य अखबारोंके लिए २ जून, १९३६ को जारी किया गया था।

बाद उसने एक दूसरा पत्र[1] अखबारोमे छपवाया, जिसमे उसने पहले पत्रको वापस लेते हुए अपने पूर्वजोके धर्मके प्रति अगाध श्रद्धा प्रकट की।

मगर घटना-चक्रने साबित कर दिया कि उसकी अर्थ-तृष्णा अभी शान्त नही हुई है, और उसे शान्त करने के लिए उसने अब इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया है। उसकी कुछ और भी बाते मै जानता हूँ, जिनसे मेरे इस निष्कर्षकी पुष्टि होती है।

अभी अप्रैलके महीनेमे जब मै नागपुरमे था, वह मुझसे और अपनी माँ से मिलने आया था। उसने हमे बताया था कि भिन्न-भिन्न प्रतियोगी धर्मोके प्रचारक उसके साथ जैसा खुशामद-भरा व्यवहार कर रहे है वह सब देखकर उसे बडी हँसी आती है। ईश्वर क्या चमत्कार नही कर सकता? कौन नही जानता कि उसने क्षण-भरमे पत्थर-जैसे दिलोको मोम कर दिया है, और बडे-बडे पापियोको भी, मानो पल-भरमें, साधु-हृदय बना दिया है? इससे ज्यादा और किसी बातसे मुझे खुशी न होगी कि हमारी नागपुरकी मुलाकात और शुक्रवारकी इस घोषणाके बीच हरिलालने अपने पहलेके जीवन पर पश्चात्ताप किया है, और शराब और व्यभिचारको सदाके लिए छोडकर उसने अब अपनेको एकदम बदल डाला है।

मगर अखबारोमे जो खबरे आई है उनसे ऐसी कोई बात मालूम नही होती। उसे अब भी विलासिता और बढिया रहन-सहनमे मजा आता है। अगर वह बदल गया होता, तो मेरे चित्तकी प्रसन्नताके लिए वह जरूर पत्र लिखता। मेरे सभी पुत्रोको विचार और कार्यकी अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता रही है। उन्हे सिखाया गया है कि वे अपने धर्मकी जितनी इज्जत करते है उतनी ही इज्जत दूसरे धर्मोकी भी करे। हरिलालको मालूम था कि अगर वह मुझे बताता कि सच्चे जीवन और शान्तिकी कुजी उसने इस्लाममे प्राप्त कर ली है, तो मै उसके रास्तेमें किसी भी तरहकी बाधा न डालता। मगर हममे से किसीको भी, उसके पुत्र तकको, जिसकी उम्र इस समय २४ सालकी है और जो मेरे साथ रहता है, अखबार देखने से पहले इस बातकी कोई खबर नही थी।

मेरे पुत्रके मुसलमान बनने से जो मुस्लिम भाई फूले नही समाते वे अच्छी तरह जानते है कि इस्लामके सम्बन्धमे मेरे क्या विचार है। एक मुसलमान भाईने मुझे यह तार भेजा है

> **उम्मीद करता हूँ कि आप भी एक सत्यशोधक होने के नाते अपने बेटेकी ही तरह इस्लाम कबूल कर लेंगे, जो दुनियाका सबसे सच्चा धर्म है।**

मुझे मानना पडेगा कि इन सब बातोसे मुझे चोट पहुँची है। इस प्रदर्शनके पीछे मै कोई धर्मकी भावना नही पाता। मुझे लगता है कि उन लोगोने, जो हरिलालको मुसलमान बनाने के जिम्मेवार है, इस तरहके मामलेमें अपेक्षित मामूलीसे-मामूली एहतियातसे भी काम नही लिया।

१ इसपर गांधीजीकी टिप्पणीके लिए देखिए खण्ड ६२, पृ० २३५।

अगर हरिलाल, जैसा कि मुझे अदेशा है, पहलेकी ही तरह पतित जीवन बिताता रहता है तो उसके धर्म-परिवर्तनसे हिन्दू-धर्मकी कोई हानि नही हुई है और उसका इस्लाम-ग्रहण करना इस्लामको कमजोर ही बनायेगा।

निश्चय ही, धर्म-परिवर्तन मनुष्य और उसके सिरजनहारके बीचका मामला है। केवल परमात्मा ही अपने बच्चोके हृदयको जानता है। हृदय अगर शुद्ध नही है तो धर्म-परिवतनका अर्थ, मेरी रायमे, ईश्वर और धमसे इनकार करना है। हृदयकी शुद्धिके बिना धर्म-परिवर्तनसे ईश्वर-भीरु मनुष्यको दुख ही होता है, आनन्द नही।

मै जो ये चन्द पक्तियाँ अपने असख्य मुस्लिम मित्रोको सम्बोधित करके लिख रहा हूँ उसका प्रयोजन यह है कि वे हरिलालको उसके निकट-अतीतके जीवनके आधार पर परखे और अगर वे देखे कि उसका धर्म-परिवर्तन आत्मशून्य है और उसमे सचाई नही है तो उससे वे साफ-साफ वैसा कह दे और उसे हरगिज न अपनाये। अगर उन्हे उसमे ईमानदारी दिखाई दे, तो उन्हे चाहिए कि उसे सासारिक प्रलोभनोसे बचाये, ताकि अपनी ईमानदारीके कारण वह समाजका एक ईश्वर-भीरु सदस्य बन जाये। उन्हे मालूम होना चाहिए कि हदसे ज्यादा भोग-विलासमे फँसे रहने के कारण उसकी विवेक-बुद्धि मारी गई है, और वह सही और गलतमे, सत्य और असत्यमे भेद नही कर सकता। अगर वह एक नामकी जगह दूसरा नाम अपनाने से ईश्वरका एक सच्चा भक्त बन जाता है, तो मुझे इसकी चिन्ता नही कि लोग उसे हरिलाल कहे या अब्दुल्ला, क्योकि दोनो नामोका अर्थ ईश्वरभक्त ही है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ६-६-१९३६

९ पत्र : जमनालाल बजाजको

२ जून, १९३६

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

जुहूमे ठीक आराम मिलता हो—कसरत करते हो और खुराकका नियम-पालन करते हो तो मुझे सन्तोष है। पेडूके लिए पट्टी जरूरी ही है। तो भी डाक्टरकी सलाह लेनी हो तो लेना।

मै वर्धा १५ तारीखको पहुँचूँगा। मदालसाने[1] दो पक्तियाँ लिखकर ठीक बेगार टाली है। वहाँ जाकर वजन बढाया हो और मानसिक व्यथा समुद्रमे डाल दी हो तो भले ही पत्र न लिखे।

१ जमनालाल बजाजकी पुत्री।

ओम[1] कहाँ है? श्रीमन्का हिन्दी काव्य-सग्रह[2] तो मेरे पास है ही। मै थोडा लिख भेजूगा। हरिलालके बारेमे पढा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८२) से।

१० पत्र . परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२ जून, १९३६

भाई परीक्षितलाल,

साथका पत्र[3] तुम्हारी जानकारीके लिए है। मैने उन्हे लिख दिया है कि अपने सुझाव तुम्हारे सामने रखे और अगर बापा भडोच जाये तो उनके सामने भी रखे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

हम १३ तक यही रहेगे।

इस पत्रका यह अर्थ नही है कि तुम्हे इस व्यक्तिको रख लेना है। मै तो उसे पहचानता ही नही हूँ। यह जवाबदेही तुम्हारी ही है। जगजीवनदासको इसी हदतक जवाब दिया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३९) से।

११ पत्र : अबुल कलाम आजादको

[२ जून, १९३६के पश्चात्][4]

प्रिय मौलाना साहब,

यदि आप सलग्न कागज पढ चुके है तो मै चाहूँगा कि आप उसमे उठाई गई बातो पर अपनी सुविचारित राय दे। क्या इस तरहका धर्मान्तरण इस्लाममे न्यायसगत माना गया है? इसके लिए जो तरीका अपनाया गया है, क्या वह वैध

१ जमनालाल बजाजकी पुत्री।

२ रोटीका राग, देखिए "पत्र श्रीमन्नारायण अग्रवालको", १३ ७ १९३६।

३ यह उपलब्ध नही है।

४ देखिए "वक्तव्य समाचारपत्रोंको", २ ६ १९३६।

है ? इस प्रकरणको जिस तरह प्रचारित किया जा रहा है, क्या वह उचित या सहन करने योग्य है ? अपनी सम्मति आप स्वय प्रकाशित करवायेगे या मुझे इसकी अनुमति देगे ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१२. पत्र अमृतकौरको

४ जून, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम नामजद नही की गई[1], इसके लिए मै तुम्हे बधाई देता हूँ। तुम्हारे सिर पर जितनी जिम्मेदारियाँ है उनमे से कुछ स्वय छूट जाये, तो इसमे लाभ ही है।

जहाँतक वाई० एम० सी० ए० का सम्बन्ध है, पूरी जानकारी पाये बिना मै कोई मत व्यक्त नही करूँगा।

तुम्हारे लिए हाथीदाँतके सामान आज मैने स्वय चुन लिये है। दुकानवाले तुम्हे सामान भेज देगे, साथ ही बीजक भी। अगर चुनाव अच्छा नही है या सामान तुम्हारी रुचिके अनुकूल नही है तो अपनेको ही दोष दे लेना कि ऐसे अनभिज्ञ आदमीको यह काम सौपा। अपनी राय बेहिचक जताना। ठीक पता दे दिया गया है।

बगलोरमे भी मौसम ठडा ही है।

मैने मुसलमान मित्रोके नाम एक काफी लम्बा पत्र लिखा है। मै देखता हूँ कि यहाँके अखबार समूचा पत्र छापनेसे घबराते है। यदि कही नही छपा तो तुमको भेज दूंगा।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३८५ से भी

१ जालंधर नगरपालिकाके लिए।

१३ पत्र : अमृतकौरको

५ जून, १९३६

मूर्खा रानी,

तुम्हारा १ तारीखका पत्र अभी आया है। "खाली बोतलो" की आवश्यकता सम्भवत मगनवाडीसे अधिक सेगाँवमे है। किन्तु सेगाँवसे पहले मै जिस प्रकार मगनवाडीमे रहता था, वह स्थिति सेगाँवमे रहने लगने के कारण बदली नही है। मै सेगाँव मे रहते हुए भी उसी प्रकार मगनवाडीमे हूँ। पर तुम बोतले पाने के लिए कोई खास प्रयत्न मत करना। तुम्हारे पास जो फालतू बोतलें हो उन्हे आते समय अपने साथ लेती आना। उस्तरोको चाकूकी तरह इस्तेमाल नही किया जाता, उनसे हजामत ही की जाती है। आओगी तब चाकूके नमूने देखना। हाँ, मै चाहे जहाँ भी होऊँ, तुम्हारे वाल्टेयर जाते और लौटते समय दोनो बार यहाँ एक कोना तुम्हे रहने को मिल जायेगा।

आत्म-प्रशसा भी कोई प्रशसा है! और जब कोई हमेशा यह दावा करे कि वह किसीके दबावमे नही आ सकती, तो सुननेवाले के मनमें कुछ शक तो हो जायेगा। जे० के अनुसार तुम एक ऐसी व्यवस्थाकी अग हो जिसका आधार ही जबरदस्ती है। इसलिए तुम किसी की जबरदस्ती स्वीकार न करने का दावा जितना कम करो उतना ही अच्छा!!

खेसको वापस तुम्हे लौटाना तो महा-महा मूर्खता थी। क्या लेस भी तुम्हे मिल गई। बेचारे जेराजाणीने मुझे अपने उस पत्रकी प्रति भेजी है जिसमे उसने अपने आदमियोको लेस तुम्हे और खेस मुझे भेजने को लिखा था। यह तो अच्छा मूर्खताका चक्कर चला। कही यह छूत तुमसे तो नही आई है? खैर, भेजनेवाले को प्रतिवादका कडा पत्र लिखो। और उसे भेजने पर पैसे मत खर्च करना, अपने साथ लेती आना। आज्ञा अवश्य मानना।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७७) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३८६ से भी

१४. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

बगलोर
५ जून, १९३६

प्रिय सर मिर्जा,

पत्रके लिए बहुत धन्यवाद। उसे पढकर आपसे यह कहने की हिम्मत कर रहा हूँ कि आप निम्नलिखित बाते महाविभवके समक्ष प्रस्तुत कर दे।

मुझे मालूम हुआ है कि दरबार लगता है तो हरिजनोको उसमे भी शामिल नही होने दिया जाता। इस प्रतिबन्धके लिए हिन्दू-धममे मुझे कही कोई औचित्य दिखाई नही देता। अगर राहत देने के रास्तेमे उचित और जिसका कोई निराकरण नही किया जा सके ऐसी बाधा न हो तो आशा करता हूँ यह प्रतिबन्ध हटा दिया जायेगा।

मै तो आपसे यह निवेदन ही करूँगा कि जिन शर्तोपर सवण हिन्दुओके लिए मदिरोके द्वार खुले हुए है उन्ही शर्तोपर हरिजनोके लिए भी राज्यके सभी मन्दिरोके द्वार खोल देना आवश्यक है।

मुझे आशा है, हमारे बगलोरसे रवाना होने से पहले हमारी मुलाकात हो पायेगी। मै इस महीनेकी १२ तारीखको चलने की उम्मीद रखता हूँ।

हमारा जितना आतिथ्य-सत्कार हो रहा है उसके लिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य: प्यारेलाल

१५. पत्र : नारणदास गांधीको

५ जून, १९३६

चि० नारणदास,

कनुसे बात करने के विचारसे आज तक तुम्हारा पत्र दबाये रखा। कल पर्याप्त बातचीत हो गई। फिलहाल तो उसकी इच्छा मुझसे दूर रहने की नही होती। पडितजी[1] से खूब सगीत सीख लेने की इच्छा तो है ही। फिर भी विशेष इच्छा यही है कि मेरे पास रहकर जो सीखा जा सकता है सो सीखे। मैंने तो उसे अभयदान दे दिया है कि जब उसका मन मेरे पास रहने से भर जाये या पडितजी अथवा किसी दूसरेसे कोई खास चीज सीखना चाहे तो मै उसे खुशीसे छोड दूगा। मेरी समझमे अभी तो इतना ही काफी है। मै देखता तो रहूँगा ही।

उसका मन स्वच्छ है किन्तु किशोर ही ठहरा, कितनी ही बार मन उद्वेगसे भर जाता है, किन्तु वह होता है क्षणिक। इसका कोई खास कारण होता हो सो नही है। उसकी-सी उम्रमे क्या हम सबको ऐसा ही कुछ नही होता?

शालाके विषयमे मेरी यह राय पक्की होती जा रही है कि अगर वह स्वावलम्बी न हो सके तो हमारी प्रवृत्ति उसे बन्द करने की बननी चाहिए। स्वावलम्बी न होने का यह अर्थ निकलेगा कि हम उसे स्वार्थवश चला रहे है। हम तो यह मानते है कि ज्ञान जिज्ञासुको ही दिया जाना चाहिए। अवश्य ही अगर हमारे पास ऐसे विद्यार्थी हो जो ज्ञान पाना तो चाहते है किन्तु खर्च नही निकाल सकते तो उनके लिए दान मॉगना ठीक है। किन्तु अगर ऐसे जिज्ञासु मिले और वे उत्साहके साथ हमारे विचारोके अनुसार चले तो वे आर्थिक दृष्टिसे एक वषमे अपना पूरा खच निकाल सकते है। अमेरिकामे तो ऐसी बहुत-सी सस्थाएँ चलती है। इनमे विद्यार्थी प्रवेश लेने के बादसे ही अपने खानेकी व्यवस्था के लिए योग्य शरीरश्रम करते है और साथ-साथ ज्ञानोपार्जन भी करते है। इस विचार-विमशको तुम पत्र द्वारा चलाये रखना चाहो तो वैसा करना।

कनुने यह पत्र देखा। वह कहता है पडितजी से सगीत सीखने की तीव्र इच्छावाली बात भी सही नही है। अगर उसे अहमदाबाद जानेका आदेश ही दे दिया जाये तो वह शायद शकरराव[2] व्यासके पास गाधर्व विद्यालयमे सगीत सीखने लगे। किन्तु ऐसा करने की उसकी इच्छा है, यह नही कहा जा सकता। उसकी तो एक ही इच्छा

१ नारायण मोरेश्वर खरे।

२ साधन-सूत्रमें शकरलाल है, जो भूल है।

है — मेरे पास रहना और जो मै कहूँ, सो करते रहना। आज उसके मनकी हालत ऐसी है। मेरी देखरेख रहेगी। उसे लेकर कोई चिन्ता करना जरूरी नही है। उसने तुम्हे लम्बा पत्र लिखा है।

हरिलालके बारेमे समाचारपत्रोको लिख भेजा है, मगर प्रकाशित अभी कुछ नही हुआ है। प्रकाशित होगा, ऐसा मानकर यहाँ नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

वहाँकी कताईकी प्रगति उच्छी कही जायेगी। सरदारके बारेमे उनसे बात करूगा। सधे तो वह यहाँ आ ही जाये।

गुजरातीकी माइक्रोफिलम (एम० एम० यू०/३) से। सी० डब्ल्यू० ८४९२ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१६ पत्र : गगाबहन वैद्यको

५ जून, १९३६

चि० गगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। बच्चूभाईके[1] विषयमे पढकर दुख हुआ। जबतक वे खाट पर पडे है तुम उन्हे छोड नही सकती। जुगतरामसे[2] कहना कि किसी होमियोपैथी जाननेवाले की सलाह ले। मेरी तो इसपर श्रद्धा नही है किन्तु इससे देवदासको लाभ हुआ था, और यहाँ एक कुशल डाक्टर[3] मिला था, उसने भी इस पद्धतिकी बडी तारीफ की। नुकसान तो उससे कुछ होता ही नही है, शायद फायदा हो जाये।

कुसुमका पत्र वापस भेज रहा हूँ। वह बोचासण जाये तो बहुत अच्छा। लीलावती आयेगी तो मै उसे अवश्य प्रोत्साहित करूँगा। वर्धा पहुँचकर उससे बात करूँगा। अमतुस्सलाम वर्धामे नही है। वह तो दिल्लीमे ही है और उसके जल्दी दिल्ली छोडने की बात भी नही है। अगर वह तुम्हारे पास आये तो जरूर बडी मदद पहुँचा सकती है। उसे भी इससे लाभ होगा। उसे दिल्लीके पतेपर लिखना। वह गुजराती पढ लेती है। पता है हरिजन निवास, किंग्जवे, दिल्ली।

१ गगाबहन वैद्यका भांजा।

२ बम्बईके एक प्रसिद्ध वैद्य।

३ कैप्टेन सी० कमन, जो ग्रेस मेडिकल मिशनमें चिकित्सा विशेषज्ञ थे।

मै जब गुजरात आऊँ तो मुझसे जरूर मिलना। वक्त निकाल लूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ९०-१। सी० डब्ल्यू० ८८३१ से भी, सौजन्य गंगाबहन वैद्य

१७. पत्र : हीरालाल शर्माको

५ जून, १९३६

चि० शर्मा,

तुमको एक खत भेजा सो मिला होगा। तुमारा तार यहा मिला। उस वखत तुमने वर्धा तो पास ही किया होगा।

अमतुलसलाम दिल्ली मे बीमार है। वहा जाओ, तुमारे नये ज्ञानका प्रयोग करो और बाद मे जब आ सको वर्धा आ जाओ।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

वर्धा १४ को पहूचेगे।

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २५२ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१८. पत्र : अमतुस्सलामको

बगलोर सिटी
५ जून, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा खत मिला।

तेरे सामने मेरी कुछ चल सकती है? तबीयत खराब हो तो मेरे पास क्यो नही आती? वहाँ खराब तबीयतमे क्यो पडी है? शर्माको तो लिखा ही है, वह अब खुर्जा पहुँच गया है।[1]

वहाँकी खुराकके बारेमे समझा। फिलहाल तो सूचना करने लायक कुछ सूझता नही है। जो खाना चाहिए वह तू अगर नही खायेगी, तो मुझे बडा दुःख होगा।

१ देखिए पिछला शीर्षक।

वहाँ रहनेवाले लडकोसे एक बार खत लिखवा, फिर मैं लिखने लगूगा। उनके नाम, ज्ञान वगैरह भी जानू तो अच्छा होगा।

सुकीर्ति कहाँ गई?

हम १४को वर्धा पहुँचेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१७) से।

१९ पत्र. राजेन्द्रप्रसादको

५ जून, १९३६

भाई राजेन्द्र बाबु,

साथ का खत पीयेर सेरेसोलको[1] पहुचा दो। तुमारा खत मैंने देखा था। जवाहरलाल के उत्तर की नकल तो मिली होगी। इस वखत हमारे बहुत-सी बाते और स्पष्ट करनी होगी।

तुमारा शरीर अच्छा रहता होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७५) से, सोजन्य राजेन्द्रप्रसाद

२० कुष्ठ-रोगकी समस्या

वर्धा तहसीलमे काफी कुष्ठ-रोगी है। ग्राम-सेवकोका बहुधा उनसे सम्पर्क पडता है। सेवकोका क्या कर्त्तव्य है? क्या वे बेखटके कुष्ठ-रोगियोसे मिले-जुले? वे कैसे इन अभागे लोगोकी सहायता करे? क्या इस रोगका कोई इलाज है? गम्भीर ग्राम-सेवकोके सामने इस प्रकारके रोजमर्राके प्रश्न उठते ही रहते है। इसलिए मैंने रेव० डोनाल्ड मिलरसे, जिन्हे मै पुरुलिया कुष्ठाश्रमके कुष्ठ-रोगियोके बीच काम करनेवाले एक महान् कार्यकर्त्ताके रूपमे और वैसे भी वर्षोसे जानता हूँ, सहायता माँगी और कहा कि वे ग्राम-सेवकोके लिए कुछ सरल निर्देश दे। उन्होने खुशीसे ऐसा करना स्वीकार कर लिया, और उसका परिणाम है एक पत्र-माला, जो उन्होने एक

१ इंटरनेशनल वॉलंटरी सर्विसके अध्यक्ष और स्विस शांतिवादी, जो बिहारमें सहायता कार्य करने के उद्देश्यसे भारत आये थे।

काल्पनिक ग्रामसेवकके नाम लिखी है। इस पत्र-मालाका पहला पत्र नीचे दिया जा रहा है।[१]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-६-१९३६

२१. झूठमूठका डर

जब मैंने अखबारमे एक खबर देखी — जो उस अखबारके ही अनुसार हालमे पण्डित जवाहरलाल नेहरूने बम्बईमे खादी-भण्डारका निरीक्षण करते समय खादीके बारेमे जो कहा था — उसका सक्षिप्त विवरण था, तो उसपर मै विश्वास नही कर सका। खादीके सम्बन्धमे उनकी जो पुख्ता राय मै समझता था, उससे तो उस विवरणमे केही बाते मुझे बिलकुल उलटी मालूम हुई। इसलिए मैंने वह कतरन पण्डितजी के पास भेज दी,[२] और उन्होने फौरन उसका यह जवाब भेजा

> बम्बईमे मै दर्जनो सभाओमें — मुझे सख्या याद नही — गया और वहाँ बोला था और मेरे पास भाषणोकी रिपोर्टें देखनेका समय नही था। बेशक, मै हिन्दुस्तानीमें ही बोला था, और उसकी रिपोर्ट लेना कोई आसान काम नही था। फिर, जो रिपोर्टें सक्षेपमें दी जाती है उनसे तो गलतफहमी पैदा होने की और भी गुजाइश होती है। फिर भी खादी पर मैंने जो कहा था उसकी रिपोर्ट मुझे जब दिखाई गई, तब मैंने उसी दिन या दूसरे दिन इस भ्रमका निराकरण कर दिया। मैंने जो कहा था वह यह था कि आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि कई कारणोसे हमारे आजके कार्यक्रममें खादी एक महत्त्वकी चीज है, और उसे जरूर प्रोत्साहन मिलना चाहिए। मगर मेरा खयाल यह नहीं है कि खादी हमारी गरीबीकी समस्याको अन्तत हल कर सकेगी, खासकर अगर समाजका मौजूदा ढाँचा बना रहा। किसान जो भी सुधार करता है, जो भी अतिरिक्त पैसा कमाता है, वह सब इस प्रणालीकी बदौलत जमींदारके पास चला जाता है। मगर मैंने यह भी बता दिया था कि यह सैद्धान्तिक दलील आजकी हालत पर लागू नहीं होती। मैंने कहा था कि हालाँकि मै बडे-बडे कल-कारखानोके पक्षमें हूँ, तो भी मेरा विश्वास है कि औद्योगीकरणके विकासके साथ भी हिन्दुस्तानमें गृह-उद्योगोके प्रसारके लिए काफी गुजाइश रहेगी। इसमें तो शक नही कि आज अनेक दृष्टियोसे इन गृह-उद्योगोका और भी ज्यादा महत्त्व है।

१ पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। यह पत्र और इस पत्र मालाके अगले चार पत्र **हरिजन**में प्रकाशित हुए थे, और बादमें **द लेप्रासीं प्रॉब्लम** (कुष्ठकी समस्या) शीर्षकसे एक पुस्तिकाके रूपमें भी प्रकाशित किये गये थे।

२ देखिए खण्ड ६२, पृ० ४५७-५८।

सम्भव है कि खादीके हकमे पूरा पूरा सरक्षण चाहनेवालो को इससे सन्तोष न हो। पर अखबारोमे छपी उस गलत रिपोर्ट और इस स्पष्टीकरणमे बहुत अन्तर है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओके भाषणोकी ऐसी गलत रिपोर्टें छपना तो उनके नसीबमे ही लिखा है — और खासकर हिन्दुस्तानमे, जहाँ कि उन्हे किसी ऐसी हिन्दुस्तानी जबानमे बोलना पडता है जिसे रिपोर्टर लोग हमेशा ठीक-ठीक समझ नही पाते और अखबारोमे तार द्वारा भेजने के लिए जिसका अनुवाद उन्हे हमेशा अग्रेजीमे करना पडता है। इसका मतलब यह है कि महत्त्वपूर्ण मामलोमे नेताओके इस तरहके तथाकथित वक्तव्यो पर सहसा विश्वास कर लेने के बजाय लोगोको प्रामाणिक सूचनाकी प्रतीक्षा करनी चाहिए।

इस सम्बन्धमे मेरे पास जो पत्र आये है, उनसे मालूम होता है कि इस रिपोटने कुछ खादी-कार्यकर्त्ताओमे भारी बेचैनी पैदा कर दी है। मै चाहता हूँ कि मै उन्हे सावधान कर दू। यह सौभाग्यकी बात है कि पण्डित जवाहरलाल ने दरअसल जो-कुछ कहा है वह तमाम व्यावहारिक प्रयोजनोके लिए सन्तोषजनक है। वे इतने भले है कि अगर किसी चीजमे उनका खुदका विश्वास नही होता तो किसीको खुश करने के लिए उसके पक्षमे वे एक शब्द भी नही कहते है। इसलिए उनके पत्रका जो उद्धरण मैने ऊपर दिया है उसका वजन इस बातसे और भी बढ जाता है कि काग्रेसके कर्णधारकी राय खादीके पक्षमे है। मगर खादी कार्यकर्त्ताओको यह मालूम होना चाहिए कि काग्रेसके बाहर ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक कायकर्त्ता है, जो खादीकी बुराई करते है और उसे कभी छूने तकके लिए तैयार नही है। उन्हे इस बातका भी पता होना चाहिए कि खुद काग्रेसमे भी कुछ ऐसे लोग है जिनका खादीमे विश्वास नही है, जो हमेशा उसका मजाक उड़ाते रहते है, और जबतक वे काग्रेसके कार्यक्रममे से उसे निकाल देनेमे सफल नही होते तबतक वे उसका उपयोग महज अनुशासनकी दृष्टिसे कर रहे है। इन सब रुकावटोके होते हुए भी खादीने प्रगति की है। इसमे सन्देह नही कि अगर हमे ऐसे विरोधोका सामना न करना पडता तो खादीने इससे कही अधिक प्रगति की होती। यह बडी तसल्लीकी बात है कि पण्डित जवाहरलाल खादीमे इतना भी विश्वास रखते हैं। पर अगर वे खादीके बारेमे और अध्ययन करने पर यह कह देना जरूरी समझे कि वे खादीके विरुद्ध है, तो उस वक्त खादी-कार्यकर्त्ताओको क्या करना चाहिए? मुझे आशा है कि इन १६ वर्षोंके खादीके अनुभव और उसकी सम्भावनाओके ज्ञानके बाद हमारे पास खादीमे दृढ विश्वास रखने-वाले ऐसे लोग काफी सख्यामे तैयार हो गये हैं जिनकी खादीके प्रति श्रद्धा खादीके अमलके उनके खुदके ज्ञान पर आधारित है। अगर अब भी उनकी श्रद्धा दूसरोसे ग्रहण की हुई है, तो उस महान् पत्रकारकी भविष्यवाणी सच ही निकलेगी कि गाधीकी मृत्युके साथ ही खादीका भी खातमा हो जायेगा और ये चरखे मृत्युके उपरान्त तोडफोड दिये जायेंगे, और वे उसकी मृत देहका अच्छी तरह दाह-सस्कार करने को काफी होगे।

झूठमूठके डरसे पैदा हुई यह दिलकी कमजोरी अगर खादी-कार्यकर्त्ताओकी दुर्बल श्रद्धाका चिह्न है तो यह एक अपशकुन है। मै तो उन्हे यह राय दूँगा कि वे अपनी

खुदकी स्थितिको जाँचे और अगर खादीके महान् आर्थिक महत्त्वके बारेमे उन्हे सन्देह हो तो अपने विचारोमे उचित सशोधन कर डाले। इस खयालसे कि उनकी इस जाँचमे कुछ मदद मिले, मैं सोचता हूँ कि अगर हो सका तो अगले अकमे[1] हिन्दुस्तानके लिए विभिन्न दृष्टिकोणोसे खादीके महत्त्व पर मैं अपने विचार प्रकट करूँगा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ६-६-१९३६

२२. गाँवमें भारतकी झलक

पूर्व खानदेशमे फैजपुर गाँवके पास खिरडी नामक एक अन्य गाँवमे काग्रेसका आगामी अधिवेशन करने का महाराष्ट्र प्रान्तीय काग्रेस कमेटीने जो निश्चय किया है उसके लिए मै उसे बधाई देता हूँ। योजना अगर ठीक तरहसे तैयार की गई और तैयारियाँ पहलेसे शुरू हो गईं तो हर साल इस राष्ट्रीय समारोहपर जितना पैसा खर्च होता है उससे कम ही खर्चमे स्वागत-समिति काग्रेस-अधिवेशनको अधिक सुन्दर और शानदार बना सकेगी। इसके लिए जिन शर्तोका पालन जरूरी है वे स्पष्ट है। स्वागत-समितिका ध्येय गाँवमे शहर बसाने का नही होना चाहिए। ऐसा करना तो [देहातमे काग्रेस अधिवेशन करने की] सारी कल्पनाके साथ हिंसा करना होगा। हमे यह आशा करनी चाहिए कि काग्रेस-अधिवेशनमे वहाँ शहरोके हजारो आदमी इकट्ठे होगे। कोई आदर्श गाँव उनकी जिस प्रकारकी पहुनई कर सकता है उस प्रकारकी पहुनई करने का ध्येय होना चाहिए। इसे हम यो भी कह सकते है कि अगले दिसम्बरमे खिरडी गाँवमे ग्रामीण भारतका छोटा-सा रूप नजर आना चाहिए। अगर विचारपूवक योजना बनाई गई तो सयोजकगण देखेगे कि एक आदर्श गाँवमे आरोग्यतापूर्ण सुविधाएँ, उपयुक्त भोजन और सफाईकी ठीक व्यवस्था और कोई बीमार पडे तो उसकी दवा-दारूका ठीक-ठीक इन्तजाम आदि बातोकी सचमुच कोई कमी नही हो सकती। ये सुविधाए आज सभी गाँवोमे नही मिल सकती। इसीसे मैने यहाँ "आदर्श गाँव" शब्दोका प्रयोग किया है। आरोग्यपूर्ण जीवनके लिए जो बाते जरूरी है उनकी कमी आदर्श गाँवमे होनी ही नही चाहिए। मगर गाँवके अन्दर हरएक सुविधा गाँवके स्तरकी ही होनी है। गाँव की सुविधाका मतलब कभी भी घटियापन नही होता, लेकिन साथ ही उसमे तडक-भडक भी नही होनी चाहिए। रोशनीके लिए मै बिजलीकी बत्तियोकी सलाह दूँगा, हालाँकि हमारे गाँवोमे बिजलीकी सुविधा होने मे अभी बहुत समय लगेगा। कुल मिलाकर सारा काम ऐसा होना चाहिए जिससे शहरके लोगो और देहातियो, दोनोको पदार्थ-पाठ मिले। काग्रेसके अधिवेशनमे आकर्षणकी मुख्य चीज तो प्रदर्शनी ही होगी। लखनऊ-काग्रेसमे जो प्रदर्शनी हुई थी वह निस्सन्देह अपनी तरहकी पहली ही प्रदर्शनी थी। इस बातको ध्यानमे रखते हुए मानना पडेगा कि वह निस्सन्देह

१ देखिए "क्या खादी आर्थिक दृष्टिसे टिक सकती है?", २०-६-१९३६।

काफी सफल रही। आगामी प्रदर्शनीमें उससे भी अधिक सफलता मिलनी चाहिए, फिर भी जहाँतक मै सोच सकता हूँ, उसपर उतना पैसा खर्च करने की जरूरत नही जितना कि लखनऊकी प्रदर्शनीपर किया गया था। प्रदर्शनीको सफल बनाने के लिए कलाविदो, इजीनियरो और इसी तरहके दूसरे पेशेवालोको और भी बडे पैमानेपर स्वेच्छासे अपनी सेवाएँ मुफ्त देनी होगी। उन्हे इस कामके लिए, जो मेरी दृष्टिमे एक पवित्र काम है, ग्राम-मूलक दृष्टि लेकर आगे आना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ६-६-१९३६

२३. अप्रमाणित खादीके विक्रेताओके लिए

दुर्भाग्यसे पता चला है कि अखिल भारतीय चरखा सघ द्वारा कतैयोके वेतनमे की गई वृद्धि और फलस्वरूप खादीके कुछ विशेष प्रकारके कपडोके मूल्यमे हुई मामूली बढोतरीके कारण कितने ही अनधिकारी खादी-विक्रेता अपनी खादीको अ० भा० च० स० द्वारा प्रमाणित जताकर बेच रहे है। उनमे से कुछ तो अपने इस राष्ट्र-विरोधी और अमानवीय कार्यको ठीक बताने मे भी नही हिचकते और कहते है कि अ० भा० च० स० कोई पजीकृत सस्था नही है।[1] इस विषयमे वास्तविक कानूनी स्थिति क्या है, इसे जानने की गरजसे अपने पुराने कानूनी ज्ञानका भरोसा न करके श्री राज-गोपालाचारीने एक अग्रगण्य वकीलसे सलाह माँगी। उन वकील महोदयने इस प्रश्नपर अपनी जो पुख्ता राय दी वह निम्न प्रकार है

> मुझे कोई सन्देह नहीं है कि तिरुपुरके व्यापारीको कानूनके विषयमें गलत सलाह मिली है। ऐसे मामलेमें कानून अपजीकृत सस्थाओका भी उतना ही सरक्षण करता है जितना पजीकृत सस्थाओका। अपने को, जो नहीं है, वह बतानेके लिए किसी अपजीकृत नामका उपयोग करना जनताके साथ उतना ही बडा धोखा है जितना पजीकृत नामका अनधिकृत प्रयोग करना। यह सच है कि किसी कानूनके अन्तर्गत पजीकरण कराने के कानूनी परिणाम होते है और कानूनी सरक्षण मिलता है, परन्तु जहाँतक जनताको धोखाधडीसे बचाने का सवाल है, कानूनकी निगाहमें पजीकृत या अपजीकृत नामोमें कोई अन्तर नहीं है। यह तो प्रत्यक्षत बडी बेतुकी दलील है कि चूँकि कोई नाम पजीकृत नही है इसलिए कोई भी व्यक्ति उसी नामको धारण करके मालको अ० भा० च० स० द्वारा प्रमाणित कहकर बाजारमें बेचे। निषेधाज्ञा और क्षतिपूर्तिके लिए मुकदमा दायर किया जा सकता है। निषेधाज्ञा तो मिल जायेगी, परन्तु क्षतिपूर्तिके लिए यह

1. देखिए खण्ड ६२, पृ० ३४१ ४२।

सिद्ध करना होगा कि ग्राहकोंने सामानको ऐसा मानते हुए खरीदा कि वह अ० भा० च० स० द्वारा तैयार या प्रमाणित किया गया है।

यदि प्रमाणो-सहित औपचारिक कानूनी सलाहकी आवश्यकता हो, तो मैं वह जल्दी ही तैयार करवा दूँगा।

(ह०) टी० आर० वी० शास्त्री

ऊटी, २३ मई, '३६

ये नामी वकील और कोई नहीं मद्रासके भूतपूर्व ऐडवोकेट-जनरल श्री टी० आर० वेंकटराम शास्त्रियार है। आशा करता हूँ, अ० भा० च० स० द्वारा प्रमाणित बताकर वास्तवमें अनधिकृत तौरपर खादी बेचनेवाले व्यापारी श्री शास्त्रियारकी इस रायको ध्यानमें रखते हुए अपने इस व्यापारको, जिसे धोखाधडी बताया गया है, बन्द कर देंगे। हालाँकि मैं अदालतोंमें जाने के विरुद्ध हूँ, लेकिन यदि बेचारी बेजबान कत्तिनोंके हितमें आवश्यक हुआ, तो मैं यह सलाह देने में नहीं हिचकूँगा कि गरीब बहनोंको जान-बूझकर हानि पहुँचानेवाले लोगोंके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-६-१९३६

२४. पत्र : लीलावती आसरको

[६][1] जून, १९३६

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। मीराबहनकी खूब सेवा करना। अगर तू प्रेमाबहनसे मिल आती, तो ठीक होता। शक्तिसे बाहर कुछ मत करना। बातें मत करना, काममें ही लगी रहना। बिना कामके कुछ मत बोलना। सेगाँव तो उतना ही सामान ले गई होगी जितनेकी जरूरत रही होगी।

आशा है, तेरा शरीर अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४३) से। सी० डब्ल्यू० ६६१८ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१ साधन सूत्रमें अस्पष्ट है। जान पड़ता है कि यह वही पत्र है जिसका उल्लेख ६ जून, १९३६ को मीराबहनको लिखे पत्रमें किया गया है। देखिए अगला शीर्षक।

२५. पत्र : मीराबहनको

६ जून, १९३६

चि० मीरा,

मुझे एक ही डाकसे तुम्हारी तीन चिट्ठियाँ मिली।

देवकपास के बीज बगाल और अन्य स्थानोसे मँगवाये जा सकते है। मै सतीश बाबूको लिख रहा हूँ।

मुझे वर्धासे पाखानेकी तिपाई और पेशाबका बर्तन या चौकी लाने का विचार पसन्द नही है। कमोडके बजाय एक तिपाईके बीचमे छेद करके आधा पीपा या बाल्टी या ऐसी ही और कोई चीज रख दी जाये। पेशाबके लिए कोई बोतल या देहाती धातुका बर्तन काममे ले सकते है और चौकीके लिए कोई सेगाँवकी बनाई हुई बिलकुल सस्ती और कामचलाऊ चीज हो सकती है। इन चीजोके बारेमें जल्दी करने की जरूरत नही है। मैं जो चाहता हूँ वह अगर तुम्हारी समझमें अच्छी तरह न आया हो, तो मेरे लौटनेतक प्रतीक्षा कर सकती हो। लकडीकी खटिया लाई जा सकती है और लोटा भी। तिपाई वही कामचलाऊ ढगसे बनवा ली जानी चाहिए। एक और गायकी जरूरत होगी। इस बारेमे छोटेलालकी सलाह लेना।

मैंने तुम्हे बतलाया था या नही कि प्रस्थानकी तारीख १३ नही, १२ है? अत ईश्वरकी इच्छा रही तो हम लोग रविवार १४ तारीखको पहुँचेगे।

यह पत्र तुम्हारे पास पहुँचेगा, उस बीच लीलावतीके वहाँ पहुँचने की आशा रख सकती हो। साथका पत्र उसके लिए है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेंजी (सी० डब्ल्यू० ६३४५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८११ से भी

२६. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

बगलोर सिटी
६ जून, १९३६

चि० अम्बुजम,[1]

तुम्हारा पत्र मिला।

पद्मा इतनी अच्छी साबित हो रही है और सन्तोष दे रही है, यह जानकर बडी खुशी हुई। तुम किचीके[2] बारेमें जो-कुछ कह सकती हो, उसीसे तुम्हे बेटोके बारेमे राय नही बनानी चाहिए। बेचारा किची! उसका विकास बहुत दुर्भाग्यपूण ढगसे हुआ है। हमे आशा करनी चाहिए कि पद्माकी अच्छाईकी छूत किचीको भी लगेगी और वह अच्छा बन जायेगा।

तुम एस्थरसे मिलने गई, यह जानकर खुशी हुई। अगर तुम्हे लगा हो कि तुमसे मिलकर वह प्रसन्न हुई तो मै चाहूँगा कि तुम सुविधापूर्वक जितनी बार भी उसके पास जा सको, जाओ।

पिताजीकी लगातारकी बीमारीके बारेमें जानकर दुख हुआ। कितना अच्छा हो, अगर वे प्राकृतिक चिकित्सा करायें! मेरी ओरसे उनसे इसका जिक्र करना। मै समझता हूँ, सही पथ्य तथा जल और धूपके उपचारसे उन्हे बीमारीसे छुटकारा पाकर पूर्ण स्वस्थ हो जाना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च]

१२ तक बगलोर सिटीमे हूँ।

मूल अंग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ एस० श्रीनिवास अय्यगारकी पुत्री। सम्बोधन मूलमें हिन्दीमें है।

२ एस० अम्बुजम्मालका पुत्र।

२७ पत्र : प्रभावतीको

६ जून, १९३६

चि० प्रभावती,

तेरा २९ का पत्र मिला। मैंने तुझे इसका जवाब एक बार लिख दिया है। वह पत्र अबतक मिल गया होगा। दूध फिरसे शुरू कर दिया, यह ठीक किया। चार रतल लेना। किसी प्रकारके फल भी मिलते हैं क्या? तू घूमने जाती है या नहीं? लगता है कि परिवारकी सेवामें संलग्न है। अपनी प्रार्थना आदिका कार्यक्रम कभी भंग मत होने देना। [लोगोंको] चरखा सिखा देना। वहाँ तो रामायण जाननेवाले बहुत लोग होंगे। उनसे रामायण पढ़नेका स्वर सीख लेना। जब तू व्यवस्थित हो जायेगी तब समय मिलने लगेगा। तू तो पाँच-पाँच मिनटका भी उपयोग करना सीख चुकी है। वहाँ 'हरिजनबन्धु' तो आता ही है न? जयप्रकाशकी चिट्ठी आये अथवा न आये, तू तो उसे लिखती ही रहना।

तुझे पीजना सीख लेना चाहिए।

मथुरादासको[1] मधुबनी, पोस्ट आफिस चम्पारनके पतेपर लिखेगी तो वह तुझे जो चाहिए सो भेज देगा।

बाहरकी चाहे जितनी चिन्ता क्यों न रहे, आन्तरिक शान्ति कभी मत छोड़ना।

मैंने हरिलालके विषयमें अखबारमें बहुत लिख दिया है, इसलिए यहाँ नहीं लिखता। अमतुस्सलामको पत्र दिल्ली लिखना। पता है हरिजन-निवास, किंग्जवे, दिल्ली।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

१२ तक बंगलोर सिटीमें और १४ को वर्धा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७२) से।

१ मथुरादास आसर, आश्रमके एक खादी विशेषज्ञ जो काम करने बिहार चले गये थे।

२८ पत्र मीराबहनको

[६ जून, १९३६ के पश्चात्][1]

चि० मीरा,

तुम्हारा ३ तारीख का पत्र अभी मिला। हाँ, सजीलाके लिए अलग छप्पर होना चाहिए ताकि तुम्हारा बरामदा खाली रहे। इस विषयपर फिर सोचने के बाद लगता है कि यूरोपीय मेहमानोके लिए मगनवाडीसे कमोड और पॉट मँगवा लेना समझदारी होगी। अत यह बात उस योजनाके अतिरिक्त है जो मैंने सुझाई है।

यदि तुम्हे मोर मिल सके तो मुझे कोई आपत्ति नही है, वैसे मै उनकी आदतोसे बिलकुल अनभिज्ञ हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१२ से भी

२९ पत्र : ख्वाजा अब्दुल मजीदको

स्थायी पता वर्धा
७ जून, १९३६

कमाल है! एक दूसरे विषयपर आज मै तुम्हें पत्र लिखने ही वाला था कि तुम्हारा सुखद पत्र मिला। तुम्हारा पत्र पाना तो किसी पुराने बिछुडे हुए मित्र या कहना चाहो तो भाईसे मिलने के समान है, या दोनो ही समझ लो।

डॉ० अन्सारीकी मृत्युके अवसादमें मुझे तुम्हारा, शुएब तथा जाकिर हुसैनका ध्यान आया था। मैने जाकिरको लम्बा पत्र[2] लिखनेका निश्चय किया। उसके उत्तरकी रोज प्रतीक्षा है।

आसफअलीने मुझे कोई स्मारक बनाने के विषयमे लिखा था। मैंने उनसे कहा कि राजनीतिक परिस्थितियोको देखते हुए इतने महान् पुरुषका राष्ट्रीय स्मारक बनाने का यह उपयुक्त समय नही है। मोतीलालजी के देहान्तपर भी मैंने यही राय दी

१ पत्र की विषयवस्तु से स्पष्ट है कि यह "पत्र मीराबहनको", ६-६-१९३६ के बाद लिखा गया होगा।

२ देखिए खण्ड ६२, पृ० ४७५-७६।

थी। मेरे ध्यानमें धनकी समस्या नही, राजनीतिक स्थिति है। यदि लोग सहज प्रेरणासे पैसा भेजे और हमारे पास काफी धन एकत्रित हो जाये तो व्यक्तिगत प्रशसको और उपकारियो (कोई ठीक शब्द अभी नही सूझता) की ओरसे एक स्मारक बनवानेके लिए हम उसका उपयोग कर सकते है। खैर, जबतक तुम्हारा उत्तर न आये या तुम स्वय न मिलो तबतक यह चेक[1] सहेज रखता हूँ।

तुम्हारी राजनीतिकी व्याख्या बडी रोचक है। "ब्रूटस, तू भी!"—इस वाक्यको बिलकुल शब्दश लागू न मान लेना। बडे-बडोका कैसा पतन हुआ है? तुम्हे याद है, तुमने अन्सारी होटलमें क्या कहा था? परन्तु मै तुम्हे दोष नही देता। तुम्हारी विशुद्ध ईमानदारीके लिए मेरे पास केवल प्रशसा है। हाँ, हमारी मुलाकात अवश्य होनी चाहिए। १६ जूनके बाद किसी भी दिन वर्धा आ जाओ। तुम्हे पता होगा कि इस मासके अन्तमे समूची काय-समिति वहाँ होगी। पर मै जानता हूँ, तुम इस विषयपर पहले मेरे साथ चर्चा करना चाहते हो। इस कारण तुम जितनी जल्दी आओ उतना ही अच्छा।

अच्छा, अब मै उस विषयपर आता हूँ जिसके बारेमे लिखनेवाला था। हो सकता है, तुमने मेरे ज्येष्ठ पुत्र हरिलालके तथाकथित धर्मान्तरण पर मेरा लिखा हुआ पत्र नहीं पढा हो, ऐसा सोचकर मै इसके साथ उसकी कतरन भेजता हूँ। पढो और अपने विचार मुझे बताओ। क्या ऐसा धर्म-परिवर्तन धर्म-सम्मत और सही है? उस-जैसे नैतिक दृष्टिसे खोखले और लम्पट मनुष्यकी जो तारीफ की जा रही है, क्या वह उचित है? मुझे हरिलाल पर कोई क्रोध नही है। वह जो-कुछ करता है उसके लिए वह जिम्मेदार नही है। पिछले तीन महीनोमे उसके जीवनमे बडी उथल-पुथल हुई है। तुम्हे ज्ञात होना चाहिए कि जो-कुछ हुआ है, और हो रहा है, वह आवारा लोगोका काम नही है। समाजमे जिम्मेदार मुसलमान समझे जानेवाले लोग यह सब कर रहे है। धम और इस दुखी देशकी खातिर इस विचित्र स्थितिपर तुम गौर करो, उसमे रुचि लो। यदि तुम इस घटनाका कुछ और अर्थ लगाते हो तो मुझे स्पष्ट बताने मे सकोच मत करना।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ ख्वाजा अब्दुल मजीदने डॉ० अन्सारीके स्मारकके निमित्त १,००० रु० का एक चेक भेजा था।

३०. पत्र : अमृतकौरको

७ जून, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हे भेजे गये सामानके घटे मूल्योको देखकर घबराना मत। दाम घटाने का मैने ही आग्रह किया है, क्योकि तुम्हे ये चीजे स्वदेशी-प्रचारके लिए बेचनी है और यदि सारा सामान बेच न पाओ तो तुम्हे भी घाटा उठाना पड सकता है। इससे अपने राजसी गर्वको ठेस न पहुँचने देना। तुम्हे पूरा विक्रय-मूल्य और डाकखर्च इत्यादि लेना चाहिए, व्यापारके मामलेमें बेवकूफी नही चलेगी। ऐसे कामोमे तुम राजकुमारी नही, बल्कि साधारण सेविका और न्यासी हो। तुम्हे जो पत्र और बिल भेजा गया है उसकी प्रति मेरे पास है।

आशा है, तुम अब बिलकुल स्वस्थ हो गई होगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७८) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३८७ से भी

३१ पत्र : एफ० मेरी बारको

७ जून, १९३६

चि० मेरी,

तुम्हारे भेजे कागजोमें से हरिद्वारसे आया पत्र वापस करता हूँ। बाकी सब रखूंगा।

तुम्हारे पत्र और मेरे पत्रोके गुरुकुल पहुँचने से पहले ही सुमित्रा नागपुरके लिए रवाना हो चुकी थी। अब वे सब तुमको भेजता हूँ। यदि गोपाल वहाँ है तो उसको सम्भवत उसका पता मालूम होगा।

जबतक हमे पता नही चलता कि ताराके[1] वसीयतनामेका[2] क्या करना है तबतक उसका अन्य सामान और दूसरे कागज-पत्र ज्यो-के-त्यो रहने देने चाहिए।

१ मेरी चेजली, जो बद्री-केदार जाते हुए रास्तेमें निमोनियासे बीमार होकर स्वर्गवासिनी हो गई थी, देखिए खण्ड ६२, पृ० ४६६-६७।

२ देखिए खण्ड ६२, पृ० ४७०।

हमे पहले तो उसके सम्बन्धियोका पता लगाना है, जिनको सम्भवत उसके सामानमे रुचि हो। साइकिल तो बेशक गोपाल इस्तेमाल करे। ऐसे ही तुम सितार उपयोगमे ला सकती हो।

मुझे भय है कि हमें डाक्टर नूरजहाँसे कहना पडेगा कि फिलहाल वह उसका [ताराबहनका] अग्रेजी सामान अपने पास ही रखे। हम वर्धा [१४ तारीख][1] को पहुँचेगे।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६२) से। सी० डब्ल्यू० ३३९२ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

३२. पत्र : गोविन्द वी० गुरजलेको

७ जून, १९३६

प्रिय गोविन्दराव,

तुमने अपनी प्रवृत्तियोकी कुछ रोचक खबरे दी है। ईश्वर करे, वे फूले-फले। अपनी चादर देखकर पाँव पसारने के सुनहरे नियमसे कभी विचलित न होना, कर्ज बिलकुल न लेना।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

१२ तारीख तक बगलोर सिटीमे रहूँगा।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४००) से।

१ साधन सूत्रमें यह स्पष्ट नही है।

३३. पत्र : अमतुस्सलामको

७ जून, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा पत्र मिला। प्रकाशमणिके अकस्मात् अवसानसे दु ख हुआ। उनका कोई वहा हो तो मेरी समवेदना जताना।

सुकीर्ति कहाँ गई?

लडकोकी सँभाल रखते हुए अगर तू अच्छी हो जाये, तो उससे अच्छा क्या हो सकता है? रुक्मिणीका बरताव अब कैसा है? तू डॉ० अन्सारीके यहाँ जाती है क्या?

शर्माको वहॉ बुलाना। मैंने उसे लिखा है।[1]

पापरम्मा[2] और सरस्वती[3] कल सुबह यहाँ आ जायेगी। अब कान्तिके लिए हरिलालके पास जाने की बात कहॉ रही? वह शान्त है। हरिलालके बारेम मैंने लिखा है, सो पढा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६) से।

३४. पत्र · जानकी अम्माल नायडूको

[स्थायी पता] वर्धा
८ जून, १९३६

प्रिय जानकी,

तुम्हारा पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। खुशीकी बात है कि पिताजी भारत आ रहे है। मै तो चाहता हूँ तुम भी आती। हॉ, नेटालके शानदार जीवनके बाद शायद तुम्हे यहाँके सीधे-सादे जीवनमे मजा नही आयेगा। और यहाँ गाँवोकी भयानक दरिद्रता देखकर तुम दहल उठोगी। वह अनुभव तुम्हे सयत कर देगा। खैर, पिताजी लौटकर तुम्हे भारतकी दशा बतायेगे।

१ देखिए "पत्र हीरालाल शर्माको", ५-६-१९३६।

२ जी० रामचन्द्रनकी बहन।

३ पापरम्माकी कन्या।

हाँ, फीनिक्सवाले सब साथी अच्छी तरह है।

सप्रेम,

बापू[1]

[पुनश्च]

पता . मो० क० गाधी
वर्धा
भारत

श्री जानकी अम्माल नायडू
३७, मैलिन्सन रोड, सिडेनहम
डर्बन, नेटाल

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४६३) से।

३५. पत्र : एफ० मेरी बारको

८ जून, १९३६

चि० मेरी,

मुझे कोई जल्दी नही है। अपनी पूनियाँ और दूसरे आवश्यक काम निपटा कर ही ताराका सन्दूक देखना। सुमित्राबहनको लिखा तुम्हारा पत्र लौटाते हुए मैंने कल या परसो तुम्हे पत्र[2] लिखा था।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६३) से। सी० डब्ल्यू० ३३९३ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

१ यह तमिल लिपिमें है।

२ देखिए "पत्र एफ० मेरी बारको", ७-६-१९३६।

३६. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

बंगलोर
८ जून, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोके पत्र मिले। हरिलालकी करतूतोके विषयमे तो पढ ही लिया होगा। वहाँ मेरा लेख पहुँच चुका होगा। अनेक अखबारोमे प्रकाशित हुआ है, इसलिए अलगसे नही भेज रहा हूँ। इसमे मैंने बहुत-कुछ कह दिया है, इसलिए पत्रमे कुछ भी नही लिख रहा हूँ। बा दुखी हो गई है, किन्तु बडे धीरजसे सहन कर रही है। कान्ति स्वस्थ है। यदि वह अब भी सुधर जाये तो मै न कोई चिन्ता करूँ, न कोई आपत्ति मानूँ।

हम १४ तारीखको वर्धा पहुँच जायेगे। तारी का रोग अभीतक गया नही है। किन्तु यदि धीरज रखकर मेरा उपचार करती रहेगी तो जरूर अच्छी हो जायेगी। अभी तो सभी भाई-बहन इस राज्यके दृश्य देखने मे लगे है।

लक्ष्मी बीमार पडती ही रहती है। देवदास जब यहाँ रवाना होनेवाला था, वह बम्बईमें बीमार पड गई।

रामदास अपना एजेसीका काम सन्तोषजनक ढगसे कर रहा है।

सुशीलाका शहरमे रहने के लिए जाना मुझे बिलकुल नही खटका। बच्चोके विचारसे त्याग तो करना ही पडता है। इसके बिना उनका लालन-पालन नही हो पाता। दोनो तुम्हारे पास है, यह ठीक है। उन्हे विलायती मत बना देना। धर्मके सस्कार डालना, मातृभाषा मत भूलने देना, हिन्दीका ज्ञान देना। यदि इतना किया तो मुझे सन्तोष हो जायेगा। वहाँ हो, इसलिए यदि उन्हे तमिलका ज्ञान मिले तो मुझे अच्छा लगेगा। तुम्हारे किसी कामसे उनके मनमें अग्रेजीका मोह उत्पन्न न हो तो अच्छा हो। अग्रेजीका सामान्य ज्ञान तो उन्हे मिलेगा ही। यदि समस्त ज्ञान उन्हे अपनी भाषाके मार्फत मिले तो बडी बात समझो। वे उसे अधिक आत्मसात् कर सकेगे और जीवनमे उसका अधिक उपयोग भी करेगे। किन्तु यह तो मेरी दृष्टिसे हुआ, ठीक तो वही है जो तुम दोनोको रुचे। मुझे खुश रखने के लिए कुछ भी करना जरूरी नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५२) से।

३७ पत्र : अमृतकौरको

बगलोर
९ जून, १९३६

प्रिय मूर्खा,

घरेलू इस्तेमालकी चप्पले पहने निकल पडने, रास्ता भूल जाने ओर बेदम होने तक चलते रहने की तुम्हारी बहादुरी तो मूर्खोंके योग्य ही थी। तुमने तो अपनी उपाधिके लिए जितनी अपेक्षित है, उससे भी अधिक योग्यता सिद्ध कर दी!

यह बगलोरसे लिखा शायद अन्तिम पत्र ही होगा। हम यहाँसे १२ तारीखको रवाना हो कर १४को वर्धा पहुँचेगे।

हॉ, मीरा बिलकुल ठीक है और मेरी झोपडी बनवाने मे यथाशक्य अधिकसे-अधिक परिश्रम कर रही है। 'विद्या हि सेवा' काफी अच्छा हे, परन्तु 'सेवा हि विद्या' उससे भी अच्छा होगा। क्यो न 'विद्या सेवायै' रखे, जिसका अर्थ होगा सेवाके निमित्त ज्ञान? मै समझता हूँ तुम उसे कुछ ऐसे बनवाओगी

जितने कलात्मक रूपसे मेरे लिए सभव था मैने यह चित्र खीचा है, परन्तु तुम मेरा तात्पर्य तो समझ ही जाओगी।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३०) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८८६ से भी

१ दिल्ली-स्थित लेडी इर्विन कॉलेजके प्रतीकके लिए एक सिद्धान्त वाक्यकी आवश्यकता थी। गाधीजी ने उसके लिए अपने सुझाव दिये थे।

३८. पत्र . मीराबहनको

९ जून, १९३६

चि० मीरा,

यहासे शायद यह मेरा आखिरी पत्र होगा। आशा है, इस महीनेकी १४ तारीखको हम वर्धा पहुँच जायेंगे।

यहा गाडीवाले मजेमे मालूम होते है। एक ही काममे ५० गाडियोका एक-साथ लगे रहना सेगॉवके लिए अवश्य नई बात होगी। आशा है, वे सब वही की होगी। तुम्हे स्वस्थ-प्रसन्न देखने की उम्मीद रखता हूँ।

स्पष्ट है कि बलवन्तसिह और मुन्नालाल तुम्हारे लिए ईश्वरकी देन साबित हुए। जब मुन्नालालका प्रस्ताव मानने को मेरा जी हुआ और बलवतसिहको मैंने सुझाया कि तुम्हारा सतत सत्सग प्राप्त करे, तब मुझे यह कल्पना नही थी कि तुम उन्हे लगभग ऐसा पाओगी जिनके बिना तुम्हारा काम ही नही चल सकता। खैर, तुम्हारी बीमारी और स्वास्थ्य-लाभके दौरान उनके तुम्हारे साथ होने से मुझे बडा सन्तोष रहा।

मद्रासके टोकरेमे सेब थे। तुम्हे मिले? सब जानम्मालके भेजे हुए थे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१३ से भी

३९. पत्र : नारणदास गांधीको

९ जून, १९३६

चि० नारणदास,

मैंने कनुके बारेमें पत्र लिखा था,[1] मिल गया होगा। वे लोग दर्शनीय स्थान देखने में लगे हैं। उनकी खबर मिलती रहती है। बीचमें वे एक दिन आ भी गये थे। इसके साथ प्रेमाका दूसरा पत्र है। एक भेजा था, वह मिला होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९३ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

४०. पत्र : अमृतलाल ठा० नानावटीको

९ जून, १९३६

चि० अमृतलाल,

हम वहाँ १४ की सुबह पहुँचने की आशा करते हैं। संलग्न पत्रोंकी व्यवस्था करना। तुम्हारा शरीर अच्छा होगा। भणसालीकी तपस्या मर्यादित ही चल रही होगी। दूसरे लोग मेरे मनमें तो रहते ही हैं, किन्तु वक्त बचाने के लिए उनके बारेमें नहीं लिखा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१६) से।

१ देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", ५-६-१९३६।

४१. तार: रेहाना तैयबजीको[1]

बगलोर
१० जून, १९३६

मेरा एक सबसे पक्का मित्र चला गया।[2] इस क्षतिमे मै माताजीका और तुम्हारा बराबर का सहभागी हूँ। तुम्हारे पिता वास्तवमे गुजरातके पितामह और देश के वफादार सेवक थे जिन्होने कभी हिदू-मुसलमान मे भेद नही माना। सरदार और अन्य लोग इस शोकमे शामिल है।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-६-१९३६

४२ सन्देश मजुला एम० मेहताको

१० जून, १९३६

अपनी निर्मलता, कोमलता, प्रेमलता और आरोग्य ओर सयममे वृद्धि करके वापस लौटना। तुम दोनोसे मैने बडी-बडी आशाएँ बाँध रखी है। तुम डाक्टरके[3] सच्चे वारिस बनो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६०२) से।

१ लगभग इसी प्रकारका दूसरा तार अब्बास तैयबजीके दामाद, मुहम्मद हबीबको भेजा गया था।
२ रेहाना तैयबजीके पिता अब्बास तैयबजीकी मृत्यु ९ जून, १९३६ को हुई थी।
३ मजुला एम० मेहताके ससुर डॉ० प्राणजीवन मेहता।

४३ भेंट : आदि-कर्नाटक संघके शिष्टमण्डलको[1]

१० जून, १९३६

महात्मा गांधीने कहा कि मैं इस विचारसे पूर्णतः सहमत हूँ कि हरिजनोंके सहयोगके बिना हरिजनोद्धारका कोई भी काम सन्तोषजनक रूपसे नहीं हो सकता। इस बातपर मुझसे ज्यादा जोर किसीने नहीं दिया है कि हरिजनोंको सामाजिक और अन्य प्रकारके अधिकार दिलाने का जो सेवाव्रत हमने लिया है वह तो केवल ऋणकी अदायगी-मात्र है, क्योंकि हमारे पापोंके फलस्वरूप ही हरिजनोंको सामाजिक और दूसरे कष्ट भोगने पड़े हैं।[2]

उन्होंने कहा कि कगेरी-गुरुकुल हरिजन सेवक संघका नहीं है, रही हरिजनोंको वहाँ दाखिला न देनेकी बात, तो वह सच नहीं है। गुरुकुल तो हरिजनोंकी प्रत्यक्ष सेवा कर रहा है, और हरिजनोंको तो जब भी वे आयें वह हमेशा ही दाखिल करता है।

दूसरी महत्त्वकी चीज यह है कि आगामी सम्मेलन सवर्ण हिन्दू-कार्यकर्त्ताओंका ही है, जो वहाँ एक-दूसरेके साथ विचार-विनिमय और अपनी कठिनाइयोंके बारेमें चर्चा करने, अपनी कमजोरियोंका पता लगाने, और अपने कामको और भी अच्छी तरहसे व्यवस्थित करने की दृष्टिसे एकत्र हो रहे हैं। यह सम्मेलन तो पुश्तैनी पापियोंका सम्मेलन है, जो अब ऐसे उपाय और साधन ढूँढ़ निकालना चाहते हैं, जिनसे वे हरिजनोंके ऋणसे मुक्त हो सकें। तब इस सम्मेलनमें हरिजन किस तरह योग दे सकते हैं? सभामें भले बड़ी खुशीसे आयें, पर वहाँ जिन बातोंपर चर्चा होने-वाली है उसमें वे किस तरह मदद देंगे?

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। मण्डलके नेता श्री पी० जी० डिसूजाने और बातोंके साथ यह भी कहा था कि बहुत-से हरिजन कार्यकर्त्ता हैं जो हरिजनोद्धारका काम कर रहे हैं और चाहते हैं कि इस कार्यके लिए उन्हें हरिजन सेवक संघके कोषसे आर्थिक सहायता दी जाये, लेकिन संघ उनके कार्यकी कोई गिनती ही नहीं करता। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि यदि हरिजनोंके विरुद्ध हिन्दुओंका मौजूदा रवैया जारी रहा तो ईसाई मिशनरी हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंके बीच द्वेषभाव बढ़ानेका प्रयत्न तेज कर देंगे। उन्होंने बताया कि हरिजनोंको कगेरीके गुरुकुल आश्रममें भरती नहीं किया जाता। श्री डिसूजाने यह भी कहा कि जब हरिजनोंकी आर्थिक और सामाजिक दशामें सुधार करनेकी आवश्यकता है तब केवल मन्दिर प्रवेश पर जोर देनेका कोई लाभ नहीं। उन्होंने इस बातपर भी आपत्ति प्रकट की कि आगामी हरिजन-सम्मेलनमें हरिजनोंको नहीं बुलाया गया है।

२ यह अनुच्छेद हिन्दूसे लिया गया है।

डिसूज़ा आप लोग अपनेको भले ऋणी कहे, पर आप जो-कुछ कर रहे है उसमें हरिजन आपपर श्रेष्ठताकी भावनासे प्रेरित होनेका सन्देह किये बिना नहीं रह सकते, और आप अपने मौजूदा रवैयेसे अपने बारेमें यह सन्देह किये जानेकी गुजाइश भी छोडेंगे कि आप उन्हे सहायता देनेके उपाय निकालने के बदले दबाये रखने के नये-नये उपाय सोच रहे हैं।

गाधीजी यदि सन्देह निराधार हो तो मै उस सन्देहकी परवाह नही करता। सवण हिन्दुओका काम सच्चा होगा तो वह खुद उस सन्देहको दूर कर देगा। मै हरिजनोको दोष नही देता, क्योकि उन बेचारोको तो इसके अलावा कुछ देखने-भोगनेको मिला ही नही।

एक हरिजन सन्देहकी तो ऐसी कोई बात नहीं है। हम तो केवल अपनी मुसीबतें सुनाना चाहते है।

गाधीजी क्या मुझे मुसीबते सुनाने की कोई जरूरत है? क्या मै जानता नही हूँ? क्या मै हाथ उठाकर डकेकी चोट नही कह रहा हूँ कि आप सबकी सर्वांगीण उन्नति होनी चाहिए? मै आपको यह समझाना चाहता हूँ कि यह सच्चे दिलसे पश्चात्ताप करनेवाले पापियोका सम्मेलन है। आप लोग इसमे भले पधारें। आपका स्वागत है, पर वहाँ आप देखेगे कि वह सम्मेलन आपकी आशासे भिन्न प्रकारका होगा। हम सब देनदार है, हम जानते है कि हम छोटी-छोटी किस्तोमे ही ऋण चुका सकते है, और हमारे लेनदार इतने क्रोधित हो सकते है कि उन किस्तोको ठुकरा दे और हम देनदारो को भी लतिया दे। पर यदि हमारे भाग्यमें यह लिखा हो तो हमे यह भी बर्दाश्त करना पडेगा, क्योकि मूलको सूद-सहित चुका देना ही हमारा उद्देश्य हे। जब डॉ० अम्बेडकर हमे गालियाँ देते है, तब मै कहता हूँ कि हम इसीके लायक है। फिर, लेनदार कभी-कभी इतना महान् बन जाता है कि वह कर्ज या कर्जदारका ध्यान ही नही रखता। तो भी हमे सब-कुछ भूलकर सारा ध्यान अपने कजको चुकानेपर ही केन्द्रित करना है। शास्त्रोमे लिखा है कि जब किसी जातिके अन्यायोका घडा भर जाता है तब उसका विनाश हो जाता है। हिन्दू-धर्मने अगर अपने शरीरपर से अस्पृश्यताका यह कलक दूर न किया तो वह अवश्यम्भावी रूपसे नाशको प्राप्त होगा — भले अम्बेडकर कुछ करे या न करें। हमारा प्रयत्न अगर सच्चा है, तो मै मानता हूँ कि सुधारकोमे कोई श्रेष्ठताकी भावना आप नही देखेगे। मै स्वीकार करता हूँ कि जिस रूपमे मै हिन्दू-धमको आज देखता हूँ, उसमे अनेक सवर्णों पर अज्ञान-तिमिरका आवरण पडा हुआ है। वे अधर्मको धर्म कहते है। अब ऐसे दोषियोका एक वर्ग, जिनमे बहुत-से दोष आज भी शेष है, इसी तिमिरको भेदकर निकलनेका प्रयास कर रहा है। जहाँतक हरिजनोकी मौजूदा हालतका सवाल है, उसके बारेमे मै सवर्णोको हमेशा याद दिलाता रहता हूँ कि कुछ हरिजनोकी गन्दी आदतोके जिम्मेदार तो असलमे सवर्ण ही है। उनसे मै यह कहता रहता हूँ कि जबतक हरिजनोको वही दर्जा नही मिल जाता जो

दूसरे हिन्दुओको हासिल ह, तबतक हरिजनोसे साफ-सुथरे रहने का आग्रह रखना ही गलत है। पहले हमे जिस हालत मे वे है उसी हालतमे उन्हे अपनाना होगा, और उसके बाद उन्हे साफ-सुथरा बनाना होगा। आप लोगोके कष्टो और आपके मकानोकी हालतके सम्बन्धमे मै राज्यसे पैरवी कर रहा हूँ। कृपाकर आप लोग थोडा धीरज रखिए। हम आपका काम उतनी जल्दी भले ही न करा सके जितनी जल्दी कि आप चाहते है, पर आप हमारे इरादो पर सन्देह न करे।

डिसूजा आपने हमें जो इत्मीनान दिलाया है उसके लिए हम आपके आभारी हैं। हम चाहते हैं कि आप हरिजनोकी तरफ भाईचारेका हाथ बढ़ाये। गुनहगार इस तरहका बरताव न करे, मानो वह अपने पापोका प्रायश्चित्त करके ईश्वरकी कोई सेवा कर रहा है। मै यह चाहता हूँ कि हरिजनोको आप उनकी जन-सख्याके हिसाबसे मैसूरकी विधान-सभामें सीधा प्रतिनिधित्व दिला दें। उनके बारेमें यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि उन्होने मनुष्यका दर्जा हासिल कर लिया है।

गाधीजी इसके लिए मै आपको यह राय दूगा कि वतमान महाराजको हटाकर एक हफ्तेके लिए आप मुझे उनकी जगह पर बिठा दे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २७ ६ १९३६, आर **हिन्दू,** ११-६-१९३६

४४ भाषण हरिजन-सेवक सम्मेलन, कगेरीमें[1]

१० जून, १९३६[2]

इस सम्मेलनकी कल्पना जिसकी भी हो, है सुन्दर कल्पना, और हमे अब चाहिए यह कि इस सभाका अच्छा उपयोग कर ले। इस सम्मेलनमे दक्षिण भारतके सभी भागोके प्रतिनिधि आये है, लेकिन उनके अलावा यहाँ और भी लोग आये हुए है, इसलिए मै केवल प्रतिनिधियोके वास्तविक कामकी बातोपर बोलने के बजाय अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलनके विषयमे अपने कुछ सामान्य विचार प्रकट करूँगा।

और ये सामान्य विचार मै सवर्ण हिन्दुओके सोचने-समझने के लिए व्यक्त करूँगा। उन्हे समझ लेना चाहिए कि यह अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलन भारतके अन्य वतमान आन्दोलनोसे बिलकुल भिन्न है। जहाँतक मेरा और हरिजन सेवक-सघका सम्बन्ध है, मै यह कह सकता हूँ कि यह अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलन कोई राजनीतिक आन्दोलन नही है। इसी तरह हरिजनोकी मात्र आर्थिक स्थिति सुधारना भी इसका उद्देश्य नही हे, ओर न केवल उनका सामाजिक पुनरुत्थान ही। पर इसका मतलब यह नही

१ यह **हरिजन**में "द इनवार्डनेस ऑफ हरिजन मूवमेंट" (हरिजन आन्दोलनकी आध्यात्मिकता) शीर्षकसे छपा था।

२ तारीख **हिन्दू**से ली गई है।

कि हरिजनोकी सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक उन्नति हमारा लक्ष्य नही है। हम उनकी सब प्रकारकी उन्नति चाहते है। अगर हम सचाई और ईमानदारीसे काम करेगे, तो हमारे प्रयत्नोके फलस्वरूप इन दिशाओमें तो उनकी उन्नति होना निश्चित है।

पर हमारा उद्देश्य इन सबसे, जिनके विषयमे मैने आपसे अभी कहा है, बिलकुल ही भिन्न है। वह यह है अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म पर लगा हुआ एक कलक है। जिस तरह भी हो हमे इसे मिटाना ही चाहिए। अस्पृश्यता वह घातक जहर है जिसे अगर समय रहते हमने नष्ट न कर दिया, तो यह हिन्दू-धर्म का नाश कर देगा।

मै जानता हूँ कि आप उपस्थित जनोमे से जो लोग हरिजन-सेवक और प्रतिनिधि नही है वे -- बल्कि कुछ सेवको और प्रतिनिधियोको भी मै इसमे शामिल कर लेता हूँ -- मेरी बातके असली मर्मको नही समझते। पर आप ममको समझे या न समझे, मै तो अपने विचारोको, जिनपर मेरा प्रबल आग्रह है, जरूर प्रकट करता रहूँगा।

मुझे यह दिखाई दे रहा है कि अगर अस्पृश्यता इसी तरह बनी रही तो हिन्दू-धम धीरे-धीरे नष्ट होता जायेगा, और मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अगर मेरी ही तरह आप लोग भी ध्यानसे देखे, तो आप पायेगे कि हिन्दू-धर्मका शरीर जो धीरे-धीरे छीज रहा है, वह इतनी तेजीसे छीजने लगेगा कि फिर उसका इलाज करना कार्यकर्त्ताओके लिए अशक्य हो जायेगा।

मै यह क्यो कहता हूँ कि अस्पृश्यता वह अभिशाप है, वह कलक है और वह तेज जहर है जो हिन्दू-धमका नाश करके रहेगा? किसी एक मनुष्यको भी जन्मना अस्पृश्य समझना हमारी मानवताकी भावनाके विपरीत है। आप अगर दुनियाके धम-ग्रन्थोका मनन करे और हिन्दुओको छोडकर दुनियाकी दूसरी जातियोके आचरणको जॉचे, तो मैने जिस अस्पृश्यताकी तरफ अभी आपका ध्यान खीचा है उसकी मिसाल आपको कही भी नही मिलेगी। मै किसी आदमीका उस हालतमे अस्पृश्य होना तो समझ सकता हूँ जब वह कोई ऐसा काम कर रहा हो जिसके कारण वह खुद ही अपनेको अस्पृश्य महसूस करता हो। किसी नर्सको ले लीजिए। वह एक ऐसे रोगीकी सेवा-शुश्रूषा कर रही है, जो असहाय है, जिसके शरीरसे खून बह रहा है, जिसके कपडे-लत्ते खराब हो रहे है, और जिसे ऐसी बीमारी है कि उसके शरीरसे बदबू आ रही है। वह नर्स जबतक ऐसे किसी रोगीकी सेवा-शुश्रूषामे लगी हुई है तबतक वह अस्पृश्य है। पर नहा-धो लेने के बाद वह हमारी ही तरह स्पृश्य हो जाती है। वह समाजमे सबसे मिलने-जुलने योग्य ही नही, बल्कि जो धन्धा वह करती है उसके कारण समाजके लिए आदरणीय और पूजनीय भी है। वह हमारे सम्मानकी पात्र है और जबतक हमारे समाजमे कुछ भी श्रेणियॉ है, वह बहुत ऊँचे स्थानकी अधिकारिणी है।

अब चित्रकी उलटी तरफ देखिए। उदाहरणके लिए, डॉ० अम्बेडकरको ले ले। वे दलित जातिके कहे जाते है और उन्हे अस्पृश्य माना जाता है। बुद्धिमे वे हजारो

बुद्धिमान और सुशिक्षित सवर्ण हिन्दुओसे कही ऊँचे है। वे हममे से किसीसे भी कम स्वच्छ नही रहते। आज वे कानूनके विख्यात व्याख्याता है। हो सकता है कि कल आप उन्हे उच्च न्यायालयके न्यायाधीशके पद पर देखे। दूसरे शब्दोमे यो कहा जा सकता है कि ऐसा कोई भी सरकारी ओहदा इस देशमे नही है जिसे एक सनातनी ब्राह्मण हासिल कर सकता हो और डॉ० अम्बेडकर चाहे तो उसे न पा सके। पर किसी कट्टर ब्राह्मणको अगर डॉ० अम्बेडकर छू ले तो वह उनके स्पर्शसे अपवित्र हो जायेगा। उनका अक्षम्य अपराध यही है कि उन्होने एक महार (अस्पृश्य) परिवारमे जन्म लिया है।

अगर हम यह मानने के आदी न होते कि जन्मना अस्पृश्यता भी हिन्दू-धर्मका एक अभिन्न अंग है, तो हम अपने ही समाजके मानवोके साथ वैसा बरताव न करते जैसा आज भी हममे से अनेक लोग उनके साथ कर रहे है।

मुझे मालूम है कि आज मैने अपने इस भाषणमे आपको कोई नई बात नही बताई है। मै यह भी जानता हूँ कि मैने बिलकुल यही बात आज की अपेक्षा कही अधिक जोशीले शब्दोमे पहले कही है। तो भी मैने जो कहा है वह तबतक व्यर्थ नही है और न होगा, जबतक कि अस्पृश्यता-निवारणकी आवश्यकताकी सीधी-सादी-सी बातका आपकी समझ या आचरण पर असर नही पडता।

अस्पृश्यताकी प्रथा सिर्फ हिन्दू-धर्ममे ही है। न तो इसका बुद्धिसे कोई सम्बन्ध है और न शास्त्रोमे ही इसके लिए कोई प्रमाण है। शास्त्रोका जो थोडा-सा अध्ययन मैने किया है, और शास्त्रोका गहरा अनुशीलन करनेवालो ने मुझे जो बतलाया है, उस सबसे मालूम होता है कि हिन्दू-धर्ममे जन्मना अस्पृश्यताके लिए कोई आधार या प्रमाण नही है। शास्त्र क्या कहते है और क्या नही, इस चर्चाके लिए अब मेरे पास समय नही है। और अपने कथनकी पुष्टिमे आपके सामने शास्त्रोके प्रमाण पेश करूँ, यह भी अब मेरे लिए जरूरी नही है। अब जरूरी यह है कि अगर आपको विश्वास हो कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म पर लगी हुई कलंक-कालिमा है और इससे हिन्दू-धर्मके नष्ट हो जानेका खतरा है तो अस्पृश्यताको हटाने का काम हर हालतमे शुरू कर दीजिए।

आप इसे हटाने के लिए क्या करेगे? अगर आप सब लोग यह घोषणा करके कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्म पर लगी हुई कलंक-कालिमा है, यह समझे कि हमने अपना फर्ज अदा कर दिया, तो उसे तो मै एक विडम्बना ही कहूँगा। जोशमे आकर आप किसी हरिजनके पास जाकर उसे छू ले और गले भी लगा ले, और बादमे उसे बिलकुल भूल जायें तो यह भी काफी नही होगा। आप नित्य हरिजन-बस्तियोमे जाये और अपने विश्वासके प्रमाण-स्वरूप वहाँ कुछ हरिजनोको छू लिया करे — इससे भी काम नही चलेगा।

आपको चाहिए तो यह कि अपने दैनिक आचरणको आप ऐसे ढाँचेमे ढाल ले जिससे जिन हरिजनोके सम्पर्कमे आप आये, उनपर यह स्पष्ट हो जाये कि अब उन सबके अच्छे दिन आ गये है।

आरम्भ इस तरह कीजिए। अगर आप किसी मन्दिरमे जाने के अभ्यस्त हो तो अपने साथ हरिजनोको भी ले जायें। पर अगर आप यह देखे कि आपको हरिजन भाइयोके साथ मन्दिरमे नही घुसने दिया जाता और यदि मेरी ही तरह आपका इस बातमे जीवन्त विश्वास हो कि अस्पृश्यता अधम है तो उस मन्दिरसे आप उसी तरह दूर रहे जिस तरह आप बिच्छू या आगसे बचते है। तब आप मेरी ही तरह विश्वास करेगे कि ऐसे मन्दिरोमे भगवान्का वास नही है। जगद्विख्यात काशी-विश्वनाथके मन्दिरको मै उदाहरणके रूपमे लेता हूँ। वह मन्दिर भगवान् विश्वनाथका, अर्थात् जगत्के नाथका है, ऐसा मानते है। और फिर भी उन्ही भगवान् विश्वनाथके नामपर आज ये सवर्ण हिन्दू धृष्टतापूर्वक हरिजनोसे कहते है कि "इस मन्दिरमे तुम लोग प्रवेश नही कर सकते!"

मै दावा करता हूँ कि मै किसी कट्टर सनातनी हिन्दूसे कम अच्छा हिन्दू नही हूँ। हिन्दू-धर्मके तमाम अनुशासनोको अपने जीवनमे उतारने का मैने अपनी क्षमता-भर प्रयत्न किया है। मै मानता हूँ कि मेरी क्षमता अल्प है। लेकिन इसीसे हिन्दू-धर्मके प्रति मेरे हृदयमे जो भाव और भक्ति है उसमे कोई कमी नही आ जाती। हिन्दू-धर्मके प्रति उस पूरे भक्ति-भावके होते हुए भी मै पूरी जिम्मेदारीके साथ आपसे यह कहता हूँ कि जबतक एक भी हरिजनके लिए काशीके उस मन्दिरके द्वार बन्द है, तबतक उसके अन्दर भगवान् विश्वनाथका वास नही है, और मै इस विश्वासके साथ उस मन्दिरमे नही जा सकता कि वह मन्दिर पुनीत है और न यह आस्था ही मेरे मनमे होगी कि वहा भगवान्की पूजा-अर्चना करने से मेरे पाप धुल जायेंगे। ऐसे मन्दिरके लिए मेरे हृदयमे पवित्रताकी कोई भावना नही हो सकती। और जो बात मैने काशी-विश्वनाथके मन्दिरके सम्बन्धमे कही है वही बात भारतवर्षके उन तमाम मन्दिरोपर भी लागू होती है जिनके द्वार हरिजनोके लिए बन्द है। कहने की जरूरत नही कि दक्षिण भारतके मन्दिरो पर भी यह बात लागू होती है, जिनमे गुरुवायूरका मन्दिर भी शामिल है।

यह तो ईश्वरकी कृपा ही है कि गुरुवायूर-मन्दिरके द्वार मेरे लिए बन्द है। पर यदि मान लिया जाये कि उस मन्दिरके ट्रस्टी या जो भी वहाँके अधिकारी हो, वे मुझे मन्दिरके अन्दर जाने की इजाजत दे दे तो भी जबतक उसके द्वार हरिजनोके लिए बन्द है, मै उसके अन्दर नही जाऊँगा। जबतक आपमे से हरएक व्यक्ति अस्पृश्यता-निवारणके कार्यका इस तरह आरम्भ नही कर देता, तबतक हम यह नही कह सकते कि उसने हृदयसे अस्पृश्यताको दूर कर दिया है।

यह जो कहा जाता है कि हरिजनोकी बहुत बडी सख्याको हमारे मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनमे कोई रुचि नही है, इसका कोई महत्त्व नही है। आज सवेरेकी ही बात है, श्री डिसूजा हरिजनोका एक शिष्टमण्डल लेकर आये थे।[1] उन्होने मुझसे कहा कि हरिजनोको इस मन्दिर-प्रवेश-आन्दोलनमे उतनी दिलचस्पी नही है जितनी अपने

१ देखिए पिछला शीर्षक।

राजनीतिक ओर आर्थिक सुधारकी बातोमे और शायद अपने सामाजिक दर्जेकी उन्नतिमे हे। स्वभावत वे कुछ और सोच नही सकते। हमारे साथ मिलने-जुलने, और हमारे मन्दिरोमे साथ-साथ पूजा-अचना करने की उनकी इच्छा मर गई हे, तो उसकी जवाबदेही हमारे ही ऊपर है।

इसीसे मै कहता हूँ कि हिदू-धर्मका ईश्वर उनके लिए सचमुच कोई अस्तित्व नही रखता। यह सही है कि हिन्दू-धमका ईश्वर इस्लाम या ईसाई धर्मके ईश्वरसे भिन्न नही है। केवल हरएक धमकी पूजा-उपासनाकी पद्धति जुदा-जुदा है। अगर हरिजनोको यह सिखाया गया हे कि जिन मन्दिरोमे सवण जाते है वे उनके लिए नही है, तो आप उनकी इस उपेक्षाके लिए उन्हे दोष नही दे सकते। उनकी इस उपेक्षाका कारण हमारा ही पाप हे, हमारा ही वह अक्षम्य दुव्यवहार है, जो हमने उनके साथ किया हे। मन्दिरोके प्रति उपेक्षाका भाव रखने की तो उन्हे आदत डलवाई गई है। त्रावणकोर ओर हिदुस्तानके दूसरे भागोके हरिजनोमे अब भी मदिरोके अन्दर प्रवेश करने की जो इच्छा बनी हुई हे और दूसरे हिदुओके साथ समानाधिकारका जो दावा वे कर रहे है, यह एक अच्छी ओर सुखकर बात है, पर मेरी इस दलीलपर उसका कोई असर नही पडता।

हरिजनोके लिए मदिर खोल देनेका एक ओर पक्ष भी है। वह आपको जरूर समझ लेना चाहिए। अगर हरिजनोके लिए आप इस वजहसे अपने मन्दिर खोल रहे है कि उन्हे खुलवानेकी हरिजनो की माग है, तो आप कोई बडे महत्त्वका काम नही कर रहे है। पर अगर आप यह समझकर मन्दिर खोल रहे है कि हरिजनोके लिए मन्दिर बन्द रखकर हमने पाप किया हे, तब जरूर वह एक धार्मिक कृत्य हो जाता है। हिन्दुस्तान-भरके हरिजन यदि अन्य धर्मोको स्वीकार कर ले, और केवल एक हरिजन हिन्दू-समाजके अन्दर रह जाये, तब भी मेरा यह आग्रह रहेगा कि हरिजनोके लिए सवण हिदुओको मन्दिरके द्वार खोल देने चाहिए। यह धार्मिक दृष्टि ही हरिजनोके प्रश्नको दूसरे तमाम प्रश्नोसे एक बिलकुल भिन्न रूप और एक खास महत्त्व दे देती हे। अगर हमारा मौजूदा कायक्रम महज नीतिज्ञता या राजनीतिक उपयोगितासे प्रेरित होता, तो उसमे वह धार्मिक महत्त्व या अभिप्राय न रहता, जो उसका मेरे लिए है। यदि मुझपर सन्तोषजनक रूपसे यह प्रकट हो जाये कि हरिजनोका राजनीतिक या आर्थिक उद्धार होने-भरसे वे हिन्दू-समाजमे बने रहेगे, तब भी मै चाहूँगा कि मन्दिर तो उनके लिए खोल ही देने चाहिए, और असमानताका नाम-निशान तक मिटा देना चाहिए। क्योकि मेरे लिए तो यह प्रायश्चित और उस अन्यायके प्रतिकारका प्रश्न हे, जो हमने अपने ही बन्धुओके साथ किया है।

इस प्रकार हरिजनोके दूसरे धर्मोमे चले जाने की धमकीसे बहुतेरे हिन्दुओमे जो खलबली-सी मच गई हे उसका हरिजनो के प्रति हमारे कत्तव्यसे कोई सम्बन्ध नही है। अगर हम उनकी धर्म-परिवतनकी धमकीसे डरकर अपने कायकी रफ्तार बढा देगे तो मन्दिरोके खोले जाने का वह अथ नही रहेगा, जो मैने अभी बतलाया है। यकीन रखिए, इस प्रकारके उपायोसे हिन्दू-धमकी रक्षा होनेवाली नही है।

हरिजनोसे किसी भी प्रकारके प्रत्युपकारकी आशा किये बिना, हम अपने कर्त्तव्य-पालनके द्वारा जबतक हिन्दू-धर्मकी शुद्धि नही करेगे तबतक हम उसकी रक्षा कर ही नही सकते। हिन्दू-धर्मकी रक्षाका बस यही एकमात्र उपाय है। हरिजनोके लिए अगर आप उपयोगिता या राजनीतिक चालके तौरपर कुछ कर देते है तो इससे यह नही कहा जा सकता कि अस्पृश्यताको आपने अपने दिलसे निकाल बाहर कर दिया है। आगे ऐसे अनेक अवसर आ सकते है जब यह घातक जहर हिन्दुओके सामाजिक ढाँचेमे फैलकर इस वेगसे फूट पडे कि हम किकर्त्तव्य-विमूढ रह जाये। यदि अस्पृश्यतापर हमे लज्जा आती हे तो हमे उसे दूर कर ही देना चाहिए, चाहे उसका कोई परिणाम हो या न हो।

जब सवर्ण हिन्दू अपनी उच्चता ओर श्रेष्ठताके अभिमानमे यह कहते है कि जब हरिजन शराब पीने, मुदार मास खाने, गन्दे रहने वगैरहकी बुरी आदते छोड देगे तब हम अस्पृश्यता दूर कर देगे, तब मै अधीर हो उठता हूँ। मान लीजिए कि मेरे पिता या माता, या पुत्र या पुत्री कोढी है, तो क्या मै यह कह सकता हूँ कि जब वे कुष्ठसे मुक्ति पा जायेगे, तभी मै उनका स्पश करूँगा? अगर मै जरूरतके वक्त उनकी सेवा नही करता, तो मै अपने और उनके पवित्र पारस्परिक सम्बन्धको झुठलाता हूँ। हरिजनोकी स्थिति इतनी बदतर है कि जिसका कोई हिसाब नही है, और उनकी इस दुर्गतिके जिम्मेवार खुद हम है। शराब पीने, मुर्दार मास खाने और उनकी दूसरी गन्दी आदतोकी सीधी जवाबदेही हमारे ही ऊपर है। इसलिए, अगर हम सच्चे है तो हमे अपने हरिजन भाइयोको, बावजूद उनकी त्रुटियोके, गले लगाना ही होगा। और मुझे आशा है,—और यह आशा निराधार नही है—कि हरिजनोको आप जब अपना भाई-बन्धु मानने का रुख अख्तियार कर लेगे, तो उसी दिन वे अपनी गन्दी आदते छोड देगे। इस दिशामे जिन लोगोको अनुभव है, वे मेरे इस कथनकी पुष्टि कर सकते है। इसलिए यह पहली आवश्यकता है कि सवर्ण हिन्दू अपने हृदयको शुद्ध करे और हरिजनोके प्रति उनका जो रुख चला आ रहा है, उसे बदले।

कृपाकर मेरे सामने ऐसे निराशा-भरे मामले पेश न कीजिएगा जब आपने तो हरिजनोको अपनाया हो और उन्होने सुधरने से इनकार कर दिया हो।

पर यह एक चेतावनी देने के बाद अब मै खुद अपनी साक्षी देना चाहता हूँ। मै ऐसे एक भी हरिजनको नही जानता जिसे किसी सवर्ण हिन्दूने अपना लिया हो और उसने अपने-आपको न सुधारा हो। सचमुच, अन्यथा हो ही नहीं सकता। उस हरिजनको तो परिवर्तन इतना अच्छा लगेगा कि उसकी सचाईमे भी उसे सन्देह होगा। पहलेसे अच्छे वातावरणमे रहने का उसका अपूर्व अनुभव उसकी शराब पीने या मुर्दार मास खाने की तलबको छुडा देगा। और जहाँतक सफाईका सवाल है, जितनी सुविधाएँ मिलेगी, उतना ही वह सफाईसे रहने लगेगा। यह तो सवर्ण हिन्दुओका निरा दुराग्रह है कि वे हरिजनोकी गन्दगीकी दलीले देते रहते है, ताकि खुद उन्हे सही रास्तेपर न चलना पडे।

मै अब अपना भाषण आर्थिक पहलूकी बात लेकर समाप्त करता हूँ। हरिजनोके प्रति हरएक सवर्ण हिन्दूका क्या कर्त्तव्य है, इस सम्बन्धमे अपने विचार मैने आप

लोगोके सामने ठीक-ठीक रख दिये है। इसके अलावा और भी बहुत-कुछ है जिसे सवर्ण हिन्दू अपने निजी आचरणमे उतार सकते है।

लेकिन मै यह जानता हूँ कि यहाँ एकत्रित हुए सदस्यो या प्रतिनिधियोमे आपसमे यह चर्चा होगी कि हरजिन सेवक सघोका काम बगैर रुपये-पैसेके कैसे चलाया जाये। ऐसे प्रतिनिधियोको मै बता दू कि इस आशकाका कारण उनमे श्रद्धाकी कमी है। हमे दस-पाच सवर्ण हिन्दुओके हृदयको नही, बल्कि लाखो-करोडो सवर्णोके हृदयको पिघलाना है। हालाँकि हम कगाल है, तो भी हमने यह कभी नही देखा कि कोई हिन्दू-मन्दिर पैसेकी कमीके कारण बन्द हो गया हो। मै चाहता हूँ कि आप लोग इस रहस्यको जरा समझिए। इस मिथ्या विचारमे मत रहिए कि लाखो-करोडो हिन्दू अपने मन्दिरोको केवल अन्ध-विश्वासके कारण पैसा देते है। इस बातमे आशिक सत्य हो सकता है। पर वह आशिक सत्य ही होगा। अधिक सत्य तो यह है कि जो लोग इन मन्दिरोमे रुपया-पैसा, चावल, नारियल, सुपारी आदि चढाते है वे इस श्रद्धाके कारण ही ऐसा करते है कि वे एक पुण्य-काय कर रहे है। वह श्रद्धा कैसी है उसे शब्दोमे नही समझाया जा सकता। और अगर आप इस आचरणको मूढ-विश्वास कहे तो मै आपको बतला दूँ कि न तो आप खुद अपने प्रति, न हिन्दुस्तानके प्रति और न मनुष्य-जातिके ही प्रति न्याय कर रहे होगे। मै जानता हूँ कि मूढ-श्रद्धा बहुत पुरानी चीज हो गई है। इस अन्ध-विश्वासके बहुत-से दानवी रूपोको ईश्वरने बहुत समयतक ढील दी हे, पर कितनी ही लम्बी उनकी आयु क्यो न हो, काल-चक्रके सामने तो वह कुछ भी नही है। बडा सत्य तो यह है कि जो श्रद्धा लाखो मनुष्योको प्रेरित करके मन्दिरोमे ले जाती है, उसमे नि सन्देह कुछ-न-कुछ पवित्रता और सचाईका अश अवश्य है। अगर आपको उन मूक मानवोकी पवित्र भावनामे विश्वास है जो इन मन्दिरोका पोषण करते है, और यदि आपको अपने उद्देश्यमे विश्वास है, तो आपमे से हरएक व्यक्ति छोटा-छोटा मन्दिर बन जाये, और जनतासे पैसा या चावल इकट्ठा करे।

अगर आप लोग निश्चित होकर इस धोखेमे बैठे रहेगे कि घनश्यामदास बिडला-जैसे चन्द करोडपति हमेशा हमारे कामके लिए रुपया भेजते रहेगे, तो मै आपको यकीन दिलाता हूँ कि आपका यह आन्दोलन निश्चय ही असफल हो जायेगा। आप लोग तबतक इस आन्दोलनको सफल नही बना सकेगे, जबतक आप लाखो-करोडो मूक भाइयोके पास जाकर उनसे एक-एक पैसा या एक-एक मुट्ठी चावल उनके इस विश्वासके चिह्नस्वरूप, कि अस्पृश्यताके पापसे उन्हे मुक्त हो ही जाना चाहिए, माग-माँगकर इकट्ठा करने की जरूरत महसूस नही करेगे।

अगर सफलता आपको देरसे मिले तो कोई परवाह नही। चाहे इस कामके सफल होने मे कुछ वष लगे या चाहे युगो लग जाये, आपको इस बातमे तो असीम श्रद्धा रखनी ही चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओका हृदय बदलने और हिन्दुओके घर-घर अस्पृश्यता-निवारणका सन्देश पहुँचाने का यही एकमात्र मार्ग है। आप यह जान ले कि समय कभी भी सत्यके मार्गमे बाधक नही होता। और यह बिलकुल पूर्ण सत्य है कि

आपको अस्पृश्यतासे छुटकारा पाना ही होगा, नही तो नाश अवश्यम्भावी है। अधीर सिर्फ वे ही लोग हुआ करते है जो एक ऐसे कामको सहारा देते है जिसकी सत्यतामे उन्हे सन्देह होता है। आप तो यह आस्था रखिए कि जिन तमाम प्रबल शक्तियोने हमारे विरुद्ध व्यूह बना रखा है, वे नष्ट हो जायेंगी, और हमारा यह आदोलन हिदू-धमको शुद्ध करता रहेगा। अगर आप आशा, साहस और श्रद्धा छोड बैठेंगे तथा सतत जाग्रत न रहेंगे तो लोगोको आप यह दोष नही दे सकते कि वे आपको पैसा नही दे रहे है। इस आन्दोलनका अन्त बाहरी शक्तियोके कारण नही, किन्तु उसकी भीतरी कमजोरियोसे ही होगा। हरएक कार्यकर्त्ता इस प्रश्नको इसी दष्टिसे देखे, यही मेरी प्रार्थना है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-६-१९३६

४५ पत्र . बालकृष्ण भावेको

बगलोर
११ जून, १९३६

चि० बालकृष्ण,

जब तुम आबोहवा बदलने के लिए जाते हो या अन्य उपचार कराते हो तो मुझे स्वप्नमे भी यह विचार नही आता कि तुम्हे जीनेका मोह है। शरीर धर्मक्षेत्र है और समुचित प्रयत्न करके उसे बनाये रखना हमारा कर्त्तव्य है और इसीलिए ये सब उपचार करने चाहिए। तुम्हे भटकाने का एक कारण यह भी है कि मुझे तुमसे प्रभूत सेवा लेनेका लोभ है। जबतक कमजोरी बनी हुई है तबतक जहा भी रहोगे तुम्हे दूसरोकी सेवा लेनी ही पडेगी। यह सब नम्रतापूर्वक भगवान्के नामपर होने देने मे मुझे कही कोई दोष नजर नही आता। इसके पीछे भी यही तो भावना है न कि यदि भगवान् तुम्हे स्वास्थ्य देगा तो उसका उपयोग सेवाके लिए ही किया जायेगा। इसलिए मेरी सलाह है कि तुम्हे किसी भी तरहकी चिन्ता करके अपने स्वास्थ्य-सुधारमे बाधक नही बनना चाहिए।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

४६ पत्र · वल्लभको

११ जून, १९३६

चि० वल्लभ,

महादेव कल तेरे दो पत्रोका उत्तर तो सक्षेपमे दे ही चुके है। वल्लभ नाम अच्छा हे। यदि इसके साथ कुछ जोडना हो तो मै दास जोडता ही हूँ। एक तो यह प्रत्यय है और दूसरे हमने स्वेच्छासे सेवाधम स्वीकार किया है और साथ ही वर्ण विलुप्त हो चुके है, इसलिए हम शूद्र है। इसके अतिरिक्त वल्लभदास साधुका नाम होता है। फिर आश्रममे सब लोग परिहासपूवक तुझे स्वामी कहकर भले गाली दे, किन्तु बाहर तो केवल वल्लभ या वल्लभदास ही उचित होगा। तू 'भाई' नही होना चाहता, अत सरदारसे तेरी आधी प्रतिद्वन्द्विता है। तुम दोनो सेवक तो हो ही। वे भले सरदार रहे और तू सदा दास बना रहे।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

४७ पत्र . रेहाना तैयबजीको

११ जून, १९३६

बेटी रेहाना,

तुमने तार करके बहुत अच्छा किया। हमारे लेखे तो अब्बा जान सदा जीवित है। यह देह तो 'चन्द रोज'[१] का तमाशा है। किन्तु उसमे रहनेवाली आत्मा तो अमर है। उनकी देहको तो हमने कब्रमे रख दिया। उसके साथ क्षणिक सम्बन्ध था। उसमे निवास करनेवाला देहधारी, जिसे हम अपना मानकर प्यार करते थे, आज भी हमारी निगहबानी कर ही रहा है। वह सदा हमारे सारे कामोका साक्षी रहे। उसकी साक्षी हमे अयोग्य कामोको करनेसे बचाये।

अच्छा हुआ कि लगभग सारा कुटुम्ब वहाँ था।

सबको मेरी ओरसे आश्वासन देना। मुझे कौन आश्वासन देगा? हम दोनोके बीचका बन्धन तो तू जानती है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ नजीर अकबराबादीकी प्रसिद्ध गजलकी ओर इशारा है।

४८. भेंट : एम० वी० जम्बुनाथन्‌को

११ जून, १९३६

गाधीजी ने श्री जम्बुनाथन्‌के[1] उर्दू-हिन्दी शब्द-कोष बनाने के प्रयासकी सराहना की और इस ग्रन्थको और विस्तृत और सम्पूर्ण बनाने के लिए उनको कुछ सुझाव दिये।

उर्दू-हिन्दी-विवादकी चर्चा करते हुए गाधीजी ने कहा कि यह विवाद इन दोनो लिपियोके भेदके कारण नहीं है, बल्कि मौजूदा पीढीके हिन्दुओ और मुसलमानोकी मनोवृत्तियाँ इसका कारण है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-६-१९३६

४९ प्रश्नोत्तर . हरिजन-कार्यकर्त्ता सम्मेलन, कगेरीमें[2]

[११ जून, १९३६][3]

प्रश्न आप अपने भाषणमें[4] मन्दिरोके बारेमें शायद कुछ ज्यादा सख्त बोल गये है। कट्टर सवर्णोंको लगता है कि उनके मन्दिरो पर हम लोगोकी श्रद्धा नहीं है, और अपने भाषणमें आपने जो विचार प्रकट किये है उनसे उनकी इस धारणाको समर्थन ही मिलेगा।

उत्तर सवर्णोंको लगता है कि उनके मन्दिरो पर हमारी श्रद्धा नही है, ऐसा कहकर तो आप उसी बातको स्वीकार कर रहे है जिसका खण्डन करना चाहते है। वे मन्दिर जैसे उनके है, वैसे ही हमारे है। मैंने तो अपने विचार उन लोगोके लिए प्रकट किये थे जिनकी मन्दिरो पर श्रद्धा है। यह कहकर कि जिन मन्दिरोके द्वार हरिजनोके लिए बन्द है, उनका ईश्वरने परित्याग कर दिया है, हम सवर्णोमे कोई वैरकी भावना पैदा नही कर रहे है। क्योकि वहाँ जो ईश्वर है वह तो हमारा बनाया हुआ ईश्वर है। अगर वहाँ स्वय ईश्वर हो तो वह यह कहेगा "मूर्खो, क्या तुम मुझे घट-घटमे समाया हुआ नही देखते?" किन्तु ईश्वर तो इतना कृपालु है

१ मैसूर विश्वविद्यालयके

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

३ महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

४ देखिए "भाषण हरिजन-सेवक सम्मेलन, कगेरीमें", १०-६-१९३६।

कि वह यह भूल जाता है कि हम मूर्ख है, और सोचता है कि हम लोगोने अपने अंतरके पापोको मिटाने के लिए ही मन्दिरोमे उसकी प्रतिष्ठा की है। पर जब हम देखते है कि अपने मन्दिरोमे हमने जिस ईश्वरको प्रतिष्ठित किया वह अपने भक्तोके एक वर्गको अस्पृश्य मानने देता है तब तो हम यही कहेगे कि उसने ऐसे मन्दिरोका परित्याग कर दिया है। इसीलिए मै कहता हूँ कि हमे उन मन्दिरोमे जाना ही नही चाहिए जिनमे हरिजन प्रवेश न कर सकते हो। पहले हम अपने कुटुम्बके लोगोको समझाये, और इसके बाद दूसरोको भी यही सलाह दे।

प्र० क्या हरिजन-सेवक संघ वर्तमान जात-पॉतके खिलाफ लड सकता है? कारण, जबतक यह जात-पॉत नष्ट नहीं हो जाती, तबतक अस्पृश्यताका दूर होना असम्भव है।

उ० अस्पृश्यता तो सम्पूर्ण रूपसे नष्ट होनी ही चाहिए, पर जहाँतक संघका एक संस्थाके रूपमे सम्बन्ध है, हमने उसका काम केवल इतना ही रखा है कि वह उग्र ढगकी अस्पृश्यताको दूर करने के लिए प्रयत्न करे। इसलिए हम अभी शुरूमे जात-पाँतसे जूझना नही चाहते, हालाँकि संघके अधिकाश सदस्य व्यक्तिगत रूपसे रोटी-बेटी व्यवहार-सम्बन्धी जात-पॉतकी रुकावटोमे विश्वास नही करते और ऐसे तमाम प्रतिबन्धोको उन्होने खुद तोड डाला है।

प्र० क्या कभी किसी समय हमें जात-पॉत पर हमला करना होगा?

उ० क्यो नही? हम अपनी मर्यादाएँ स्वीकार करते है और इस तरह अपनी प्रगतिके वेगको हमने खुद ही रोक रखा है। जब हममे विश्वास आ जायेगा तब हम संघके सिद्धान्तमे हेरफेर कर सकते है, और एक कदम और आगे बढ सकते है। जैसा मैने कहा है, लोग व्यक्तिगत रूपसे तो आगे बढ ही चुके है। जहॉतक रोटी-बेटी व्यवहार-सम्बन्धी प्रतिबन्धोका सवाल है, वे वर्णाश्रम धर्मके अंग नही है। रोटी-बेटीका व्यवहार तो व्यक्तिगत चीज है। किन्ही खास व्यक्तियोके साथ भोजन या विवाह करने या न करने के लिए कोई शास्त्र मुझे बाध्य नही कर सकता। आपसे तो मेरा यह आग्रह है कि हमारे निजी आचरण और संघकी नीति (जो उसके विधानके अनुसार ही बदली जा सकती है) के बीच जो मौलिक भेद हो, उसे आप समझ ले।

प्र० वर्तमान जागृतिके फलस्वरूप, कई जगह हरिजनोने मुर्दा जानवरोको उठाने-फेंकनेका काम छोड दिया है, और कई जगह तो हरिजन-सुधारकोको अपने हरिजन भाइयोसे यह काम केवल इसलिए छोडने के लिए कहना पडा है कि मुर्दार मास खानेकी उनकी आदत छुडवाई जा सके। इसपर कई जगह उन्हे सवर्ण हिन्दुओके क्रोधका शिकार भी होना पडा है, जिन्होने उनके बहिष्कारकी घोषणा करके उनकी तमाम सामाजिक सुविधाओको रोक दिया है। गाधीजी से पूछा गया कि ऐसी हालतमें हरिजन-सेवक क्या करे?

उ० जहाँ-कही भी ऐसा हो, हरिजनोकी रक्षा करना हमारा फ़ज है, और अगर उनकी जिन्दगी दूभर बना दी जाये, तो किसी ऐसे स्थानपर जा बसने मे हमे उनकी मदद करनी चाहिए, जहाँके लोग अधिक उदार हो। लेकिन हरिजन-सेवकोके लिए सबसे अच्छा तो यही है कि वे सुधारवादी विचार रखनेवाले सवर्णोमे ही, जिनमे वे स्वय भी शामिल है, ऐसे व्यक्ति खोज निकाले जो खाल साफ करने और चमडा कमाने का काम करने को तैयार हो। ऐसे चर्मालय तो मौजूद है ही जहाँ मुर्दा जानवरकी खाल उतारने से लेकर चमडा कमानेतक की सब क्रियाएँ सिखाई जाती है। अगर अनेक सवण यह काम करने के लिए तैयार हो जाये, तो फिर जाग्रत हरिजन इस काममे सकोच न करेगे। लेकिन अगर वे इस कामको छोडकर कोई ओर काम करना चाहे, तो इसका उन्हे हर प्रकारसे अधिकार है। अत जहाँ कही वे इस कामको न करना चाहे वहाँ खुद् हमे ही इसे करने का जिम्मा ले लेना चाहिए। इस काममे प्रतिदिन धनकी कितनी भीषण बर्बादी हो रही हे, यह हमे सर्व-साधारणको महसूस कराना चाहिए। अगर हम मुर्दा जानवरकी खाल उतारने आदिका तरीका जानते, तो हमे मालूम होता कि जर्जर और भूखो मरते हुए जानवरके जिन्दा रहते हमे जो आमदनी होती है, उसकी बनिस्बत मुर्दा जानवरसे प्राय ज्यादा ही आमदनी हो जाती है। क्योकि मुर्दा जानवरके माससे उम्दा खाद बन सकती है, उसकी हड्डियोको सिर्फ जलाकर बढिया खाद बनाई जा सकती है, तथा उनसे बटन, मूठ आदि भी बनाई जाती है, उसकी चर्बी, जो आसानीसे सुरक्षित रखी जा सकती हे, कई कामोमे उपयोगी होती है, और उसकी आँते धुनकी तथा वाद्य-यन्त्रोके लिए ताँत बनाने के काम आती है।

प्र० लेकिन, हमारे यहाँ तो एक विचित्र स्थिति पैदा हो गई है। हमारे यहाँ हरिजनोका जोर है और उन्होने सामाजिक बहिष्कारतक का मुकाबला करने का निश्चय कर लिया है। ऐसे हरिजन बहुत थोडे है जो जानवरोकी लाशोको ठिकाने लगाने आदिके काम जारी रखने के पक्षमें है। बताइए, मै उन्हे क्या सलाह दूँ?

उ० नि सन्देह उन्हे अपना धन्धा जारी रखने की स्वतन्त्रता रहनी चाहिए।

प्र० खुद अपनी ही जातिवालो से बहिष्कारका खतरा हो तो भी?

उ० नही। हमे जातिमे फूट नही पडने देनी चाहिए।

प्र० क्या हमने मन्दिर-प्रवेश विधेयकको छोड दिया है? क्या हम उसे फिर नहीं उठा सकते?

उ० हमने उसे छोडा नही है। जैसे ही परिस्थिति उसके अनुकूल होगी वैसे ही उसे फिर उठाया जायेगा।

प्र० प्रचारके लिए क्या बजटमें और गुजाइश नहीं रखी जा सकती?

उ० नही। मेरा बस चले तो बजटकी ५ प्रतिशत रकम भी प्रचारके लिए खर्च करने की इजाजत न दूँ। लेकिन आपको अगर प्रचार-कार्यपर रकम खर्च करनी ही हो, तो आपको खास तौरसे उसीके लिए अलगसे रुपया एकत्र करना चाहिए। मगर तब भी सघ आपसे उस खर्चका पाई-पाईका हिसाब माँगेगा ही।

प्र० खुद हरिजनोमें ही जो उप-जातियाँ है और छुआछूत है, उससे हमारे काममें बडी भारी रुकावट पडती है। इस बाधाको हम कैसे दूर करे ?

उ० खुद हमारे अन्दर जो उप-जातियाँ और छुआछूत मौजूद है उसको दूर करके। हरिजन तो अपने मालिकोकी नकल-भर कर रहे है। हमने उन्हे गुलाम-जैसा बनाकर रखा है और अपनी नकल करना सिखाया है। और यह तो आप जानते ही है कि नकल करनेवाला असलसे भी बढ जाता है — अर्थात्, उसे विकृत बना देता है।

प्र० क्या आप यह खयाल नही करते कि विश्लेषण किया जाये तो सारी हरिजन-समस्या आखिर एक आर्थिक समस्या ही है, और ज्यो ही आप हरिजनोकी आर्थिक स्थिति सुधार देंगे त्यो ही यह समस्या अपने-आप हल हो जायेगी ?

उ० नही। आप आर्थिक समस्याको हल कर भी दे तो भी उससे हरिजन-समस्या हल नही होगी। हरिजन-समस्या तो हिन्दू-धर्ममे मौजूद एक रोगको दूर करने की समस्या है, और वह आर्थिक हलसे दूर नही होगा। डॉ० अम्बेडकरको ही लीजिए। आर्थिक दृष्टिसे वे हममे से अधिकाशसे अच्छे है, फिर भी माने तो अछूत ही जाते है।

एक कार्यकर्त्ता, जो मूर्तिभजक मालूम पडते थे, हरिजनोमें प्रचलित कुछ पूजा-विधियो — यहाँतक कि राम और कृष्णकी भी पूजा — के बहुत खिलाफ मालूम पडे। बडे भोलेपनसे उन्होने कहा "मै जानता हूँ कि और तो और, जब वे राम और कृष्णकी पूजाका नाम लेते है तब भी वे पेड-पत्थरो-जैसी जड वस्तुओकी ही पूजा करते है। और राम या कृष्णकी पूजा भी मुझे स्पन्दित नहीं करती, चाहे वे कितने ही महान् रहे हो। क्या मै हरिजनोसे यह न कहूँ कि मेरी तरह वे भी आपको ही अवतार मानें और आपकी ही पूजा करे ?"

जो लोग वहाँ मौजूद थे उन सबकी हँसीके बीच, गाधीजी ने शान्तिके साथ कहा

यही कठिनाई तो मेरे सामने मौजूद है। तुम्हे जानना चाहिए कि मै तो एक मिट्टीका पुतला ही हूँ, और जिन महापुरुषोसे तुम्हे विरक्ति होती हे वे ही मेरे लिए पूज्य आदर्श है। राम और कृष्णके नामसे ही मुझमे आशाका सचार हो उठता है। अत मै तुम्हे सलाह दूँगा कि तुम अपने अवतारको, अर्थात् मुझे टुकडे-टुकडे कर दो। राम और कृष्णकी निन्दा करने से तो यह कही अच्छा होगा, क्योकि उनकी निन्दा करना तो मानो हिन्दुत्व और धर्मपर आघात करना है।

"लेकिन राम और कृष्ण थे तो आखिर मनुष्य ही।"

तुम समझते हो कि मै ऐसा बेवकूफ हूँ कि सदियो पहले हुए उन्ही राम और कृष्णकी पूजा करूँगा ? मै तो उन राम और कृष्णकी पूजा करता हूँ जो आज मौजूद है, जो सदासे मौजूद रहे है, जो मेरे अन्तरतमके विचारोको जानते है और मेरी गलतियोको हमेशा सुधारते रहते है। अगर मुझे इस बातका विश्वास

न होता कि मेरे अगल-बगल दोनो ओर राम और कृष्ण मौजूद है, तो श्री क, ख तथा तुम-जैसे प्रश्नकर्त्ताओके कारण मै पागल न हो गया होता?

"लेकिन", श्री राजगोपालाचारीने कहा, "इस स्पष्टीकरणसे शायद ही काम चले। इस स्पष्टीकरणसे तो, सम्भव है, आपको अवतार मानने का उनका भाव और दृढ ही होगा।"

अच्छा, तब तो मेरे नौजवान भाई, मुझे तुम्हे यह याद दिलाना आवश्यक है कि अगर तुम्हारा पक्का विचार है कि मै एक अवतार हूँ, तो मै तो एक-न एक दिन मरूँगा ही। तब, क्या तुम्हारे लिए ईश्वर भी नही रह जायेगा?

लेकिन ईसाई भी तो ईसामसीहकी पूजा करते है?

तुम्हे जानना चाहिए कि ईसाई लोग जिस ईसामसीहकी पूजा करते है उसका पुनर्जन्म हुआ था। इसी प्रकार राम और कृष्णकी पूजा करनेवाले उन्ही राम और कृष्णकी पूजा करते है जो तुम्हारी अपेक्षा, या कमसे-कम मेरी अपेक्षा तो निश्चय ही अधिक जीवन्त है। वे अब भी जीवित है, और अनन्त कालतक जीवित रहेगे। अगर राम और कृष्णकी पूजा तुम्हे न भाती हो, तो तुम्हे चाहिए कि हरिजनोको हिन्दू-धम छोड देने की सलाह दो, क्योकि मुझे इस बातका पक्का विश्वास है कि जो आदमी राम और कृष्णको ईश्वरके रूपमे नही मानता वह हिन्दू नही है। जो मुसलमान यह कहे कि कलमेमे मेरा यकीन नही है उसे मुसलमान अपने बीचसे भगा देगे। अत मुझसे यह मत पूछो कि क्या मै उन रामकी, जिन्होने शम्बूकका वध किया, और उन कृष्णकी, जिनके बारेमे तरह-तरहकी कथाएँ प्रचलित है, पूजा करता हूँ। मै तो जीवन्त राम और कृष्णकी पूजा करता हूँ, जो सत्य, शिव और पूर्णताके अवतार है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-७-१९३६

५०. बातचीत : एक हरिजन दम्पतिके साथ[1]

[१२ जून, १९३६ या उसके पूर्व][2]

गाधीजी को यह पता नहीं था कि वे हरिजन है, सो उनको देखकर उन्होने पूछा

तुम दोनो विवाह करके आ रहे हो? तो फिर मेरे लिए क्या लाये हो?

"हम आपके लिए ये फूल लाये है", दूल्हेने कहा।

लेकिन फूलोसे तो काम नही चलेगा। विवाह करके तुम लोग मुझे कोरे फूलोसे सन्तुष्ट करना चाहते हो?

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२- साधन सूत्रके अनुसार यह और इससे अगली बातचीत बगलोरमें हुई थी, जहाँ गाधीजी १२ जून, १९३६ तक रहे थे।

महात्माजी, हम आपके लिए अगूर भी तो लाये है।

अगूर तो खट्टे है, अत न तो मै तुम्हारे ये अगूर स्वीकार कर सकता हूँ और न ये फूल। जाओ, तुम दोनो आपसमे सलाह करो और फिर मुझे बताओ कि गरीब हरिजनोके लिए तुम मुझे क्या देना चाहते हो।

"हम तो खुद ही हरिजन है महात्माजी", उन्होने कहा, और श्री रामचन्द्रने उनकी तरफसे उनका परिचय देते हुए कहा "बापूजी, यह हमारे दीवान बहादुर श्रीनिवासन्के पौत्र है।"

गाधीजी एक क्षणके लिए कुछ विचारमें पड गये। वे शायद यह भूल गये थे कि दीवान बहादुर हरिजन है। फिर उन्होने कहा

ठीक है, मै समझ गया। तब तो तुम्हे नही, बल्कि मुझे कोई चीज तुम्हे देनी चाहिए।

हमें आप अपना आशीर्वाद दीजिए।

सो तो मै देता ही हूँ। अब मुझे यह बताओ कि तुम हिन्दू-धमके अन्दर सुखी हो या इस कमबख्त धर्मको छोड दोगे?

हम इसमें पूरी तरहसे सुखी है, हम इसे कभी नही छोडेगे।

तो मै यह घोषणा कर दू कि दीवान बहादुर श्रीनिवासन्का पौत्र और पौत्र-वधू हिन्दू-धमके अन्दर सुखी और सन्तुष्ट है?

अवश्य कर दीजिए। हम लोग पूरी तरहसे सुखी है।

"हम आपके चरणोका स्पर्श कर सकते है?" यह कहकर दोनोने पैर छुए और गाधीजी ने खूब प्यारसे उनकी पीठ ठोकी — अपने अत्यन्त नजदीकियोको आशीर्वाद देनेका उनका यही प्रिय तरीका है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २७-६-१९३६

५१. बातचीत : एक पोलिश छात्रसे[1]

[१२ जून, १९३६ या उसके पूव]

[छात्र] ग्रामोद्धारमें मेरी गहरी दिलचस्पी है। [2] में एक स्कूल है, जिसका सचालन कैथलिक पादरी करते है। इस फोटोकी[3] बिक्रीसे मिलनेवाले पैसेसे मैं उस स्कूलकी मदद करूँगा।

फोटो लौटाते हुए गाधीजी ने कहा

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।
२ साधन-सूत्रमें ही यहाँ छूट है।
३ जिसपर वह छात्र गाधीजी के हस्ताक्षर चाहता था।

अच्छा, यह तो बात ही बिलकुल अलग है। आप मुझसे यह अपेक्षा तो नही करते कि मै धर्मान्तरणके काममे पादरियोका समर्थन करूँ? वे क्या करते है, यह तो आपको मालूम होगा?

और इसके बाद उन्होने उसे तिरुचेनगोडुके पासके तथाकथित धर्मान्तरणका किस्सा बताते हुए कहा, वहाँके हिन्दू मन्दिरको भ्रष्ट किया गया, तोडा-फोडा गया, अन्तर्राष्ट्रीय धर्म-सघ (इन्टरनेशनल फेलोशिप ऑफ फेथ्स)के लोगोने मुझसे अनुरोध किया कि इस घटनाके बारेमे मै कुछ न लिखूँ, क्योकि वे लोग बीच-बचाव करने की कोशिश कर रहे थे, अन्तमें मुख्यत ईसाइयोसे बनी उस सस्थाके बीच-बचाव करने का भी कोई नतीजा नहीं निकला और तब मुझे 'हरिजन' में उसपर लिखने की छूट दी गई। लेकिन मैंने जान-बूझकर उस विषयपर कुछ नहीं लिखा क्योकि अगर लिखता तो उससे उत्तेजना फैलनेका डर था।

इसपर उस छात्रने कहा "लेकिन मैंने जिन पादरियोका उल्लेख किया है वे तो ऐसे लोगोके बीच काम कर रहे है जो बहुत पहले ईसाई बन चुके है।

सो तो ठीक है, लेकिन वे लोग नयी-नयी खुराफाते करते रहते है। मेरी समझमें नही आता कि एक उदात्त धर्मके माननेवाले लोग एक ही धमके अनुयायियोके दो वर्गोके बीच विनाशकारी झगडे खडे करनेमे मदद क्यो दे।

लेकिन मैंने तो खुद ही एक धर्मको छोडकर ईसाई धर्मको अपनाया है। इस धर्मने मुझे कितना सुख और सन्तोष दिया है इसका मै वणन नहीं कर सकता।

आपकी बात मै समझता हूँ। आप एक ऐसे ईसाईकी भाषाका प्रयोग कर रहे है जिसने सच्चे मनसे ईसाई धर्मको ग्रहण किया है। आप एक हृदयवान व्यक्ति है, हृदयके मूल्यको समझते है। यदि भारतके हरिजन आपके जैसे बौद्धिक तथा आध्यात्मिक स्तरतक पहुँच जाये और उनको अपने मूल पापका वैसा ही बोध प्राप्त हो जाये जैसा आपको है तो मुझे इस बातसे बडी खुशी होगी कि वे स्वेच्छासे ईसाई धर्मको अपना ले। मेरे बेटेने जो तथाकथित धर्मान्तरण करके इस्लामको अपनाया है उसके बारेमे मैने क्या लिखा है, वह आपने पढा है? अगर वह शुद्ध और पश्चात्ताप भरे हृदयसे मुसलमान बन जाता तो उससे मेरा कोई झगडा नही हो सकता। लेकिन जिन लोगोने इस्लामको ग्रहण करने मे उसकी सहायता की और जो अब उसके स्वधर्म त्यागपर फूले नही समा रहे है, उन्होने सिर्फ उसकी कमजोरीका फायदा उठाया। वे इस्लामके सच्चे प्रतिनिधि नही है। मै सच कहता हूँ कि मुसलमानोके नाम मैंने जो पत्र लिखा है वह मेरे हृदयरक्त-रूपी स्याहीमे डुबोई हुई कलमसे लिखा गया है। इसी प्रकार अभी मैंने तिरूचेनगोडुके जिस धर्मान्तरणका उल्लेख किया है, उसमे भी ऐसी कोई चीज नही है जो अन्धकारको तनिक भी कम करती हो।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-६-१९३६

१ इसके बाद महादेव देसाईने लिखा है "गाधीजी कैसी गहरी व्यथासे यह सब बोल रहे थे, यह उस नौजवानके सामने स्पष्ट था। उसने गाधीजी से हस्ताक्षर देनेका आग्रह नहीं किया और इजाजत लेकर चला गया।"

५२. सलाह हिन्दी-कार्यकर्त्ताओको[1]

बगलोर
१२ जून, १९३६

गाधीजी ने सेवा-भावसे अनुप्राणित हिन्दी-प्रचारकोको सलाह दी कि वे बहुत-से क्षेत्रोमें काम करने की कोशिश करके अपनी शक्तिको बर्बाद न करे, बल्कि जो एक काम उन्होने हाथमें लिया है, उसीपर ध्यान दें।

गाधीजी ने कहा कि किसी भी मनुष्यका, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, केवल मातृभाषाके माध्यमसे ही पूर्ण मानसिक विकास सम्भव है और जो इस मतसे असहमत हो, उन्हे मैं मातृभाषाका द्रोही समझूँगा। यहाँतक कि यदि सर वेकटरामन भी कहे कि वे अपनी शोधोको मातृभाषामें समझानेमें असमथ है तो मैं उनसे कहूँगा कि आप अपना नोबल पुरस्कार और नाइटका खिताब अपने पास ही रखे।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-६-१९३६

५३ भाषण : हरिजन-कार्यकर्त्ता-सम्मेलन, कगेरीमें[2]

१२ जून, १९३६

धर्म-परिवर्तनकी धमकीका खयाल करके हमे कुछ नही करना चाहिए, क्योकि सिर्फ धर्म-परिवत्तनको रोकने के खयाल से आप जो-कुछ करेगे उसका कोई नतीजा न होगा, यह निश्चित है। धर्म-परिवतन हो या न हो, हमे तो हरिजन जो कठिनाइयाँ भुगत रहे है उन सबको दूर करने के अपने प्रयत्नोको दूना कर देना है। चूकि हम भी मनुष्य ही है, इसलिए धर्म-परिवर्तनकी धमकीपर यह प्रतिक्रिया तो हमपर होगी ही कि इसे रोकने के लिए हम भी कुछ करे। अत हमे इस तथ्यको ध्यानमे तो रख लेना चाहिए, लेकिन इसके कारण कुछ करना नही चाहिए। क्योकि इसके कारण हम अपने प्रयत्न दूने करेगे तो इस धमकीके पूरा होते ही, अथवा यह मालूम पडते ही कि यह कोरी धमकी ही है, हम अपने प्रयत्नोमे ढिलाई कर देगे। और ढिलाई चाहे किसी भी तरह क्यो न हो, उससे हमारे उद्देश्यको हानि ही पहुँचेगी। हरिजन

१ लगभग ३० महिलाओं सहित भारतके अनेक भागोसे आये हुए १०० से अधिक हिंदी कार्यकर्त्ता प्रात काल गांधीजी से मिले थे।

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

भी यह समझने लगेगे कि हमारा सारा आन्दोलन पानीका बुलबुला था और अब होना-जाना कुछ भी नही है। लेकिन यह बात नही है। हमारा आन्दोलन तो वास्तवमे धार्मिक आन्दोलन है और राजनीतिक उतार-चढावका उसपर कोई प्रभाव नही है। अतएव हमारी ओरसे तो अधिकाधिक समर्पण ही होना चाहिए। लेकिन जब हम यह देखे कि हमारे हजारो भाई इस विषयमे बिलकुल उदासीन है और कुछ प्रस्ताव पास कर देनेके सिवा और कुछ नही करते, तब हम-जैसे मुट्ठी-भर लोग भला इसके लिए क्या करेगे? कारण चाहे जो भी हो, लेकिन वे महसूस नही करते कि ये प्रस्ताव व्यक्तिगत रूपसे उनके लिए भी लागू है। बरसो पहले स्वदेशीपर जोरदार भाषण दिये जाते थे, किन्तु भाषण देनेवाले यह महसूस नही करते थे कि अपने कहे पर उन्हे स्वय अमल करना चाहिए। वे लोग 'यथासम्भव' शब्दकी आड ले लेते थे। लेकिन अस्पृश्यताके मामलेमे 'यथासम्भव' की गुजाइश नही है। अगर इसे हटाना है, तो यह पूरी तरह हटनी चाहिए — सब जगहोसे, और उसी तरह मन्दिरोसे भी। अत जिन हजारो लोगोने त्रावणकोरमे प्रस्ताव पास किये उन्होने यदि पूरी गम्भीरतासे ऐसा किया है, तो दुनियामे ऐसी कोई ताकत नही है जो हरिजनोको मन्दिरोमे जानेसे रोक सके। इसलिए हममे से जो अस्पृश्यता-निवारणका काम कर रहे है, उनके लिए हरिजनोको यह विश्वास करा देना जरूरी है कि हम अपने प्रयासमे बिलकुल सच्चे है। मगर मुझे सन्देह है कि यहाँ एकत्र होनेवाले सब लोग अपने आचरणमे उतने सच्चे नही है जितना उन्हे होना चाहिए। आपमे से अधिकाश लोग हरिजनोकी कठिनाइयोको अपनी कठिनाइया नही मानते। आप कहेगे, 'हम तो उसी हदतक अस्पृश्यता हटाने मे विश्वास करते है जितना कि हरिजन-सेवक सघमे बताया गया है।' लेकिन यदि हरिजन-सेवक 'बस यहीतक, यहॉसे आगे नही' की ओट ले, तो उनके लिए हरिजानोको अपनी सचाईके बारेमे विश्वास दिलाना कठिन हो जायेगा। स्वभावत हरिजन लोग नित्यप्रति होनेवाली प्रगतिका पक्का सबूत चाहते है। वे उस ऊँचेसे-ऊँचे दर्जेतक पहुँचना चाहते है जहाँतक कोई भी हिन्दू पहुँच सकता है। इसलिए मै आपसे कहता हूँ कि हमारे सामने जो कठिनाइया है उनपर विचार किये बगैर आप इस सम्मेलनसे वापस न जाये। यदि हमारे सब कार्यकर्त्ता शत-प्रतिशत कर्त्तव्य-निर्वाह करने की, स्वेच्छापूर्वक शत-प्रतिशत हरिजन बनने की योग्यता रखे तभी हमारा कल्याण होगा।

किसीको दोष देने की मेरी इच्छा नही है। मै तो सिर्फ प्रकट चिन्तन कर रहा हूँ, और जब रामचन्द्रनने मुझसे यह बताने को कहा कि हमे क्या करना चाहिए तब मुझसे जितने स्पष्ट रूपसे बना, उतने स्पष्ट रूपसे मैने वह बता दिया। यह तो अपने हृदयमे अनुभव करने की बात है लेकिन ऐसा तभी हो सकता है जब इसका पूर्ण विश्वास हो जाये कि अस्पृश्यताका नाश न हुआ तो हिन्दू-धर्म ही नही रहेगा। मै तो इससे भी एक कदम आगे बढकर कहूँगा 'जो धर्म कुछ लोगोको इसलिए बुरा ठहराये कि एक खास वर्गमे उनका जन्म हुआ है, हे ईश्वर, उसको तू नष्ट कर दे।' और यदि आप भी मेरी ही तरह महसूस करते हो, तो मै आपसे भी

यही प्रार्थना करने को कहूँगा कि अगर मानवतापर लगा हुआ यह कलक दूर न हुआ तो इस धर्मको नष्ट ही हो जाना चाहिए। इससे यह साबित होता है कि हमे हर तरहसे हरिजन बन जाना चाहिए। लेकिन इसका मतलब यह नही कि हम मुर्दार मास खाने लगे या दारू पीने लगे अथवा गन्दे रहने लगे। नही, उनके दुखमे हमे भी दुखी होना चाहिए और जिन कारणोसे उन्हे दुख हो उन्हे दूर करने का यत्न करना चाहिए। यह हम कभी न कहे कि उनका दुख उनके कर्मोका फल है, बल्कि हम यह कहे कि उनके प्रति हमारा जो ऋण है, कमसे-कम कुछ अशमे उसे चुकाने का हमने निश्चय कर लिया है। रोज सुबह हम अपने-आपसे पूछे कि उस ऋणको चुकाने के लिए हमने कुछ किया या नही। जबतक हम ऐसा न करेगे, हमारे सब प्रस्ताव बेकार है।

प्रश्न जो लोग हिन्दू-धर्ममें वापस आना चाहे उनके प्रति हमारा क्या रुख होना चाहिए?

उत्तर उनसे हम बस यही कहेगे 'आपका पूरा स्वागत है', परन्तु जिनके बारेमे हमे लगे कि प्रलोभन देनेपर वे वापस लौट आयेगे, उन्हे हम कभी प्रलोभन न दे।

प्रश्न यह बात नहीं। इसका तो सवाल ही नहीं उठता। मै सोच रहा था कि आप किसी प्रकारका शुद्धि-सस्कार पसन्द करेगे या नहीं।

उत्तर शुद्धि-सस्कारकी कोई आवश्यकता नही है। जो अकारण ही धर्म-परिवर्त्तन कर बैठे थे वे खेदका अनुभव करते हुए ही वापस आयेगे। और वैसी स्थितिमे जो लोग उन्हे वापस ले वे उनसे कुछ शुद्धि करने को कह सकते है। मै तो उनसे केवल सौ बार राम-नाम लेने को कहूँगा।

प्रश्न यदि कोई हरिजन-सेवक स्वेच्छासे होनेवाले ऐसे शुद्धि-सस्कारके समय उपस्थित रहे तो आपको कोई आपत्ति तो नही होगी?

उत्तर ऐसे सस्कारके समय उसकी उपस्थितिपर मुझे आपत्ति नही है, परन्तु उसको स्पष्ट कर देना चाहिए कि शुद्धि हरिजन सेवक सघके कार्यक्रमका अग नही है। उसको यह भी निश्चित रूपसे जान लेना चाहिए कि हिन्दू-धर्मकी पुनर्दीक्षा लेने-वाला व्यक्ति पूरी स्वेच्छासे ऐसा कर रहा है और उसे कोई प्रलोभन नही दिया गया है। असली प्रश्न तो यह है कि उसे विश्वास हो कि पुनर्दीक्षाका इच्छुक व्यक्ति पूर्ण रूपसे सच्चा भाव रखता है। यदि आपको ऐसा विश्वास हो, तो आपको उस व्यक्तिको अपना मित्र बनाने का हर तरह से प्रयत्न करना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ४-७-१९३६

५४. दीक्षान्त भाषण हिन्दी प्रचार सभाके समारोहमें[1]

[१२ जून, १९३६][2]

जब मैने आज शामको यहाँ आध घटेके लिए आनेका वचन दिया तब मुझे अन्दाज नही था कि यह इतना लम्बा-चौडा समारोह होगा ओर मुझे आशासे अधिक समय देना पडेगा। यह नही कि मै अधिक समय देना नही चाहता था। यदि सम्भव होता तो मै आपको दो घटेका समय देता, हिन्दीमे आपकी कुछ परीक्षा लेता, ओर थोडी-बहुत कामकी बात भी कर लेता, यानी हिन्दी-प्रचारके लिए आपसे चन्दा ओर शायद गहने भी माँगता। परन्तु ऐसा होना नही था। दो घटेमे ही मुझे बगलोरसे रवाना हो जाना है। फिर भी इसका यह आशय नही कि चन्दा देनेके इच्छुक लोग मेरे जानेके बाद वैसा नही कर सकते।

आज जिन्हे उपाधि और प्रमाणपत्र मिले है, उन्हे मै बधाई देता हूँ, ओर आशा रखता हूँ कि वे रोज अपना अभ्यास चालू रखकर अपना ज्ञान बढाते रहेगे। साधारण स्कूलो और कॉलेजोमे लोग 'नौकरी' के खयालसे पढने जाते है, परीक्षाके लिए पढते है, और परीक्षा-भवनसे निकलते ही अपनी पुस्तकोको और उनसे प्राप्त ज्ञानको भूल जाते है। अधिकाश लोगोको ज्ञानकी अपेक्षा उपाधिकी चिन्ता विशेष होती हे। किन्तु जिन्हे आज यहाँ उपाधियाँ मिली है, उन्होने उपाधिके लिए उपाधि नही ली हे। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि हिन्दी प्रचार सभाका उद्देश्य नोकरी दिलाना नही है। आपको मिली हुई यह उपाधि उस ज्ञानका चिह्न-मात्र है, जो आपको अपने शिक्षकसे मिला है। अलबत्ता, यह हो सकता है कि आपमे से कुछ लोग अपने इस हिन्दी-ज्ञानकी मददसे थोडा कमा सके, किन्तु निश्चय ही हमारा उद्देश्य यह नही है।

मुझे यह देखकर खुशी होती हे कि आजके सफल विद्यार्थियोमे अधिक सख्या बहनोकी है। यह भारतमाताके और हिन्दी-प्रचारके उज्ज्वल भविष्यकी निशानी है, क्योकि मेरा यह दढ विश्वास है कि हिन्दुस्तानका उद्धार उसके स्त्री-समाजके त्याग और ज्ञानपर निभर है। स्त्रियोकी सभामे मै यह बात हमेशा जोर देकर कहता रहा हूँ कि जब हम अपने देवी और देवताओ या प्राचीन वीर स्त्री-पुरुषोके बारेमे कुछ कहते है, तो हम स्त्रीका नाम पहले लेते है — जैसे, सीताराम, राधाकृष्ण

१ यह *हरिजन*में "द क्वेश्चन ऑफ हिन्दी" (हिन्दीका सवाल) शीर्षकसे छपा था। बगलोरमें हुए इस दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता गाधीजी ने की थी, और इसमें श्रीनिवास शास्त्री, च० राजगोपालाचारी तथा सत्यमूर्ति भी उपस्थित थे।

२ १३-६-१९३६ के *हिन्दू* से।

आदि। हम रामसीता या कृष्णराधा कभी नही कहते। यह प्रथा अर्थहीन नही है। हमारे यहाँ स्त्रीका आदर किया जाता था, और स्त्रियोके कार्यो और उनकी योग्यताकी खास कद्र की जाती थी। हमे यह पुराना रिवाज अक्षरश और अर्थश जारी रखना चाहिए।

इस अवसरपर मै आपको इस बातके कुछ स्पष्ट कारण समझाऊँगा कि हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही राष्ट्रभाषा क्यो होनी चाहिए। जबतक आप कर्नाटकमे रहते है और कर्नाटकसे बाहर आपकी दृष्टि नही दौडती, तबतक आपके लिए कन्नडका ज्ञान काफी है। लेकिन अगर आप अपने [देश के] किसी गाँवको देखेगे, तो फौरन ही आपको पता चलेगा कि आपकी दृष्टि और आपके क्षितिजका विस्तार हुआ है, और अब आप कर्नाटक नही बल्कि हिन्दुस्तानकी दृष्टिसे सोचने लगे है। कर्नाटकके बाहरकी घटनाओमे आपकी दिलचस्पी बढी है। लेकिन अगर भाषाका कोई सर्वसाधारण माध्यम या वाहन न हो, तो आपकी यह दिलचस्पी बहुत आगे नही बढ सकती। कर्नाटकवाले सिन्ध या सयुक्त प्रान्तवालो के साथ किस तरह अपना सम्बन्ध कायम कर सकते है और यह सम्बन्ध जारी रख सकते है? हमारे कुछ लोग मानते थे, और शायद अब भी मानते होगे, कि अग्रेजी भाषा एक ऐसे माध्यम का काम दे सकती है। अगर यह सवाल हमारे कुछ हजार पढे-लिखे लोगोका ही सवाल होता, तो जरूर ऐसा हो सकता था। लेकिन मुझे विश्वाम है कि इससे आपमे से किसीको सन्तोष न होगा। हम और आप चाहते है कि करोडो लोग अन्तर्प्रान्तीय सम्बन्ध स्थापित करे। ऐसा सम्बन्ध कभी अग्रेजी द्वारा स्थापित हो भी सके, तो भी स्पष्ट है कि अभी कई पीढियोतक वह मुमकिन नही है। कोई कारण नही कि वे सब अग्रेजी ही सीखे। और, अग्रेजी जीविका कमानेका अचूक ओर निश्चित साधन तो हरगिज नही है। और जैसे-जैसे अधिक सख्यामे लोग उसे सीखते जायेगे वैसे-वैसे (नौकरीकी दृष्टिसे) उसकी कीमत कम होती जायेगी। फिर, अग्रेजी सीखना जितना कठिन है, हिन्दी या हिन्दुस्तानी सीखना उतना कठिन नही है। अग्रेजी सीखने मे जितना समय लगेगा उतना हिन्दी-हिन्दुस्तानी सीखने मे कभी नही लग सकता। हिसाब लगाया गया है कि हिन्दी-हिन्दुस्तानी बोलने और समझनेवाले हिन्दू-मुसलमानोकी सख्या २० करोडसे ज्यादा है। क्या १ करोड १० लाख कर्नाटकी भाई-बहन अपने इन २० करोड भाई-बहनोकी भाषा सीखना पसन्द नही करेगे? और क्या वे उसे बहुत आसानीसे सीख नही सकते? अभी क्षण-भर पहले एक घटनाने विशेष रूपसे मेरा ध्यान खीचा है, उससे ही इस सवालका जवाब मिल जाता है। आपने अभी-अभी लेडी रामनके हिन्दी व्याख्यानका कन्नड अनुवाद सुना है। उसे सुनते समय इस बातकी तरफ आपका ध्यान अवश्य आकर्षित हुआ होगा कि लेडी रामनके बहुत-से हिन्दी शब्द भाषान्तरमे ज्योके-त्यो प्रयुक्त किये गये थे — जैसे, 'प्रेम', 'प्रेमी', 'सघ', 'सभा', 'अध्यक्ष', 'पद', 'अनन्त', 'भक्ति', 'स्वागत', 'अध्यक्षता', 'सम्मेलन' आदि। ये शब्द हिन्दी-कन्नड, दोनोमे प्रचलित है। अब मान लीजिए कि यदि कोई अग्रेजीमे इस भाषणका अनुवाद करता, तो

क्या वह इनमे से एक भी शब्दका उपयोग कर सकता था? कभी नही। इनमे से हरएक शब्दका अग्रेजी पर्याय श्रोताओके लिए बिलकुल नया होता। इसलिए जब हमारे कुछ कर्नाटकी मित्र कहते है कि हिन्दी उन्हे कठिन मालूम होती है तो मुझे हँसी आती है, साथ ही मै गुस्सा और अधीर भी हो जाता हूँ। मेरा यह विश्वास है कि रोज कुछ घटे लगनके साथ अध्ययन करने से एक महीनेमे हिन्दी सीखी जा सकती है। मै ६७ सालका हो चुका हूँ। और अब मुझे बहुत कालतक जीना नही है। लेकिन आप यह सच मानिए कि जिस समय मै कन्नड अनुवाद सुन रहा था, उस समय मैने यह अनुभव किया कि अगर मै रोज कुछ घटे अभ्यास करूँ तो कन्नड सीखने मे मुझे आठ दिनसे ज्यादा समय नही लगेगा। माननीय श्रीनिवास शास्त्री और मुझ-जैसे दस-पॉच लोगोको छोडकर यहाँ बाकीके आप सब तो जवान ही है। क्या आपमे इतनी शक्ति नही कि हिन्दी सीखने के लिए केवल एक महीने तक प्रतिदिन चार घटे भी दे सके? अपने २० करोड देशबन्धुओके साथ सम्पक स्थापित करने के लिए क्या इतना समय देना आपको ज्यादा मालूम होता है? अब मान लीजिए कि आपमे से जो लोग अग्रेजी नही जानते, वे उसे सीखने का निश्चय करते है। तो क्या आप मानते है कि प्रतिदिन चार घटेकी मेहनतसे आप एक महीने मे अग्रेजी सीख सकेगे? कभी नही। हिन्दी इतनी आसानीसे इसलिए सीखी जा सकती है कि भारतमे हिन्दू लोग जो भाषाएँ बोलते है, जिनमे दक्षिण भारतकी चार भाषाएँ भी शामिल है, उन सब मे सस्कृतके बहुत-से शब्द है। हमारा इतिहास कहता है कि पुराने जमानेमे उत्तर-दक्षिणका पारस्परिक व्यवहार सस्कृत द्वारा चलता था। आज भी दक्षिणके शास्त्री उत्तरके शास्त्रियोके साथ सस्कृतमे बातचीत करते है। विभिन्न भारतीय भाषाओमे मुख्य भेद व्याकरणका है। उत्तर भारतकी भाषाओका तो व्याकरण भी एक-सा है। अलबत्ता, दक्षिण भारतकी भाषाओका व्याकरण बहुत भिन्न है, और सस्कृतसे प्रभावित होनेसे पहले उनके शब्द भी भिन्न थे। लेकिन अब उन्होने भी बहुत-से सस्कृत शब्द ले लिये है, और वे इस हदतक लिये गये है कि जब मै दक्षिणमे घूमता हूँ तो यहाँकी चारो भाषाओमे जो-कुछ कहा जाता है, उसका सार समझ लेने मे मुझे कोई कठिनाई नही मालूम होती।

अब हमारे मुसलमान मित्रोकी बात लीजिए। वे अपने-अपने प्रान्तकी भाषा तो स्वभावत जानते ही है, इसके अलावा वे उर्दू भी जानते है। हिन्दी और उर्दू या हिन्दुस्तानीमे कोई भी भेद नही है, दोनोका व्याकरण एक-सा है। लिपिके कारण दोनोमे जो फर्क है, सो है, और इसपर विचार करने से मालूम होता है कि हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू, ये तीनो शब्द एक ही भाषाके सूचक है। इन भाषाओके शब्द-कोषोको देखने से हमे पता चलता है कि इनके अधिकाश शब्द एक-से है। इसलिए एक लिपिके सवालको छोड दे, तो इसमे मुसलमानोको कोई कठिनाई नही हो सकती। और लिपिका सवाल तो अपने-आप हल हो जायेगा।

इसलिए फिर अपनी शुरूकी बातपर लौटकर मै कहता हूँ कि अगर आपकी

डिब्रूगढ तक पहुँचती हो — और इतनी वह पहुँचनी भी चाहिए — तो आपके पास हिन्दी सीखने के अलावा और कोई रास्ता नही है। मै आपको समझा चुका हूँ कि अंग्रेजी हमारी राष्ट्रभाषा नही बन सकती। अंग्रेजीसे मुझे कोई द्वेष नही है। कुछ विद्वानोके लिए अंग्रेजीका ज्ञान आवश्यक है, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धोके लिए, ओर पश्चिमी विज्ञानके ज्ञानके लिए उसकी जरूरत है। लेकिन जब अंग्रेजीको वह स्थान दिया जाता है, जिसके योग्य वह है ही नही, तो मुझे दुख होता है। मुझे इसमे कोई सन्देह नही कि ऐसा प्रयत्न निश्चय ही विफल होगा। अपनी अपनी जगहपर ही सब शोभा पाते है।

आपके दिमागमे व्यर्थ ही जो एक डर घुस गया है, उसे मै निकाल फेकना चाहता हूँ। क्या हिन्दी कन्नडकी जगह सिखाई जायेगी? क्या वह कन्नडको उसके स्थानसे हटा देगी? नही, उलटे मेरा दावा तो यह है कि जैसे-जैसे हम हिन्दीका अधिक प्रचार करेगे, वैसे-वैसे हम अपनी प्रान्तीय भाषाओके अध्ययनको न केवल विशेष प्रोत्साहन देगे, बल्कि उनकी शक्ति भी बढायेगे। यह बात मै भिन्न-भिन्न प्रान्तोके अपने अनुभवसे कहता हूँ।

मै दो शब्द लिपिके बारेमे कहूँगा। जब मै दक्षिण आफ्रिकामे था, तब भी मै मानता था कि संस्कृतसे निकली हुई सभी भाषाओकी लिपि देवनागरी होनी चाहिए, और मुझे विश्वास है कि देवनागरीके द्वारा द्रविड भाषाएँ भी आसानीसे सीखी जा सकती है। मैने तमिल-तेलुगुको और कुछ दिनतक कन्नड व मलयालमको भी उनकी अपनी लिपियो द्वारा सीखने का प्रयत्न किया है। लेकिन जब मैने देखा कि मुझे चार-चार लिपियाँ सीखनी होगी तो मै मारे डरके घबरा उठा। मै आपसे कहता हूँ कि मुझे यह साफ दिखाई पड रहा था कि अगर इन चारो भाषाओकी लिपि देवनागरी ही होती, तो मै इन्हे थोडे ही समयमे सीख सकता था। मेरी तरह जिसे चारो भाषाएँ सीखने का उत्साह है, उसके लिए यह कितना बडा बोझ है? और क्या यह समझाने के लिए भी किसी दलीलकी जरूरत है कि दक्षिणवालो के लिए अपनी मातृ-भाषाके सिवा दूसरी तीनो भाषाए सीखने के लिए देवनागरी लिपि अधिकसे-अधिक सुविधाजनक हो सकती है? राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रश्नके साथ लिपिका प्रश्न मिलाने की जरूरत नही है। मैने यहा उसका उल्लेख केवल यह दिखाने के लिए किया है कि हिन्दुस्तानकी सभी भाषाएँ सीखनेवाले को लिपिके कारण कितनी कठिनाई होती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-६-१९३६

५५ वक्तव्य समाचारपत्रोको

बगलोर
१२ जून, १९३६

मुझे विश्वास है कि श्री कोदण्डराव ऐसा दावा कभी कर ही नही सकते कि वे काग्रेसके प्रतिनिधि या मेरे 'दूत' है।[1] मेरे मतमे वे इतने खरे व्यक्ति है कि ऐसा कोई दावा नही कर सकते।

मुझे उनके हिदी-विषयक विचारोका कोई ज्ञान नही है, परन्तु उनके मुँहमे रखकर उनसे जो यह कहलवाया गया हे कि विदेशोमे रहनेवाले भारतीयोके लिए हिन्दी किसी काम की नही है, अथवा उनके बारेमे जो यह कहा गया है कि उन्होने वहाँके [त्रिनिडाड के] शिक्षण-अधिकारियोको सलाह दी है कि वे भारतीय प्रवासियोके ऐसे किसी दावेपर ध्यान न दे, उसमे विश्वास करने से इनकार करता हूँ। यह जानकर मुझे खेद होगा कि वास्तवमे उनके ऐसे विचार है, क्योकि मेरे विचारसे प्रवासी भारतीयोके लिए यह तो आवश्यक है ही कि वे अपनी मातृभाषाको भूले नही, साथ ही यह भी जरूरी है कि उनको हिन्दी साहित्य और उसके विकाससे परिचित रहना चाहिए।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-६-१९३६

५६ अमेरिकाकी साक्षी

मोण्टाना (अमेरिका)से कुमारी मेबेल ई० सिम्पसनने 'हरिजन'के सम्पादकको लिखा है

मैं आपकी पत्रिकाकी प्रशसा करती हूँ। यह ठीक है कि आकारमे यह पत्रिका बहुत बडी नहीं है, लेकिन इसमे जो-कुछ सामग्री रहती है वह पृष्ठोकी कमीको पूरा कर देती है। श्री गाधीने सन्तति-निग्रहके विषयमें जो लेख लिखा है वह मुझे बहुत पसन्द आया। और वह किसी भी विषयमे श्री गाधीकी पैनी दृष्टिका द्योतक है। अगर वे बीस बरस पहले, जबकि सन्तति-निग्रहसे घृणा की जाती थी, और फिर अब जबकि इसका बहुत जोर है, अमेरिका जाते तो वह जान जाते कि नैतिक दृष्टिसे यह कितना पतनकारक है। लेकिन वह किसी

१ सर्वेन्ट्स ऑफ इडिया सोसाइटीके पी० कोदण्डराव उस समय त्रिनिडाड गये हुए थे।

को अब इस बातका विश्वास नही करा सकेगे। कारण सन्तति-निग्रह मनुष्यको नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टिसे भी वचित कर देता है, जिससे इस पथपर चलनेवालो के लिए उच्च नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोणसे सूक्ष्म विवेकपूर्वक किसी बातका निर्णय करना असम्भव हो जाता है। इस सम्बन्धमें हिन्दुस्ताननें अगर पश्चिमका अनुकरण किया तो निश्चय ही वह अपने दो अत्यन्त अमूल्य और सुन्दर रत्नोको खो देगा एक तो छोटे बच्चोके प्रति प्रेम-भाव, और दूसरा मातृ और पितृ-पदके प्रति सम्मानका भाव। अमेरिकाने इन दोनोको गँवा दिया है — और दुखकी बात तो यह है कि इसका उसे ज्ञान ही नही है। क्या आप अपनी पत्रिकामे ब्रह्मचर्यके अर्थका स्पष्टीकरण कर सकते है? मुझसे इसके बारेमें पूछा गया है। हालाकि मेरे मनमें इसकी कुछ कल्पना तो हे, लेकिन वह इतनी निश्चित नहीं है कि मै दूसरोको समझाने का प्रयत्न करूँ। धन्यवाद।

पाठक और पाठिकाएँ इस साक्षीका जो-कुछ मूल्य आँके वह आँक सकते हैं। मगर मै कहता हूँ कि सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोका प्रयोग करने के विरुद्ध ऐसी साक्षी उन लोगोकी साक्षीसे कही ज्यादा महत्त्वपूण है जो इनके प्रयोगसे फायदा उठाने का दावा करते हैं। इसका कारण स्पष्ट है। इससे बच्चोकी उत्पत्ति रुकती है, इस रूपमे तो इसके फायदेसे कोई इनकार नही करता। हमारा कहना सिफ यह है कि इसके प्रयोगसे जो नैतिक हानि होती है वह बेहिसाब है। कुमारी सिम्पसनने हमे ऐसी हानिका अनुमान दिया है।

अब रही ब्रह्मचर्यके अथकी बात। सो उसका मूलार्थ इस प्रकार बताया जा सकता है वह आचरण जिससे कोई व्यक्ति ब्रह्म या परमात्माके सम्पकमे आता है।

इस आचरणमे सब इन्द्रियोका सम्पूण सयम शामिल है। इस शब्दका यही सच्चा और सुसगत अर्थ हैं।

वैसे आम तौरपर इसका अर्थ सिफ जननेन्द्रियका शारीरिक सयम ही लगाया जाने लगा है। इस सकीण अथने ब्रह्मचर्यको हलका करके उसके आचरणको प्राय बिलकुल असम्भव कर दिया है। जननेन्द्रियपर तबतक सयम नही होता जबतक कि सभी इन्द्रियोपर समुचित सयम न हो, क्योकि वे सब अन्योन्याश्रित हैं। मन भी इन्द्रियोमें ही शामिल है। जबतक मनपर सयम न हो, खाली शारीरिक सयम चाहे कुछ समयके लिए प्राप्त भी हो जाये, पर वह व्यर्थ है, उससे कोई लाभ नही।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १३-६-१९३६

५७ जीवन्त ईश्वर कहाँ है?

बगालसे एक सज्जन लिखते है [1]

"एक युवककी कठिनाई" शीषकसे आपने सन्तति-निरोधके विषयमें जो लेख[2] लिखा है उसे मने पढा।

आपके लेखके मुख्य विषयसे मै पूरी तरह सहमत हूँ, लेकिन उस लेखमें आपने ईश्वर-सम्बन्धी अपनी भावना भी प्रकट की है। आपने कहा है कि आजकल यह फैशन-सा हो गया है कि नौजवान लोग ईश्वरको नही मानते और वे एक जीवन्त ईश्वरमे विश्वास नही रखते।

लेकिन, क्या मै आपसे पूछूँ कि ईश्वरके अस्तित्वके विषयमें आप क्या प्रमाण (जो कि निश्चित और असदिग्ध हो) पेश कर सकते है? हिन्दू दाशनिको अर्थात् हमारे प्राचीन ऋषियोने ईश्वरके स्वरूपको बताने का प्रयत्न किया — और ऐसा करते हुए, मुझे लगता है, अन्तमें वे इस परिणामपर पहुँचे कि वह अनिर्वचनीय और मायापरिच्छन्न आदि है। सक्षेपमें कहे तो, उन्होने ईश्वरको तमिस्राके अभेद्य आवरणमें लपेट दिया और इस प्रकार ईश्वरके पेचीदा प्रश्नको और भी पेचीदा बना दिया। अलबत्ता, इस बातसे मै इनकार नही करता कि प्राचीन कालके शकराचार्य और बुद्ध या आधुनिक कालके श्री अरविन्द और आप-जैसे सच्चे महात्मा ऐसे ईश्वरकी कल्पना और उसके अस्तित्वको अनुभव कर सकते है, किन्तु साधारण मानव-बुद्धिकी पहुँचसे तो वह बहुत परे है।

और हम साधारण लोग, जिनकी मन्द बुद्धि इतनी अगम्य गहराई तक कभी नहीं पहुँच सकती, जब अपने बीच उसके अस्तित्वका ही अनुभव नहीं कर सकते, तो फिर ऐसे ईश्वरका करे भी क्या?

इसलिए आजकलके नवयुवक ईश्वरमें विश्वास नही करते तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। बात तो दरअसल यह है कि वे ईश्वरकी कोरी कल्पना नहीं करना चाहते। वे तो वास्तविक और प्रत्यक्ष ईश्वरको चाहते हैं। आपने अपने लेखमें जीवन्त ईश्वरमें जीवन्त विश्वास रखने की बात कही है। अगर आप ईश्वरके अस्तित्वके कुछ निश्चित और असन्दिग्ध प्रमाण प्रस्तुत करे, तो मै बडा कृतज्ञ होऊँगा, और मै समझता हूँ, ऐसा करके आप युवकोका

१ यहाँ केवल कुछ अश दिये गये है।
२ देखिए खण्ड ६२, पृ० ३७३ ७५।

> **भारी हित करेगे। मुझे विश्वास है कि इस समस्याको, जो पहले ही इतनी रहस्यमय है, आप और रहस्यपूर्ण नहीं बनायेंगे और इस विषयपर कुछ निश्चित प्रकाश डालेगे।**

मुझे इस बातका बहुत भय है कि मै जो-कुछ लिखनेवाला हूँ, उससे वह रहस्यका आवरण दूर नही होगा, जिसका उक्त पत्रमे जिक्र किया गया है।

पत्र-लेखकका खयाल है कि शायद मैने जीवन्त ईश्वरके अस्तित्वका अनुभव कर लिया है। परन्तु मै ऐसा कोई दावा नही कर सकता। यह अवश्य है कि जैसे वैज्ञानिको द्वारा बताई हुई अनेक बातोमे मेरा जीवन्त विश्वास है उसी तरह ईश्वरमे भी मेरा सच्चा विश्वास है। यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक लोग जो बात कहते है उसके तो प्रमाण मौजूद रहते है, ओर उनकी बताई हुई विधिसे हर कोई उसकी परीक्षा कर सकता है। किन्तु ऋषि और पैगम्बर भी तो ठीक इसी तरहकी बात कहते है। वे कहते है कि जो कोई उनके बताये हुए मार्गपर चले वह ईश्वरको पा सकता है। लेकिन असलियत यह है कि हम उस रास्तेपर तो चलना नही चाहते और जो बात सचमुच जरूरी है उसके बारेमे प्रत्यक्षदर्शियोकी बात भी नही मानते। भौतिक विज्ञानकी सारी सफलताएँ एकसाथ रखी जाये, तो भी उस एक बातका मुकाबला नही कर सकती जिससे कि हममे ईश्वरके प्रति सच्ची श्रद्धा पैदा होती है। जो लोग ईश्वरके अस्तित्वमे विश्वास करना नही चाहते, वे अपने शरीरके सिवा और किसी वस्तुके अस्तित्वमे विश्वास नही करते। मानवताकी प्रगतिके लिए ऐसा विश्वास अनावश्यक है। आत्मा या परमात्माके अस्तित्वके प्रमाणरूप कितनी ही भारी दलील क्यो न हो, ऐसे मनुष्योके लिए वह व्यथ ही है। जिस मनुष्यने अपने कानोमे डाट लगा रखी हो उसे आप कितना ही बढिया सगीत क्यो न सुनाये, वह उसकी सराहना तो दूर, उसे सुन भी नही सकेगा। इसी तरह जो लोग विश्वास ही नही करना चाहते, उन्हे आप प्रत्यक्ष ईश्वरके अस्तित्वमे विश्वास करा ही नही सकते।

सौभाग्यसे सवसाधारणका विशाल बहुमत प्रत्यक्ष ईश्वरमे जीवन्त विश्वास रखता है। वे न तो उसके बारेमे कोई दलील कर सकते है और न करते ही है। उनके लिए तो "वह सचमुच है।" भला क्या दुनियाके सारे शास्त्र 'नानीकी कहानियाँ' ही है? ऋषि-पैगम्बरोकी बात क्या हम नही मानेगे? चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहस, तुकाराम, ज्ञानदेव, रामदास, नानक, कबीर, तुलसीदासने जो बात कही क्या उसका कुछ भी मूल्य नही है? ओर, राममोहन राय, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, विवेकानन्दके लिए आप क्या कहेगे? ये सब तो आधुनिक व्यक्ति है और वैसे ही सुशिक्षित थे जैसेकि आज हममें से बडेसे-बडा व्यक्ति हो सकता है। ऐसे जीवित व्यक्तियोके उदाहरण मै नही दे रहा हूँ, जिनकी साक्षी सवथा निर्दोष मानी जायेगी। ईश्वरमे यह विश्वास श्रद्धापर ही अवलम्बित है, जो बुद्धिसे परे की वस्तु है। इसमे शक नही कि जिसे हम अनुभूति कहते है, उसके मूलमे भी विश्वास ही होता है, जिसके बिना वह टिक ही नही सकता। स्थिति ही ऐसी है कि यही होना चाहिए। अपने

अस्तित्वकी मर्यादाओका भला कौन अतिक्रमण कर सकता है? मै तो यह मानता हूँ कि दैहिक जीवनमे ईश्वरकी सम्पूर्ण अनुभूति सम्भव ही नही है, न वह आवश्यक ही है। मनुष्योको आध्यात्मिकताकी पूरी ऊँचाईपर पहुँचने के लिए जिस बातकी जरूरत हे वह तो ईश्वरमे जीवन्त और अटूट विश्वासका होना ही है। ईश्वर हमारे इस भू-मण्डलसे परे नही है। इसलिए बाहरका कोई प्रमाण हो भी, तो उसका कोई उपयोग नही हे। अपनी इन्द्रियो (भावनाओ) द्वारा तो हम उसे कभी नही पा सकते, क्योकि वह उनसे परे है। अगर हम चाहे तो उसका अनुभव अवश्य कर सकते है, पर इसके लिए हमे इन्द्रियोसे ऊपर उठना होगा। दैवी सगीत हमारे अन्दर हमेशा गूजता रहा है। इन्द्रियोसे हम जो-कुछ समझ या सुन सकते है उससे वह भिन्न और निश्चित रूपसे ऊँचे दर्जेका है, परन्तु इन्द्रियोके कोलाहल और हलचलमे वह नाजुक सगीत विलीन हो जाता हे।

पत्र-लेखक यह जानना चाहते है कि ईश्वर यदि दया और न्यायका अधिष्ठाता हे तो वह मनुष्योको उन सब दुखो और कष्टोका शिकार क्यो होने देता हे, जिन्हे हम अपने चारो तरफ देखते है? मै इसका कोई सन्तोषजनक स्पष्टीकरण नही कर सकता। वे मुझमे पराजय और अपमान या निराशाकी भावना देखते है। परन्तु मुझमे पराजय, अपमान या निराशाकी ऐसी कोई भावना नही है। यह तो आत्मशुद्धि और अपनी तैयारीकी दिशामे प्रयत्न-मात्र है — न तो उससे अधिक और न कम। यह मै सिर्फ यह बताने के लिए कह रहा हूँ कि अकसर जो चीज हमे जैसी दिखती है, वह वैसी नही होती। जिन्हे हम गलतीसे शोक, अन्याय और ऐसी ही बाते मान रहे है, हो सकता है कि सचाईमे जानेपर वे वैसी न निकले। विश्वके सारे रहस्योको यदि हम सुलझा सके तो हम ईश्वरके समकक्ष ही न हो जायेगे? समुद्रकी प्रतिष्ठामे उसकी प्रत्येक बूद भागीदार है। परन्तु वह बूंद समुद्र नही है। अपने जीवनकी इस अल्पताका विचार करके ही हम अपनी प्रातकालीन प्रार्थनाके अन्तमे नित्य यह श्लोक[1] दुहराते है जिसका अर्थ है कि तथाकथित विपदा वास्तवमे विपदा नही है, न सम्पदा सम्पदा ही है। ईश्वरको भूल जाना ही सच्ची विपदा है, और ईश्वरका स्मरण ही सच्ची सम्पदा है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १३-६-१९३६

१ विपदो नैव विपद सपदो नैव सपद ।
विपद्विस्मरणं विष्णोस्सपन्नारायणस्मृति ॥

५८ पत्र : अगाथा हैरिसनको

[स्थायी पता] वर्धा
१३ जून, १९३६

प्रिय अगाथा,

मुझे तुम्हारा प्रेम-पत्र और होरेसका[1] उससे कुछ विस्तृत पत्र भी मिला। यह पत्र तुम दोनोंके लिए है। मेरा तात्पर्य यह नहीं था कि हमें अंग्रेजोंके विचार-परिवर्तनका प्रयत्न नहीं करना चाहिए। मेरा तात्पय तो यह था और अब भी है कि हमारा योगदान यहीं से होना चाहिए। हमें दिखा देना है कि इंग्लैंडके प्रति हमारी कोई दुर्भावना नहीं है। सन्देह हमारी योग्यताके बारेमें नहीं, बल्कि हमारी अनपकारिताके बारेमें किया जाता है, और ठीक ही किया जाता है। योग्यतम भारतीय प्रतिनिधि द्वारा इंग्लैंडमें प्रतिवाद करने से हमारी अनपकारिता सिद्ध नहीं हो सकती। वह तो यहाँ भारतमें हमारे सतत एकरूप आचरणसे ही सिद्ध हो सकती है। किन्तु हमारा आचरण किसी प्रकार भी एकरूप नहीं है। प्रत्येक भारतीय इंग्लैंड का हितैषी हो, ऐसी बात नहीं है। और अंग्रेज लोग जिस अर्थमें चाहेंगे उस अर्थमें तो हममें से अच्छेसे-अच्छा आदमी भी इंग्लैंडका हित-चिन्तन नहीं करता। अतः मेरे लिए लंकाशायरके कर्मियोंको यह विश्वास दिला सकना बड़ा कठिन हो गया कि मैं जो विदेशी कपड़ेके तत्काल बहिष्कारका उपदेश करता हूँ उसमें भी उनके प्रति सद्भाव और उनका हित-चिन्तन ही है।[2]

क्या तुम लोग समझ पा रहे हो कि अहिंसात्मक प्रणालीमें धैर्यकी आवश्यकता है और इसको अमलमें लानेका तरीका भी अपने ढंगका अनोखा है?

इसका तात्पर्य यह नहीं कि भारतीयोंको वहाँ जाना ही नहीं चाहिए। निःसन्देह श्रीमती हमीद अली-जैसी महिलाओं और भूलाभाई[3]-जैसे पुरुषोंके संयोग-वशात् प्रवासका लाभ उठाना चाहिए। ऐसे मौके भी मेरी कल्पनामें असम्भव नहीं हैं कि जवाहरलाल-जैसे व्यक्तियोंको विशेषरूपसे गलतफहमियाँ मिटानेके लिए जाना पड़े। देखें, ऐसा अवसर कब आता है।

आशा है, सी० एफ० एन्ड्रयूज यहाँ १८ तारीखको आयेंगे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९४) से।

१ होरेस अलेक्जेंडर।

२ गांधीजी २६/२७ सितम्बर, १९३१को लंकाशायर गये थे, देखिए खण्ड ४८ पृ० ७३ ७६ तथा ८४ ८७।

३ भूलाभाई ज० देसाई, विधान सभामें कांग्रेस दल के नेता।

५९ पत्र : वल्लभभाई पटेलको

[स्थायी पता] सेगाँव
१३ जून, १९३६

भाई वल्लभभाई,

मद्रासमे थोडा समय मिला है। इस बीच मगलदासको[1] पत्र लिख डाला है। समय होगा तो उसकी नकल महादेव इस पत्रके साथ रख देगे। आशा है, सफरमे तुमको तकलीफ नही हुई होगी। काम निपटाकर जल्दी आओ। घूमने जानेका नियम अवश्य रखो।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वाडन रोड, बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९५

६० पत्र . मीराबहनको

१४ जून, १९३६

चि० मीरा,

हम यहाँ[2] रातके ८ बजे पहुँचे। गाडी लेट थी। तुम्हारा पत्र मिल गया। मेरा मन वहाँ है। मगर मेरे शरीरको 'हरिजन' की खातिर सोमवारतक यही रहना पडेगा। अगर मौसम अच्छा रहा तो आशा है, मै मगलवारको प्रात साढे ७ बजेके करीब तुमसे आ मिलूगा। दूध रास्तेमे ले लूँगा। लीलावतीके बारेमे मै समझता हूँ। पता नही कोई मेरे साथ होगा या नही, और होगा तो कौन होगा? देख लेगे। चिन्ता न करना। मै अच्छी तरह समझता हूँ कि जबतक सारी योजना निश्चित रूप न ले ले, तबतक तुम्हे सेगाँवमें रहना पडेगा। किसी भी बातकी फिक्र न करना। अगर फाटकपर मुझे ठीक रास्ता बताने को कोई मिल जाये तो अच्छा हो।

१ श्री मगलदास पकवासा, बम्बई कौंसिलके तत्कालीन अध्यक्ष।
२ वर्धामें।

गोविन्द या दशरथ कोई भी हो — उस दूसरे भाईका नाम यही है न? लेकिन अगर कोई न आ सके तो चिन्ता नही।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

कुछ फल इस पत्रके साथ पहुँचेगे। [1]

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४८) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१४ से भी

६१. पत्र : नारणदास गाधीको

१४ जून, १९३६

चि० नारणदास,

कुसुम अबतक वहाँ पहुँच गई होगी। मैंने तुम्हे लिखा है कि नही यह याद नही पडता। उसकी इच्छा साबरमतीमे रहकर पडितजी से भली-भाँति सगीत सीखने की है। साथ-साथ कमा सके और कुछ और भी सीख सके ऐसा चाहती है या फिर कमाने का लोभ फिलहाल छोड देगी। इस विषयमे उससे बात करके मुझे लिखना। शिक्षण हो तो सकता है, किन्तु उसका उपयोग क्या है? कुसुमके स्वभावका विचार करके यह भी सोचना कि उसका कल्याण किस बातमे है। तदनुसार उसका मार्ग-दर्शन करना और मुझे लिखना। वह अपने नामके अनुरूप कोमल है। जिस दिन हम अलग हुए उस दिन एक क्षणमे मैंने उसे पूरी तरह समझ लिया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिलम (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९४ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ यहाँ लिखावट अस्पष्ट है।

६२ पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
१५ जून, १९३६

प्रिय मूर्खा,

हम कल प्रात काल यहाँ पहुँचे। मौसम बडा सुहावना है। दिन-भर बादल रहे और शीतल हवा चलती रही। वर्षा तो अभी नाम-मात्रको ही पडी है। मेरी कुटिया अभी पूरी तैयार नही है, फिर भी यदि कल सुबह वर्षा न हुई तो मै सेगॉव जानेकी आशा रखता हूँ। गॉवमे सब काम धीरे-धीरे होते है। परन्तु मुझे पता है मेरे लिए एक सूखा कोना मिलने मे कोई झझट नही होगी।

रामेश्वरी नेहरू मेरे साथ ही है। हमारे साथ पूरे रास्ते उन्होने तीसरी श्रेणीमे ही सफर किया। यह अवश्य है कि हर स्टेशनपर जुटनेवाली भीडके अलावा मेरे साथ तीसरी श्रेणीके सफरमे कोई असुविधा नही है। उन्होने हमारे साथ ट्रेनमे दो राते बिताई। उनका त्रावणकोरका दौरा काफी सफल रहा। वे वर्धासे बुधवारको प्रस्थान करेगी।

कान्ति पूना चला गया, और शुक्रवारको लौटेगा। नवीन नक्काशीकी कला सीखने के लिए पीछे रह गया है। उसे आशा है कि जैसा हाथी-दाँतका सामान मैने तुम्हे भेजा है वैसा ही वह तैयार कर सकेगा।

बा को किसीने चन्दनकी लकडीका एक डिब्बा भेजा था। उसके लिए वह बेकार था। मैने सोचा है कि उसका सर्वोत्तम उपयोग यही होगा कि उसे तुम्हारे पास भेज दू —— तुम चाहे उसे बेचो या खुद रखो। डाकसे भेजने के लिए उसे नवीनके पास ही छोड दिया है।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य कुछ ठीक होगा और मौसम भी सुधर गया होगा। गरमियॉ बिताने के लिए अब तुम्हे कोई और अच्छा स्थान ढूढना होगा। तुम्हारे बखानके अनुसार शिमला कुछ ठीक नही जँचता।

सप्रेम,

तानाशाह

[पुनश्च]

बगलोरसे रवाना होते समय मेरा वजन ११२ पौड था!!! रक्तचाप १५६/९० था। डाक्टरके अनुसार बिलकुल ठीक था।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३१)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८८७ से भी

६३ पत्र : अमृतकौरको

१५ जून, १९३६

प्रिय मूर्खा,

विद्रोहीके लिए हार मान लेना बडी बात है। अन्तत तुम्हे मुझसे ढेरो पत्र मिल रहे है। मुझे बडा आनन्द है कि तुम्हे नीचा देखना पडा। परन्तु मेरे पत्रोके साथ होडा-होडीके प्रयासमे तुम्हे अपनेको बीमार नही करना है। याद रखो तुम्हारे पास शिमलामे कितने ही ऐसे काम है जिनके लिए तुम्हे समय देना पडता है, जब कि मै उनसे मुक्त हूँ।

अच्छा, अब विषय बदले। यदि तुम समझ जाती कि कमजोर पिनोवाले ब्रोच (जडाऊ पिन) मैने क्यो पसन्द किये तो भला मूर्खा कैसे कहलाती। तुम्हारी मोटी बुद्धिमे नही घुसा कि शोषक-वर्गकी ग्राहक या ब्रोच पहननेवाली स्त्री कमजोर पिनकी जगह सोनेकी मजबूत पिन जडवा लेगी। प्रश्न तो यह है कि ब्रोचकी नक्काशी सुन्दर है या नही ? क्या वह काफी नफीस है ? उन दोनो ब्रोचोको छाँटनेमे मैने काफी समय लगाया। अधिकतर ब्रोच भडकीले-से थे। मैने सोचा कि ये दो ब्रोच राज-कुमारीजी की कसौटीपर खरे उतरेगे।

सप्रेम,

तानाशाह

[पुनश्च]

इस समय वर्षा हो रही है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७९) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३८८ से भी

६४ पत्र · मीराबहनको

१५ जून, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। यहाँ अच्छी वर्षा हो रही है। इसलिए आशा है कि मै यहाँसे [नही] निकल सकगा।[१] हाँ, मै भाजी लेता आऊँगा, वैसे उसके बिना भी कुछ समयतक मेरा काम चल जायेगा।

शेष मिलने पर।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४९) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१५ से भी

६५ पत्र : प्रभावतीको

१५ जून, १९३६

चि० प्रभा,

कान्ति आज यहाँ नही है। मैंने तेरा पत्र देखा और खोला। तूने उसमे कान्तिको भी पढ लेनेकी अनुमति दे दी है, इसलिए पत्र रख छोडा है। कान्ति और सरस्वती शुक्रवारको आ जायेगे। तबतक पत्र नही फाड़ूँगा, किन्तु कोई ओर नही पढ पायेगा।

मुझे तो काशीका मोह नही है। मैंने यह सलाह इसलिए दी थी कि जयप्रकाशको ऐसी बातोमे प्रसन्न रखना तेरा धर्म है। किन्तु जब हरसू बाबू ही 'इनकार' करते है तो तेरे वहाँ जानेका सवाल नही रहता और जयप्रकाश भी उनका मन नही दुखाना चाहता। अब सीताबदियारा ही तेरी काशी है। तू समझदारीके साथ वहाँ जो-कुछ करेगी वह विद्या-लाभ ही है। गाँवके लोगोसे पहचान करना। तू प्रार्थना अकेली करती है या दूसरी स्त्रियोको भी इकट्ठा कर लेती है? यह आश्चर्यकी बात है कि गाँवमे कोई 'रामायण' का सस्वर पाठ करनेवाला नही है।

१ सेगाँवके लिए।

मै कल सेगाव चला जाऊँगा। अभी झोपडी तैयार नही हुई है इसलिए शायद अकेला ही जाऊँ। शायद लीलावती मेरे साथ जाये।

बगलोरमे मेरा वजन ११४ पोड था। रक्तचाप १५६/११० था। यह ठीक माना जा सकता है। सरदार बम्बईमे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७४) से।

६६ पत्र : नारणदास गाधीको

१५ जून, १९३६

चि० नारणदास,

मै अपने विचार थोडेमे लिख रहा हूँ। हमे शाला किसी धनिक व्यक्तिकी-सी दृष्टिसे नही चलानी चाहिए, जो सेवा-दृष्टिसे यह वृत्ति अपनाएँ उन्हीको शिक्षक रखे। जो पूरा समय दे और अधिकसे अधिक पन्द्रह रुपया मासिक स्वीकार करे, उसे शिक्षककी तरह रखे। एक ही शिक्षक और एक ही विद्यार्थीसे काम शुरू किया जा सकता है। विद्यार्थी किसी भी आयुका हो सकता है। शिक्षक पाठ्य पुस्तक स्वय बनाये और विद्यार्थी आँख और कानका उपयोग जानकारी देनेके लिए तथा हाथका उपयोग औजारसे काम लेकर चीजे बनवाने के लिए करे। जो सिखाये सो खुद करे। अच्छा हो कि पाठशाला गावमे हो। तुम्हे तो जहा हो वही आरम्भ करना चाहिए। शालाका श्रीगणेश तुम खुद ही कर सकते हो। मध्यम-वर्गके बच्चे यदि तुम्हारी शर्तो पर आते है, तो उन्हे ले सकते हो। वे शुल्क दे। काम शुल्ककी आशासे शुरू न किया जाये। यदि यह बात हृदयगम कर सको तो तुम प्रयोग कर सकते हो। इन बातोमे से जितना हजम हो सके उतना ही लेना।

अगर तुम यह बात समझ जाओ तो फिलहाल तो तुम्हे इसी प्रकार करना चाहिए। अपने मण्डलके सामने ये विचार रखो। आज जो पाठशाला चल रही है, यदि वह खर्च निकाल ले तो उसे चलाते रहना धर्म है। किन्तु समर्थ अभिभावकोसे तो पूरी फीस ली जानी चाहिए।

ये सभी विचार मैने नानाभाईके[1] सामने रख दिये है। उन्होने इन्हे पसन्द किया है। किन्तु वे इतने आगे बढ चुके है कि मेरे द्वारा सूचित सुझाव उन्हे अपनी शक्तिसे बाहरके लगते है। दक्षिणामूर्तिके लिए मै जो सहायता प्राप्त करा देता था, वह इन दिनो बन्द है।

१ नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट, भावनगरकी शिक्षण-सस्था दक्षिणामूर्तिके सचालक।

तुम जो पूछना चाहो, बार-बार पूछना। कनुकी चिन्ता मै करूँगा। वह सेगावमे रहे चाहे मगनवाडीमे, देखरेख मै करूँगा। उसे सेगॉवमे रहने की अनुमति दे रखी है। इसलिए अगर वह मगनवाडीमे रहेगा तो अपनी इच्छासे। कान्ति काकाकी सेवाके लिए चला गया है इसलिए महादेव अकेला पड जायेगा। कनुका इस दृष्टिसे महादवके पास रहना जरूरी लग सकता है, किन्तु यह भी उसकी इच्छापर निर्भर करेगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मै कनुको कुछ नही देता हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) स। सी० डब्ल्यू० ८८९५ से भी, सोजन्य नारणदास गाधी

६७ सन्देश राजपूताना हरिजन-सेवक सम्मेलनको

[१६ जून, १९३६ के पूव][1]

इस समय हिंदू-धमकी परीक्षा हो रही हे। वे ही सच्चे सेवक हो सकते है जिनमे धमके प्रति श्रद्धा है, हरिजनोके प्रति प्रेम हे, और जो अपनेको हरिजन-सेवाके लिए समर्पित करने को तैयार है।

गाधीजी और राजस्थान, पृ० १९७

६८ पत्र रामेश्वरदास पोद्दारको

१६ जून, १९३६

चि० रामेश्वरदास,

मेरी इच्छा है कि पारनेरकर दिल्ली और पिलानीके दुग्धालयोके लिये जाय। धुलीयाका प्रबध तो करता ही जायेगा। वहाँका काम तो सुव्यवस्थित है ही। हमारे तो गोसेवा करना है। पारनेरकरके दिल्ली-पिलानी जानेसे ज्यादा हो सके तो करनेका हमारा धर्म हो जाता है इसलिये पारनेरकरको छुटी दे देना। बाकी सब पारनेरकर समजावेगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २११) से।

१ यह सम्मेलन १६,१७ जून, १९३६ को अजमेरके पास नारेली नामक स्थानमें हुआ था।

६९ पत्र · जे० के० शर्माको

वर्धा
१७ जून, १९३६

भाई शर्मा,

तुम उतावले हो रहे हो। तुम्हारा काम है बहुतोको अपने मतका समर्थक बनाना। मै इस बातको आगे बढा रहा हूँ। अबतक आये हुए पत्रोसे प्रकट होता है कि प्रतिबन्ध लाभदायक ओर आवश्यक है। वे कहते है कि मिलके कपडेके साथ खादीको प्रदर्शित करने से कोई लाभ नही होता। खादीका ध्येय मिलके कपडेका पूरक होना नही बल्कि उसका स्थान ले लेना है। खादीका अपना एक अलग उद्देश्य है। खादी राष्ट्रीय शिक्षणका अग है और कम-से-कम भारतकी हदतक नयी तथा सच्ची अथ-व्यवस्थाकी प्रतीक है।

खादी-कार्यकर्त्ताओकी आलोचनामे तुमने जल्दबाजीसे काम लिया है। वे अपने अनुभवके प्रकाशमे काय कर रहे है और केवल निधनोके हितके निमित्त। तुम्हे उनका दृष्टिकोण और कठिनाइयाँ समझकर ही कुछ टीका करनी चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८८) से।

७० पत्रका अश[1]

१७ जून, १९३६

मेरे लिए समस्त दशनका निचोड सत्यमे है, फिर भले ही सत्यके लिए कोई भी कीमत क्यो न चुकानी पडे।

[अग्रेजीसे]

महादेव देहाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ साधन सूत्रके अनुसार यह पत्र एक अमेरिकी महिलाको लिखा गया था।

७१ पत्र अमृतलाल वि० ठक्करको

१७ जून, १९३६

भाई ठक्कर बापा,

पालमपुरसे आमन्त्रण आया है।

वालुजकरको अभी २,००० रुपये मिले नही है, तुरन्त इतना रुपया भेज देना। इससे जो हिसाब आदि लेना हो सो लेते रहना। उसका काम मत रुकने देना।

भडौचका तकाजा पूरा कर दिया होगा? करसनदासने विलेपार्लेके मकानकी जवाबदारी मेरे ऊपर डाल दी है। ट्रस्टियोकी बैठक बुलाई जानी चाहिए। किशोरलालने उन्हे लिखा होगा। अनुकूल तिथि सूचित करो तो बैठक बुलाये।

मै सेगावमे बैठ गया हूँ। बैठक आदिके लिए तो वर्धा जाता रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५९) से।

७२ पत्र विजया एन० पटेलको

१७ जून, १९३६

चि० विजया,

मै तो सेगावमे बैठा हूँ। अभी रहने की सुविधा नही हुई है। बरसातके कारण पूरा काम नही हो सकता। अगर तू आती है तो मै तुझे मगनवाडीमे या महिला आश्रममे रखने को तैयार हूँ। वहाँसे मेरे पास आती रह सकती है। अभी तो बा भी मेरे साथ नही है। मेरे साथ ही रहना हो तो तुझे प्रतीक्षा करनी पडेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६१) से। सी० डब्ल्यू० ४५५३ से भी, सौजन्य विजयाबहन एम० पचोली

७३. पत्र हीरालाल शर्माको

१७ जून, १९३६

चि० शर्मा,

तुमारे दो खत आये है। घरके हाल सुनकर दुख होता है।[1] अगर उपचारके बारेमे आत्मविश्वास आ गया है तो मरीजोका उपचार करो। अथवा उनको छोड दो। मामूली उपचार करते रहेगे।

तुमारे क्या करना, द्रौपदीको[2] क्या करना यह सब बाते करने के लिये आ जाओ। मै तो सेगाँवमे पडा हूँ। यह कोई बात नही है। मगनवाडीसे नित्य आ जा सकते है। यहा हवा बहुत ठडी है बारिश काफी पडा है। अब भी पड रहा है। सफरमे सब मिलाकर कितना खच हुआ? जो पाना था सो पाया? वहासे सीखने का कुछ बाकी रहा? शरीरशास्त्रका ज्ञान पर्याप्त पाया।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वष, पृ० २५३

७४. एक सदेश

१७ जून, १९३६

हिदुधर्मीओ की प्रत्येक सभा पाच काम आसानी से कर सकती है

(१) अस्पृश्यता को पाप समजकर निकाले।
(२) अज्ञानपूर्वक जो शिथिल गोसेवा हो रही है उसे शुद्ध ज्ञानसे करे।
(३) खादी को अपनाकर दरिद्रनारायण की यतकिचित सेवा करे।
(४) देहातीओ का माल लेकर उनकी सेवा करे।
(५) धर्मनाशक ज्ञाति बधनो को काटे।

मो० क० गाधी

महादेब देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ हीरालालके बड़े भाईके इकलौते पुत्रकी मृत्यु हो गई थी।

२ हीरालालकी पत्नी।

७५ पत्र . अगाथा हैरिसनको

सेगाँव, वर्धा
१८ जून, १९३६

प्रिय अगाथा,

यह मै अपने नये आवाससे लिख रहा हूँ, जो सही अर्थोमे ठेठ देहातमे है — यानी, वहाँ जहाँ न डाकघर है, न अच्छी भोजन-सामग्रीका भडार, न चिकित्सा-सुविधा, और जहाँ वर्षा-कालमे पहुँच सकना अत्यन्त कठिन है। मै और भी कितने ही विशेषण लगा सकता हूँ, पर फिलहाल तो इतने ही पर्याप्त होगे। इसका यह मतलब नही कि मुझे कोई असुविधा उठानी पड रही है। यह सब तो मैने अपने आगामी कार्यका कुछ अन्दाज देनेको तुम्हे बताया है।

खबरोके बारेमे तुम्हारा कहा मै समझता हूँ। जवाहरलाल इस समस्यासे सुलटनेका प्रयास कर रहे है। देखे, आगामी छह मास हमे क्या दिखाते है।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९५) से।

७६ पत्र म्यूरियल लेस्टरको

१८ जून, १९३६

प्रिय म्यूरियल,

तुमने तो मुझसे बाजी मार ली। जब कालेलकरने तुम्हारे साथ भेटका वृत्तान्त लिखा और बताया कि तुम्हे मलेरियाने जकड रखा है और आग्रह किया कि मै तुमसे अपना ठीक उपचार करने का आग्रह करूँ, तब मै तुम्हे फौरन ही लिखना चाहता था। और देखो तो, तुम्हारा ही पत्र आ पहुँचा, फिर डोरोथीके पत्रके साथ दूसरा भी आ गया।

मुझे तुम्हारा हमेशा ध्यान रहता है और बातचीतमे भी बहुधा तुम्हारी चर्चा होती है, परन्तु कामकी भीडके कारण भारतसे दूरके मित्रो और सहयोगियोको जितनी बार मन चाहे, उतनी बार लिख नही पाता।

मै भला किस तरह तुमसे आग्रह करूँ कि तुम अपनी ठीक देखभाल करो? यदि तुम्हारा शरीर चोरोका डेरा नही बल्कि पवित्रात्माका निवास है तो शरीरको

आवश्यकता होनेपर आराम देना ही चाहिए। "किसी बातकी चिन्ता न करो", यह बडी उत्तम सीख है। यदि अपने दैनिक जीवनमें हम इसपर अमल करें तो फल-प्राप्तिकी उतावलीमें अपने शरीरकी ऐसी उपेक्षा नहीं करेंगे कि आगे काम करने लायक ही न रह जायें। इंग्लैंडमें तुम्हारे मलेरियासे पीडित होनेकी क्या तुक है? भगवान् तुम्हारी रक्षा करे।

अन्ततः मैं जमनालालजी द्वारा बनवाई अपनी सेगाँवकी कुटिया में आ ही गया हूँ। भविष्यके गर्भमें मेरे लिए क्या है सो तो पता नहीं, परन्तु फिलहाल मेरा अड्डा सेगांवमें ही है। डाकका पता वर्धा ही रहेगा, क्योंकि यहाँ कोई डाकघर नहीं है। कितनी ही और चीजोंकी तरह यहां डाक-टिकट भी नहीं मिलते।

डोरोथीको अलगसे पत्र नहीं लिख सकूंगा। समय ही नहीं है।

तुमको, उसको और परिवारके अन्य सदस्योंको मेरा प्यार।

जमनालालजी का पुत्र कमलनयन जल्दी ही तुम्हारे पास पहुँचेगा। उसकी खूब देख-रेख करना और ऐसी जगह टिकाना जहां उसकी अच्छी देखभाल हो।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च]

तुम्हारे लेखपर[1] फौरन ध्यान दिया जायेगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८०७) से

७७ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१९ जून, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

मेरी धुंधली लिखावटके बारेमें तुम्हारी शिकायत उचित है। केवल तुमने ही शिकायत की हो ऐसी बात नहीं। इस देहाती स्याहीमें सुधार करना ही होगा। देहाती स्याही और देहाती कागज, दोनों अभी विज्ञापित किये जाने योग्य नहीं हैं। फिर भी तुम्हें मानना पडेगा कि यदि मैं हार मान लूं तो सुधार असम्भव हो जा सकता है। तुम्हारे-जैसे विद्रोहियोंको विद्रोह करने की अपनी आदतसे बाज नहीं आना चाहिए और शीघ्र ही तुम देखोगी कि तानाशाहको भी अपने तौर-तरीकोंमें सुधार करना पडेगा। सम्भव है, मुझे इस महीन कागजका उपयोग छोडना पडे। बताना कि बगैर आतशी शीशेके तुम इस पत्रको पढ सकी या नहीं।

१ म्यूरियल लेस्टर और डोरोथी हॉग द्वारा लिखा गया "टिंसिंगटन वेल ड्रेसिंग" शीर्षक लेख ५-९-१९३६ के *हरिजन*में प्रकाशित हुआ था।

तुमने निस्सन्देह बडी अच्छी बिक्री की। ब्रोचोकी घटिया पिनोके बारेमे तुम्हारी शिकायतकी मैने सफाई दे दी है।[1] यदि तुम्हे इतने पर भी सन्तोष न हो तो मुझे विश्वास है वे लोग उतने ही मूल्यकी तुम्हारी मनपसन्द कोई और वस्तु बदलेमे भेज देगे।

आशा है, जो चन्दनकी लकडीका डिब्बा तुम्हे अलगसे भेजा गया था वह मिल गया होगा। हमेशा सामर्थ्यसे बाहर काम करने का ढग तुम्हे छोडना पडेगा, चाहे इसकी खातिर तुम्हे सेगावमे ही क्यो न रहना पडे। तुम्हारे लिए तुम्हारी योजनाके अनुरूप एक कुटिया बनवा सकता हूँ। तुम मोटरमे स्टेशनसे सीधे सेगाव आ सकती हो, अधिकसे-अधिक डेढ घटा लगेगा, वैसे एक घटेमे पहुँच सकती हो। परन्तु मोटरमे वर्षाके बीच या अगर भारी वर्षा हुई हो तो फौरन बाद यहा मत आना, रुककर आना।

मेरी कुटियामे मिट्टीकी मोटी दीवारे है—साधारण इटकी दीवारसे दूनी चौडी। इस मिट्टीपर वर्षाका कोई असर नही होता। मेरे खयालमे कुटिया और आसपासका वातावरण तुम्हे बहुत प्रिय लगेगा।

मीरा बिलकुल ठीक है।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३२) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८८८ से भी

७८. पत्र : एस्थर मेननको

१९ [जून][2] १९३६

रानी बिटिया,

तुम बहुत नटखट हो। पत्रके हाशियेपर ऊपर-नीचे सब जगह बिना यह जताये लिख डालती हो कि आरम्भ कहासे किया। भला एक पन्ना और क्यो नही ले लेती? अच्छा, अब और शिकायत नही करता। मैने सरस्वती और कान्तिको तुम्हारे पास भेजा था, क्योकि मैने सोचा कि उनसे मिलना तुम्हे अच्छा लगेगा।

आश्चर्य! मुझे इस सप्ताह मेरीका[3] एक पत्र मिला है। उसने तुम्हारे लिए काफी चिन्ता व्यक्त की है।

१ १५ जूनके पत्रमें।

२ पत्रकी विषय वस्तुसे प्रकट होता है कि यह एस्थर मेननको लिखे गये १८ मई, १९३६ के पत्रके बाद लिखा गया होगा, देखिए खण्ड ६२, पृ० ४४८। १९ जून, १९३६ को गाधीजी वर्धामें थे।

३ एनी मेरी पीटर्सन।

क० को तो भारी सन्ताप होता होगा कि धनाभावके कारण उसे जो चीज सबसे ठीक लगती है, उसे नही कर पा रहा है। खैर, हमे इस बातसे सन्तोष करना होगा कि भगवान् हमे हमेशा वह चीज नही करने देता जो हमारे विचारसे सर्वोत्तम है। शायद हमे हमेशा पता नही होता कि सबसे अच्छा क्या है।

बच्चोसे हठपूर्वक पत्र मत लिखवाओ। जब वे स्वेच्छासे मुझे पत्र भेजना चाहे तब लिखे।

आशा है, बीमारीके बाद तुम अब बिलकुल स्वस्थ हो गई होगी। हमारी पहली भेटके समय तुम जैसी स्वस्थ और प्रसन्न थी वैसी ही तुमको देखना मुझे बडा प्रिय लगेगा। तुम तो स्वास्थ्यकी ऐसी आदर्श प्रतिमूर्ति थी कि मै सोचता था कि तुम बीमार पड ही नही सकती।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सख्या १३८) से, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

७९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१९ जून, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मै तुम्हारी जानकारीके लिए साथका पत्र[1] भेजनेवाला था कि कल तुम्हारा पत्र मिला।

यह जानकर खुशी हुई कि रणजीत पहलेसे अच्छे है। उन्हे अपना खयाल रखना चाहिए।

मै नही चाहता कि तुम अपनी काय-समितिमे किसी स्त्रीको न रखने के बारेमे कोई खास बयान जारी करो।[2] मेरे खयालसे स्त्रीको न रखने की बातका वही महत्त्व नही हे, जो दूसरोको रखने या न रखने का है। हममे से किसीकी भी काय-समितिमे से स्त्री-मात्रको अलग रखने की न हिम्मत थी और न इच्छा। यदि तुम्हारे रवैयेका यह ठीक-ठीक अथ है तो अवसर उपस्थित होनेपर इसका स्पष्टीकरण कर दिया जाना चाहिए।

जहाँतक दूसरोका सवाल है, मुझे अफसोस है कि जो-कुछ हुआ, तुम अभी तक उसपर खिन्न हो। ध्येयके हितमे भूलाभाईवाली कडवी घूट पी लो। और पहली ही चर्चामे, तुम्हारे जिक्र करने से पहले, मैने निश्चित रूपसे कह दिया था कि कार्य-समितिमे समाजवादी होने ही चाहिए। मैने नामोका भी जिक्र किया

१ उपलब्ध नही है।

२ देखिए खण्ड ६२, पृ० ४८९ ९०।

था। लेकिन मै जिस बातपर जोर देना चाहता हूँ वह यह नही है कि किसने किसका नाम लिया, बल्कि यह है कि सब लोग समान ध्येयकी सिद्धिके इरादे से ही काम कर रहे थे।

जहाँतक मुझे याद है, तुम्हारी भेजी हुई चीज वह नही है, जो मैने देखी थी। तुम्हारी भेजी हुई चीज तो शायद मै पहली ही बार देख रहा हूँ। डॉ० हार्डीकर से पूछ लो कि उन्होने कोई और बयान जारी किया था क्या। जो चीज तुमने मेरे पास भेजी है वह भी, जो-कुछ डॉक्टर [हार्डीकर] मुझे बताया करते थे, उससे भिन्न है। उनके विचार मेरी रायमे दोषपूर्ण तो है, लेकिन उनके प्रकट किये जाने पर मुझे कोई एतराज नही है। मेरी शिकायत यह है कि उन्होने मुझसे एक बात कही और प्रकाशित दूसरी बात कराई। तुम यह पत्र डॉ० हार्डीकरको दिखा सकते हो।

आशा है, तुम अच्छे होगे। तुम्हारे पजाबके तूफानी दौरेका हाल मै चिंतित होकर पढता रहा।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

अगर लिखावट इतनी धुँधली हो कि पढ न सको तो इस पत्रको फेक देना।[1]

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० १७८-७९ से भी

८० पत्र नारणदास गाधीको

१९ जून, १९३६

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। शालाके बारेमे तुम्हे जो ठीक लगे वही करना। मुझे कोई उतावली नही है। हमारे कत्तव्यके विषयमे मुझे शका नही है किन्तु कर्त्तव्यके अनुसार करने मे कठिनाइयाँ आती है।

अब मेरे अक्षर साफ-साफ पढ लेते हो या नही, लिखना।

इसके साथ दो पत्र है। कनु लगभग रोज आता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९६ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ मूलमें यह अंश पत्रके शीर्ष भागपर लिखा हुआ है।

८१ पत्र : अमतुस्सलामको

१९ जून, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

शर्माको मैंने तेरे पास भेजा, इसलिए तेरी डाँट मेरे सिर-आँखों पर। मुझे माफ करना। अब फिरसे ऐसा गुनाह नही करूँगा। तू किसकी बात मानती है जो शर्माकी मानेगी? एक जमाना था जब तू उनको पूजती थी, उनकी सलाह तू मानती थी और उनका कहा मानने से फायदा हुआ है, ऐसा भी कहती थी। अब उनकी सलाह तुझे नही भाती, यह जमाने की तासीर है।

कान्तिको काका साहबके पास जानेकी प्रेरणा मैंने नही दी। लेकिन काका साहबको उसकी सेवा और मददकी जरूरत है। ऐसा उसे मालूम हुआ, इसलिए वह सेवाके लिए तैयार हो गया। मुझे उसकी तैयारी अच्छी लगी। उससे उसे फायदा ही होगा। काका साहबका काम पूरा हो जानेपर या जब कान्तिकी इच्छा होगी तब वह मेरे पास लौटेगा।

तूने भाइयोको, भाभीको लिख डाला सो जाना। जो लिखा, उसमे मैं अदब नही देखता। उसमे मैं स्वच्छन्दता देखता हूँ। लेकिन तुझे समझानेमे कौन समर्थ है? जो तू करे वह मेरे-जैसेको देखते रहना होगा। छुट्टियाँ शुरू होनेपर जरूर आना।

मेरी तबीयत ठीक है। सेगाँवमे हूँ। आज सरस्वती आई होगी। लडकोके लिए खत[1] साथमे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३८) से।

१ देखिए अगला शीर्षक।

८२ पत्र · मगलप्रसाद और अन्य लोगोको

१९ जून, १९३६

चि० मगलप्रसाद, जोगीराम, बनवारीलाल,

तुमारे खत पढकर मुझे आनद हुआ।

मगलप्रसादने शब्दोको अलग-अलग नही लिखे है, अक्षर सुधर सकते है। जोगीरामके कच्चे है, बनवारीलालके अच्छे है। मगलप्रसाद ओर जोगीराम अच्छे लिखे।

तीनो ध्यानसे पढो। एक एक मिनिटका हिसाब रखो। एक-दूसरासे प्रेमसे रहो। सादगीसे रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८५) से।

८३ पत्र लीलावती आसरको

१९ जून, १९३६

चि० लीलावती,

तू उतावली मत कर। महादेवने खुद देख लिया है कि फिलहाल यहा किसीको भी रखना कितना कठिन है। स्नानघर और शौचगृह तो ठीक होना ही चाहिए न ? यह अभी है ही नही। वर्षा होती रहती है, कारीगर जैसे आने चाहिए, नही आते। मिस्तरी भी नही आता। इसलिए पानीकी निकासीके लिए पुलिया भी नही बनी है। दूसरे महीनेमे भी सब ठीक हो पाता हे या नही, कह नही सकते। इसके सिवा तेरी खाँसी अभी अच्छी नही हुई है। यह ठीक बात नही है। मिर्च और तेलका स्वाद तो नही लेती न ? मैंने तेरे स्वादके विषयमे बहुत बाते सुनी है। यहाँ भी तू तेल और मिर्चके बिना परेशान होती थी। ठीक है न ? इस कमजोरीको जीत ले। यहाँ बडी कठिनाइयाँ है। ऐसी बातोमे बा का उदाहरण नही गिनाना चाहिए। किन्तु यह तो एक अलग बात हुई। गर्म पानीमे नमक आदि पीकर खासी अच्छी कर ले।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७७)से। सी० डब्ल्यू० ६५४९ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

८४ गुजरातके पितामह

सबसे पहले १९१५ मे मै अब्बास तैयबजीसे मिला था। जहाँ-कही मै गया, वहाॅ अगर तैयबजी-परिवारका कोई सदस्य हुआ तो, स्त्री हो अथवा पुरुष, वह मुझसे आकर जरूर मिला, मानो मै उस महान् और चारो तरफ फैले हुए परिवारका एक सदस्य ही होऊॅ। हमारे बीच इस अटूट सम्बन्धका सिवाय इसके और कोई खास कारण मुझे नही मालूम कि जिस सुप्रतिष्ठित न्यायाधीशके कारण यह खानदान प्रसिद्ध हे उससे १८९०[1] मे मेरी मित्रता हो गई थी। यह वह समय था जब मै दक्षिण आफ्रिकासे हिन्दुस्तान वापस आया था और यहाँ बिलकुल अनजाना था। कुछ लोगोका खयाल तो सम्भवत यह भी था कि मै अपना भाग्य आजमाने ओर अपने लिए कोई ठीक जगह बनाने के लिए यहाॅ-वहा भटक रहा हूॅ। लेकिन बदरुद्दीन तैयबजी और कुछ अन्य व्यक्ति ऐसे भी थे जिनका ऐसा खयाल नही था।

मगर मुझे तो बडौदाके अब्बास मियाँके विषयपर ही आना चाहिए। जब हम एक-दूसरेसे मिले और मैने उनके चेहरेको ताका तो मुझे स्व० न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजीका स्मरण हो आया। हमारी उस मुलाकातसे हमारे बीच जन्म-भरके लिए मित्रताकी गाॅठ बँध गई। मैने उन्हे हरिजनोका मित्र ही नही बल्कि उन्हीमे से एक पाया। एकबार बहुत पहले[2] गोधरामे जब मैने लोगोको अस्पृश्यता-विरोधी सम्मेलनके लिए सायकाल वहाॅकी एक हरिजन बस्तीमे बुलाया तो उन्हे बडा आश्चर्य हुआ, लेकिन अब्बास मियाँ वहाॅ भी हरिजनोके काममे उसी उत्साहसे भाग लेते देखे गये जैसे कोई कट्टर हिन्दू ले सकता है। तथापि वे कोई साधारण मुसलमान नही थे। इस्लामके लिए उन्होने मुक्त हस्तसे दान दिया और कई मुस्लिम सस्थाओको वे सहायता देते रहते थे। मगर हरिजनोको मुसलमान बनाने-जैसा कोई विचार उनके मनमे कभी नही उठा। उनके इस्लाममे भू-मण्डलके तमाम महान् धर्मोके लिए गुजाइश थी। इसीलिए अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमे वे हिन्दुओकी ही तरह उत्साहपूर्वक भाग लेते थे, और मै जानता हूँ कि जबतक वे जिन्दा रहे तबतक उनका यह उत्साह बराबर वैसा ही बना रहा।

असल बात यह है कि उन्होने अधूरे मनसे कभी कोई काम नही किया। अब्बास तैयबजी अपने मनमे कोई बात छिपाकर नही रखते थे। पजाबकी पुकारका उन्होने तत्क्षण जवाब दिया।[3] उनकी उम्रके किसी ऐसे अन्य व्यक्तिके लिए, जिसने

१ वस्तुत १८९६ में, देखिए खण्ड २, पृ० ४१२।

२ नवम्बर, १९१७ में।

३ अप्रैल, १९१९ में पंजाबके उपद्रवोंकी जाँच और उनकी रिपोर्ट तैयार करने के लिए काग्रेसकी उप समितिने जो पाँच कमिश्नर नियुक्त किये थे, अब्बास तैयबजी उनमें से एक थे।

जीवन मे कभी कोई कठिनाई नही झेली, जेलोकी सख्तियाँ बर्दाश्त करना कोई मजाक नही था। लकिन उनकी श्रद्धाने हर कठिनाईको जीत लिया। दूसरोके चेहरोको भी खिला देनेवाली मुस्कराहटके साथ खेडाके किसानोकी तरह ही सादा जीवन व्यतीत करने, उन्हीका-सा खाना खाने और सब मौसमोमे उन्हीकी तकलीफ-देह, भद्दी बैलगाडियामे सफर करनेकी उनकी क्षमता देखकर अनेक नोजवानोको उनके सामने शर्मिन्दा होना पडता था। ऐसी असुविधाओके बारेमे भी, जिनसे बचा जा सकता था, मैने उन्हे कभी शिकायत करते हुए नही सुना। "ऐसा क्यो, उनके हिस्से यह सोचना नही था, उनके हिस्से तो सिर्फ करना या मरना था।" हालाकि एक समय मुख्य न्यायाधीशकी हेसियत से उन्हे किसीको मृत्यु दण्ड देने ओर अपनी आज्ञाका पालन कराने की सत्ता प्राप्त थी, फिर भी बिना किसी उज्रके अनुशासनका पालन करने की आश्चयजनक क्षमता उन्होने प्रदर्शित की। वे मनुष्य-जातिके विरले सेवकोमे से थे। भारत-सेवक भी वे इसीलिए थे कि वे मनुष्य-जातिके सेवक थे। ईश्वरको वे दरिद्रनारायणके रूपमे मानते थे। उनका विश्वास था कि परमेश्वर दीन-दुखियो ओर तिरस्कृतोके बीच ही रहता है। अब्बास मियाँका शरीर यद्यपि इस समय कब्रमे विश्राम कर रहा है, पर वे मरे नही है। उनका जीवन हम सबके लिए एक प्रेरणा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-६-१९३६

८५. क्या खादी आर्थिक दृष्टिसे टिक सकती है?

अगर इस प्रश्नमे अभिप्राय यह हो कि कीमतके लिहाजसे जापानी छीटके टुकडो या हिन्दुस्तानी मिलोमे बने हुए कपडेसे भी खादी प्रतियोगिता कर सकती है या नही, तो इसका जवाब एकदम 'न' ही होगा। लेकिन ऐसा नकारात्मक उत्तर ता लगभग ऐसी हरएक चीजके लिए दिया जायेगा जो श्रम बचानेवाली शक्ति (मशीनो) के मुकाबले मनुष्यकी शारीरिक शक्तिसे तैयार हो। यहाँतक कि भारतीय कल-कारखानोमे बननेवाले मालका भी यही हाल होगा। कल-कारखानोमे तैयार होनेवाला कपडा, लोहा, शक्कर आदि विदेशी प्रतियोगिताके मुकाबलेमे टिक सके, इसके लिए किसी-न-किसी रूपमे उन्हे सरकारी सहायताकी आवश्यकता पडती ही है। अत इस रूपमे इस प्रश्नको रखना बिलकुल गलत है। खुले बाजारमे तो एक ज्यादा सगठित उद्योग सदा ही अपनेसे कम सगठित उद्योगको खत्म कर सकता है — खासकर तब, जब उसे सरकारी सरक्षण प्राप्त हो और यथेष्ट पूजी भी लगाने के लिए मिल सकती हो, और वह कुछ समयके लिए घाटे पर भी अपना माल बेच सकता हो। हमारे देशमे अनेक उद्योगोका इसी तरह दुखद अन्त हुआ है।

कोई भी ऐसा देश, जहाँ अमर्यादित विदेशी प्रतियोगिताकी छूट हो, भुखमरीकी हालतमे पहुँच सकता है और यदि विदेशी लोग चाहे तो वह गुलामीमे भी पड

सकता है। इसी को शान्तिमय प्रवेश कहते है। हाथसे बननेवाले माल और मशीनोसे तैयार होनेवाले मालके बीच प्रतियोगिताका भी यही परिणाम होता है, यह समझने के लिए एक ही कदम आगे जाने की जरूरत है। हम इस प्रक्रियाको अपनी आँखोके सामने घटित होते देख रहे है। आटेकी छोटी-छोटी मिले हाथकी चक्कियोको, तेलकी मिले गॉवकी घानीको, चावलकी मिले गावकी ढेकीको, और चीनीकी मिले गुड बनाने के ग्रामीण साधनो आदिको विलुप्त करती जा रही है। ग्रामीण धन्धोके नाश से गॉववाले गरीब होते जा रहे है, और धनवान लोग और मालदार बन रहे है। अगर काफी लम्बे अर्सेतक यही क्रम चलता रहा तो ओर किसी प्रयत्नके बगैर ही गॉवोका नाश हो जायेगा। गाँवोको तबाह करने का इससे अधिक चतुराई-भरा और लाभप्रद उपाय तो कोई चगेजखा भी नही निकाल सकता। ओर दु खद बात तो यह है कि अनजाने, पर निश्चित रूपसे, गॉववाले स्वय भी अपने इस विनाशमे साझीदार हो रहे है। उनके दु खोको पूरी तरह समझने के लिए पाठको को जानना चाहिए कि उनके लिए खेती करना भी लाभप्रद नही रहा है। कुछ फसलोमे तो गॉववालो को बीजके दाम निकालने-जितनी भी आमदनी नही होती।

इन सब बातोके बावजूद मै जो कहता हूँ कि मोजूदा हालतमे खादी ही ऐसी चीज है जो आर्थिक दृष्टिसे टिक सकती है, उसका क्या मतलब है? इस बातको स्पष्टताके साथ मै इस तरह कहूँगा "करोडो ग्रामवासियोके लिए खादी ही ऐसी चीज है जो आर्थिक दृष्टिसे उस समयतक टिक सकती है जबतक कि हिन्दुस्तानके हरएक गॉवमे खेतो, घरो या कारखानोमे काम करनेवाले हरएक स्त्री-पुरुषके लिए, जिसकी उम्र १६ से ऊपर हो ओर जिसका शरीर काम कर सकने लायक हो, काम और पर्याप्त मजदूरी दिलानेवाली, सम्भव हो तो, इससे कोई अच्छी पद्धति नही मिल जाती, अथवा, जबतक इतने काफी शहर नही बन जाते कि वे इस प्रकारके गॉवोका स्थान ले ले, ताकि सुव्यवस्थित जीवनके लिए जिन सुविधाओ और आरामकी जरूरत हे और जिन्हे पानेका सबको हक है, वे सब उनके द्वारा गाववालो को मिलने लगे।" यह सब इतनी स्पष्टतासे कहनेके पीछे मेरा उद्देश्य यह बताना है कि अभी तो, भविष्यके बारेमे जितनी दूरतक हम सोच सकते है, खादीकी ही प्रधानता रहेगी।

इस समयकी जरूरी समस्या तो उन करोडो ग्रामवासियोके लिए काम और मजदूरीकी व्यवस्था करने की है जो क्रमश कगाल बनते जा रहे है। कोई भी व्यक्ति गाँवोमे जाकर स्वय इस बातको देख सकता है और समकालीन विशेषज्ञोके साक्ष्योसे भी यह बात सिद्ध होती है कि गॉववाले आर्थिक, मानसिक और नैतिक दृष्टिसे उत्तरोत्तर अधिकाधिक गरीब होते जा रहे है। उनके अन्दर कोई काम करने का, सोचने का, बल्कि जिन्दा रहनेतक का उत्साह तेजीसे नष्ट होता चला जा रहा है। जिन्दा होते हुए भी वे मानो मृत है।

खादीसे उन्हे काम, औजार और अपने मालके लिए तैयार बाजार मिलता है। जहा अभी कलतक घोर निराशा थी वहा खादी आशाका सचार करती है।

शकालु लोग पूछेंगे, "अगर खादी इतनी आशाप्रद चीज है तो अभी इसमे इतनी कम प्रगति क्यो हुई है?" इसके जवाबमे यह कहा जा सकता है कि करोडो बेरोजगार लोगोको देखते हुए यद्यपि खादीकी प्रगति अपने-आपमे कम हुई है फिर भी तुलनात्मक दृष्टिसे देखे तो अलग-अलग अन्य किसी भी उद्योगसे उसने अधिक प्रगतिकी है। इस उद्योगकी बदौलत हर साल ग्रामीण मजदूरोकी सबसे बडी सख्याको मजदूरीके तौरपर सबसे ज्यादा रकम मिलती है, और साथ ही व्यवस्था आदिका ऊपरी खर्च इसमे बहुत कम होता है और इसका लगभग एक-एक पैसा जन-साधारणके ही पास पहुँचता है। अखिल भारतीय चरखा सघने इस सम्बन्धमे जो ऑकडे प्रकाशित किये है उनका अध्ययन करके कोई भी व्यक्ति इस बातको जान सकता है।

खादीकी उन्नतिमे अनेक बाधाएँ है। गॉववालो के अपने कुछ पूर्वग्रह है, इसे बिना सरकारी सहायताके हर तरहकी अनैतिक प्रतियोगिताका मुकाबला करना पडता है, तथाकथित अर्थशास्त्रियोकी प्रचलित सम्मतियोका विरोध सहना पडता है, और खादी पहननेवालो की निरन्तर सस्ती खादी मिलने की मॉगका भी मुकाबला करना पडता है। इस तरह यहा मुख्य सवाल यह है कि देहातियो और शहरियोको दैन्य, दुख और ऑसुओके इस देशके योग्य सच्चा अर्थशास्त्र कैसे सिखाया जाये। दुख और गरीबी धर्मोका विचार नही करते। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई जो लोग भी गॉवोमे रहते है वे सब एक ही रोग—दरिद्रता और अभाव—से पीडित है। अगर इनमे कोई फर्क है तो केवल मात्राका है।

इसलिए मेरी मान्यता है कि चाहे एक गज खादी मिल के बने एक गज कपडेसे महँगी हो, मगर कुल मिलाकर और गाँववालो की दृष्टिसे तो वह सबसे लाभकारी और व्यावहारिक वस्तु है, जिसके मुकाबलेकी दूसरी चीज नही है। इस कथन पर पूरा विचार करने के लिए खादीकी व्याख्यामे दूसरे ग्रामीण धन्धे शामिल किये जा सकते है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २०-६-१९३६

८६. पत्र एस० अम्बुजम्मालको

२० जून, १९३६

चि० अम्बुजम,

तुम्हारा पत्र और फल मिल गये। जब तुम्हारे यहाँसे फल मँगवाने की जरूरत होगी, अवश्य लिखूगा। यो तो बम्बई पास पडता है, परन्तु कभी-कभी जब वहाँ सतरे लगभग अप्राप्य होते है तब दक्षिणके मीठे नीबू मिलने पर बडी खुशी होती है।

मुझे खुशी है कि पिताजी की तबीयत कुछ सुधरी है।

मुझे पता है कि [1]को कटि-स्नान और घर्षण-स्नानकी आवश्यकता है। घर्षण-स्नान पुरुषोकी अपेक्षा स्त्रियोके लिए अधिक लाभकारी है।

मै चाहता हूँ तुम दोनो कोडम्बक्कम् समितिमे शामिल हो जाओ। मै चाहता हूँ, विशेष रूपसे तुम जब मद्रासमे रहो तो सस्थाको देखने सप्ताहमे कमसे-कम एक बार जरूर जाओ, वहाका काय देखो और उसकी रिपोर्ट तैयार करो। तुम्हे उस आश्रममे रहनेवालो से भी मिलना-जुलना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०८)से, सौजन्य एस० अम्बुजम्माल

८७ पत्र ना० र० मलकानीको

सेगाँव, वर्धा
२० जून, १९३६

प्रिय मलकानी,

मुझे कुछ ऐसा लगता है कि तुम्हारा पत्र बहुत समयसे नही आया।

पाठशाला कैसी चल रही है? रुक्मिणी कुछ और बखेडा तो नही करती?

साथका कागज[2] थडानीको दे दो। इस लेखमे वेदो की व्याख्या करने की एक दूसरी विधि बताई गई है। उसका सिद्धान्त कुछ प्रगति कर रहा है क्या?

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१८) से।

१ यहाँ साधन सूत्रमें दो शब्द धुँधले पड़ जाने के कारण पढ़े नही जा सके।

२ उपलब्ध नहीं है।

८८ पत्र अमतुस्सलामको

२० जून, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा खत मिला। जो आदमी तकके घोडे दौडाये उसका क्या करे? सरस्वतीसे मिलने की इच्छा तुझे होगी ही, इसीलिए तो मैंने तुझे लिखा था। उसमे न तेरी परीक्षा थी, और न किसी प्रकारका प्रलोभन। सरस्वतीको वहाँ नही भेजा जा सकता। बहुत खर्च होगा। इसे मै मोह ही कहूँगा।

तू वर्धा आये, इसमे तो अर्थ है। सरस्वती वहाँ जाये, इसमे अनर्थ है। उसे यहा अच्छा लगेगा तो बहुत समयतक रहेगी।

जो हरिजन बालक उर्दू लिपि जानते है, उनका यह अभ्यास बनाये रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३७) से।

८९. पत्र लीलावती आसरको

२० जून, १९३६

चि० लीलावती,

मिर्च न खाने का व्रत लेना बिलकुल जरूरी नही था। मगर ले लिया है तो पालन करना। तुझे अपनी भाषा सुधारनी चाहिए। बिना विचारे बोलने की तुझे आदत पड गई है। यह ठीक नही है। हमारी बातका जो अर्थ सुननेवाला लगाता है, उसीको ठीक मानने मे लाभ है। इससे हमे कम बोलने और जो बोलते है सो विचार करने की आदत पडती है। तुझे यहाँ बुलाने के लिए मै उत्सुक हूँ। किन्तु यह नही चाहता कि बुलाकर तुझे असुविधामे डालू। २४-२५ तारीखको बुला लूँ और २७ को तुझे यहाँ छोडकर चल दू तो तुझे सेगाँवमें मेरे बिना पूरा हफ्ता निकालना पसन्द नही आयेगा। यह भी सोचता हूँ कि तू वहाँ बा की सेवा तो कर ही रही है। बातचीत कम करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७८)से। सी० डब्ल्यू० ६५५० से भी, सौजन्य लीलावती आसर

९० पत्र अमृतलाल ठा० नानावटीको

२० जून, १९३६

चि० अमृतलाल,

तुम्हारे पत्रमे लिखे कामके बारेमे जबानी तो कह ही दिया था।

सम्भव है, रसोईघरमे बहुत लोग हस्तक्षेप करे। धीरजके साथ तुम सब-कुछ हल कर पाओगे।

मसालेदार भोजन करनेवाले लोगोकी सख्या बढती हो, तो बढने देना। किसीसे कुछ न कहना।

जितनी खादीकी जरूरत हो मँगवाकर सिलवा लेना।

मनुके लिए समय न दिया जा सके तो उससे 'ना' कह देना। वह सितार ही सीखती रहे, यही ठीक है।

भारतन [कुमारप्पा] की खुराकके बारेमे ठीक तरहसे देखना।

तुम्हारे लिए जो खुराक उपयुक्त हो, वह लेना और शरीरको चगा बना लेना।

गजानन अच्छा हो गया न? उससे मुझे लिखने के लिए कहना। तबीयतके बारेमे भी ओर सिन्दी [गाव] के कामके बारेमे भी।

भानु बापासे कहना कि मेरे कारण नासिकके काममे एक दिनकी भी देरी न हो। सरकारी दफ्तर भी इस कामके आडे आ गया, यह नई घटना हुई।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१७) से।

९१ पत्र . अतरसिह और अन्य लोगोको

२० जून, १९३६

चि० अतरसिह, प्रभुदयाल ओर जयकरण,

तुमारे खत पाकर खुश हुआ। अक्षर सब अच्छे लिखो। खूब मेहनत करो और उद्योग मे हुशियार बनो।

अतरसिह मौन के लाभ पूछते है। शाति रहती, शक्ति बचती है, ईश्वर-चितन का समय मिलता है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

जो लडके उर्दू हरफ जानते हैं वे उसे भूल ना जाय।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८३) से।

९२ पत्र · जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
२२ जून, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

ये कुछ और कतरने[1] है, जो सम्भवत मुझसे अधिक तुम्हारे लिए महत्त्वपूर्ण है। मै दाहिने हाथको आराम दे रहा हूँ।

और नही लिखता, क्योकि जल्दी ही मिलेगे।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

९३ पत्र अमृतकौरको

२२ जून, १९३६

मूर्खा रानी,

तीन रुपये चुका दिये गये है। सेगाँवसे तुम्हे कई पत्र लिख चुका हूँ। कई बैठकोमे शामिल होनेके लिए यहाँसे २७ तारीखको एक सप्ताहके लिए वर्धा जाऊँगा।

रोज ही कभी-कभी वर्षा होती रही है, पर कुछ ज्यादा नही। यहाँ कुछ भी नुकसान नही हुआ, कमसे-कम गिनने लायक नही है।

केवल कोई मूर्खा ही आशा करेगी कि ग्राहक क्रयकी हुई अपनी वस्तुके दोषोको स्वयं सुधारे। मैंने तो यही सोचा था कि ब्रोच इस तरह सुधार लिये जायेंगे कि राज-वर्गको भी वे स्वीकार्य हो, और लागत-खर्चको मूल्यमे जोड दिया जायेगा। खैर इतना भी काफी है कि तुमने अन्तत ठीक तरीका सोच लिया।

१ ये उपलब्ध नहीं है।

मेरी समझमे तो कोई हर्ज नही कि तुम अपने ज्ञान और अनुभवका अर्जुनको अधिकतम लाभ देनेका प्रयास करो। बा को चन्दनका डिब्बा नही चाहिए था। अच्छा, अब मै लम्बी-चौडी क्षमायाचनाकी आशा रखू।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३३) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८८९ से भी

९४ पत्र पट्टाभि सीतारामय्याको

२२ जून, १९३६

प्रिय डॉ० पट्टाभि,

आपका लडका बडा मेधावी है—ठीक अपने बापकी तरह। लेकिन लगता है उसने वह पूरा विनोद आपको नही सुनाया। जब मैने श्रीमती पी० को अक्षरश नखसे शिखतक अलकृत देखा तब कहा "अब समझा कि तुम्हारे पिताजी बगलोर आने से क्यो डरते है।[1] क्योकि इस क्रूरताका दायित्व तुम्हारी माताजी की अपेक्षा तुम्हारे पिताजी पर अधिक है।" अब आप इस विनोदको जैसी गम्भीरतासे भी ग्रहण करना चाहे, करे। मै आपके विचारसे सहमत हूँ कि पत्नियो और वयस्क बच्चोको पतियो और माता-पिताओसे कभी-कभी छुटकारा मिलना चाहिए।

स्नेह।

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

इन्सिडेन्ट्स ऑफ गाधीजीज लाइफ, पृ० २२६

१ कुछ दिन पहले गाधीजी और वल्लभभाई पटेल बगलोरमें थे और उन्होंने पट्टाभि सीतारामय्यासे वहाँ आनेको कहा था, लेकिन वे जा नहीं पाये थे।

९५ पत्र : क० मा० मुंशीको

२२ जून, १९३६

भाई मुशी,

तुम्हारे दोनो पत्र मिले। अभी लेख पढ नही पाया हूँ। जो तुमने वापस माँगा है, उसमे कुछ फेरफार करने के बाद वापस कर रहा हूँ। दफ्तरके बारेमे मेरा खयाल कुछ भिन्न लगता है। तुम्हारा भी वैसा ही बने तो ठीक। यदि तुम्हारे लेखको बदलने लगू तो भाषा बदल जाये और लेख नया ही रूप ले ले। यह आवश्यक नही जान पडता। तुम अपने ही विचारको और विस्तृत कर सकते हो। मै अपना लेख लिख रहा हूँ। शायद मगलवारको तैयार हो जायेगा। तबतक तुम अपना उक्त लेख रोकना चाहो तो रोक लेना। मेरा लेख देखकर कुछ सुधार करना हो तो सुधार कर लेना। किन्तु मुझे इसकी कोई आवश्यकता नही लगती। फिर भी तुमको जो ठीक लगे, वही करना। सरदारसे पूछना चाहो तो पूछना।

प्रेमचन्दजी[1] के बारेमे तुम्हारी बात समझमे आई।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६०२) से, सौजन्य क० मा० मुशी

९६. पत्र प्रभावतीको

२२ जून, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र अभी-अभी मिला। तू तो बडी चालाक है। अभी तो तेरे आने का कोई ठिकाना ही नही है और तू मुझसे सेगाँवके बारेमे पूछने लगी। जब तुझे इजाजत मिल जाये, तब तार देकर पूछ लेना। और धीरज न छोडा हो तो आनेपर मुझसे ही पूछ लेना।

यह ठीक नही है कि तेरी तबीयत बिगडती रहती है। पिताजीवाला रोग तो तुझे कदापि नही होगा। अलबत्ता, तुझे दूध और फल बराबर लेते रहना चाहिए, सब्जीमे दही मिलाना चाहिए, नियमसे कसरत करनी चाहिए और कटि-स्नान और घर्षण-स्नान करना चाहिए। इतना करेगी तो तबीयत बिलकुल नही बिगडेगी।

१ प्रसिद्ध हिंदी उपन्यासकार मुन्शी प्रेमचद।

एक दिन बादकी मुहरका अर्थ यह हुआ कि मैंने डाकका वक्त निकल जानेके बाद पत्र लिखा, इसलिए मुहर दूसरे दिनकी पड़ी।

मेरी तबीयत अच्छी है। खुराक पहले-जैसी ही है। जब बगलोर छोडा था, तब वजन ११२ पौण्ड था।

२७ को एक हफ्तेके लिए मगनवाडी जाऊँगा।

सेगाँवमे डाक ७ दिनमे एक बार आती है, इसलिए तुझे तो मगनवाडी, वर्धा के पतेपर ही लिखना है। वहाँसे डाक रोज मेरे पास आ जाती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मीराबहन मजेमे है। मेरे साथ बलवन्तसिह और मुन्नालाल है। बा मगनवाडीमे है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७५) से।

९७. पत्र जयन्त ई० पटेलको

२२ जून, १९३६

भाई जयन्तभाई,

यदि तुम अपनी पत्नीको नही छोड सकते और तुम सचमुच निर्विकार हो तो अपनी पत्नीके सच्चे शिक्षक बन सकते हो और उसे विदुषी बना सकते हो। यदि तुम्हारा ब्रह्मचय केवल सैद्धान्तिक हो तो उसे छोड देना ही उचित होगा।

इससे ज्यादा पथ-प्रदर्शन मै नही कर सकता।

जयन्तभाई ई० पटेल
चम्पकलाल ब्रदर्स
१४३, प्रिसेस स्ट्रीट
साई भुवन, बम्बई

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सोजन्य प्यारेलाल

९८ पत्र : सुरेन्द्रको

२२ जून, १९३६

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारे किस प्रश्नका उत्तर नही दिया गया? मुझे तो लगता है कि मैंने कुछ छोडा नही था। हो सकता हे लिखते समय तुम्हारा पत्र मेरे सामने न होने से कुछ छूट गया होगा। यदि ऐसा हो जाये तो फिर लिखना चाहिए। तुम्हारा पहला पत्र मेरे पास नही है।

अब मैंने नेपाली कागजका प्रयोग बन्द कर दिया है। स्याहीका प्रश्न हल करना बाकी है। जब मेरे अक्षर पढे न जाये तब मुझे अवश्य लिखना चाहिए।

खाने के बारेमे तुम्हे इस नियमका पालन करना चाहिए। जब शरीर कोई चीज मागे तो वह चीज उसे ओषधके रूपमे देनी चाहिए। उस समय तुम्हे आने-पाईका हिसाब नही लगाना चाहिए। दूधको तो अनिवाय ही मान लेना चाहिए।

बलवन्तसिहने सेगॉवमे रहने का निश्चय किया है। मै उसे कही भेजूगा तो वह चला जायेगा। अब देखे कि वह यहॉ जम पाता है या नही। मुझे तो आशा है।

आज मेरा यहॉ पहला सप्ताह पूरा हो रहा है। अच्छा न लगने का तो प्रश्न ही नही है, क्योकि मेरा मन यही था।

पतेमे [नामके आगे] क्या लिखा जाये? 'मि०' मै नही लिख सकता। 'श्री' तो सभी सुरेन्द्र हो सकते है। 'महाराज' विनोदपूण तो था ही किन्तु इस विशेषणका प्रयोग तो वहाँ भी किया जाता है न? साधु सुरेन्द्र अच्छा लगता है। ब्रह्मचारी भी अच्छा है। अब तुम पसन्द करो। मीराबहन बुधवारको अपने पसन्द किये हुए गॉव बरोडामे रहने जायेगी।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

९९ पत्र · शोभालाल गुप्ताको

२२ जून, १९३६

भाई शोभालाल,

हिन्दुधर्मकी जो परीक्षा इस समय हो रही है [1] वही सच्चे सेवक हो सकते है, जिनमे धर्मप्रति श्रद्धा है, हरिजनो प्रति पूर्ण प्रेम है और जो अपनेको हरिजन सेवामे समर्पण करने के लिए तैयार हो।

शोभालाल गुप्ता
मार्फत ह० से० सघ
अजमेर

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१०० पत्र . कृष्णचन्द्रको

२२ जून, १९३६

चि० कृष्णचन्द्र,

नैर्सगिक उपाय सब बीमारियो के लिये पर्याप्त नही है ऐसा सब चिकित्सक स्वीकार करते है।

हल्दी इत्यादि को बिना कारण खाने देने की आवश्यकता मै महसुस नही करता। औषध-रूप मे हर कोई ले सकते है।

कच्चा दूध म्युकस [आव] का कारण हो नही सकता। हा, नीम शरू करो। लसून खाकर भी देखो। हिपबाथ अच्छी चीज है ही। खानेके पहले प्रात काल मे लो। बाद घूमो। एक घण्टा पीछे दूध पीओ।

शर्माकी किताब सब की सब विश्वासपात्र नही है।

विलायत जाने से अगर तुमारा शरीर अच्छा हो सकता है तो अवश्य जाओ। और कोई लालच मेरे लिये तो नही है। लेकिन तुमारा अन्तरात्मा कहे वही करो। मेरे विचार का ख्याल मत करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८६) से।

१ साधन सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छोड दिया गया है।

१०१. पत्र . रामेश्वरी नेहरूको

२२ जून, १९३६

प्रिय भगिनि,

तुमारे खत की राह मै देख रहा था। यद्यपि सेगाव आने में तुमको तकलीफ तो हुई लेकिन अत की बाते तो जरूरी थी ही। ईश्वर तुम को कर्त्तव्यपालन का बल देगा। मुझे लिखा करो।

तुम जानकर खुश होगी कि घनश्यामदास का तार है कि उनकी मुलाकात महाराजासे[1] सतोषजनक हुई। देखे क्या होता है।

[2] तो खूब खुश होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८३) से। सी० डब्ल्यू० ३०७९ से भी, सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

१०२. तार : घनश्यामदास बिडलाको

वर्धागज
२३ जून, १९३६

घनश्यामदास बिडला
गेस्ट हाउस
त्रिवेन्द्रम्

प्राप्त हुआ। भगावन् तुम पर कृपा रखे।[3]

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९७५) से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ त्रावणकोरके।

२ यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

३ यह तार बिड़लाके उस तारके उत्तरमें था जिसमें उन्होंने कहा था " महाराजाके साथ दो मुलाकातें हुईं। उन्होंने अगले जन्म दिवसतक सन्तोषजनक परिणामोंका आश्वासन दिया।" देखिए पिछला शीर्षक भी।

१०३ पत्र : जी० एन० कानिटकरको

२३ जून, १९३६

प्रिय बालूकाका,

तुमने अच्छा किया कि मुझे पत्र लिखा। मै तेलके लैम्पो और मशालके भी गुण-दोषोको जानता हूँ। परन्तु मैने सोचा था कि शायद कोई देशभक्त पेढी मुफ्तमे या नाममात्र मूल्यपर वहाँ डायनमोकी बत्ती लगा दे। यदि मेरी शर्तोपर बिजली की बत्तियाँ लगे तो मै उसका समर्थन करूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

श्री सेवानन्दजी
३४१, सदाशिव
पूना सिटी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६७) से, सौजन्य जी० एन० कानिटकर

१०४ पत्र राजेन्द्रप्रसादको

२३ जून, १९३६

भाई राजेद्र बाबु,

तुमारे खतका उत्तर सेरेसोलके आनेतक मैने मोकूफ रखा। सेरेसोल ने मुझे खबर दी कि सब मुसीबते मुक्त हो गई है। इसलिये मैने जल्दी नही की। यदि कुछ बाकी है तो यहा आओगे तब मुझे बताओगे। मै २७ को चला जाऊगा। दाहने हाथ से बहुत काम लिये इसलिये अब बाय हाथ से काम लेता हू।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७५) से, सौजन्य राजेन्द्रप्रसाद

१०५ बातचीत : पियरे सेरेसोल और ईसाई मिशनरियोंके साथ[1]

[२३ जून, १९३६ के आसपास]

[पियरे सेरेसोल] धर्म तो हमें प्रेमसूत्रमें बाधने के बदले विभक्त कर रहा है। क्या यह दुःखद दृश्य नहीं है कि विभिन्न धर्मोंके लोगोंको सारे दिन मिल-जुल कर एक साथ काम करने में कोई कठिनाई मालूम नहीं पडती, वे हार्दिक सहयोगसे सारे दिन काम करते हैं, पर प्रार्थनाका समय आते ही वे सब अलग-अलग हो जाते हैं? तो क्या धर्मका उद्देश्य हमें विभाजित कर देना है?

तो क्या धर्मको सेवा-अभिलाषाका द्योतक बनाने के बदले, दम्भका द्योतक ही बना रहने दें? मै भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बियोंके बीच किसी तरहका धार्मिक आत्मैक्य चाहता हूँ।

[गाधीजी] यह तो सर्वथा सम्भव है, बशर्ते कि मनमें कोई दुराव न हो।

[पि० से०] लेकिन मेरे एक मित्रका, जो मानव-जातिके एक महान् सेवक हैं, यह विश्वास है कि उनकी सेवाके पीछे प्रेरणा ही यह है कि वे इसके जरिये ईसाई धर्मका प्रचार कर सकेंगे। उनका कहना है कि ईसाके साथ तादात्म्य होने से ही उन्हे जीवन-शक्ति मिलती रहती है, क्योंकि ईसा सदैव परमेश्वरके सम्पर्कमें रहते है।

[गा०] हमारी सबसे बडी कठिनाई यह नहीं है कि ईसाई मिशनरी अपने खुदके अनुभवपर निर्भर करे, बल्कि यह है कि वे हिन्दू भगवद्भक्तोंकी साक्षी पर शका करते है। उन्हे यह समझना चाहिए कि जिस तरह उन्हे आध्यात्मिक अनुभव और तादात्म्यका आनन्द प्राप्त होता है, उसी तरह हिन्दुओंको भी होता है।

ऐसा मालूम हुआ कि डॉ० सेरेसोलको इस विषयमें कोई शका नहीं थी। उन्होंने कहा कि मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि फ्रैंक लेनवुडने, जिनकी 'जीसस, लॉर्ड ऑर लीडर' नामकी पुस्तकका जितना हुआ है उससे कहीं अधिक प्रचार होना चाहिए, ईसाई धर्मको उदात्ततम रूपमें हमारे सामने रखा है। उन्होंने कहा है कि "ईसाके व्यक्तित्वके प्रति मेरे हृदयमें अधिकसे-अधिक आदर है, पर मेरा खयाल है कि मैं ईसाकी आदरपूर्वक आलोचना कर सकता हूँ।"

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। सर्विस सिविल इटरनेशनल नामक सस्थाके सस्थापक पियरे सेरेसोल दो महिला मिशनरियोंके साथ सेगाँवमें गाधीजी से मिले थे।

२ सेरेसोल अनुमानत २३-६-१९३६ को वर्धा पहुँचे थे, देखिए पिछला शीर्षक।

[मिशनरी महिला] लोगोको ईसाई बनाने के लिए न तो मेरे पास समय रहा है, और न कभी मेरी ऐसी इच्छा ही रही है। अगर हमारे अस्पतालोके जरिये ईसाइयतकी ओर अधिक लोग चले जायें, तो हमारे देशके चर्चको उससे प्रसन्नता अवश्य होगी।

[गा०] पर जहाँ आप लोग दवा-दारूकी सहायता देते है, वहाँ इस रूपमे प्रतिफलकी भी आशा करते है कि आपके मरीज ईसाई बन जाये।

[मि० म०] हाँ, प्रतिफलकी आशा हम जरूर रखते है। नहीं तो दुनियामे ऐसी कितनी ही जगहे पडी हुई है, जहाँ लोगोको हमारी सेवाकी जरूरत है। पर वहाँ जाने के बजाय हम लोग यहाँ [हिन्दुस्तानमें] आते है।

[गा०] यही तो विकृति है। आप लोगोके मनमे निष्काम सेवा नही है, बल्कि सेवाका फल आप इस रूपमे चाहते है कि बहुत-से लोग ईसाई धर्ममे आ जाये।

[मि० म०] मेरे अपने काममें कोई छिपा हेतु नहीं है। मै लोगोकी सार-सँभाल करती हूँ, दु ख-दर्दका इलाज करती हूँ, क्योकि इसके सिवा मै और कुछ कर ही नहीं सकती। इसका मूल है उस ईसाके प्रति मेरी दृढ भक्ति जिसने पीडित मानव-जातिकी सेवा की। मै यह स्वीकार करती हूँ कि मेरे मनमें जरूर यह इच्छा है कि ईसाकी भक्तिमें जो आनन्द मुझे मिलता है वही आनन्द दूसरे लोगोको मिले। इसमें विकृतिकी बात कहाँ है?

[गा०] विकृति तो चर्चमे है, जिसका यह खयाल है कि कुछ ऐसे लोग है जिनमे कुछ चीजोकी कमी है और वे चीजे आप उन्हे जरूर देगे, चाहे उन्हे उनकी जरूरत हो या न हो। अगर आप अपने मरीजोसे सिर्फ यह कहे कि 'मैंने तुम्हे जो दवा दी उसका तुमने सेवन किया है। ईश्वरकी कृपा है कि उसने तुम्हे चगा कर दिया, अब यहाँ न आना', तो आपने अपना फर्ज अदा कर दिया। लेकिन इसके साथ अगर आप यह भी कहती है कि 'कितना अच्छा होता, अगर ईसाई धर्ममे आपकी वैसी ही श्रद्धा होती, जैसी कि मेरी है', तो आप अपनी ओषधियाँ निष्काम भावसे नही देती।

[मि० म०] लेकिन अगर मुझे ऐसा लगता हो कि मेरे पास कुछ दवा-दारू तथा आध्यात्मिक वस्तु है जो मै दे सकती हूँ, तो मै उसे कैसे रोक सकती हूँ?

[गा०] यह कठिनाई यो हल हो सकती है। आपको महसूस होना चाहिए कि जो अच्छी चीज आपके पास है उसे आपका मरीज भी प्राप्त कर सकता है, पर किसी और मार्गसे। आप अपने मनमे कहे कि 'मै इस मार्गसे आई हूँ, तुम किसी दूसरे मार्गसे आ सकते हो।' वह आपके ही विश्वविद्यालयसे पास हो, दूसरेसे नही, ऐसी इच्छा आप क्यो करती है?

[मि० म०] क्योकि अपने विश्वविद्यालयके लिए मेरे हृदयमें पक्षपात है।

[गा०] यही मेरे लिए कठिनाई है। आप अपनी माताको पूजती है, इसलिए आप यह इच्छा नही कर सकती कि दूसरे लोग भी आपकी माताकी सन्तान हो जायें।

[मि० म०] ऐसा होना तो भौतिक रूपसे असम्भव है।

[गा०] तब यह भी एक आध्यात्मिक असम्भावना है। समस्त मानव एक ही सिरजनहारकी सन्तान हैं। फिर मैं कैसे अपनी छोटी-सी बुद्धिसे ईश्वरकी महिमाको मर्यादित कर दूँ, और यह कहूँ कि बस यही एकमात्र मार्ग है?

[मि० म०] मै यह नहीं कहती कि यही एकमात्र मार्ग है, सम्भव है, कोई बेहतर मार्ग भी हो।

[गा०] अगर आप यह स्वीकार करती है कि कोई बेहतर मार्ग भी हो सकता है, तो आपकी दलील खत्म हो जाती है।

[मि० म० :] खैर, अगर आप कहते हैं कि मुझे अपना ठीक रास्ता मिल गया है, तो मुझे आपके बारेमें बहुत चिन्ता नहीं है। मै किसी ऐसे मनुष्यके पास जाऊँगी जो दलदलमें फँसा हुआ है।

[गा०] वह किस स्थिति मे है, इसका फैसला क्या आप करेगी? क्या आपके यहाँके लोग नही भटके है? अपनी ही छापका सत्य आप सबको क्यो देने जाती है?

[मि० म० :] जो दवा मुझे मालूम हो वह तो दूँगी ही।

[गा०] तब आप उससे यह पूछेगी कि 'क्या तुम अपने डाक्टरसे मिले हो?' आप उसे उसके डाक्टरके पास भेज देगी, और डाक्टरसे उस मनुष्यकी सार-सँभाल करनेके लिए कहेगी। आप शायद उस डाक्टरसे सलाह लेगी, उससे निदानकी चर्चा करेगी, और या तो उसे अपनी बातका कायल करेगी या उसे स्वयको कायल करने देगी। पर वहाँ तो आप तुच्छ शारीरिक रोगका इलाज कर रही होगी। यहाँ तो हम एक आध्यात्मिक वस्तुकी चर्चा कर रहे है, जिसमे आप ये सब आवश्यक जाँच-पडताल नही कर सकती। इसीसे मैं कहता हूँ कि आप दयावृत्तिसे काम ले। आप यह दावा तो करती नही कि ईसाई समाजमें दम्भ है ही नही?

डॉ० सेरेसोल हममें से अधिकाश लोग अपने धर्मको सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। उन्हे इस बातकी जरा भी कल्पना नहीं होती कि दूसरे धर्मोंने अपने अनुयायियोको क्या ज्ञान दिया है। डाक्टर [1] ने हिन्दू-धर्मके शास्त्रोका अच्छा अनुशीलन किया है, और उन्होने यह समझ लिया है कि हिन्दू-धर्म हिन्दुओको क्या देता है।

[गा०] मै तो यह कहता हूँ कि 'गीता' या 'कुरान' का पढना ही उनके लिए काफी नही है। जिस तरह वे यह आशा रखते होगे कि मै एक ईसाईकी दृष्टिसे 'बाइबिल' पढूँ, उसी तरह उन्हे 'कुरान' को मुसलमानकी दृष्टिसे और 'गीता' को हिन्दूकी दृष्टिसे पढना चाहिए। मै उनसे पूछूगा कि "जिस पूज्य भावसे मैंने 'गीता' को पढा है, बल्कि जिस पूज्य दृष्टिसे 'बाइबिल' का पाठ किया है उतने ही पूज्य भावसे आपने 'गीता' पढी है क्या?" मै आपसे कहता हूँ कि

१ साधन सूत्रमें नाम छोड दिया गया है।

मैने ईसाई धर्मसे सम्बन्धित जितनी पुस्तके पढी है उतनी हिन्दू-धर्म-सम्बन्धी नही पढी। और फिर भी मै इस परिणामपर नही पहुँचा कि ईसाई धर्म या हिन्दू-धर्म ही एकमात्र सच्चा मार्ग है।

इसके बाद गाधीजी ने मि० स्टोक्स (अब श्री सत्यानन्द)की चर्चा की। मि० स्टोक्स जब हिन्दुस्तान आये तो शुरू-शुरूमे पठानोको ईसाई धमका उपदेश करते हुए उनके प्राण जाते-जाते बचे। पर उन्होने एक सच्चे ईसाईकी भाँति अपने आक्रमणकारी को सजासे छुडा लिया। पीछे उन्होने सोचा कि ईसा पर तो मेरी सदाकी ही भाँति अगाध श्रद्धा है, पर मै स्वय हिन्दू हुए बिना ईसाका सन्देश हिन्दुओ तक नहीं पहुँचा सकता। जबतक मै हिन्दुओको और भी अच्छे हिन्दू न बना दूँ, तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि मै अपने प्रभुकी सच्ची सेवा कर रहा हूँ।[1]

इसपर उन मिशनरी महिलाओने पूछा, तब मिशनरियोका रुख क्या होना चाहिए?

[गा०] मेरा खयाल है कि यह मै समझा चुका हूँ, पर इसे मै फिरसे दूसरे शब्दोमे कह देता हू आप लोग यह भूल जाये कि हम धर्मशून्य नास्तिकोके देशमे आये है, और ऐसा विचार रखे कि ये लोग भी हमारी ही तरह ईश्वरकी खोजमें है, आप यह महसूस करे कि हम इन लोगोके देशमे अपने धर्मका दान करने नही जा रहे है, पर आपके पास सासारिक सुख-सम्पत्तिका जो अच्छा खजाना है, उसमें आप इन्हे भी हिस्सा देगे। तब आप अपने मनमें कोई दुराव रखे बगैर अपना काम करेगे, और इस तरह आपके पास जो आध्यात्मिक धन होगा, उसमे भी आप इन लोगोको हिस्सा देगे।[2] आपके मनमे ऐसा दुराव है, इसी बातकी जानकारी आपके और मेरे बीच भेदकी दीवार खडी कर रही है।

[**मि० म०] आप जिसे मनका दुराव कहते है, आपके खयालसे, उसके कारण हमारा काम बिगडता है?**

[गा०] इस सम्बन्धमे मेरे मनमे तो सन्देह ही नही है। मनके इस दुरावके बिना आप जितना लाभ पहुँचा सकते है, उसके रहते आप उसका आधा भी लाभ नही पहुँचा सकेगे। मनके इस दुरावका अर्थ यह है फि आप एक जुदा और ऊँची जातिके है, और इस तरह आप दूसरोसे अलग हो जाते है।

[**मि० म०] हाँ, मेरा यह पश्चिमी रहन-सहन जरूर भेद-भाव खडा कर देता है।**

[गा०] नही, यह भेदकी दीवार तो तुरन्त ढाई जा सकती है।

[**मि० म०] हम अपने घरमें ही रहे तो क्या आपको सचमुच खुशी होगी?**

१ सत्यानन्द स्टोक्सने एक पत्र लिखकर अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण किया था। यह पत्र १५-८-१९३६ के हरिजनमें "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) के अन्तर्गत छपा था।

२ साधन सूत्रके अनुसार ही इन पंक्तियोंको रेखाकित किया गया है

[गा०] यह मै नही कह सकता। पर इतना तो अवश्य कहता हूँ कि आप लोग अमेरिकाके बाहर क्यो जाती है, यह मै कभी नही समझ पाया हूँ। वहाँ कोई काम करने को नही है क्या ?

[मि० म०] अमेरिकामें भी शिक्षा-कार्यके लिए काफी गुंजाइश है।

[गा०] आपकी यह स्वीकृति एक घातक स्वीकृति है। यह बात नही कि आपकी वहाँ कोई जरूरत न हो। आपके धर्मसघने जो विचित्र रुख अख्तियार कर रखा है, अगर वह न होता तो आप यहाँ न आती।

[मि० म०] मै यहाँ आई हूँ, इसका कारण यह है कि अमेरिकाकी स्त्रियोकी अपेक्षा भारतीय स्त्रियोको डाक्टरी सार-सँभालकी ज्यादा जरूरत है। पर इसके साथ ही, मेरी यह इच्छा भी है कि मुझे विरासतमें जो ईसाई धर्म मिला है उसमें से उन्हे भी हिस्सा दूँ।

[गा०] यही तो मेरा विरोध है। आप तो यह कह ही चुकी है कि शायद इससे कोई अच्छा रास्ता भी हो सकता है।

[मि० म०] नहीं, मेरे कहने का मतलब तो यह था कि पचास बरस बाद शायद कोई अच्छा रास्ता निकल आये।

[गा०] हम तो आजकी बात कर रहे थे, जिसमें आपने अभी कहा था कि इससे बेहतर रास्ता दूसरा हो सकता है।

[मि० म०] नहीं, आज तो जिस मार्गका मै अनुसरण कर रही हूँ उससे अच्छा मार्ग कोई भी नहीं है।

मै कहता हूँ कि इसमे आप जरूरतसे ज्यादा मानकर चल रही हैं। आपने सब धर्मोंके विश्वासोको तो परखा नही। और परखा हो, तो भी आप यह नही कह सकती कि आपसे गलती कभी होती ही नही। आपको तमाम लोगोका ज्ञान है, ऐसा आप मान लेती है। लेकिन यह आप तभी मान सकती है जब आप ईश्वर हो। मै आपको यह समझा देना चाहता हूँ कि आप दोहरे भ्रममे पडी हुई है एक तो यह कि आप जिस चीजको सर्वश्रेष्ठ मानती है वह वास्तवमें वैसी है, और दूसरा यह कि आप जिसे अपने लिए सर्वश्रेष्ठ मानती है वह सारी दुनियाके लिए सर्वश्रेष्ठ है। इसके मूलमे तो आपका यह दावा है कि आप सर्वज्ञ है और कभी भूल कर ही नही सकती। मेरी आपसे यह प्रार्थना है कि आप जरा नम्र बने।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-७-१९३६

१०६. सलाह : आगन्तुकोको[1]

[२३ जून, १९३६ के पश्चात्][2]

पैदल चलने से जो-जो लाभ होते है उन्हे जानने के लिए आपको थोरो की पुस्तक पढनी चाहिए। मैने तो यह नियम बना लिया है कि सिवाय बिलकुल असमर्थ लोगोके कोई भी — यहातक कि स्थूलकाय जमनालालजी भी — बैलगाडीमे बैठकर यहाँ न आये। मैने उनसे कह भी दिया है कि अगर आपको अपनी यह मोटाई कम करनी है और अपनी आयुमे दस-पाँच बरस और बढाने है तो इसका सबसे अच्छा इलाज यही है कि सेगाँव आप पैदल ही आया-जाया कीजिए। इसमे कोई घबराने की बात नही है, क्योकि यूरोपीय महिलाएँ भी, जिन्हे शायद ही कभी ऐसे ऊबड-खाबड रास्तोपर चलने का मौका आया हो, जूते और मोजे पहने हुए कीचडमे सनी हुई यहाँ आई है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २५-७-१९३६

१०७ पत्र :-एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
२४ जून, १९३६

चि० अम्बुजम,

सलग्न पत्रमे जिन लोगोके नाम दिये गये है उनसे माँगने का काम शायद तुम्हारे लिए कठिन नही होगा। उन लोगोको लिखने को मेरा जी नही चाहता। मै यह भी जानता हूँ कि तुम सकोची हो। लेकिन यदि तुम सेवा करना चाहती हो, जिसके लिए ईश्वरने तुम्हे बनाया है, तो तुम्हे अपना सकोच छोडना ही होगा। तुम चाहो तो जानम्मालको[3] साथ ले सकती हो।

यदि तुम्हे यह काम अपने बूतेसे बाहरका लगे तो इनकार करने मे सकोच मत करना।

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. देखिए पिछला शीर्षक, इस शीर्षकमें उल्लिखित यूरोपीय महिलाओंसे तात्पर्य शायद उन दो मिशनरी महिलाओंसे हैं जो पियरे सेरेसोलके साथ गाधीजी से मिलने आई थी।

३ एस० अम्बुजम्माल की भाजी।

आशा है, माताजी स्वस्थ होगी और पिताजीके स्वास्थ्यमे सुधार हो रहा होगा।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१०८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२४ जून, १९३६

चि० प्रेमा,

कांग्रेस-अधिवेशन तक यह काम[1] करना ठीक है।

कागज-सम्बन्धी तेरा उलाहना उचित है।[2] यह कागज तो ठीक है न?

आटा, चावल, तेलके बारेमें धीरज रखकर प्रचार करती ही रहना। ये चीजे महँगी होनेपर भी सस्ती समझी जायें। हम नया अर्थशास्त्र बना रहे है। देश-देशका अर्थशास्त्र अलग होता है। इसके सिवा, गरीब और अमीरका अर्थशास्त्र भी अलग-अलग होता है। इसलिए तू हारना मत।

बाजरेकी बात मै जानता हूँ। बीज कितना भी अच्छा क्यो न हो, मिट्टी, पानी आदि अनुकूल न होनेपर अपना गुण खो देता है।

यह है चार पंक्तियोकी प्रस्तावना[3]

'खुदाई खिदमतगार' एक ऐसी पुस्तक है जिसका अनुवाद हिन्दकी सब भाषाओमे होना चाहिए। गुजराती, उर्दू, हिन्दीमे तो हो ही गया है। सम्भव है दूसरीमे भी होगा। उचित ही है कि अब मराठीमे भी अनुवाद निकला है और अधिक हर्षकी बात यह है कि यह अनुवाद एक सेविकाने किया है। इस शुभ प्रयत्नके लिए उनको धन्यवाद। मेरी आशा है कि महाराष्ट्रकी जनता 'बे खुदाई खिदमतगार' अर्थात ईश्वर-भक्तके चरित्रको प्रेमसे पढेंगे।

मो० क० गांधी[4]

१ प्रेमाबहनने फैजपुर अधिवेशनके लिए स्वयंसेविका दलका गठन करना स्वीकार कर लिया था।

२ प्रेमाबहनने पत्रोंके लिए गांधीजी को अच्छे कागज भेजे थे। वे उन्होंने किसी और को दे दिये थे। पिछले पत्रका कागज और स्याही दोनों घटिया थे।

३ महादेव देसाईकी पुस्तक **बे खुदाई खिदमतगार**का प्रेमाबहनने मराठीमें अनुवाद किया था। यहाँ तात्पर्य उसीकी प्रस्तावनासे है। मूल अंग्रेजी संस्करणकी प्रस्तावनाके लिए देखिए खण्ड ६०, पृ० ८६।

४ मूल प्रस्तावना हिन्दीमें ही है और यहाँ शब्दश उद्धृत की गई है।

किसी समाविस्थ मनुष्यके जीने के बारेमे श्रद्धा न बैठे तबतक उसे मृतदेह मानकर अग्नि-सस्कार करने के प्रयत्नमे जितना तथ्य हो सकता है, उतना ही ईश्वर पर श्रद्धा बैठने तक नास्तिक होनेमे है।

भावना और श्रद्धामे भेद हो तो भावना न होनेपर भी श्रद्धा जमाने के लिए शुद्ध मनसे प्रार्थनामे बैठने मे लाभ है।

जगली लोगोमे हम रहते हो तो अपने धर्मका प्रचार न करके नीति-धर्मका प्रचार करे। जब उनके हृदय-द्वार खुले तब उन्हे कोई चुनाव करना हो तो करे। हम तो उन्हे सभी धर्मोका सामान्य ज्ञान करायेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८२) से। सी० डब्ल्यू० ६८२० से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

१०९. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२४ जून, १९३६

भाई परीक्षितलाल,

मुझे सरदारसे ऐसा कहने की याद नही पडती कि गोधरा आश्रम[1] अच्छी तरह चल रहा है। यह चल रहा है, बन्द नही हुआ है, ऐसा कहा था। किन्तु तुमने मुझे स्थिति बता दी, यह तो ठीक ही किया। जैसा ठीक जान पडे, वैसा करना।

भडौंचके बारेमें निर्णय ठीक हुआ है या नही, यह तुमने नही लिखा। मुझे तो, इस निर्णयका क्या असर हुआ, इसका पता नही चला। प्रस्तावमे इतना ही कहा गया है, या और भी कुछ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३८) से।

१ विट्ठल लक्ष्मण फडके द्वारा सचालित हरिजन-आश्रम।

११० पत्र . चिमनलाल एन० शाहको

२४ जून, १९३६

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा शरीर ठीक होना ही चाहिए। सीरम के इजेक्शन लेने से ठीक हो जाये तो ठीक। अच्छा गठा हुआ शरीर क्यों टूट गया, यह तुम्हें समझ लेना चाहिए। इन नियमोंके पालनसे शरीर खराब होता है, इसे असम्भव मानना। यमादिके पालनमें भूल हो जाये तो भयानक परिणाम अवश्य हो सकते हैं। उदाहरणके लिए देखा जाता है कि ब्रह्मचर्यका पालन करने में लोग बडी-बडी भूलें कर देते हैं। चूंकि यह शारीरिक तप है इसलिए यदि इसके पालनमें भूल चूक हो जाये तो उसका असर शरीरपर अवश्य ही खराब पडेगा। यही बात अस्वादके विषयमें भी है। यह तो मैंने उदाहरणके रूपमें बताया। तुम्हारे विषयमें कहाँ क्या भूल हुई, यह बताना कठिन है। इस शोधका अब इतना ही उपयोग है कि यदि भूल मालूम हो जाये तो उससे उपचारमें मदद मिलेगी।

मन स्वस्थ क्यों नहीं होता? अहिंसाका मनन करनेवाले को यह बात हस्तामलकवत् होनी चाहिए। यदि शारदाको[1] वहाँका हवा-पानी माफिक न आता हो तो दूसरी जगह जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १९)से।

१११ पत्र . शारदा चि० शाहको

२४ जून, १९३६

चि० शारदा,

लिखने को कुछ नहीं था, यह तो न मानने-जैसी बात लिखी। जो मेरे मनका काम नहीं करते, ऐसे कितने ही बालक-बालिकाएँ मुझे पत्र लिखते रहते हैं।

तेरे तर्क तेरी बुद्धिको शोभा नहीं देते। तू लिखती है कि शरीर नाजुक है इसलिए बुद्धिका बल बढाकर तू उसे कमाईका साधन बनायेगी। तू यह नहीं समझती कि ऐसी जानकारी बढाने में शरीर खराब होता है। कमाने के लिए ज्ञानोपार्जनका विचार भी हीन है। तेरा यह खयाल भी गलत है कि तू भाररूप

१ चिमनलाल एन० शाहकी पुत्री।

बन जायेगी। चाहे जितना पढ-लिखकर भी अगर तू खटियापर ही पडी रही तो भाररूप ही बनी रहेगी, यह तू क्यो नही समझती? तू लिखे-पढे सो तो मुझे पसन्द है। बाल की तरह तू कालेजमे पढकर कोई बडी उपाधि ले तो मै उसे बुरा नही मानूँगा, किन्तु शरीर नही बिगाडना चाहिए। शरीर सुधारना ही पहला कर्त्तव्य है। किन्तु यह तो मेरी राय हुई, ठीक तो वही है जो तुझे सूझे। अब लिखना शुरू किया है तो मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७१) से, सौजन्य शारदाबहन गो० चोखावाला

११२. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२६ जून, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

रूमालकी लम्बाई इस कागजकी लम्बाईकी पौने दो गुनी है और चौडाई सवा गुनी। यहाँ मेरे पास नापने का फीता या गज नही है।

हाँ, चन्दनके डिब्बेको अपने लिए रख लेने की तुम्हे पूरी छूट थी। बा की तो यही आशा थी।

जुलाईके अन्तमे भारी वर्षा होने की सम्भावना नही है, और यदि वर्षा हो भी तो तुम कुछ दूर पैदल चल लेना। तुम्हे खूब सुहावना लगेगा। कुछ ऐसे लोग भी है जो मृत्युसे पहले ही कई-कई बार मरते है। परन्तु भगवान्की कृपासे तुम वैसी नही हो। तुम तो सिह-वर्गकी हो न?

आज और अधिक नही।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च]

मीरा बुधवारको यहाँसे डेढ मील दूर वरोडाकी अपनी कुटीपर चली गई है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८०) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३८९ से भी

११३. पत्र : नान मेननको

२६ जून, १९३६

प्रिय नान,

मैंने सोचा था, तुम्हे गपशप-भरा लम्बा पत्र लिखूगा, परन्तु कभी समय ही नही मिला। अब एस्थरने पत्र लिखकर याद दिलाई है। अत यह छोटा-सा पत्र है, यह बताने को कि चाहे मै पत्र न लिखू परन्तु मै तुम्हे कभी भूल नही सकता। आशा है, अब तुम दोनो पहलेसे अधिक प्रसन्न हो।

तुम दोनोको प्यार और चुम्बन।

बापू

[अग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड, पृ० १२२

११४ पत्र : एफ० मेरी बारको

२६ जून, १९३६

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। चेक और ८०० पौडकी हुण्डी पाकर मै परेशानीमे पड गया हूँ। समझमें नही आता किस प्रकार इस कामको पूरा कर पाऊँगा। भगवान् ही कोई राह निकालेगा।

मै जानता हूँ कि मार्गरेट असममे काम करने के लिए उत्सुक थी।

वह क्रिश्चियन साधु सच्चा साधु होगा। अगर उसके विषयमे कुछ और बताने लायक हो तो मुझे बताना।

तुम्हारे वजनमे जो इतनी कमी हो रही है, उसको रोको। कारण जानकर उसका निवारण करो, भले ही फिरसे लम्बा अवकाश लेना पडे। तुम सन्तुलित भोजन ले रही हो क्या? बताना क्या-क्या लेती हो।

मुझे प्रसन्नता है, तुम्हे जुलाहे मिल गये।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

अब मीरा यहाँसे डेढ मील दूर] वरोडामें है।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६४) से। सी० डब्ल्यू० ३३९४ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

११५. पत्र : जी० वी० केतकरको

२६ जून, १९३६

प्रिय मित्र,

मैंने अभी आपका पत्र पढना समाप्त किया है।

जिन घटनाओकी आपने चर्चा की है मुझे तो उनका स्मरण नही।

यदि आप मेरे कथनका अथ खीच-तानकर न निकाले तो आपकी रोचक शोधोसे मेरी सामान्य स्थितिपर कोई प्रभाव नही पडता। परन्तु यदि आपके मतसे मेरे कथन और आपकी खोजमे वास्तविक विषमता है तो मुझे यह कहने मे कोई सकोच नही कि मेरे कथनकी अपेक्षा आपकी बात ही स्वीकृत होनी चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

जी० वी० केतकर
'मराठा' ऑफिस
५६८, नारायण पेठ, पूना—२

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८६६) से। सी० डब्ल्यू० ९८३ से भी, सौजन्य जी० वी० केतकर

११६. पत्र : नारणदास गाधीको

२६ जून, १९३६

चि० नारणदास,

साथका प्रेमाका पत्र आधा फाड देने के बाद ध्यान आया कि यह तो तुम्हे भेजा जाना चाहिए। इसलिए टुकडे इकट्ठे करके उसे जोडा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९७ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

११७. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ जून, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

मै क्या वापस लूँ? तूने लिखा, "आपको शर्माको भेजना ही नही चाहिए था, मै उनकी बात माननेवाली नही हूँ।" लेकिन मैंने तो उन्हे भेजने की गलती की। तो फिर उस गलतीके लिए माफी माँगनी चाहिए न? मैंने लिखा[1] कि "तू शर्माको पूजती थी।" तू लिखती है, "मै इन्सानको पूजती ही नही।" बोल, अब हमारा मेल कैसे बैठेगा? मै सबको पूजता हूँ। तुझे पूजता हूँ। मै मानता था कि तू कान्तिको पूजती है, द्रौपदीको पूजती है। जो खुदाको पूजता है वह उसकी खलकतको नही पूजेगा तो क्या करेगा? मुझे पूजनेवाली मेरे कान्तिको नही पूजेगी? पर तेरा मुकाबला कैसे करूँ? तू तो ज्ञानका भण्डार बन गई है। तुझे मेरे या किसीके रहमकी जरूरत कहाँ है? खुदाके रहमकी जरूरत होगी या नही, यह भी एक सवाल है।

"मनमानी" का अथ है किसीकी नही सुनना। माँ की नही, भाईकी नही, साथीकी नही, मेरे जैसे मिस्कीन बापकी भी नही। अब बोल तू बेरहम है या मै? अपना अभिमान छोडती ही नही और बापूकी कदमबोसी करती है। जब सचमुच तुझमें शून्यपन आयेगा, तू यह समझने लगेगी कि तू कुछ भी नही करती है, जो करता है वह खुदा ही करता है, तभी तू खिलेगी। अभी तो तेरा अभिमान तुझे जला रहा है। तेरे पास जो काम पडा है उसे काफी समझकर सन्तोष क्यो नही रखती? बापा जो नया काम दे, वह क्यो लेना चाहिए? तेरा करार तो यह है कि मै कहूँ वही करना है। नया काम करने की मैंने कब इजाजत दी?

बद्री-केदारसे लीलावती आये तब साथका खत[2] उसे दे देना। कृष्णन नायरको यथासमय मालूम हो जायेगा। विद्यार्थियोके लिए खत[3] इसके साथ है। सरस्वती महिला-आश्रम गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७८) से।

१ देखिए "पत्र अमतुस्सलामको" १९-६-१९३६।

२ यह उपलब्ध नहीं है।

३ देखिए अगला शीर्षक।

११८. पत्र : देवनन्दन और अन्य लोगोको

२६ जून, १९३६

चि० देवनन्दन, रामेहर, रामस्वरूप, श्रीराम और रामवृक्ष।

तुम सब लोगोके खत मिले है। तुमने लिखा तो अच्छा किया। चारमे[1] सबसे अच्छे हरफ देवनन्दनके है और खराब रामवृक्षके है। सब विद्यार्थी कमसे-कम अपने हरूफ तो पूर्ण बनावे। आज अच्छे नही होगे तो भविष्यमे होना बहूत मुश्केल है। मेरे हरूफ खराब है अब बुढापेमे सुधारना मुश्केल है। और जैसे हम हरूफ साफ और अच्छे रखे इसी तरह दिलको भी साफ और अच्छा रखे यह तो सबसे आसान चीज हो सकती है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८४) से।

११९. पत्र : शन्नोदेवीको

२६ जून, १९३६

चि० शन्नोदेवी,

तुमसे क्या कहु? हा [अखबारमे] दैनिक शक्तिका दुर्व्यय अवश्य करेगी।

कहा अध्यापिका, कहा सपादिका? जिस चीजसे मुझे कुछ भी रस नही आता है उसमें तुमारा हितेच्छु होते हुए आशीर्वाद कैसे भेजु?

बापुके आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ मूलमें किये गये एक संशोधन से लगता है कि पाँचवाँ नाम बादमें जोड़ा गया था।

१२० सच हो तो बर्बरतापूर्ण है

'हिन्दू' के निजी सवाददाता द्वारा रामनाडसे ८ जूनको भेजी गई खबरसे नीचेका अनुच्छेद[१] लेकर एक सज्जनने मेरे पास भेजा है

> **शनिवारको देवकोटा पचायत बोडके कार्यालयमे हुई बोर्डकी बैठकमे हमेशासे चले आ रहे रिवाजका पालन किया गया, अर्थात् बोडमें जो हरिजन सदस्य है उसने सभा-भवनमे आकर हाजिरीके रजिस्टरमे अपने दस्तखत किये और सभा-भवनके बाहर निकलनेवाले दरवाजे पर जाकर खडा हो गया और जबतक बैठक खत्म न हो गई तबतक बराबर वहीं खडा रहा।**

'हिन्दू' की इस कतरनके साथ मेरे नाम जो पत्र आया है उसमे लिखा है[२]

> **साथमे 'हिन्दू' की एक कतरन भेज रहा हूँ ।**
>
> **उसमें जिस पचायत-बोडका जिक्र है वह चेट्टिनाडके बीचो-बीच है और ऐसा खयाल किया जाता है कि काग्रेसके आदमी तथा ऐसे लोग ही उसमें है जो अभी हालमें काग्रेसकी ओरसे खडे होकर चुने गये ह। स्थानीय बोर्डों और पचायतोके द्वारा भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके उद्देश्यो और लक्ष्योकी प्राप्तिके लिए काम करना उन्होने अपना ध्येय बताया था।**
>
> **यह पढकर हृदयको धक्का-सा लगता है कि ऐसी सस्था, इस बीसवीं सदीमें, अपने हरिजन-सदस्यको सभा-भवनके बाहर खडा रहने के लिए मजबूर करने का साहस करे — और यह जानते हुए भी कि वह खुद उस सस्थाका एक बाकायदा चुना हुआ सदस्य है और समाजके एक भागका प्रतिनिधित्व करता है, जिसके कारण ऐसी सदस्यतासे प्राप्त तमाम सुविधाओके उपभोगका हक उसे हासिल है।**

मै नही जानता कि पत्र-लेखकका यह कहना ठीक है या नही कि देवकोटा पचायतमे काग्रेसी-ही-काग्रेसी है। अगर ऐसा है तो यह उन काग्रेसियोके लिए बहुत ही बुरी बात है, क्योकि पचायतने अपने हरिजन-सदस्यके साथ जो व्यवहार किया वह तो स्पष्टत अन्यायपूण है ही, लेकिन उसके अलावा भी काग्रेसी तो अस्पृश्यताका विरोध करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। मगर पचायतमे काग्रेसी हो या न हो, जिस प्रकार विधान-सभाकी बैठकके समय उसके सदस्य रावबहादुर राजा साहबका वहा एक कोनेमे खडा रखा जाना बबरतापूण माना जायेगा, उसी प्रकार बोर्डके इस व्यवहारको भी बबरतापूण ही कहा जा सकता है।

१ और २ यहाँ केवल कुछ अश ही दिये गये है।

लेकिन 'हिन्दू'के संवाददाताने तो सर्वसाधारणको यह भी बताया है कि देव-कोटा पंचायतमें यह रिवाज हमेशासे चला। आया है। इस से यह खयाल होता है कि इस समय दक्षिणमें अस्पृश्यताकी चर्चा खास तौरसे जोरोंपर है, इसीलिए इस आम रिवाजकी ओर ध्यान गया है। मगर कुछ पंचायतोंमें हरिजन-सदस्योंके साथ ऐसा व्यवहार करने का आम रिवाज हो तो भी लोकमतको भविष्यमें इसकी पुनरा-वृत्ति असम्भव बना देनी चाहिए। लेकिन स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस बातके जाहिर हो जाने से सर्वसाधारणमें कोई हलचल नहीं मची है। ऐसा मालूम पड़ता है कि दक्षिणके अखबारोंने भी अपने सम्पादकीय स्तम्भोंमें इस घटनाकी, जो इतनी बेहूदी है कि उसकी सख्त निन्दा होनी चाहिए, कोई चर्चा नहीं की। इसलिए यह सज्जन इस बातके लिए धन्यवादके पात्र है कि मुझे सूचित करके उन्होंने 'हिन्दू'के इस अनुच्छेदको विस्मृतिके गर्तसे निकाल लिया है।

यह व्यवहार तो न केवल बर्बरतापूर्ण है, बल्कि मैं समझता हूँ, गैरकानूनी भी है। हरिजन-सदस्यको कानूनन यह हक है कि वह अपने साथी सदस्योंकी बराबरीमें बैठने की माँग करे। यह कह देने-भरसे काम नहीं चलेगा कि अपने अपमानमें हरिजन-सदस्यका अपना भी कसूर है, क्योंकि हिन्दुस्तानके दूर-दूरके भागोंमें रहनेवाले बेचारे हरिजनोंकी स्थितिको मैं बखूबी समझ सकता हूँ, जिसके कारण उनमें अपने अधिकारों पर जोर देनेका साहस नहीं है। और हरिजनोंके लिए, दुर्भाग्यवश, देवकोटा काफी दूरकी ही जगह है।

जो कुछ भी हो, प्रान्तीय और स्थानीय हरिजन सेवक संघ छोटेसे-छोटे हरि-जनोंके अधिकारोंके लिए भी यदि वैसे ही उत्सुक हों जैसे बड़ेसे-बड़े व्यक्तियोंके अधिकारोंके लिए है, तो उनका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे इस बातकी जाँच करें और ऐसे उपाय अख्तियार करें जिससे भविष्यमें हरिजनोंके साथ कोई ऐसा दुर्व्यवहार न कर सके, क्योंकि यह अपमान सिर्फ उस एक हरिजन-सदस्यका नहीं, बल्कि सारे हरिजन-समाजका है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-६-१९३६

१२१ हरिजन और चुनाव

बगलोरसे लौटते हुए उस दिन श्री ए० कालेश्वर राव और एक हरिजन वकील श्री वी० कूमैयाके साथ मेरी जो बातचीत हुई वह 'हिन्दू' मे प्रकाशित हुई है। मित्रोने पत्र लिखकर मुझसे पूछा है कि 'हिन्दू' के सवाददाताने उस बातचीतकी क्या सही रिपोट दी है? उन्होने मुझे अपनी राय खुद अपने ही शब्दोमे देनेके लिए भी लिखा है।

'हिन्दू' मे उसके सवाददाताकी दी हुई जितनी रिपोट प्रकाशित हुई है वह वास्तवमे सही है। हाँ, उसमे बातचीतका शुरूका अश छोड दिया गया है। श्री कूर्मैयाके प्रश्नके उत्तरमे मैंने कहा था कि नागपुरके विधान परिषद-सदस्य श्री गवईको मैंने जो लिखित सलाह भेजी है उसपर मै कायम हूँ। इसपर श्री कूर्मैयाने पूछा "लेकिन अगर हम लोगोमे पूरी एकता न हो, और हममे से कुछ व्यक्ति या समुदाय इतने समर्थ न हो कि वे बगैर किसीकी मददके काम कर सके तो उस सूरतमे हम क्या करे?"

"तब तो" मैंने कहा, "स्वभावत आप लोग उस पार्टीका साथ दें, जो आपको ज्यादासे-ज्यादा फायदा पहुँचाये। मेरी रायमे, ऐसी पार्टी नि सन्देह काग्रेस ही है। अस्पृश्यताको जड-मूलसे उखाड फेकने के लिए वह प्रतिज्ञाबद्ध है। अस्पृश्यता-निवारणके काममे आज जो लोग लगे हुए है उनमे सबसे अधिक सख्या काग्रेस-वालो की है। पर आपके लिए अच्छा यह होगा कि अगर काग्रेसको अपने पूर्ण स्वतन्त्रताके ध्येयके अनुसार, जिसकी कि स्पष्ट व्यारया कर दी गई है, कौसिलोके बहिष्कार या सविनय अवज्ञाकी लडाईमे कभी कूदना पडे, तो आप उसमे भाग न ले। यह मै इसलिए कहता हूँ कि ऐसी किसी लडाईके लिए हरिजनोकी बहुत बडी सरया आज मुश्किलसे ही तैयार है। आपका तात्कालिक ध्येय तो यह है कि तथाकथित सनातनी हिन्दू-धर्मके नामपर आपको जो बराबरीका दर्जा नही दे रहे है उसे आप प्राप्त करे। आप तो जैसे एक बिलकुल अलग व्यक्तिके तौरपर पूछ रहे है। लेकिन सब हरिजन आपकी ही तरह तो है नही। आपके लाखो-करोडो हरिजन-भाई न तो आपकी तरह शिक्षित है, न समझदार। अगर आपके प्रति मै सच्चा हूँ, तो मुझे उन करोडो निरक्षर हरिजनोको दृष्टिमे रखकर बात करनी चाहिए, जिनके प्रतिनिधिके रूपमें कौसिलोके हरिजन-सदस्य बोलेगे।"

यही उस बातचीतका आशय है और खूब विचारपूर्वक मैंने इस सम्बन्धमे जो राय कायम की है वह सब इसमें आ जाती है। पाठकोको यह बात दिलचस्प मालूम होगी कि यही सलाह मैंने हरिजनोको उस वक्त भी दी थी जब मैंने

सविनय अवज्ञाकी पहली लडाई छेडी थी, और आश्रमके हरिजनोपर यह रोक लगा दी थी कि वे न तो लडाईमे कोई भाग ले और न आश्रम ही छोडे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २७-६-१९३६

१२२. पत्र : ना० र० मलकानीको

वर्धा
२७ जून, १९३६

प्रिय मलकानी,

मुझे तुम्हारे साथ हार्दिक सहानुभूति है। तुम्हे कुछ समयके लिए रुक्मिणीसे दूर चले जाना चाहिए और [अपने चित्तको आराम देना चाहिए।][1]

मुझे लगता है कि बापाके साथ तुम्हारी खटपटका कारण कुछ हदतक तुम्हारे जीवनमे यह तनावकी स्थिति है।

तुम्हे दिल्ली या दूसरे प्रान्तोके लडकोके विषयमे चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नही। तुम्हारे पास जितने लडके है उन्हीको यदि अच्छे और कमाऊ नागरिक बनने का प्रशिक्षण देने मे सफल हो सको तो तुम्हारा यश फैलेगा ओर स्थानाभावके कारण तुमको कितनी ही दरख्वास्तोको ठुकराना पडेगा।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२२) से।

१२३. पत्रका अश

२७ जून, १९३६

सेगाँव ही मेरे लिए यूरोप है। सितम्बर तक प्रतीक्षा करना भी कठिन है।[2]

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, १-७-१९३६

१ चौकोर कोष्ठकमें दिया गया वाक्यांश साधन सूत्रमें बहुत धुँधला है।

२ कलकत्ताके एक व्यक्तिने पूछा था कि क्या अखबारोंमें प्रकाशित यह खबर सच है कि गाधीजी सितम्बरमें यूरोप-यात्रा पर रवाना होनेवाले हैं?

१२४. पत्र . एक हरिजन-सेवकको[१]

२७ जून, १९३६

मानवीय धर्म और हिन्दु-धर्ममे विरोध नही है। अस्पृश्यता हिन्दु-धर्मका ही व्याधि होने कारण हमारी सेवाकी मर्यादा हिन्दु ही तक होनी चाहिये। मुस्लीम अस्पृश्य-जैसा कोई प्रयोग ही नही हो सकता। आपके सामने जो मुश्केली है वह वहाँकी विशेष परिस्थितके कारण हे। कल जो हरिजन था वह आज ईसाई हो गया। उसकी नोट करने का हमारा कर्तव्य नही है। हमारे नजदीक तो वह हरिजन ही है——जबतक हमसे सहारा पाता है, हा शिक्षितकी बात अलग है। जैसे के कोई कालेजके लिये कुछ मदद लेता है तो धर्म-परिवतन करने के बाद उस मददका अधिकारी नही रहता है।

आपका,

मो० क० गाधी

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१२५. बातचीत: एक मित्रसे[२]

[२७ जून, १९३६ के आसपास][३]

यह तो हम सब जानते ही है कि ग्राम-जीवन बरसातमे तो खास तौरसे कष्टमय हो जाता है। तो फिर मै इस बहुमूल्य अनुभवसे ही क्यो न काम शुरू करूँ और तबतक राह देख् जबतक कि वहाँकी हालत बेहतर न हो जाये? जबसे मैने तिमप्पा नायक और उनके मित्रोके अनुभव सुने तभीसे अपने दिलमे किसी गाँवमे जाकर रहने का विचार पाल रहा था और मै आपको बता दूँ कि अब जब वहाँ रहने लगा हूँ, मुझे एक दिनके लिए भी वहासे यहा आना अच्छा नही लगता। इस हफ्ते तो मुझे इसलिए यहाँ आना पडा कि इस मौसममे कार्य-समितिके तमाम सदस्यो और दूसरे मित्रोसे सेगाँव आने की आशा करना उचित न होता।

१ पजाबके।

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

३ कार्य-समितिकी बैठकके उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि यह बातचीत वर्धामें हुई थी, जहाँ गाधीजी २७ जूनको समितिकी बैठकमें भाग लेने गये थे और एक सप्ताह ठहरे थे।

पर मैं आपको बता दूँ कि यद्यपि मेरा शरीर यहाँ है, पर मन तो मेरा सेगाँवमें ही है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-७-१९३६

१२६. पत्र : गीता बजाजको

सेगाँव, वर्धा
२८ जून, १९३६

चि० गीता,[1]

जैसा तुम्हारा नाम है ऐसा ही तुम्हें रहना है। विधवापन और सधवापन मनमानी चीज है। मरना-जीना किसीके हाथमें नहीं है। इसलिए शान्त रहो और अपनेको सेवापण करो। मैंने तो अभी जमनालालजी से सुना है। मुझे लिखो।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजी और राजस्थान, पृ० २०४

१२७. पत्र : मीराबहनको

२९ जून, १९३६

चि० मीरा,

यह एक छोटा-सा प्रेमपत्र-भर है। इसके सिवा मुझे और कुछ नहीं कहना है कि तुम्हारी तबीयत ठीक हो जाये, इसके लिए भगवान्से प्रार्थना कर रहा हूँ। इस नये अनुभवसे तुम्हें यही शिक्षा लेनी चाहिए कि तुम कोई प्रयोग मत करो।[2]

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१६ से भी

१ जमनालाल बजाजके भतीजे गिरधारीलाल बजाजकी पत्नी, यह पत्र उसके पतिकी अकाल मृत्यु पर लिखा गया था।

२ मीराबहनने अपनी पुस्तक **बापूज लेटर्स टु मीरा**में लिखा है "जहाँतक मुझे स्मरण है, गाँववालोंकी सलाहपर मैंने पँवार नामक एक जंगली पौधेकी सब्जी खानेका प्रयोग किया था।"

१२८. पत्र : पुरुषोत्तम बावीशीको

वर्धा
२९ जून, १९३६

भाई बावीशी,

काड न लिखू तो पत्र लिखना टलता चला जाये। जिस तरफ आपका ध्यान है, ईश्वर आपको उस तरफ ले ही जायेगा। जबतक आपके प्रयोग सफल नही होते तबतक आपको कोई पूजी लगानेवाला नही मिलेगा। भगियोके घरोवाली घटना तो आश्चयजनक है।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२६) से। सी० डब्ल्यू० ४७५१ से भी, सौजन्य : पुरुषोत्तम बावीशी

१२९. पत्र : बलवन्तसिहको

२९ जून, १९३६

चि० बलवतसिह,

तुमारा खत चाहिये था ऐसा ही मिला। मुनालाल अब तो अच्छा हो जाना चाहिये। घमराहट तो नही है ना? यहा से एक बोटल दूध भेजता हू वह पी सके इतना पी लें। बाकी तुम पीओ या दही बना लो। बोटल वापिस करो, कल भी भेजुगा।

कुएका समझा। हम शातिसे बैठ रहेगे, सब अच्छा ही होगा।

काम तो खूब चला रहे हो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८५) से।

१३० पत्र : मीराबहनको

३० जून, १९३६

चि० मीरा,

अगर पेट साफ नही होता, तो अण्डीका तेल या 'इपसम' साल्ट क्यो नही लेती ? और कोई रेचक ओषधि चाहिए तो भेज सकता हूँ। क्या यहाँसे कोई साग-सब्जी भेज ?

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१७ से भी

१३१. पत्र . प्रभावतीको

वर्धा
३० जून, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र फाड देता हूँ। किन्तु इसमे फाडने-जैसी क्या बात है ?

तेरी दिनचर्यामे सोने का समय बहुत ही कम है। रातको नीद जल्दी क्यो नही आती ? क्या कोई चिन्ता करती है ? राम-नाम जपते हुए सो जाया कर। ऐसा नही लगता कि तू दिनको सोती है। दिनको भी थोडा सोना चाहिए। दूध बढा सके तो अच्छा हो। पटनाके बारेमे समझ गया। क्या पता, जयप्रकाशके साथ रहकर उसकी सेवा करना शायद तेरे नसीबमे ही नही हो। सेगाँवमे मेरे लिए भोजन बलवन्तसिह और मुन्नालाल बनाते है। ये दोनो वहाँ आग्रहपूर्वक रहने लगे है। भोजन जैसा पहले था, वैसा ही है। जो तू बनाती थी वही। लहसुन, प्याज दोनो लेता हूँ। वजन ११२ है। फिलहाल तो वर्धामे हूँ। शनिवार या रविवारको सेगाँव जाऊँगा। मीरा-बहन वरोडामे है। यह सेगाँवसे डेढ मील दूर है। वह वहाँ अकेली रहती है। मै इस बार जब जाऊँगा तो शायद लीलावती साथ होगी। सेगाँवमे अभी तो मेरा कार्यक्रम चिट्ठिया लिखना और जो आये, उनसे मिलना है। मरीज आते है, उन्हे

दवा देता हूँ। जो हो जाये, सो ठीक। वहाँ एक बकरी और गाय रख ली है। गायका दूध मीराबहनके लिए होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७७) से।

१३२ पत्र बलवन्तसिंह और मुन्नालाल जी० शाहको

३० जून, १९३६

चि० बलवतसिंह ओर मुन्नालाल,

कीडेके लिये कुछ और दवा पैदा करुगा। मेरा जी तो वही है।

दूध तो आज भी भेजता हू। उसमे कोई कष्टकी बात तो नही है। कल भी तो स्वेच्छासे हि भेजा था। कचन[1] अबतक नही मिली है। आज शायद आवेगी।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च][2]

जमनालालजी वाले अशका उपयोग तुम अपने लिए करना ओर वा वाले अश का नानावटी करे। आकाश साफ होने पर बुनाई-घर जल्दीमे पूरा करना। इस बारेमे ओर क्या कहूँ? जो स्थान रिक्त हो उन्हे भर देना। यहा भी कुछ स्थान खाली तो अवश्य होगे। जो व्यक्ति काम करना चाहता है उसे यह भी सुझाई देना चाहिए कि उसे क्या करना है।

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६९९५) से, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह। जी० एन० ८२९९ से भी

१३३ पत्र मीराबहनको

१ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारी रिपोट अच्छी है। यहाँ वर्षा हो रही है। मै ५ तारीखको आने की कोशिश करूँगा। पक्की तारीख ६ है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१८ से भी

१ मुन्नालाल शाहकी पत्नी।

२ यह अश पत्रकी दूसरी तरफ गुजरातीमें लिखा हुआ है।

१३४ पत्र : मीराबहनको

वर्धा
२ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

यदि तुम्हारी तबीयत बिल्कुल चुस्त हो और दिन सुहावना हो तभी यहा आने का प्रयत्न करना, अन्यथा नही। मोहनलाल तुम्हारे लिए भाजी लेने बाजार जा रहा है, यदि मिल गई तो तुम्हे भेज दी जायेगी। यदि पत्रवाहक यहाँसे भाजी न ले जाये तो सेगावमे प्राप्त करने का प्रयत्न करना।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५३) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८१९ से भी

१३५ पत्र नारायण स्वामीको

२ जुलाई, १९३६

प्रिय मित्र,

हम लोगोके नन्दी और बगलोरमे ठहरने का प्रबन्ध करवाने मे आपने जितने मनोयोगसे काम लिया, उसके लिए मै अधिक व्यस्तताके कारण अभीतक आपको धन्यवाद नही दे पाया। राज्यने मेरा और मेरे साथियोका जिस उदारतासे आतिथ्य किया, उसके लिए मै राज्यका तो आभारी हूँ ही, लेकिन साथ ही मै यह भी जानता हूँ कि हम उतनी सुविधापूर्वक रह सके, उसमे आपकी मनोयोगपूर्ण देखरेखका कुछ कम हाथ नही था।

हृदयसे आपका,

नारायण स्वामी
बगलोर

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१३६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२ [जुलाई][1], १९३६

चि० मुन्नालाल,

बलवन्तसिहको बीमार नही पडना चाहिए। फिलहाल मीराबहन जो-कुछ कहे, वही करो।

माल कष्ट दे रही है, सो समझ गया। जहा कुछ नही कर सकते, वहाँ धीरज ही रखना पडेगा। दीवानजी कुछ कर सके तो देखना। जब मै आऊँगा तो देखा जायेगा। दूध भेज रहा हूँ।[2]

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कचन, हीरामणि,[3] और भाई[4] आज मुझसे मिलने आये थे।

श्रीयुत मुन्नालाल
सेगाव

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०२) से। सी० डब्ल्यू० ६९९४ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१३७ सन्देश 'इडियन ओपिनियन' को

२ जुलाई, १९३६

सम्पादक महोदयने 'इडियन ओपिनियन' के दीवाली अकके लिए सदेश माँगा है। जिसके हृदयमे होली जल रही हो, उसे दीवाली सूझ ही कैसे सकती है? इस कगाल देशमे, जहाँ करोडो जीवित मुर्दोंकी आहे कानमे गूजती रहती हो, दीवाली कैसे मनाई जा सकती है? इसीलिए 'इडियन ओपिनियन' के पाठकोसे मै तो यही

१ साधन सूत्रमें 'जून' पढ़ा हुआ है। यह भूलसे हुआ होगा। स्पष्ट है कि पत्र इन्हींको लिखे गये ३० जूनके पत्रके बाद लिखा गया था। देखिए "पत्र बलवन्तसिंह और मुन्नालाल जी० शाहको", ३०-६-१९३६।

२ यहाँ साधन सूत्र फटा हुआ है।

३ मुन्नालाल शाहकी भतीजी।

४ मुन्नालाल शाहके भाई।

कह सकता हूँ कि दीवाली मनाना चाहे तो मनाइए, किन्तु हिन्दुस्तानके अस्थि-पजरोको न भले और उनके लिए कुछ निकाल कर अलग रखिए।

मो० क० गाधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५३) से।

१३८. पत्र · मीराबहनको

वर्धा
३ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

आशा है, तुम्हे सेगावमे हर चीज सुव्यवस्थित मिली होगी। मै रविवारको सेगाव पहुँचने का जी-तोड प्रयत्न कर रहा हूँ। हाँ, मैने श्रीमती सेगरका भाषण पढा। अधिकतर नेता जा चुके है। इतना समय काफी चिन्ताका रहा।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२० से भी

१३९ पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

३ जुलाई, १९३६

प्रिय सुभाष,

मुझे तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला है। आशा करता हूँ कि तुम जब भी पत्र लिखोगे, मै उसका अवश्य उत्तर दे सकूगा। मै जानता हूँ कि कैदियो या नजरबन्दोके लिए मित्रोके पत्र पाना क्या महत्त्व रखता है।[1]

मै महादेवसे कह रहा हूँ कि वह तुमको प्रति सप्ताह ‘हरिजन’ भिजवाने की व्यवस्था कर दे।

यदि इससे कोई लाभ हो तो बेशक तुम अधिकारियोको सूचित कर दो कि अराजनैतिक विषयोपर जो-कुछ भी मत तुम व्यक्त करोगे, उन्हे छापनेकी मेरी कोई इच्छा नही है, जबतक कि इसकी अनुमति न मिले।

सप्रेम,

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ सुभाषचन्द्र बोस इस समय दार्जिलिंग जेलमें थे।

१४०. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

३ जुलाई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

यथारीति दूध भेज रहा हूँ। साथमें गंधक और फ्लिटका पंप तथा फ्लिटकी शीशी भी है। गन्धकका उपयोग, जब मैं आऊँगा, तब करेंगे। फ्लिटका उपयोग तुरन्त करना। दिनमें दो-तीन बार नसैनीसे या पटिया रखकर छप्परपर चढ़कर पंपसे दवा छिड़कना। दवा चुक जाये तब शीशी वापस भेज देना, भरवा कर भिजवा दूँगा।

बा नहीं आयेगी, लीलावती आयेगी। मैं शायद रविवारको आऊँगा, यदि बरसात न हुई तो। आगे ईश्वरेच्छा।

महारके विषयमें मैं समझ गया। मजदूर आने लगे या नहीं?

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६००)से। सी० डब्ल्यू० ६९९६ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१४१. खादी पहननेवालोंसे

बिहारसे एक सज्जनने एक लम्बा पत्र भेजा है, जिसके दो हिस्से नीचे दिये जा रहे हैं:[1]

> **मुझे आपसे एक शिकायत है। मैं आदतन खादी पहननेवाला हूँ। खादीकी बिलकुल शुरुआतसे ही मैं बराबर खादी ही पहन रहा हूँ। अपनी गरीबीके कारण अगर कभी मुझे मजबूरन खादी छोड़नी पड़ी, तो मुझे बहुत दुःख होगा। लेकिन इस समय उसके दामोंमें अचानक जो बहुत ज्यादा वृद्धि हो गई है, मुझे भय है, उससे कहीं मुझे ऐसा ही न करना पड़े। . . . इससे, मुझे लगता है, खादी-आन्दोलन ही खत्म हो जायेगा।**

१ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

मुझे बताया गया है कि आप गरीब कतैयोको अधिक मजदूरी देना चाहते हैं। लेकिन किसकी जेबसे? गरीब खद्दरधारी जिस आदर्श पर जमे रहे है और जिसके लिए बहादुरीसे लडे है उसे अगर उन्हे मजबूरन छोडना पडा तो यह उन बेचारोके लिए निश्चय ही मौतके समान होगा। इस समय तो आपका ऐसा निणय बडी भारी गलती है। मुझे भय है कि ऐसा करके आप इस आन्दोलनकी सुन्दर ढगसे अन्त्येष्टि ही करना चाहते हैं।

सयुक्त प्रान्तसे आये हुए एक पत्रमे लिखा है[1]

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने खादीकी उपयोगिता, आवश्यकता और महत्ताको इतना कम करके बताया है कि बहुत-से पक्के खादीधारी भी दुविधामे पड गये है, और जिनका विश्वास पहले ही कमजोर था उन्हे तो पण्डितजी की बातोमें एक सुरक्षित आड मिल गई है। काग्रेसने भी खादीके व्यवहारकी सख्तीको ढीला कर दिया है और आप अपने सकल्पपूर्ण मौनमें ही सन्तोष पा रहे मालूम पडते हैं। क्या आप हमारा पथ-प्रदशन करेंगे और यह बतायेंगे कि इस स्थितिमें हमें क्या करना चाहिए? दूसरी कठिनाई अखिल भारतीय चरखा सघके सबब से है, जो कि इस समय खादीकी आपूर्ति करानेवाली सस्था है। वतमान परिस्थितियोमें खादी महँगीसे-महँगी होती जा रही है और इसकी आपूर्ति कमसे-कम। स्वतन्त्र और व्यक्तिगत रूपसे खादी तैयार करानेवालोके लिए इतनी बन्दिशें लगा दी गई है कि उनके लिए एक गज भी खादी तैयार कराना लगभग असम्भव ही हो गया है। सबसे पहले तो उनपर लागू होनेवाले नियम और प्रतिबन्ध ही नामुनासिब मालूम पडते हैं। दूसरे, उनपर अमल करना लगभग नामुमकिन है। और तीसरे, जिस भावनासे शायद आपने उन्हे रखा होगा उसके विपरीत बडे आपत्तिजनक ढगसे उन्हे लागू किया जाता है। भला निजी तौरपर खादी तैयार करानेवालो पर लगाये गये उन प्रतिबन्धोको आप किस तरह उचित ठहरा सकते है, जिनके कारण उन लोगोको खादी-उत्पादनका अपना काम ही बन्द कर देना पडा है?

इसी तरहकी शिकायत मध्य प्रान्तके राष्ट्रीय बालचरोने भी की है। लेकिन पण्डित जवाहरलाल नेहरूने यह स्पष्ट कर दिया है कि उनकी बातका गलत अर्थ लगाया गया था और इस सम्बन्धमे अखबारोमे छपी हुई रिपोर्ट भ्रामक है।[2] खादीमे विश्वास रखनेवाले अन्य अनेक लोगोकी तरह उनका भी यह विश्वास है कि जबतक देशको आजादी हासिल न हो जाये तबतक खादी बहुत जरूरी है।

१ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

२ देखिए "झूठ-मूठका डर", ६-६ १९३६।

आर्थिक दृष्टिसे खादीमे उन्हे जो सन्देह है उसकी गुजाइश तभी है जब कि आजादी हासिल हो जाये ओर देश व्यापक रूपसे औद्योगीकरणमे प्रवृत्त हो जाये। और यह निश्चय है कि काई भी बुद्धिमान व्यक्ति खादीको इस भयसे अभीसे नही छोड देगा कि उद्योगवादके आनेपर — जो सुदूर भविष्यमे आयेगा भी या नही, यह अभी नही कहा जा सकता — यह दब जायेगी। निजी तोरपर खादी तैयार करनेवालो पर जो प्रतिबन्ध लगाये गये है वे कारीगरो, खासकर कतैयोके साथ खरीदारोके हितका भी खयाल करके ही लगाये गये है। अगर उन्हे हटा दिया जाये तो बाजार नकली खादीसे भर जायेगा, जिसके फलस्वरूप कतैयोको अपने रोजगारसे हाथ धोना पडेगा और खरीदारोके साथ धोखेबाजी होगी। हाँ, नियमोके अमलमे अगर कोई अनियमितता हो तो उस ओर तुरन्त मन्त्रीका ध्यान आकर्षित करना चाहिए। फिर तो उसे अविलम्ब ठीक कर दिया जायेगा।

दामोकी वृद्धि ही ऐसा प्रश्न है जिसका सन्तोषजनक उत्तर मिलना चाहिए। लेकिन यह याद रहे कि जब खादी आजसे आधी भी अच्छी नही थी और न इतनी किस्मे ही उसमे थी, उस समय वह नयी दरोकी बनिस्बत कही ज्यादा महँगी थी और उस समय इसके दामोकी किसीने शिकायत नही की थी। इन तमाम वर्षोमे खरीदार लोग तो बराबर फायदा उठाते रहे है, लेकिन कतैयोको वेतन-वद्धिके रूपमे अभीतक कोई लाभ नही हुआ है। वे बेचारे मूक और असहाय है। चरखा सघके खिलाफ वे हडतालका ऐलान नही कर सकते। वे इतने बिखरे हुए है कि मजदूरी बढवाने या अन्य किसी बातके लिए वे सामूहिक रूपसे उठ ही नही सकते। उन्हे तो पाइयो तककी इतनी जरूरत है कि प्रभावकारी रूपमे वे कोई विरोध ही नही कर सकते। उनकी इतनी कम मजदूरी देखकर अब अगर हममे से कुछकी आत्मा विद्रोह करने लगी है तो इसमे हमे उन खरीदारोकी मदद ही मिलनी चाहिए जो अभीतक कम दामोका लाभ उठाते रहे है। गरीब खरीदारोको कठिनाई होती है, यह तो ठीक है। लेकिन खादीका महत्त्व तो उसके सामाजिक और नैतिक मूल्यमे ही है। खादीके खरीदार अगर खादीके फलितार्थोको समझ ले तो यह समझाकर बता देनेपर, जैसाकि वर्तमान उदाहरणमे बताया जा सकता है, कि कतैयोकी मजदूरी बढाने के कारण ही खादीके दाम बढे है, वे खादीके महँगी होने की शिकायत नही करेगे। खादी खरीदने मे उन्हे जो ज्यादा खर्च करना पडेगा, अगर वे चाहे तो उसकी पूर्तिके लिए वे अनेक उपाय खोज निकाले। लेकिन यह होगा तभी जब वे सन्देहोको छोडकर इस बातका निश्चय कर लेगे कि जबतक हम हिन्दुस्तानमे है तबतक खादीके सिवा और किसी कपडेका इस्तेमाल नही करेगे। इसमे अगर उन्होने छूटकी कोई गुजाइश रखी तो आवश्यकताके नामपर वे उस छूटका उपयोग करने लगेगे। यह याद रहे कि आविष्कार प्राय आवश्यकतासे ही होता है। उपर्युक्त पत्र-प्रेषकोने अगर यह निश्चय कर लिया होता कि हमारे लिए तो खादीके सिवा और कोई कपडा ही नही है, तो वे इस प्रकार नही लिखते। बल्कि तब उन अनेक लोगोकी तरह, जिनकी आर्थिक दशा उनसे किसी भी तरह बेहतर नही है, वे भी खादीके दामोमे हुई थोडी-सी वृद्धिको सह लेते।

लेकिन, इन पत्र-प्रेषकोको इसके साथ ही मै यह विश्वास भी करा देना चाहता हूँ कि गरीब खादी-प्रेमियोका खयाल करके दामोमे यथासम्भव थोडीसे-थोडी वृद्धि करने की पूरी सावधानी बरती गई है। साथ ही, मै उनसे कहूँगा कि कतैयोकी मजदूरीमे यह थोडी-सी वृद्धि करने के इस नये प्रयोगमे कैसी भारी सफलता मिल रही है, इस बारेमे वे राजेन्द्र बाबू और तमिलनाडु चरखा सघके मन्त्रीके विवरण भी अवश्य देखे। खादी-प्रेमी धीरजसे काम ले तो वे देखेगे कि जहाँ खादीके दामोमे थोडी-सी वृद्धि हुई है, वहाँ उसके साथ-साथ खादीकी किस्म तथा उसके टिकाऊपनमे भी उतनी ही उन्नति हुई है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ४-७-१९३६

१४२ कन्या-वध

आज भी इस हतभाग्य देशमे कन्या-वध-जैसी निदय, अमानुषी प्रथा चल रही है, यह मानने मे कष्ट होता है। लेकिन जो पत्र मेरे सामने पडा है वह मुझे यह मानने को मजबूर करता है। बिहार, जिला भागलपुरके देहात अमरपुरमे राजपूत-कन्या वध-विरोधिनी सभा स्थापित हुई हे। इस बारेमे सभा-मन्त्रीने एक दु खजनक खत लिखा है। उसमे से नीचे थोडे फिक्रे दिये जाते है।

> **भगवान् बुद्धने बकरोकी रक्षाके लिए अपने प्राणोकी बाजी लगा दी थी। आज उन्ही की सन्तान अपनी सद्य प्रसूता कन्याको मारने मे लगी हुई है। मनुष्यताको कलकित करनेवाली एक कुप्रथा हम राजपूतोमें ही है। ऐसे भी घर है जहाॅ एक दारोगा, एक तहसीलदार तथा पढे-लिखे युवक है। आज ५० वर्षोसे उनके घर एक भी कन्या नही रखी गई। जरा उस दृश्यकी कल्पना करे, जब बच्ची पैदा होते ही माँ उससे अलग हो जाती है। दूध नहीं दिया जाता है, बच्ची दम घुटकर मर जाती है। यो नहीं मरी तो नमक चटाकर अथवा तम्बाकू खिलाकर मार दी जाती है। सबसे सरल तरीका तो यह है कि उसके मुँह-नाक पर मासका लोथा रख दिया जाता है। कैसा घृणित तरीका है। बकरेको तो हथियारसे मारते है, लेकिन नि सहाय, मुहसे भी आवाज नही निकालनेवाली बच्चीको दम घुटाकर मारना — कितना अनर्थ है।**
>
> **पजाबके जाट राजपूतो और जाट सिखोमें यह कुप्रथा थी। पजाब-कौसिल मे उसे रोकने के लिए खास कानून बनवाया गया। पर हमारे यहाॅ लोग सकोच करते है।**

धम तो सिखाता ही है कि जीव-मात्र अन्तमे एक ही है। अनेकता क्षणिक होने के कारण आभास-मात्र है। लेकिन राष्ट्रभावना भी हमे यही पाठ देती है। हम

अपनेको राजपूत इत्यादि नही मानते है, न बिहारी, पजाबी इत्यादि। हम अपनेको हिन्दुस्तानी मानते है और एक ही राष्ट्र मानते और मनाते है। इसलिए धर्म-दृष्टि या राष्ट्र-दृष्टिसे हम एक है और एकके दोषकी जिम्मेदारी हम सबपर आती है। इस न्यायसे इस राजपूत-कन्या-वधके लिए हम सब, राजपूत हो या कुछ भी हो, जिम्मेदार है। एक-दूसरेके दोष, एक-दूसरेकी आपत्तिके लिए हम उदासीन न रहते तो कन्या-वध आजतक निभ नही सकता था। इसमे न धर्मका बहाना है, न कोई आवश्यकताका। कोई एक युग होगा कि जब राजपूत-जीवन अनिश्चित होने के कारण कन्या-जन्म आपत्ति माना जाता होगा, आज तो यह बहाना रहा ही नही है। दूसरोकी अपेक्षा राजपूत-जीवन अधिक अनिश्चित है, ऐसा नही कहा जा सकता है। राजपूतोके सिर पर आज युद्धका बोझ नही रहा है। आज राजपूतको अपनी तलवार साथमे रखकर सोना नही पडता है। राजपूत कौम भले ही हो, राजपूत धर्म-जैसी कोई वस्तु नही रही। फिर कन्या-वध क्यो? कन्याका बोझ क्यो? बोझ तो उन लोगोपर अवश्य पडता है जो अपनी कन्याके लिए पति खरीदते है और दम निकल जाये इतना दाम देना पडता है। ईश्वरकी कृपा है कि वे अपनी कन्याका वध करने तक नही पहुँचे है। मुझे नही पता कि आज राजपूत-कन्या-वधके लिए कोई बहाना बताया जाता है क्या? अगर ऐसा कोई बहाना है, तो नई सभाका इसपर प्रकाश डालना कर्त्तव्य है।

लेकिन बहाना हो भी सही, उसे दूर करना धर्म होगा। कोई बहाना इस राक्षसी प्रथाको कायम करने मे कभी मान्य नही हो सकता है। लोकमतको सगठित करके शीघ्र ही इस प्रथाको मिटाना चाहिए। सगठन करने का बोझ राजपूत-कन्या वध-विरोधिनी सभा पर ही हो सकता है। लम्बे व्याख्यानोसे प्रयत्न सफल नही होगा, न प्रस्तावोसे ही होगा। इन दोनोकी थोडी आवश्यकता रहेगी। पर अत्यावश्यक वस्तु तो इस बारेमे सविस्तर हकीकत है। ऐसा नकशा बनाना चाहिए जिसको देखने से ही क्षणमे पता चल जाये कि कहाँ-कहाँ कन्या-वध होता है, गत वर्षमें कितनी बालि-काओका वध हुआ। वधकी सख्या निकालना कठिन होगा, असम्भव भी हो सकता है। बात यह है कि जितनी खबर मिल सके सब इकट्ठी करनी चाहिए और प्रत्येक घरमे जहाँ कन्या-वधकी सम्भावना भी हो, सभाका सन्देश पहुँचना चाहिए। सिर्फ अखबारोमे प्रस्तावादि भेजने का कोई असर, जो माँ-बाप कन्या-वध कर रहे है, उनपर नही पडेगा। सभाके कार्यकर्त्ताओको यह भी याद रखना आवश्यक है कि वे किसी प्रकारकी अतिशयोक्ति न करे। अविश्रान्त, सच्चे और शात प्रयत्नसे इस कार्यमें शीघ्र सफलता मिल सकती है, ऐसा मेरा अभिप्राय और विश्वास है।

हरिजन-सेवक, ४-७-१९३६

१४३. पत्र : मीराबहनको

वर्धा
४ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

मै अभी भी कल आने की आशा रखता हूँ। इस समय अब और नही। मै एक मीटिंगमे बैठा हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२१ से भी।

१४४. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

४ जुलाई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

दूध और फ्लिट भेज रहा हूँ। कल पहुँच जाने की आशा रखता हूँ। महारसे सम्बन्धित समस्या तभी समझूंगा।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९९) से। सी० डब्ल्यू० ६९९७ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१४५. पत्र : कनु गांधीको

४ जुलाई, १९३६

चि० कनु,

काम आधा ही हुआ है। तूने सात आने कहा था, इसलिए मैंने गोविन्दसे उतना ही कहा। उसने चार तो दे दिये, तीन अब देगा। ये पैसे मैं वहाँ भेज दूंगा। उसे खर्च-खातेमें लिख लेना और यहाँ से मिल जानेपर जमामें लिख लेना।

रामजीलाल अपने खाने का खर्च देता है, इसलिए वह भोजन करना चाहे तो करे।

फिल्टके डब्बेकी बात छोड। मैं उसे यहाँके हिसाबमें लिख लूंगा।

'रामायण'का समय बदला जा सकता है। मेरे पहुँचने पर तो जो है वही रखना है। [1] खाते हैं, जिनमें सबकी सुविधा सधेगी।

एक सँडसी मेरे ही काममें लाई जाती थी, वह भेज देना। और तवा भी। कुकरके अन्दरका बर्तन भी जुडकर आ गया हो तो वह भी। वहाँ मराठी अखबार आता है। उसके एक-दो अंक भेज देना। मुझे बरू चाहिए। साधारण कागजका एक पैड मुन्नालालके लिए। इसके साथ कृष्णदास, काका, शंभुदयालके लिए [2] [पत्र] है।

तेरी मानसिक स्थिति अच्छी होगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

जब यह पत्र पहुँचे तब अगर महादेव वहाँ हो तो उन्हें बता देना कि मुझे फल नहीं चाहिए।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२१) से।

१ और २ साधन-सूत्रमें यह अंश धुँधला पड़ गया है।

१४६ पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

४ जुलाई, १९३६

भाई घनश्यामदास,

मैंने म्यूझीयमके बारेमे लिखने का महादेवको नही कहा था। मैंने तो अन्य मकानोके बारेमे लिखने का कहा था। तुमको याद होगा कि जब मेरी हाजतोकी मै बात करता था तब मैंने कहा था कि मुझे दूसरे मकान बनाने के लिये एक लाखकी आवश्यकता बताई थी। बादमे उन मकानोमे जो विद्यालय बना है उसका भी मैंने समावेश किया था। यद्यपि एक लाखकी बातके समय विद्यालय मैंने अलग रखा था, क्योकि विद्यालयके अलावा एक लाखके मकान बनाने का मैंने सोचा था। लेकिन विद्यालयने काफी पैसे खाये, इतना द्रव्य सघके भण्डारमे नही है। मेरी कुछ समज थी कि तुमने इस एक लाखमे से कुछ तो वछराज कु० मे भेज दिये थे। अब पता चला है कि वहाँ इस बारेमे कुछ पैसे जमा नही हुए है। इसलिये मैंने त्रिवेंद्रम तुमको एक पत्र[1] भेजा था। यह पत्र शायद नही मिला होगा। अब इस एक लाखमे से कुछ रकम अब निकल सकती है तो निकाली जाये।

डा० मुजेको मैंने लिखा है,[2] उसकी नकल मिली होगी। पारनेरकरके साथ क्या तय हूआ?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ८०२०) से, सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला

१४७ पत्र . अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
६ जुलाई, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

मैं कल शामको सेगाँव लौट आया और अब तो मै पत्रोको निपटा सकता हूँ।

भला सडसठ वर्षका युवक अनुभवके आधारपर कैसे कहे कि पुरुष लोग (स्त्रियोके विषयमे तो मुझे कुछ कहने ही नही दिया जायेगा) बुढापेमें जिद्दी हो जाते है या नही?

१ और २ उपलब्ध नही हैं।

हाँ, जब मूर्खारानी मालवीयजी की सेवामे लगी हुई है उस समय यदि वह पत्रो द्वारा मुझसे बात न करे तो मै खुशीसे इतना त्याग सह लूगा। मालवीयजी को दूसरोका खयाल रखनेवाले तुम-जैसे श्रोताओकी आवश्यकता है। कितना अच्छा हो, यदि वे एक वर्ष तक आराम करे! परन्तु वे नही करेगे। वे तो काम करते हुए ही प्राण-त्याग करेगे। भगवान् उनपर कृपा रखे। फिर भी उनके शरीर और मस्तिष्क, दोनोको आरामकी जरूरत है, और इस समय उनका आराम करने से इनकार करना धर्मसे हटने-जैसा है। तुम्हे और मुझे उनकी नकल हर्गिज नही करनी चाहिए, हालाँकि तुममे भी उन्ही के समान हमेशा शक्तिसे बाहर काम करने की प्रवृत्ति है।

यदि मुझे पक्का पता चले कि तुम बेजवाडामे कब और कितने घटे रुकोगी तो तुम्हारे लिए वहाँका कुछ काम निकाल बताऊँगा।

अपने बेचारे गलेको कुछ विश्राम देने के लिए मौन व्रत धारण करो। तुम्हे पता है कि एक विशेषज्ञने जवाहरलाल से सप्ताह-भर पूर्ण मौन रखने को कहा है, और बताया है कि ऐसा नही करने पर उसका शरीर बिलकुल जवाब दे देगा? धीमेसे बोलने की भी मनाही है। क्या तुम कहा मानोगी? या किसीकी न सुननेवाली वही मूर्ख हठीली राजकुमारी बनोगी? अपने आने की निश्चित तिथि लिख भेजना। मीरा अपनी कुटियामे सुखी है। उसकी ग्राम्य वृत्तिपर मै मुग्ध हूँ।

सप्रेम,

तानाशाह

[पुनश्च]

साथका पत्र[1] मालवीयजी के लिए है।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८१) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९० से भी

१४८ पत्र: एफ० मेरी बारको

६ जुलाई, १९३६

चि० मेरी,

यह पत्र लौटती डाकसे भेज रहा हूँ। इसमे कोई हर्ज नही कि तुम मत-दाताओकी सूचीमें अपना नाम दर्ज करवा लो।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६५) से। सी० डब्ल्यू० ३३९५ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

१ यह पत्र उपलब्ध नही है।

१४९ पत्र हे० सॉ० लि० पोलकको

६ जुलाई, १९३६

प्रिय हेनरी,

प्रत्र-वाहक जमनालालजी का ज्येष्ठ पुत्र कमलनयन बजाज है। ग्रेट ब्रिटेनके साथ चाहे हम कितना ही सघष करे, लन्दन तो हमारे लिए दिनपर-दिन मक्का या काशी बनता जा रहा है। कमलनयन इसका अपवाद नही है। उसको मैने लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्सका एक पाठ्यक्रम पूरा कर लेने की सलाह दी है। तुम सम्भवत प्रोफेसर लास्कीसे उसका सम्पर्क करवा सको। आशा है, कमल नयनका मार्ग-दर्शन करने मे उन्हे कोई एतराज नही होगा। म्यूरियलने उसकी देखरेखका जिम्मा लिया है।

कुछ समय पूर्व तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ था। इस पत्रको उसकी प्राप्ति-सूचना भी समझो। मै देहाती बनने का प्रयास कर रहा हूँ। जहासे मै यह पत्र लिख रहा हूँ, उसकी जन-सख्या है ६००। न कोई सडक है, न डाकघर, न कोई दुकान।

तुम सबको प्यार।

भाई

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५३) से।

१५० पत्र कमलनयन बजाजको

६ जुलाई, १९३६

चि० कमलनयन,

इसके साथ तीन पत्र भेजता हूँ। ये तीस का काम करेगे। वुडब्रुक बर्मिघममे है। वह अच्छी सस्था है। इन लागोसे जल्दी सम्पर्क करना। यह लिखते-लिखते लगा कि प्रोफेसर होरेस अलेक्जैडरको भी लिखू, अर्थात् चार पत्र[1] हो गये। वे वुडब्रुकके है। मुझे नियमित रूपसे लिखना। सुनना सबकी लेकिन करना अपने मनकी —और तुमसे जो आशाएँ बँधती जाती है, उनके अनुसार ही। वहाँके प्रलोभनोकी सीमा नही है। अपना नाम शोभित करना और कमलके गुण याद करके उसीके समान कीचडमे रहकर भी अलिप्त रहना। इससे सब-कुछ कुशल ही होगा। अपनी शक्तिके अनुसार ही डुबकियाँ लगाना। किसीकी प्रतिस्पर्धा मत करना। प्रत्येक क्षणका

१ इनमें से केवल दो ही प्राप्त हैं। देखिए पिछला और अगला शीर्षक।

सदुपयोग करोगे तो तुम्हारी शक्तियाँ जितनी विकसित होनी होगी, हो जायेगी। 'रामायण' और 'गीता'का गहरा अभ्यास करना। रोज अध्ययन करना। मूल 'गीता' तो पढोगे ही, लेकिन एडविन आर्नल्डका 'साग सिलेस्टियल' भी पास रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५२) से।

१५१ पत्र · होरेस अलेक्जेंडरको

६ जुलाई, १९३६

प्रिय होरेस,

पत्र-वाहक जमनालालजी का ज्येष्ठ पुत्र कमलनयन बजाज है। मैंने उसे लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्समे दाखिला लेने की सलाह दी है। परन्तु तुम इससे कुछ बेहतर सोच सको तो अवश्य उसे सलाह देना। जो-कुछ भी हो, मैंने उसे वुडब्रुक विचार-धारावालोसे[1] सम्पर्क स्थापित करने को कहा है। और शेष तुमपर छोड देता हूँ।

तुम्हे, ऑलिव तथा अन्य सब मित्रोको मेरा प्यार।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२५) से।

१५२. पत्र : अमतुस्सलामको

६ जुलाई, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा तार और दो पत्र मिले। सरस्वतीके बारेमे कान्तिने जो सुझाया था मैंने वही किया। तू मिलकर लौट सकती थी। इसलिए कान्तिके कहने से मैंने तार कर दिया था — वैसे यह आशका तो थी ही कि तू आ नही सकेगी। अब तो जब सरस्वती लौटकर आये तभी देखेंगे।

तू महिलाश्रमके बारेमे जो लिखती है, वह बिलकुल ठीक नही है। वह रोज़ बढ रहा है। लडकियोको वापस कर देना पडता है। राजकिशोरी नही रह सकी,

१ क्वेकर सम्प्रदायके सदस्य।

इसलिए सरस्वती भी नही रह सकती, ऐसा कहना ठीक नही है। सरस्वतीके न रहने का कारण अलग ही था। मुझे सारा विवरण लिखने का समय नही है।

छुट्टियोमे तू ऑपरेशन करा लेने की सोचती है, यह बात मुझे पसन्द आई। अधिक वियोगी हरि बतायेंगे। कान्ति और सरस्वती कल त्रिवेन्द्रमके लिए रवाना हो गये। लीलावती मेरे साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३९) से।

१५३ पत्र नरहरि द्वा० परीखको

६ जुलाई, १९३६

चि० नरहरि,

तुम्हारे साथ जो एक बात कर लेनी थी, उसे करना भूल गया। नीमुकी इच्छा वहाँ आकर रहने की है। उसे यहाँ पढने का समय नही मिलता। इसके सिवा, वहाँ रहेगी तो सुमित्रा उसकी नजरके सामने रहेगी। वह खुद अग्रेजी, गणित, इतिहास और भूगोल (गुजराती माध्यमसे) तथा सगीतमे सितार बजाना तथा गाना अच्छी तरह सीख लेना चाहती है। उसे लगता है, ये सब विषय वह विद्यापीठमे सीख सकती है। यदि उसके वहाँ रहने से कोई और अडचन न दिखे तो उसे भेज दू।

उसे अपनी रसोई अलग बनानी होगी। किराया आदि तो नियमसे देगी ही। एक घटा हरिजन-सेवामें लगायेगी। वह सिलाई, सगीत (साधारण) और गुजराती (साधारण) सिखा सकती है। यह बात तुम्हे मेरा विचार करके स्वीकार नही करनी है। सहज ही उसकी इच्छा पूरी कर सकू तो मुझे अच्छा लगेगा, इसलिए पूछ रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९५) से।

१५४. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

६ जुलाई, १९३६

बापा,

मै वर्धामे सिर नही उठा पाता। पत्रोको पढनेतक का समय नही मिलता। पढ लूँ तो उत्तर नही दे पाता। सक्षेपमे कहना यह है कि अब ज्यादा जीना है तो रात देरतक या सवेरे तडके उठकर काम नही कर सकता।

जो विषय तुमने सुझाये है उनपर चर्चा करने के लिए बैठक जरूर बुला लो। [उसमे मेरे शामिल होने के सम्बन्धमे] जमनालालजी की अनुमति ले लेना। मैं १० से १२ अगस्तके बीच व्यस्त रहूँगा।

चदेसे सम्बन्धित बात समझ गया। बम्बईमे हार माननी पडी, यह आश्चर्य ही है। सभी जगह काममे कटौती करनी पडेगी, मुझे ऐसा नही लगता। लेकिन सभी प्रान्तोको स्वावलम्बी तो होना ही चाहिए।

कोडम्बकममे सशत सरकारी मदद लेने मे मुझे तो सस्थाका नाश ही दिखाई देता है। मैंने तो बडे सबल कारण रावबहादुरके सामने रखे थे और यह समझा था कि वे बाते उनके गले भी उतर गई है। देखता हूँ, मुझे गलतफहमी हुई थी। मुख्य कारण तो यह है कि अगर इतनी छोटी-सी सस्थाके लिए हिन्दुओसे पैसा इकट्ठा नही किया जा सके तो सघ या हिन्दू-समाज उसे चलाने का श्रेय नही ले सकता। अगर कहो कि हमे कामसे काम है, फिर वह चाहे जिस पद्धतिसे सधे तो मै हार गया। लेकिन हारकर भी मै यही कहूँगा कि सघके जन्मकी बात सोचे तो हमारा आदर्श इतना तो होना ही चाहिए कि जिस बोझमें हिन्दू-समाज हाथ न बँटाये, वह बोझ सघ अपने ऊपर न ले। शेष सारी बात पद्धतिकी रह जाती है। यदि इसे सरकारी मददसे चलाना रुचिकर हो तो समिति उसे सघसे अलग करके क्यो नही चलाती? मुझे तो सघकी नीव मजबूत रखना ही अच्छा लगता है। लेकिन मेरी बुद्धिकी दौड तो सेगाँवकी हदतक ही है। इसलिए मेरी बात सुनकर समिति जो-कुछ तय करे, सो सही।

मेरा मलाया या उसे तुम जो कुछ कहो, सो कमसे-कम फिलहाल सेगाँव ही है। अगर ईश्वर मुझे यहाँ तीन ऋतुएँ बिता लेने दे तो यह उसका मुझपर बहुत बडा उपकार होगा। किन्तु उसके पास किसकी सिफारिश चलती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६३) से।

१५५. पत्र के० नटराजनको

वर्धा
७ जुलाई, १९३६

महादेवने अभी तुम्हारा पत्र भेजा है। तुमने मुझे 'यूनिटी' पत्रिका का जो सम्पादकीय लेख भेजा है वह तो असाधारण है। मेरे नाम जो विचार मढे गये है और उद्धरण-चिह्नोमे पेश किये गये है, वे मैने कभी मुँहसे निकाले ही नही,[1] और इससे भी बडी बात तो यह है कि मेरे कभी ऐसे विचार रहे ही नही। और जवाहरलालके मुँह से मैने जो-कुछ सुना है उससे मुझे कभी यह सन्देह तक नही हुआ है कि वह भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए हिसाके उपयोगकी बात भी सोच रहा है।[2] आश्चर्य है कि डॉक्टर होम्स कैसे धोखेमे आकर समझ बैठे कि मैने कभी ऐसी बाते कही होगी। इस पत्रका तुम इच्छानुसार उपयोग कर सकते हो और उचित समझो तो समय बचाने के लिए यही पत्र डॉ० होम्सको भेज सकते हो।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१५६. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको

७ जुलाई, १९३६

तुमने जो कहा है वह एक शाश्वत सत्य है। परन्तु तुम्हारे पिछले पत्रमे एक स्पष्ट शिकायत थी, और यह शिकायत करने का तुम्हे पूण अधिकार था, बल्कि वैसा करना तुम्हारा कर्त्तव्य था। क्या तुम्हारा मेरे प्रति कर्त्तव्य नही कि मुझे दोषियोके नाम और उनके दोष बताओ? आखिरकार शाश्वत सत्योको ध्यानमे रखकर बारीकियोका विचार करनेपर ही हम उन सत्योतक पहुँच सकते। कमसे-कम मुझे तो जो-कुछ सत्यकी झाँकियाँ मिली है वे पूणत नही तो मुख्यत उस महत्तम उद्देश्यको सामने रखते हुए छोटी छोटी बारीकियोपर ध्यान देने से ही मिली है। सो कृपा कर मेरी मदद करो।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ देखिए "क्या हम प्रतिद्वद्वी है?", २२-७-१९३६ या उसके पूर्व।

२ यूनिटी इण्टर एलिआ ने अन्य बातोके साथ यह भी लिखा था "हालकी लखनऊ कांग्रेसमें नव निर्वाचित कांग्रेस अध्यक्ष नेहरूने भारतके स्वातन्त्र्य-सघर्षमें हिंसाके उपयोगका समर्थन किया और कहा जाता है कि वे भारतमें अग्रेजी शासनको हिला देनेके लिए एक आन्दोलनकी योजना बना रहे है।"

१५७ पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
८ जुलाई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र[१] अभी मिला। वर्धाकी घटनाओपर तुम्हे लिख सकने के लिए मै समय ढूंढ रहा था। तुम्हारे पत्रने इसे कठिन बना दिया है। परन्तु मै इतना ही कहना चाहूँगा कि अलग हो जाने का विचार सूचित करनेवाले उस पत्रका वह अर्थ नही है जो तुमने उसे लेते समय लगाया। वह मेरे देख लेने के बाद ही तुम्हे भेजा गया था। त्याग-पत्रके स्थानपर इस तरहका पत्र भेजने का सुझाव मेरा था। मै चाहता हूँ कि तुम इस पत्रके विषयमे कुछ अधिक न्यायपूर्ण दृष्टिसे विचार करो। जो भी हो, मेरा यह दृढ मत है कि वषके शेष समयमे सारी खीचतान बन्द रहे और कोई त्याग-पत्र न दिया जाये। वरना अ० भा० काग्रेस कमेटी अपग हो जायेगी और इस सकटका सामना नही कर सकेगी। वह दो भावनाओके अन्तर्द्वन्द्वमे फँस जायेगी। लोकतन्त्रके नामपर उसे अचानक एक ऐसे सकटमे डाल देना अत्यन्त अन्यायपूर्ण होगा, जैसा सकट उसके सामने पहले कभी नही आया। तुम उस पत्रके गूढार्थको बढा-चढाकर देख रहे हो। मै बहस नही करूँगा, परन्तु यह आग्रह अवश्य करूँगा कि स्थितिपर शान्त मनसे विचार करो और क्षणिक विषादवश उसके सामने हथियार न डाल दो, क्योकि यह विषाद तुम्हे शोभा नही देता। कार्य-समितिकी बैठकोमे अपनी विनोद-वृत्तिको खुलकर क्यो न खेलने दो? जिन लोगोंके साथ तुमने

१ तात्पर्य ५ जुलाईके पत्रसे है, जिसमें जवाहरलाल नेहरूने कार्य-समितिके अपने उन सहयोगियोंकि रवैयेकी शिकायत की थी जिनसे उनका मतभेद था। २९ जूनको वर्धामें कार्य-समितिकी बैठक हुई थी। उसमें ये मतभेद इतने उभर आये थे कि राजेन्द्रप्रसाद, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, जयरामदास दौलतराम, जमनालाल बजाज, वल्लभभाई पटेल, जे० बी० कृपलानी और एस० डी० देव, समितिके इन सात सदस्योंने अपने त्यागपत्र दे दिये थे और बादमें गाधीजीके बीच-बचाव करनेपर ही उन्होंने त्यागपत्र वापस लिये थे। लेकिन १ जुलाईको राजेन्द्रप्रसादने जवाहरलाल नेहरूको एक व्यक्तिगत पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने सदस्योंके त्यागपत्र देने का कारण विस्तार से समझाया था। २९ जूनको दिया गया त्यागपत्र, १ जुलाईको जवाहरलाल नेहरूके नाम लिखा राजेन्द्रप्रसादका पत्र और ५ जुलाईको गाधीजी को लिखा जवाहरलाल नेहरूका पत्र, ये तीनों यहाँ नही दिये जा रहे है, लेकिन **ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स**में देखे जा सकते है।

कार्य-समितिका यह आन्तरिक मतभेद लखनऊ काग्रेसमें ही स्पष्ट हो गया था, जब जवाहरलाल नेहरू अध्यक्ष चुने गये थे। जिस प्रश्नको लेकर मतभेद हुआ था वह यह था कि काग्रेस अपने कार्यक्रममें समाजवादके प्रति कहाँतक प्रतिबद्ध हो सकती है। पट्टाभि सीतारामय्याके शब्दोंमें, "अध्यक्षकी राय कार्य समितिके बहुमतसे मेल नही खाती थी।"

किसी तरहकी अनबनके बिना वर्षोंतक काम किया है, उनके साथ निर्वाह करना तुम्हारे लिए इतना कठिन क्यों होना चाहिए? यदि वे असहिष्णुताके अपराधी हैं तो तुम भी जरूरतसे ज्यादा असहिष्णु रहे हो। तुम्हारी आपसी असहिष्णुताके कारण देशकी हानि नहीं होनी चाहिए।

आशा है, तुमने जर्मन डॉक्टरकी बहुत सयानी सलाह मान ली है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० १९१-९२ से भी

१५८. पत्र : ग्लैडिस ओवेनको

८ जुलाई, १९३६

प्रिय ग्लैडिस,

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने राजघाट थियोसॉफिकल स्कूलमें[1] एक सालकी नौकरी स्वीकार कर ली है। इससे तुम्हें और कुछ नहीं तो भारतीय विद्यार्थियोंका कुछ अनुभव प्राप्त हो जायेगा और तुम भी अवश्य उन बच्चोंको, जो तुम्हारी देख-रेखमें होंगे, कुछ दे सकोगी।

हाँ, ये वही बड़ौदावाले अब्बास तैयबजी हैं जिनसे मिलने का तुम्हारा इरादा था। परन्तु अफसोस! अब वे नहीं रहे। जिनसे मिलने का मेरा सौभाग्य रहा है, तैयबजी उनमें से अच्छेसे-अच्छे लोगोंमें से थे और तुम्हें उनके परिवारके सदस्योंसे मिलने की कामना अभी भी सजग रखनी चाहिए। उन सबने उनके गुणोंको खूब ग्रहण किया है — विशेषत उनकी एक लड़की रेहानाने, जो अत्यन्त गुणवती ही नहीं, बड़ी धार्मिक भी है।

स्नेह।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१९२) से।

१ वाराणसीमें।

१५९ पत्र अतुलानन्द चक्रवर्तीको

८ जुलाई, १९३६

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। काश! आप मेरी कठिनाइया समझ सकते। इस प्रश्नपर दुर्भाग्यवश मेरा दृष्टिकोण आपसे भिन्न है। इसलिए मै तो चाहता हूँ कि कमसे-कम कुछ समयतक आप अपने ही ढगसे सेवा करते रहे। यदि मुझे आपकी रीति जँच गई तो उसको अपनाने मे मुझे कोई झझट नही होगी। और किसी सुनियोजित काय-क्रमके लिए तो मै आपको अपनी बात काग्रेससे ही कहने की सलाह दूगा। मुझसे कोई लम्बा-चौडा पत्र पाने की आशा मत रखिए। आपको शीघ्र ही पता चल जायेगा कि मै ग्राम-सेवाका जो काम करनेपर तुला हुआ हूँ, उसे यदि करना है तो कमसे-कम फिलहाल मुझे पत्र-व्यवहार बन्द करना ही पडेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७५) से, सौजन्य ए० के० सेन

१६०. पत्र प्रभावतीको

८ जुलाई, १९३६

कैसी है तेरी चिट्ठी? इस तरह बीमार पडती रहेगी तो बात कैसे बनेगी? यदि तू वहाँ अच्छी नही रह पाती तो सबकी अनुमतिसे यहाँ क्यो नही आ जाती? बीमार किसीकी सेवा नही कर पाता, सबसे सेवा लेता है। तू चाहे तो जयप्रकाशको लिखू। तू हिम्मतसे अपने मनकी बात कह क्यो नही देती? मुझे हिम्मतकी बाते लिखती है, लेकिन मुझे आशका होती है कि तू मन-ही-मन चिन्ता करती रहती है। चिन्तासे तो कुछ होना-जाना नही है। जयप्रकाश मिला था। लिखता है कि पटनामें तुम दोनो साथ रहोगे। लगता है, बनारसकी बात तो आई-गई ही हो गई। जान पडता है, उसने पटनामे घर तो ले ही लिया है। कहता था, अच्छी जगह है। यह सब तू जानती होगी।

कान्ति सरस्वतीको लेकर त्रिवेन्द्रम गया है। उसका पता है माफत जी० रामचन्द्रन्, हरिजन सेवक सघ, त्रिवेन्द्रम। एक महीनेमे लौटेगा।

यह पत्र मिलते ही तबीयतके बारेमें तार देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७८) से।

१६१ पत्र जीवणजी डा० देसाईको

८ जुलाई, १९३६

शब्दकोश[1] देख गया हूँ। मैं इतना मानकर चल रहा हूँ कि 'अनासक्तियोग' में[2] जो शब्दार्थ दिये गये हैं, वही यहाँ भी दिये गये हैं। दिखता तो अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४३) से। सी० डब्ल्यू० ६९१८ से भी, सौजन्य जीवणजी डा० देसाई

१६२. तार · लेडी फजल-ए-हुसैनको

[१० जुलाई, १९३६][3]

कृपया मेरी समवेदना[4] स्वीकार कीजिए। आपके ख्यातनाम पतिसे जब भी मिला, मुझे सुख ही प्राप्त हुआ। उन सभी मुलाकातोंकी यादें मेरे मनमें कायम हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-७-१९३६

१ **गीता पदार्थकोष**।

२ गांधीजी कृत **भगवद्गीता** का गुजराती अनुवाद, देखिए खण्ड ४१, पृ० ९२-१६७।

३ देखिए "पत्र: कनु गांधीको", १०-७-१९३६ की पाद-टिप्पणी।

४ लेडी फजल-ए-हुसैन के पति का ९ जुलाई को स्वर्गवास हो गया था।

१६३ पत्र : नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटियाको

१० जुलाई, १९३६

सुज्ञ भाईश्री,

आपके जीवन-साथीकी चिरविदाका समाचार यदि गोकुलभाई नही देंगे तो और कौन देगा? आपके अनेक भक्तोमे से वे एक हैं। आपके प्रति समवेदना प्रकट करने की क्या जरूरत है? आपकी बीमारीकी खबर मुझे मिलती रहती थी। सुशीलाबहनके बारेमें तो मुझे कोई खबर ही नही थी। सचमुच ईश्वर अपने भक्तोकी परीक्षा लेता है। आप तो अनेक अग्नि-परीक्षाओमे से गुजरे हैं। आप तो सभी परीक्षाओमे उत्तीण होते ही रहे हैं। ईश्वर जिसकी परीक्षा लेता है उसे उस आचको सहन करने की शक्ति भी देता जान पडता है। आपकी श्रद्धा ऐसी है कि उसे देखकर नास्तिक भी आस्तिक बन जायेगा। आपकी विजय हो।

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च]

इसकी प्राप्ति स्वीकार करने की आवश्यकता नही।

नरसिंहराव भोलानाथ
मैरीन विला
१४ वाँ रास्ता, खार [बम्बई]

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

१६४. पत्र : प्रभावतीको

१० जुलाई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तेरे लिखने का अभिप्राय समझ गया। शरीर सँभालकर तू वहाँ चाहे जितने दिनोतक रह, मुझे कोई एतराज नही। तू वहाँ रहकर बहुत काम कर सकती है। ['गीता' के] दूसरे अध्यायके श्लोकोका मनन करना और तदनुसार रहने का प्रयत्न करना। तेरे सामने जो कर्त्तव्य हो, उसमे मन लगाना और प्रसन्नचित्त

रहना। खुराकमे दूध, दही, शाक, फल और रोटीसे काम चलाना। दाल छूना भी मत।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६७) से।

१६५ पत्र : नारणदास गाधीको

१० जुलाई, १९३६

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे आकडोका उपयोग तो मै करूँगा ही। तुमने जो परिवतन लिख भेजे थे, उन्हे टाँककर रख लिया है। यह उचित ही है कि खादी की बात तुम्हारे मनमे घूमती रहती है। ऐसा होना ही चाहिए। स्वदेशीका एकादश व्रतोमे स्थान है। प्रारम्भसे ही खादीको स्वदेशीका मध्यबिन्दु माना जाता रहा है। फिर भी खादीके बारेमे विचार करते रहनेवाले हमारे पास थोडे ही है। और इसी लिए खादी-प्रवृत्तिको जितना बढना चाहिए, वह उतनी नही बढ पाती।

राष्ट्रीय शिक्षाके मामलोमे भी अन्धेर चल ही रहा है। नामलेवा बहुत है, समझनेवाले कम है। उनमे भी अमल करनेवाले विरले ही है। किन्तु इसमे शका नही कि सच्ची राष्ट्रीय शिक्षा तो जो मैने बताई, वही है। अर्थात् जिस प्रकार खादी फैले या न फैले, हम उसमे मिलावट नही करते, उसी प्रकार राष्ट्रीय शिक्षणमें भी मिलावट नही की जानी चाहिए। इस तरह यदि एक भी विद्यार्थी प्रेमसे विशुद्ध राष्ट्रीय शिक्षण प्राप्त करे तो मै कहूँगा कि राष्ट्रीय शिक्षण चल रहा है, और उसका भविष्य उज्ज्वल ही है।

राष्ट्रीय शिक्षणके नामसे चलते रहकर भी यदि वह शुद्ध राष्ट्रीय न हो और तमाम बच्चे तदनुसार शिक्षण ले रहे हो तो भी मै यह नही मानूँगा कि राष्ट्रीय शिक्षण चल रहा है। यह मेरी मान्यता है, फिर भी तुम जितना कर सको उतना ही करना। जब मिलावट स्वय तुम्हारी बर्दाश्तसे बिलकुल बाहर हो जायेगी और जब तुम स्वय मौलिक परिवतन करोगे, तब निश्चय ही तुम्हे मेरा पूरा सहयोग मिलेगा, इससे ज्यादा मेरे लिखने का अथ मत निकालना। तुमने एक बार मुझे कनुके कपडोके बारेमे लिखा था। मुझे याद नही है, उसका मैने जवाब दिया या नही। न दिया हो तो इतना ही कहना है कि उस विषयमें कोई चिन्ता मत करना।

कमसे-कम कपडे पहनने की आदत डाल ली जाये तो वह शरीरके लिए स्वास्थ्यवर्धक है। इसलिए मै कनुकी शरीर-रक्षा के लिए जितना कपडा जरूरी है, उतने की ही चिन्ता रखता हूँ। इन दिनो तो उसका शिक्षण भी धुआँधार चलता लग रहा है। किन्तु

इसका श्रेय महादेव नही ले सकता। नवीन नही है, कान्ति नही है। अकेले कनुसे इन दोनोका काम लेना ही पडता है। इसलिए कनुको सहज ही पूरी तालीम मिल जाती है। यह तो हुई मेरे मनपर पडी हुई छाप। छाप तो वही सही कहलायेगी जो कनुके मनपर पड रही होगी। वह इन दिनो बहुत कम दिखाई देता है, इसीलिए मै उससे पूछ नही पाया हूँ। वेह काममे जुटा रहता है और इसलिए अब उसे महादेवके सन्देश ले-लेकर दौडने का मौका नही मिलता।

लगता है, मजु[1] ठीक प्रगति कर रही है। क्या कुसुमकी[2] तबीयत ठीक रहती है? यात्रासे उसने कुछ पाया है या खोया है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९८ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१६६. पत्र . कनु गाधीको

१० जुलाई, १९३६

चि० कनु,

मेरे पास दो मोढिये थे। एक यहाँ आ गया है, दूसरा वही रह गया है। मिले तो भेज देना। तकलीकी पेटी नही आई है, उसकी जरूरत है।

नारणदासकी चिट्ठीमे कुछ तेरे विषयमें भी है। यदि वह बात ठीक हो तो उसे लिखना। मुझे भी लिखना कि वह ठीक है या नही। साथमे तार[3] [का मसौदा] है। इसे तुरन्त भिजवा देना। डाककी चिट्ठियाँ तो है ही। आज तो सारा काम तेरे ही ऊपर है। यदि हमेशाके लिए ऐसा दिन आ जाये तो बोझ उठायेगा न और वह भी खूबीके साथ?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मै दस्तखत करके ४० रुपये का एक चेक भेज रहा हूँ। यदि वहाँ डाट-समेत या बिना डाट की एक-दो ऐसी छोटी शीशियाँ हो जिनमे एक-दो औस द्रव्य आ जाये, तो भेजना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१ और २ व्रजलाल गांधीकी पुत्रियाँ।
३ तार कदाचित लेडी फजलेहुसैनके नाम था।

१६७ पत्र . हरिभाऊ उपाध्यायको

१० जुलाई, १९३६

दुबारा नहीं पढ़ा

भाईश्री हरिभाऊ,

मैंने ल०[1] और सो०[2] से विस्तारसे बातचीत की थी। ल० में कुछ भी नही है। मुझपर उसकी अच्छी छाप नही पडी। सो० की ठीक छाप पडी है। उसने यह स्वीकार किया कि दोनो एक-दूसरेके प्रति अत्यधिक आसक्त रहे हैं और हैं। फिलहाल भी यही स्थिति है। सो० का कहना है कि निर्दोष सेवासे आसक्ति उत्पन्न हुई थी। इस सम्बन्धमें प्रश्न करने पर ल० ने मौन साध लिया। वह डाक्टरसे जाँच कराने को तैयार हो गई थी, किन्तु मुझे पूरा सन्देह है कि यदि उसे सचमुच डाक्टरके सामने ले जाकर खडा कर दिया जाये तो वह खडी न रह सकेगी। सो० कहता है कि वे दोनो अन्तिम स्थितितक नही पहुँचे हैं क्योकि ऐसा करने मे तुम्हारी और मेरी लज्जा उन दोनोके आडे आती थी। मैं ब्यावरमे ल० के पितासे मिला था और उनकी बातचीतसे मैंने अनुमान लगाया कि उन्हे इस मलिन सम्बन्धकी सही-सही जानकारी नही है। किन्तु इस बातका फैसला कर डालने की जरूरत मुझे नज़र नही आई। उसके पिता मुझे प्रभावित नही कर सके। तुम्हारे एक पत्रसे तो मुझे यह जान पडता है कि तुमने इस बातको सिद्ध हुआ मान लिया है कि यह व्यक्ति ल० का पिता नही है। दूसरे पत्रसे यह नजर आता है कि तुमने अपना मन्तव्य बदल दिया है। ल० तो कहती है कि यही उसके पिता हैं। पूरे मामलेकी जाँच पडतालके बाद मैंने निम्नलिखित निर्णय दिया है

(१) ल० को म०[3] के पास जाकर पत्नीके रूपमे रहना चाहिए।

(२) यदि वह ऐसा न करना चाहे और यदि विकारहीन भावसे रह सके तो उसे ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए।

(३) यदि वह विकारका दमन न कर सके तो उसे किसी अन्य नवयुवकसे विवाह कर लेना चाहिए।

जबतक विवाह न हो जाये तबतक उसे सो० के साथ अपना सम्बन्ध पवित्र रखना चाहिए था। दोनो ही पवित्र होने का दावा करते है, अत मैं इन दोनोके आपसी सम्बन्धको धर्मसम्मत नही मानता। इसके बावजूद यदि वे एक-दूसरेके साथ भोग भोगे बिना न रह सकते हो तो दोनोको खुले तौरपर सम्बन्ध रखना चाहिए। किन्तु इस चौथी स्थितिमे उन्हे मेरा आशीर्वाद नही मिल सकता। वे आश्रममे

१, २ और ३ नाम छोड दिये गये है।

नहीं रह सकते और जिन सस्थाओसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है उनमे भी नही रह सकते। मुझे भय है कि ल० सो० के बिना नही रह सकती। मेरा मन्तव्य है कि उसे हिस्टीरियाकी बीमारी होनेका कारण उसकी विषयवासना है, और सो० का स्पर्श विकारी होने के कारण उस हिस्टीरियाको बढानेवाला है।

अब तुम्हे जो योग्य लगे सो करना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे हरिभाऊ उपाध्याय पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१६८ डॉ० अम्बेडकरका दोषारोपण – १

पाठकोको याद होगा कि गत मई मासमे लाहौरमे जात-पाँत तोडक मण्डलका वार्षिक अधिवेशन होनेवाला था और डॉ० अम्बेडकर उसका सभापतित्व करनेवाले थे। लेकिन डॉ० अम्बेडकरने उसके लिए जो भाषण तैयार किया वह स्वागत-समितिको अस्वीकार्य प्रतीत हुआ, जिसके कारण वह अधिवेशन ही नही किया गया। यह बात विचारणीय है कि स्वागत-समिति अपने चुने हुए सभापतिको इसलिए अस्वीकार कर दे कि उनका भाषण उसे आपत्तिजनक मालूम पडा। जाति-प्रथा और हिन्दू शास्त्रोंके विषयमे डॉ० अम्बेडकरके जो विचार है उन्हे तो समिति जानती ही थी। यह भी उसे मालूम था कि वे हिन्दू-धर्म छोडने का बिलकुल स्पष्ट निणय कर चुके है। डॉ० अम्बेडकरने जैसा भाषण तैयार किया था उससे कमकी उनसे उम्मीद ही नही की जा सकती थी। लेकिन लगता है कि समितिने एक ऐसे व्यक्तिके मौलिक विचार सुनने से जनताको वचित कर दिया, जिसने समाजमे अपना एक अद्वितीय स्थान बना लिया है। भविष्यमे चाहे वे कोई भी बाना धारण करे, मगर वे ऐसे आदमी नही है जिन्हे यह गवारा हो कि लोग उन्हे भूल जाये।

डॉ० अम्बेडकर स्वागत-समितिसे यो हार जानेवाले नही थे। उसके इनकार के जवाबमे, उन्होने उस भाषणको अपने ही खर्चेसे प्रकाशित किया है। उन्होने उसकी कीमत आठ आने रखी है। लेकिन मै उनसे कहूँगा कि वे उसे घटाकर दो आने या कमसे-कम चार आने कर दे तो ठीक होगा।

यह भाषण ऐसा है कि कोई सुधारक इसकी उपेक्षा नही कर सकता। रूढि-ग्रस्त लोग भी इसे पढकर लाभ ही उठायेंगे। लेकिन इससे यह नही समझना चाहिए कि भाषणमे एतराज करने लायक कोई बात नही है। इसे तो पढना ही इसलिए चाहिए, कि इसमे गहरे एतराजकी गुजाइश है। डॉ० अम्बेडकर तो हिन्दू-धमके लिए एक चुनौती है। उनका पालन-पोषण एक हिन्दूकी तरह हुआ और एक हिन्दू-नरेश द्वारा शिक्षित किये जाने पर भी, सवर्ण कहे जानवाले हिन्दुओ द्वारा अपने

और अपनी जातिवालो के साथ होनेवाले व्यवहारसे वे इतने निराश हो गये है कि न केवल सवण हिन्दुओको, बल्कि उस धर्मको भी छोडने का विचार कर रहे है जो उनकी तथा तमाम हिन्दुओकी सयुक्त विरासत है। उस धर्मको मानने का दावा करनेवाले एक वगके व्यवहारके कारण वह हिन्दू-धर्मसे ही निराश हो गये है।

लेकिन इसमे अचरजकी कोई बात नही है। क्योकि किसी प्रथा या सस्थाके बारेमे कोई राय उसके प्रतिनिधियोके व्यवहारसे ही तो बनाई जा सकती है। इसके अलावा डॉ० अम्बेडकरने पाया कि सवर्ण हिन्दुओके विशाल बहुमतने अपने उन सहधर्मियोके साथ, जिन्हे कि उन्होने अस्पृश्य शुमार किया है, न केवल निर्दयता या अमानुषिकताका व्यवहार किया है, बल्कि अपने व्यवहारका आधार भी अपने शास्त्रोके आदेशको बनाया है। और जब डॉ० अम्बेडकरने शास्त्रोको देखना शुरू किया तो उन्हे मालूम हुआ कि सचमुच उनमे अस्पृश्यता और उसके लगाये जानेवाले तमाम अर्थोंकी काफी गुजाइश है। डॉ० अम्बेडकरने ये तीन आरोप लगाये है हरिजनोके साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया जाता है, निर्दयतापूर्ण व्यवहार करनेवाले अपने इस व्यवहारको निलज्जतापूर्वक उचित ठहराते है, और हिन्दुओके शास्त्रोमे इस प्रकारके निदय व्यवहारका समर्थन किया गया है। और अपने इन आरोपोके समर्थनमे उन्होने शास्त्रोके अध्याय और श्लोक उद्धृत किये है।

ऐसा कोई भी हिन्दू, जो अपने धर्मको अपने प्राणोसे अधिक प्यारा समझता है, इस दोषारोपणकी गम्भीरताकी उपेक्षा नही कर सकता। हिन्दू-धम के प्रति ऐसा जुगुप्सा-भाव औरोके मनमे भी है। लेकिन उनमे सबसे समथ और इस भाव को सबसे कठोर शब्दो मे प्रकट करनेवाले व्यक्ति डॉ० अम्बेडकर ही है। और निस्सन्देह इन लोगो के बीच ऐसे व्यक्ति भी वही है जिन्हे कुछ समझा पाना कठिन है। ईश्वरकी कृपासे बडे नेताओ मे ऐसे विचार रखनेवाले वही अकेले व्यक्ति है और अब भी वे मुट्ठी-भर लोगोके ही प्रतिनिधि है। मगर जो-कुछ वह कहते है, कम या ज्यादा जोशके साथ वे ही बाते दलित जातियोके और नेता भी कहते है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि दूसरे नेता जैसे — रावबहादुर एम० सी० राजा और दीवान बहादुर श्रीनिवासन — हिन्दू-वर्म छोडने की धमकी तो नही ही देते, साथ ही उसमे इतनी ऊष्मा भी देखते है जिसके सहारे उस लज्जास्पद उत्पीडनका परिशोध सम्भव है जो आज हरिजनोके एक बहुत बडे हिस्से को सहना पडा है।

पर उनके अनेक नेता हिन्दू-धमको नही छोडते, इसी बातसे हम डॉ० अम्बेडकरके कथनकी उपेक्षा नही कर सकते। सवर्णोको अपने विश्वास और आचरणमे सुधार करना ही पडेगा। सबसे जरूरी तो यह है कि सवर्णोमे जिन लोगोका अपने ज्ञान और प्रतिष्ठाके कारण सवर्णोपर कुछ प्रभाव है उन्हे शास्त्रोकी प्रामाणिक व्याख्या करनी होगी।

डॉ० अम्बेडकरके दोषारोपणसे जो प्रश्न उठते है, वे ये है

(१) शास्त्र क्या है?

(२) आज जो-कुछ छपा हुआ मिलता है वह सभी क्या शास्त्रोका अभिन्न भाग है, या उनके किसी भागको अप्रामाणिक क्षेपक मानकर छोड देना चाहिए?

(३) इस तरह काट-छाँटकर जिस अशको हम स्वीकार करे वह अस्पृश्यता, जाति-प्रथा, दर्जेकी समानता, सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहोके सम्बन्धमे क्या कहता है?

(इन सब प्रश्नोकी अपने अभिभाषणमे डॉ० अम्बेडकरने कुशलतापूर्वक छानबीन की है।)

इन प्रश्नोका मेरा अपना उत्तर क्या है, यह तथा डॉ० अम्बेडकरके अभिभाषणमें जो (कमसे-कम कुछ) स्पष्ट त्रुटियाँ है, उनके विषयमें मैं अपना वक्तव्य अगले अकमे दूगा।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-७-१९३६

१६९. पत्र : ए० डोनाल्ड मिलरको

वर्धा
११ जुलाई, १९३६

प्रिय श्री मिलर,

महादेव देसाईको लिखा आपका ३ जुलाईका पत्र मिला। भारतमे कुष्ठ-रोगके भयकर प्रकोपके सम्बन्धमे आप जो पत्र[2] लिखते रहे है उनके लिए धन्यवाद। ग्राम-सेवकोके निजी अनुभवके आधार पर मैं जानता हूँ कि ऐसे रोगियोकी सख्या बढती ही जा रही है। जैसाकि आप जानते है, मीराबहनने लगभग पिछले अठारह महीनेसे ग्राम-जीवनको अपना रखा है।[3] आज सुबह ही वह बता रही थी कि कितने सारे कुष्ठ-रोगी अपने रोगके इलाजकी आशासे उससे मिलने आते है। मै जानता हूँ कि आपके पत्रोसे उसे बहुत मदद मिलेगी। और अब चूँकि मैंने ग्राम-जीवन बिताना आरम्भ कर दिया है, इसलिए आपके पत्रोमे दी गई हिदायतोका इस्तेमाल भी कर रहा हूँ।

कहने की जरूरत नही कि आपका पाँचवाँ पत्र प्रकाशित किया जायेगा। 'हरिजन' के पाठकोको यह तो मालूम हो ही जाना चाहिए कि मिशनरियोके प्रयत्नोसे कुष्ठ-रोगियोका कष्ट किस हदतक दूर हुआ है। भारतमे और अन्यत्र विभिन्न मिशनोने चिकित्साके क्षेत्रमें जो काम किया है उसके महत्त्वको न स्वीकारना मेरे या किसीके लिए भी अशिष्टता ही होगी। मेरी शिकायत तो यह है कि यह काम इसके पीछे कोई और मशा रखकर किया जाता है। मिशनरियो और उनसे प्राप्त हो सकनेवाली चिकित्सा-विषयक तथा अन्य सुविधाओका लाभ उठाने के इच्छुक हजारो लोगोके

१ देखिए "डॉ० अम्बेडकरका दोषारोपण–२", १८-७-१९३६।
२ देखिए "कुष्ठ-समस्या", ६ ६ १९३६।
३ वर्धाके पास वरोडा नामक गाँवमें।

बीच यह मशा किस तरह दीवारका काम करता है, यह मै आपको पूरी तरह नही बता सकता। इसके उत्तरमे शायद आप यह कहेगे कि इस भेदकी दीवारके बारेमे जानकर भी मिशनरी उस उद्देश्यसे विमुख नही होते जिसे वे ईश्वर द्वारा निर्धारित मानते है। सभी धर्मोमे निहित तात्त्विक सत्यमे विश्वास रखनेवाले मुझ-जैसे लोग, इसके विपरीत, यह मानते है कि धर्म-प्रचारके प्रयत्नके कारण बहुत-से भारतीय ईसा मसीहकी उन विशुद्ध शिक्षाओका लाभ नही उठा पाते जो उनके जीवनको ऊपर उठा सकती है, भले ही वे यह न माने कि ईसा ही एकमात्र ईश्वर-पुत्र है।

आशा है, मेरे पत्रके इस अनुच्छेदसे आप ऐसा न मानेगे कि आपके लेखोके लिए आपके प्रति मेरी कृतज्ञता कुछ कम हो जाती है। मुझे लगा कि यह पत्र तभी पूरा हुआ माना जायेगा जब मै आपको यह बता दूँ कि धर्म-प्रचारके सम्बन्धमे मेरे जो विचार है उनके कारण यह नही हो सकता कि मिशन धर्म-प्रचारके प्रयत्नोके बावजूद जो अनेक लाभ पहुँचा रहा है उन्हे मै मान्यता न दूँ। कहने की जरूरत नही कि अपने विचारोकी यहा मैने जो सक्षिप्त चर्चा की है, वह इस विषय पर किसी प्रकारके विवादको आमत्रित करने के लिए नही। खुद इस पत्रमे ऐसी कोई चीज नही है जिसके कारण आपके लिए इसका जवाब देना जरूरी हो। यह तो सिर्फ कृतज्ञता-ज्ञापनका पत्र है। आगे मुझसे कुष्ठ-रोगके सम्बन्धमे प्रश्नोकी अपेक्षा रख सकते है। शायद मुझे प्रतिदिन कुष्ठ-रोगियोके सम्पर्कमे तो आना ही होगा और तब ऐसे प्रश्न भी मेरे सामने आयेगे ही।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१७०. पत्र : साहबजी महाराजको

११ जुलाई, १९३६

प्रिय साहबजी महाराज,[१]

मुझे मालूम है कि आपने कराची हरिजन चर्मालयके लिए जूते बनाने की शिक्षा देने के लिए एक कुशल शिक्षक भेजा है और दिल्लीकी हरिजन-बस्तीके लिए भी। हमारा यहाँ वर्धामे भी एक चर्मालय है, जहाँ कुछ नवयुवक मुख्यत हरिजनोके प्रति अपने प्रेमकी खातिर काम कर रहे है। परन्तु यहाँ जूते और चमडेके अन्य सामान बनाना सिखाने के लिए एक कुशल शिक्षककी आवश्यकता महसूस होती है। गाँवमें यदि चमडा कमाने के साथ ही हरिजनो और अन्य लोगोको जूते बनाना

१ राधास्वामी सम्प्रदाय, दयालबाग, आगराके अध्यक्ष।

भी सिखा सके तो उनकी कमाईकी क्षमता बढ जायेगी और यदि हम अपने यहाँ चमडा कमाने के साथ ही चमडेकी चीजे बनाने का काम भी शुरू कर सके तो हम और कायकर्त्ता भी रख सकेंगे। यदि आपके पास ऐसा कोई शिक्षक हो जिसे आप भेज सकते हैं तो क्या हमारे पास छह मासके लिए भेजिएगा? हम चाहते हैं वह शिक्षक विद्यार्थियोमे से एक होनहार नवयुवकको प्रशिक्षण दे ताकि बादमे वह औरोका शिक्षक बन सके। यदि आपके पास ऐसा कोई व्यक्ति है तो कृपया बताइए कि वह कब आ सकता है और कितने वेतनकी अपेक्षा रखेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६३) से।

१७१ पत्र उमादेवी बजाजको

११ जुलाई, १९३६

चि० ओम,

मुझे यहाँ छोटा-सा पुस्तकालय बनाना है। उसमे मराठी पुस्तके चाहिए। तेरे पास या मदालसा या और किसीके पास छोटी-छोटी मराठी पुस्तके हो, जिनकी अभी वहाँ जरूरत न हो, तो मुझे यहाँ भेज देना। सीखने की और पढने की। यहाँका काम नही चला तो वे पुस्तके जिनकी होगी उनको वापस मिल जायेगी। काम चल निकला तो अमुक समयके बाद वे वापस कर दी जायेगी। इसकी कमसे-कम मीयाद छह महीनेकी है। जो पुस्तके सदाके लिए दी जा सकती है, वे दे देनी है। ऐसी पुस्तको की सूची मुझे भेज देना। दस रुपयेसे ज्यादाका पुस्तकालय मुझे नही बनाना है। इससे तुझे अन्दाज हो जायेगा कि मुझे किस तरहकी पुस्तकोकी जरूरत है। मराठी अख-बार भी किसीके पास हो तो वे भी। वहाँ उपयोग हो चुकने के बाद चाहिए। इसमें बडे दानकी बात नही है। इसके लिए बडोको परेशान करने की भी बात नही है। परन्तु तुझ-जैसे लोग गाँववालोकी ओर जरा निगाह रखें तो ऐसे-ऐसे काम सहज ही कर सकते है। इतना तो दिल लगाकर करना। इसमें रस न आये तो बेधडक होकर इनकार लिख भेजना, ताकि दूसरे ठिकाने निवेदन करूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४३

१७२ पत्र - विजया एन० पटेलको

११ जुलाई, १९३६

चि० विजया,

तू अपनी इच्छासे जब मनमे आता है तब पत्र लिखती है। फिर मुझे लौटती डाकसे जवाब क्यो देना पडेगा? अपनी ढीलके लिए तू तो माफी तक नही मागती। यह सब कहाँसे सीखा है? मै सेगाँवमे रहने तो लगा हूँ, किन्तु अभी तुझे पास रखने लायक सुविधा नही हो सकी है। यदि तू महिलाश्रममे जाना चाहे तो वहाँ जा सकती है। बा अभी नही आई। मगनवाडीमे ही है।

हमारे भीतर दिव्य सगीत सतत चलता ही रहता है। यह इद्रियातीत तो है ही, फिर भी श्रद्धासे इस बातपर विश्वास किया जा सकता है। इसके सिवा जिस तरह हमारे इद्रियाँ है, इसी प्रकार आत्मा भी तो है न? इसलिए इद्रियोसे अतीत यह आत्मा उसका अनुभव भी करती है। आत्मा है, इसका मुझे प्रतिक्षण अनुभव होता रहता है, इसलिए कभी-कभी दिव्य सगीतकी गूज भी सुनाई पड जाती है। तू सुनना चाहे तो तू भी प्रयत्न करनेपर सुन सकती है। यह ऐसा सगीत नही है कि कोई और सुनवा सके। हम एक-दूसरेको वही बता सकते है जो इद्रियगम्य है। आत्माकी बातको आत्मा ही जाने।

मेरे पास ही रहने की इच्छा हो तो प्रतीक्षा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६०)से। सी० डब्ल्यू० ४५५२ से भी, सौजन्य 'विजयाबहन एम० पचोली

१७३. पत्र द० बा० कालेलकरको

११ जुलाई, १९३६

चि० काका,

रामेश्वरदासका पत्र पढा। तुमने उसपर अपनी कोई टिप्पणी नही भेजी। इसीलिए मै यह नही समझ पाया कि तुम्हारी क्या इच्छा है। मै जितना जानता हूँ वही कहे देता हूँ।

पारनेरकर धूलियाकी गोशालाकी जिम्मेदारी नही छोडेगा। उसकी देखरेख करेगा। वह रामेश्वरदासका कोई और काम करने के लिए तो वहाँ नही गया है। उनकी

घर-गृहस्थीकी झझटमे तो वह पड ही नही सकता। फिर भी उसने थोडा बहुत हस्त-क्षेप तो किया ही है। साथ रहता है, इसलिए ऐसा हो जाता है। पति-पत्नी दोनो कुछ मूर्ख-से है। दोनोकी आपसमें नही बनती। मगर रामेश्वरदासका गगाबहनके बिना एक क्षण भी काम नही चल पाता और झगडा भी जरूर होता है, ऐसेमे कोई क्या करे? शिवाजी वहाँ रहते है। उनका उपयोग भी दोनोमे से कोई नही कर पाता। गगाबहन सद[उप]योग तो कर ही नही पाती। अगर उससे बने तो दुरुपयोग वह अवश्य करे। ऐसी भयकर स्थिति है। यदि तुम इस बातको अलग ढगसे देख सके हो तो मेरे पत्रको रदकर देना। जैसा मै मानता हूँ यदि तुम्हारी भी वही मान्यता हो तो सोच-विचार कर जो सलाह देने योग्य लगे, सो देना। शायद यह ज्यादा अच्छा हो कि तुम विनोबासे मिलो और दोनो एकमत होकर मुझे सलाह दो। यह तो पत्र पढकर मेरी जो प्रतिक्रिया हुई, वही है। तुम अपनी इच्छानुसार काम करना।

पत्र वापस कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७००)से।

१७४ पत्र : अमृतकौरको

सेगाव, वर्धा
१२ जुलाई, १९३६

मूर्खारानी,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे पत्र लिखने के लिए श्रम मत करो। तुम्हे घुलते नही जाना चाहिए। अपनी शक्तिको बर्बाद मत करो। मुझे पत्र लिखना तुम्हारे लिए सुखकर और मनोरजन-जैसा होना चाहिए, अन्यथा बिलकुल मत लिखो। केवल पत्रोंके कारण ही तो हम निकटतर नही आ सकते। पत्रोका अभाव हमे अलग नही कर सकता और न मनमे एक-दूसरेके प्रति उदासीनता पैदा कर सकता है। तुम्हे भला हमेशा रोगी क्यो बने रहना चाहिए?

तुम्हारी बुद्धिने, चाहे वह मूर्ख-बुद्धि ही क्यो न हो, तुम्हे ठीक रास्ता दिखाया, क्योकि तुम्हारा शिमलाका खादी-प्रयोग आशातीत सफलता पाता दिखता है। मेरे खयालमे इसे सयोग-मात्र ही कहना पडेगा। भला कही मूर्ख भी अच्छी चीजे कर सकते है?

यहाँकी कुटी चित्र-जैसी सुन्दर है। इस समय मेरे पास एक युवक साधु[1] है। वह बडा बढिया भजनीक है और अपने बनाये हुए भजन गाता है। मेरे पास एक मास रहेगा। एक कोनेमे मेरा वास है, दूसरेमे उसका, और तीसरेमे मेरे एक सहकर्मी मुन्नालालका है। पहले कोनेमे लकडीका एक तख्त है, जिसे तुमने देखा है।

१ तुकडोजी महाराज, देखिए अगला शीर्षक।

उस कोनेमें यदि बा आई तो वह रहेगी और तुम भी। इसलिए तुम सच्चे देहाती जीवनके लिए अपनेको तैयार रखो। स्नानागारके अलावा और कही एकान्त नही मिलेगा, और तुम्हे मेरे स्नानागारका ही प्रयोग करना होगा। यहाँ तुम्हे जो-कुछ झेलना होगा उसके बारेमे सोचकर तुम्हे आना चाहिए। परन्तु तुम्हे यह नवीनता अच्छी लगेगी। इस कमरेमे यो तो कई लोग है, फिर भी कोई शोर नही है। चारो ओर खुला विस्तार है और सुन्दरता है। दिन-भर ताजी हवा बहती रहती है। काफी ठण्डक है और सभी ओर घूमने के लिए खूब रास्ते है। जब तुम यहाँ दो रात बिताने आओगी तब बताना कि तुम्हे क्या परिवर्तन चाहिए।

जितनी भीड-भाड तुम्हे वहाँ प्रतीत होती है उतनी सम्भवत यहाँ नही होगी। हम सब यहाँ छतके व्यवधानके बिना खुले आकाश-तले सोते है। फिर भी तुम अपनी मसहरी लेती आना और तुमने अपना जो थर्मस मुझे भेट कर दिया है उसके लिए डाट भी। मै पुरानीसे ही काम चलाता हूँ परन्तु वह लगभग घिसपिट गई है।

अगाथाका[1] सीलोनमे होनेवाले उस सम्मेलनमे शामिल होने का पक्का इरादा है, जिसका तुमने अपने लिए निषेध कर लिया है।

मगनवाडीमे बने कागजका यह नवीनतम नमूना है, और वहीके बने लिफाफेमें यह पत्र तुमको मिलेगा।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८२) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९१ से भी

१७५. पत्र : गगाबहन वैद्यको

१२ जुलाई, १९३६

चि० गगाबहन,

रसोईघरका काम और कपडा धोनेका काम कोई मामूली सेवा नही है। आजकल कहा जाता है कि सेवा वही कर सकता है जो पढा-लिखा हो, इसलिए रसोई वगैरहके कामकी कीमत बहुत कम हो गई है। किन्तु क्या तुम यह नही जानती कि साबरमतीमें रसोईघरकी जिम्मेदारी परिपक्व आश्रमवासियोके हाथमें ही दी जाती थी? जब कोचरबमे आश्रम बना तब पहले-पहल यह उत्तरदायित्व मैने ही सँभाला था। उसके बाद विनोबा, काका इत्यादि पर जिम्मेदारी आती चली गई और व्रजलाल[2]-जैसा सेवक तो कपडे धोते-धोते ही गया। जब वह आया था तब

१ अगाथा हैरिसन।

२ व्रजलाल गांधी किसीका लोटा निकालने के लिए कुँएमें उतरे थे, किन्तु ऊपर चढते हुए फिसल जाने के कारण कुँए में गिर पड़े और डूब गये। देखिए खण्ड, १७, पृ० ५५८।

उसने सबके कपडे धोनेका काम स्वेच्छया माँगकर लिया था। यो उसे बही-खातेका अच्छा ज्ञान था और अक्षर मोतीके दानोकी तरह लिखता था। गाढे वक्तमे भण्डारकी सारी जिम्मेदारी उसे ही सौपनी पडी थी। ऐसे सेवकोके बिना स्वराज्य नही मिल सकता।

किन्तु इस पत्रका यह अर्थ नही है कि समय मिलने पर तुम्हे पुस्तक-ज्ञानमे वृद्धि नही करनी है अथवा तुम्हे दूसरे लोगोको पढने-लिखने के लिए प्रोत्साहित नही करना चाहिए। यह लिखने का उद्देश्य इतना ही है कि सहज प्राप्त धम को छोडकर जो लिखने-पढने की ओर दौडता हे, वह भूल करता है।

बोचासण जाते हुए वर्धा जरूर आना। गोमती तुम्हे खीचकर ले जाने का प्रयत्न करेगी। फिर मगनवाडी है, महिलाश्रम है और जानकीबहन तो है ही। इसके सिवा तुम चाहो तो मुझसे मिलने सेगॉव आ सकती हो और मेरे पास ठहर सकती हो। वैसे अभीतक यहाँ हम सब एक ही कमरेमें है। इन्ही दिनो तुकडोजी महाराज आ गये है और उन्हे भी एक कोना सौप दिया गया है। कमरा बडा है। २९ फुट लम्बी और १४ फुट चौडी कोठरी है। उसके चारो तरफ ७ फुट चौडा बरामदा है और बरामदेके एक कोनेमे छोटा-सा रसोई-घर है, दूसरे कोनेमे मेरा स्नान-घर। दीवारे गारेकी है। निर्माणकार्यमे ग्रामीण सामग्री और कारीगरीका ही प्रयोग किया गया है। अभी तो यहाँ चारो ओर हरेभरे खेत लहलहाते दिखाई पडने है।

मीराबहन यहाँसे डेढ मील दूर अपनी छोटी-सी झोपडीमे अकेली रहती है।

यह बिलकुल जरूरी है कि बच्चूभाई खाने या घमने-फिरने-सम्बन्धी मर्यादाओमे से किसीका भी बिलकुल उल्लघन न करे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० गगाबहेनने, पृ० ९१-२। सी० डब्ल्यू० ८८३२ से भी, सौजन्य गगाबहन वैद्य

१७६. पत्र : प्रभावतीको

१३ जुलाई,[1] १९३६

चि० प्रभा,

कल शाम तेरा तार मिला। बहुत खुशी हुई। तेरा बीमार पडना मेरे लिए असह्य हो जाता है। उसमे तेरी और मेरी लाज जाती है। मेरे पाससे नीरोग रहनेकी

१ साधन-सूत्रमें तिथिको १३ या २३ पढ़ा जा सकता है और महीनेको ६ या ७। लेकिन तुकडोजी के आश्रममें ठहरने के उल्लेखसे स्पष्ट है कि महीना जून नहीं हो सकता। इसी तरह तिथिके भी १३ होनेकी सम्भावना अधिक है, क्योंकि इस तिथिके आसपास गाधीजी तुकडोजी के वहाँ आकर ठहरने की खबर लोगोंको दे रहे थे। देखिए "पत्र अमृतकौरको", १२-७-१९३६ भी।

चाबी पा जाने के बाद तू बीमार क्यो पडती है? वही खाना चाहिए जो खाने योग्य हो, और स्वच्छ हवाका सेवन करना चाहिए, कसरत करनी चाहिए। जरूरी लगे तो कटि-स्नान करना चाहिए। चिन्ता किसी हालतमे नही करनी चाहिए। ऐसा किया जा सकता है। शक्तिसे बाहर काम नही करना चाहिए।

बा कल शाम मनुके साथ यहाँ आ गई। एक साधु भी मेरे साथ एक महीना रहने के विचारसे आये हुए है। सब एक ही कोठरीमे है। साधुका नाम तुकडोजी महाराज है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कान्ति त्रिवेन्द्रममे है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७३) से।

१७७. पत्र : श्रीमन्नारायण अग्रवालको

सेगाँव
१३ जुलाई, १९३६

भाई श्रीमन्,

तुमारा खत ही आज अभी पढ सका। सब डाक आती है ऐसे नही पढ पाता।

'रोटीका राग' भेजता हूँ। अच्छा, काकासाहब के लिखने के बाद मुझे पुस्तिका वापिस करो। बात यह है मै समजा था मै तुमको मेरा अभिप्राय लिखु तुमारे सतोषके कारण। पुस्तिका मे छापने के हेतु से क्या लिखु वह सुझता ही नही। फिर भी देखो क्या सभव है। दिल चाहे तब आ जाओ। मेरा समय कहा लेना है? महादेव मागे वह 'हरिजन' [का] काम दो।

बापुके आशीर्वाद

पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९९

१७८. पत्र . जवाहरलाल नेहरूको

दुबारा नही पढ़ा

सेगाँव
१५ जुलाई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

(१) आशा है, तुमको 'टाइम्स ऑफ इडिया' वाले पत्रके बारेमे मेरा तार मिला होगा। मैने कल प्राप्त करके उसे पूरा पढा। इसके विषयमे मुझे कभी किसीने नही लिखा। पत्रको पढकर मेरी राय पक्की हुई है कि तुम्हे इसपर मान-हानिकी कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए।

(२) यदि तुम मुझे गलत न समझो तो मै चाहूँगा कि तुम मुझे नागरिक स्वातन्त्रय सघसे मुक्त रखो। फिलहाल मै किसी राजनीतिक सस्थामे शामिल होना पसन्द नही करता और किसी पक्के सत्याग्रहीके उसमे शरीक होने का कोई अथ भी नही। परन्तु इस सघमे मेरे सम्मिलित होने-न होने के प्रश्नको अलग रखकर अच्छी तरह विचार करने के बाद मेरी यह राय पक्की हुई है कि सरोजिनीको या यो कहो कि किसी भी सत्याग्रहीको अध्यक्ष बनाना एक भूल होगी। मेरा अब भी यही मत है कि अध्यक्ष वैधानिक मामलोका कोई जाना-माना वकील होना चाहिए। यदि यह बात तुम्हे न जँचती हो तो तुम्हे किसी प्रसिद्ध लेखकको, जो सत्याग्रही न हो, रखना चाहिए। मै यह भी कहूँगा कि सदस्योकी सख्या सीमित रखो। तुम्हे सख्याके बजाय गुणोकी आवश्यकता है।

(३) तुम्हारा पत्र मर्मस्पर्शी है। तुम ऐसा अनुभव करते हो कि तुम सबसे अधिक पीडित पक्ष हो। लेकिन हकीकत यह है कि तुम्हारे साथियोमे तुम्हारे जैसी हिम्मत और साफगोई नही है। परिणाम विनाशकारी हुआ है। मैने सदा उन्हे समझाया है कि वे तुमसे साफ-साफ और निडर होकर बात कर ले। परन्तु साहस न होनेके कारण जब कभी वे बोले, अटपटे ढगसे बोले और तुम्हे झुँझलाहट हुई है। मै तुम्हे बताता हूँ कि तुम्हारी चिडचिडाहट और उनके प्रति तुम्हारी अधीरताके कारण वे तुमसे डरते रहे। वे तुम्हारी झिडकियो और तुम्हारे हाकिमाना ढगके व्यवहार पर कुढते रहे और सबसे अधिक इस बातसे कि उनके खयालसे तुम अपने-आपको अचूक और श्रेष्ठ ज्ञानवाला समझते हो। वे महसूस करते है कि तुम उनके साथ शिष्टतासे पेश नही आये और यदि समाजवादियोने उनका उपहास किया अथवा उन्हे गलत रूपमे पेश किया तो तुमने कभी उनका बचाव नही किया।

तुम्हे शिकायत है कि उन्होने तुम्हारी प्रवृत्तियोको हानिकारक बताया। इसका यह अर्थ नही था कि तुम हानिकारक हो। उनके पत्रमें तुम्हारे गुणो या तुम्हारी

सेवाओका बखान करने की कोई गुजाइश नही थी। वे पूरी तरह जानते है कि तुममे जीवट है और आम जनता और देशके युवको पर तुम्हारा जबरदस्त प्रभाव है। वे जानते है कि तुम्हे छोडा नही जा सकता और इसलिए वे झुक जाना चाहते थे।

मुझे यह सारा मामला दुखद लगता है, साथ ही हास्यास्पद भी। इसलिए मै चाहता हूँ कि तुम सारी बातको विनोद-वृत्तिसे देखो। मुझे इस बातपर कोई आपत्ति नही कि तुम सारा मामला अ० भा० का० कमेटीके सामने ले जाओ परन्तु मै नही चाहता कि उसपर तुम्हारे घरेलू झगडे निपटाने का या तुम्हारे और उनके बीच चुनाव करने का असह्य भार डाला जाये। तुम कुछ भी करो, उनके सामने सब चीजे आपसमे ही तय करके रखी जानी चाहिए।

तुम इस बातपर रोष क्यो करते हो कि तमाम समितियो आदिमे उनका बहुमत प्रकट हो? क्या यह अत्यन्त स्वाभाविक चीज नहीं है? तुम उनके सर्वसम्मत चुनावसे पदारूढ हुए हो, लेकिन अभीतक सत्ता तुम्हारे हाथमे नही आई है। तुम्हे पदारूढ करना तुम्हे शीघ्र सत्तारूढ करने का प्रयत्न था। और किसी तरह ऐसा न होता। जो हो, जब मैने कॉटोके ताजके लिए तुम्हारा नाम सुझाया था तब मेरे दिमागमे यही बात थी। सिरपर घाव हो जाये तो भी इसे पहने रहो। समितिकी बैठकोमे फिरसे अपनी विनोद-वृत्तिका परिचय दो। यही तुम्हारा सबसे सामान्य रूप है। चिन्ताग्रस्त, चिडचिडा और तनिक-सी बातपर उबल पडने को तैयार — यह तुम्हारा असली रूप नही है।

काश, तुम मुझे तारसे खबर दो कि मेरा पत्र पढ लेने के बाद तुम्हे उतनी ही प्रफुल्लता अनुभव हुई जितनी लाहौरमे नव-वषके दिन हुई थी जब, कहा जाता है, तुम तिरगे झडेके चारो ओर नाचे थे।

अपने गलेको तुम्हे आराम देना ही चाहिए।

मै अपना बयान फिरसे देख रहा हूँ। मैने निश्चय किया है कि जबतक तुम इसे देख न लो, मैं इसे प्रकाशित न करूँ।

मैने निर्णय किया है कि हमारे पत्र-व्यवहारको महादेवके सिवाय और कोई न देखे।

सप्रेम,

बापू

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१७९. पत्र : प्रभावतीको

१५ जुलाई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। फिरसे बीमार मत पडना। इस बीमारीका क्या कारण हुआ? तू कटि-स्नान करती है या नही? यह कदापि नही छूटना चाहिए।

कान्ति अभी त्रिवेन्द्रममें ही है। नीमू रामदासके पास बम्बई जा रही है। मनु सेगाँवमें आकर रहेगी। लीलावती तो यहाँ है ही। अर्थात् यहाँ भी जगह कम पड जायेगी।

लगता है, मै तो ठीक हूँ। खुराक वही है जो थी। फिलहाल मेरे साथ एक महीनेके लिए तुकडोजी महाराज रह रहे है।

जयप्रकाशके साथ जो बात हुई, वह मै लिख चुका हूँ[1]। पटना जाना कब होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७९) से।

१८० पत्र : अमतुस्सलामको

१५ जुलाई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,[2]

तेरा खत आज मिला। जवाब कनुके साथ भेजता हूँ, जिससे सुबहकी ट्रेनमें चला जाये।

दिल्लीमें ऑपरेशन[3] जरूर हो सकेगा। उसका प्रबन्ध करूँगा। डाक्टरोके नाम मालूम करके लिखूंगा।

तू किसीसे मेरी नाराजगीकी बात सुनकर उसे सच क्यो मान बैठती है? अपनी नाराजगी क्या मै नही बता सकता? तू कैसी बेटी है जो अपने बापके बारेमें दूसरेसे सुना हुआ माने?

अपनी जरूरतके पैसे मुझसे लेनेके लिए मैने तुझे कहा नही है क्या? आने के लिए तुझे पैसे मुझसे लेने है।

कान्तिकी एक चिट्ठी थी। वह मजेमें है। एक महीनेमें वापस आयेगा।

१ देखिए "पत्र प्रभावतीको", ८-७-१९३६।

२ इतना अश उर्दूमें है।

३ नाक की तकलीफ के कारण।

नाक वहा किसीको दिखा दे। देवदाससे पूछ।

तेरे खतकी सब बातोका जवाब इसमे आ गया। ज्यादा लिखने का समय नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४०) से।

१८१. पत्र . अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१६ जुलाई, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

तानाशाहोके भी कई प्रकार होते है। २२ तारीखको देखना कि कैसी तबीयत रहती है। यदि रातको मौसम अच्छा हो, सडक सूखी हो और तुम्हे थकान न लगती हो तो ब्यालूके बाद गाडीसे सेगाँव आ जाना। सेगाँवमे तुम्हारे सोने की व्यवस्था कर रखूंगा। यदि अच्छे सुयोग न हो तो मगनवाडीमे ही सो जाना और प्रात काल अपनी इच्छानुसार पैदल या गाडीसे सेगाँव आ जाना। तुम्हे किसी हालतमे थकानसे चूर नही होना है। आशा है, वापसीमे तुम कुछ समय रहोगी। उस समय तानाशाहकी मर्जीसे जो तरह-तरहके नये अनुभव प्राप्त करना चाहो, कर लेना।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८३) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९२ स भी

१८२. पत्र : होरेस अलेक्जैंडरको

१६ जुलाई, १९३६

प्रिय होरेस,

तुम्हारा पत्र पाकर बडा अच्छा लगा। कमलनयन बजाजके हाथ तुम्हे मेरा एक पत्र[1] मिलेगा। लेकिन वह तो केवल परिचय-पत्र है और तुम्हारे पत्रकी प्राप्तिसे पहले लिखा गया था।

अगाथाके विषयमे तुमने जो लिखा है वह मै पहले ही कर चुका हूँ। मैंने उसके कार्यक्रमके अनुमोदनका तार[2] भेज दिया था। भारतमे उसके खर्चका प्रबन्ध

१ देखिए "पत्र होरेस अलेक्जैंडर को", ६ ७ १९३६।

२ तार उपलब्ध नही है। अगाथा हैरिसनको सीलोन कान्फरेंसमें सम्मिलित होना था। देखिए "पत्र अमृतकौरको", १२ ७ १९३६।

यहाँ हो जायेगा। परन्तु सैद्धान्तिक दृष्टिसे उसके भारत आने और जाने के खर्चकी व्यवस्था तुम्हारी ओरसे होनी चाहिए। साधारणत मैंने इसी रीतिका पालन किया है।

मै तुमसे सहमत हूँ कि ऐसे छोटे प्रवास लाभदायक होते है। अत यदि हीथ-दम्पति[१] भी आ सके तो अच्छा होगा।

जवाहरलाल अथक रूपसे अपने सन्देशका प्रचार कर रहे है। अपने ध्येयमे उनको अजेय विश्वास है।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२४) से।

१८३ पत्र . खुर्शेदबहन नौरोजीको[२]

१६ जुलाई, १९३६

तीर्थयात्राका अवसर कब और कहाँसे आ गया है? यदि तुम्हारा तात्पर्य केवल खानसाहबके घोषणापत्रसे है तो उसमे मेरे लिए ऐसा कोई सन्देश नही है। वह घटना इतनी छोटी-सी है कि उसपर क्या ध्यान दूँ। उन दोनो भाइयोके साथ मेरा यह समझौता है कि उनके बुलाये बिना मै दौडकर नही आऊँगा, जबतक कि मुझे कोई दुर्निवार प्रेरणा न हो। और ऐसा कुछ तो मुझे प्रतीत नही हुआ।

सन्त सच्चे भी होते है और नकली भी। सच्चे सन्त अपने चारो ओर कोई धूमधाम नही चाहते, किन्तु उनके भाग्यमे यह कष्टकारी स्थिति बदी ही होती है, और नकली सन्त तो धूमधामके बिना रह ही नही सकते।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

१ सम्भवत क्वेकर सम्प्रदायके कार्ल हीथ और उनकी पत्नी।

२ खुर्शेदबहनने अपने पत्रमें लिखा था कि सीमाप्रान्तकी पुकार है कि गांधीजी वहाँ आयें, परन्तु बिना धूमधामके। उन्होंने यह भी लिखा था "क्या सन्त लोग कोई भी काम बिना धूमधामके नहीं कर सकते?"

१८४. पत्र . अमृतलाल ठा० नानावटीको

१६ जुलाई, १९३६

चि० अमृतलाल,

तुम्हारी चिट्ठी समयसे मिल गई थी। 'तुम शतायु होओ', यह कहना तो सरल है। किन्तु इसका प्रयत्न तो तुम्हे ही करना है। यदि हम शरीरको ईश्वरकी धरोहर समझकर उसका उपयोग करे तो इतना काफी है। शरीरको सँभालकर रखो। उसपर उतना ही वजन डालो जितना वह सहन कर सके।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१८) से।

१८५. पत्र जयकृष्ण पी० भणसालीको

१६ जुलाई, १९३६

चि० भणसाली,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। मुझे [तुम्हारे बारेमे] फिक्र तो होती ही है। तुम्हे दूसरोके लिए नमूना बनना है। शरीर तो बिलकुल ठीक रखना ही चाहिए। तुम दूसरोके सहारेके बिना उठ न सको, यह बुढापे-जैसी हालत क्यो? मेरा तो यह कहना है कि या तो तुम केवल दूध पर रहो या फिर किसी अन्नके आटे या बादामका उपयोग करो या फिर नारियल, चना, और नीबू लो। राँधे हुए भोजनको न लेने के व्रतका पालन सम्भव है। सच्चा नियम तो इतना ही है कि स्वाद के विचारसे कुछ न ले, खाद्य पदार्थोंमे से औषध-रूपमे चाहे जो योग्य प्रमाणमे खाया जा सकता है। तुम्हारी कमजोरी और रतौंधी जानी ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१८६. पत्र . नरहरि द्वा० परीखको

[१६ जुलाई, १९३६][1]

तुम्हारा पत्र मिला। नीमू बम्बई [जायेगी][2]। रामदासका विशेष आग्रह उसे अब अपने ही पास रखने का है। वह अब [3] व्यापार करने लगा है।

रामजीके बारेमे बात समझ गया। किसी भी हालतमे अपनी दृढता मत छोडना। गोसेवा का काम हम विनोबाको सौप देगे। [4]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९६) से।

१८७ पत्र कान्तिलाल गाधीको

[१६][5] जुलाई, १९३६

चि० कान्ति,

तेरी बात सच निकली, मै झूठा पडा। मेरे बिलकुल निर्दोष कथनका कैसा दुरुपयोग और अनर्थ किया गया! किन्तु तुझपर इसका खराब असर क्यो हो? मै तुझे समझा चुका हूँ कि तुझे बहुत नाजुकमिजाज नही बनना चाहिए। हम लोगोके पत्र भटक गये। मैने जिस दिन सेगाँवसे पत्र भेजा उसी दिन तेरा पत्र वर्धा पहुँचा।

सरस्वती दो महीने रुकने की इजाजत माँगती है, इसमे कोई विशेष बात नही है। मेरे पत्रको लेकर क्या टीका की गई, और किसने की?

अपनी तबीयतके बारेमे तू कुछ नही कहता? तू कहाँ हो आया? सरस्वतीने जो-कुछ कहा है सो मेरी समझमे नही आया।

नीमू आज रामदास के साथ रहने के लिए चली जायेगी। कानम[6] यहाँ रहेगा। बा वगैरह नीमूको पहुँचाने वर्धा गये है, कल वापस लौट आयेगे। बा वर्धासे यहा

१ एस० एन० रजिस्टरसे।

२, ३ और ४ अस्पष्ट है।

५ साधन-सूत्रमें २६ जुलाई पढी हुई है। यह स्पष्ट ही भूल है क्योंकि निर्मला रामदासके पास १६ को रवाना हुई थी। देखिए "पत्र मणिलाल और सुशीला गांधीको", १८-७-१९३६।

६ रामदास गांधीका पुत्र।

तक मजेमे चलकर आ जाती है, और उसी दिन वापस पैदल चले जाने की हिम्मत रखती है। मनु भी यही आ जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३०२) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

१८८ पत्र नारणदास गाधीको

वर्धा
१७ जुलाई, १९३६

चि० नारणदास,

तुम्हारी टिप्पणी[1] सुधारकर और अपनी मोहर लगाकर भेज रहा हूँ। फिलहाल तो मेरे वहाँ आने की आशा न रखना ही अच्छा होगा। सरदारसे विनती करते रहना। वे आने का प्रयत्न तो करेगे। १२ को[2] ही आ सकेगे, यह कहना कठिन है। नाम जो निकाले है, स्थितिके बहुत अनिश्चित होनेके कारण निकाले है। यदि लोग खादी-प्रेमके वशमे आकर ही इकट्ठे हो तो वाह, वाह! नही तो कुछ और खादी मिली तो क्या और नही मिली तो क्या! नशा कबतक बनाकर रखा जा सकता है? यदि कुछ आनेवालो के नाम इस बीच निश्चित किये जा सके तो सूची प्रकाशित की जा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९९ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१८९ सन्देश खादी-कार्यकर्त्ताओको

१७ जुलाई, १९३६

इसके[3] छपने के पहले मसौदा मुझे भेज दिया गया था। मै नारणदासके खादी-प्रेमको बरसोसे जानता हूँ। इसीलिए इसके नीचे मेरे हस्ताक्षर कर देने की उनकी

१ देखिए अगला शीर्षक।

२ द्वादशी, विक्रम सवत्के अनुसार गाधीजी का जन्मदिन।

३ यह गांधीजी के ६८ वें जन्मदिनके कार्यक्रमसे सम्बन्धित टिप्पणी थी जिसमें गाधीजी ने कुछ सुधार किये थे। इसमें लिखा था "यदि कोई अपने काते हुए सूतका उपयोग स्वय करना चाहे तो वह उसे प्रसादके रूपमें वापस पा सकता है, अन्यथा उसका उपयोग खादीका काम आगे बढ़ाने के लिए किया जायेगा। इस प्रसगका महत्त्व सभी समझेंगे और खादीको गतिके साथ फैलायेंगे, ऐसी आशा रखना अधिक नहीं माना जायेगा।"

माँगकी मै अवज्ञा नही कर सकता। शुद्ध भावसे जितनी अधिक खादी बनेगी, सबके लिए स्वराज्य उतना ही पास आयेगा। नारणदासने पाठकोसे जो आशा की है वह मै नही के बराबर मानता हूँ। इसे सहज ही अगीकार कर लिया जाना चाहिए।

मोहनदास करमचन्द गाधी

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५०० से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१९० बातचीत जयरामदास दौलतराम और देवदास गांधीके साथ[1]

[१८ जुलाई, १९३६ के पूर्व][2]

मुझे बडी खुशी हुई कि तुम लोग यहाँ आये, पर आशा है कि झोपडी कहा जानेवाला मेरा यह सुन्दर घर देखने न आये होगे। इसका नक्शा बनाने में मेरा कोई हाथ नही रहा है, और इसमे न तो मेरी कुछ कारीगरी लगी है, न मेहनत। लेकिन, हाँ, तुमने रास्तेमें मीराबहनकी मडैया देखी है? उसकी झोपडी देखने के लिए तुम्हारा यहाँतक पैदल चलकर आना अवश्य साथक माना जायेगा। वह दरअसल और सच्चे अर्थमे उसकी झोपडी है। यह झोपडी मेरी नही, बल्कि मेरे लिए बनाई गई है, ऐसा कह सकते है। मगर मीराबहनकी झोपडी निश्चय ही उसकी है। नक्शा उसी का बनाया हुआ है, और उसे खडा भी उसी ने ही किया है, हालाँकि उसमे कुछ मजदूरोकी मदद ली गई है। मगर मीराकी वह राम-मडैया महज मडैया ही नही है। मै तो उसे एक 'कविता' कहूँगा। उसे अच्छी तरह ध्यानसे तो मैंने कल ही देखा, और उसकी एक-एक चीजमें ग्राम्य-मनोवृत्तिकी सुन्दर झलक देखकर मेरी आँखोमे आन्नदाश्रु भर आये। यह तो तुम जानते ही हो कि मीराबहनके साथ मेरा अकसर झगडा होता है, पर यह तो मानना ही पडेगा कि जितनी ग्राम्य मनोवृत्ति मै मीराबहनमे देखता हूँ उतनी हममें से किसीमे भी नही है। उसके छोटे-से स्नानघरको क्या तुमने भीतर-बाहर से अच्छी तरह ध्यानसे देखा है? कुएँकी खुदाईमें जितना-कुछ पत्थर निकला उस सबका उसने उपयोग किया है, एक टुकडेको भी बेकार नही जाने दिया। नहाने के लिए पत्थरकी चौकी जमीन पर जमा ली है, और उसी छोटी झोपडीमे वही स्नानघरसे लगा हुआ पाखाना है। न वहाँ कमोड है, न लकडीकी चौकी और न ईंटकी खुड्डी वगैरह ही। दो अच्छे पत्थर जमीनमे आधे-आधे गाड दिये है, और

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२ देवदास गाधी १८ जुलाई तक वापस दिल्ली पहुँच गये थे, देखिए "पत्र मणिलाल और सुशीला गाधीको", १८-७-१९३६।

उनके ठीक बीचमे मिट्टीके तेलके आधे-आधे कटे हुए दो पुराने पीपे रख दिये है। हरएक ग्रामवासी इतना तो कर ही सकता है, पर करे तब न। पानी सब बहकर पौधो और साग-भाजीकी क्यारियोमे चला जाता है, जो बडी सावधानीसे काटी गई है। और, तुमने वहाँ उसके घोडेका छोटा-सा अस्तबल भी देखा है? कैसा सुन्दर बना है! घोडेको खिलाने-पिलाने, खरहरा करने और उसकी तमाम सार-सँभाल रखनेका काम वह कितने प्रेम और ध्यानसे करती है। जानवरोको प्रेमसे रखना हम मीराबहनसे सीख सकते है। घोडेका अस्तबल इस तरह बनाया गया है कि अपनी झोपडीमे बैठे-बैठे या काम करते हुए भी वह अपने घोडेको समय-समय पर देख सकती है।

अब उनकी झोपडीको जरा अन्दरसे देखें। सारी चीजे मिट्टी, बाँसकी खपच्चियो और खजूरकी डालियोके टट्टरोसे बनी हुई है। झोपडीकी हरएक चीजको और जहाँ वह रखी है उस जगहको ध्यानसे देखो। अपना चूल्हा उसने खुद अपने हाथसे बनाया है। हालाँकि चूल्हेका बनाना उन्होने सीखा हमी लोगोसे है, पर अब कोई इस कलामे उससे बाजी नही मार सकता। बाँसकी अँगीठी-कानसको भी देखा, जिसपर वह अपने रसोई बनाने के मिट्टीके बरतन-भाडे रखती है? और बगैर किवाड-वाली छोटी-छोटी खिडकियोके ऊपर मीराबहनने अपने हाथसे मोर और खजूरके पेडकी आकृतियाँ कैसी सुन्दर बनाई है! उसका छोटा-सा रसोई-घर और रुई धुनने की कोठरी भी देखने लायक है। वह जिस गाँवमे जाकर काम करती है, वह उसकी झोपडीसे दो-तीन फर्लांग पर है। उस गाँवकी तमाम स्त्रियाँ और बहुत-से पुरुष मीरा-बहनसे परिचित है। स्त्रिया अपनी घर-गिरस्तीकी कितनी ही बाते उससे दिल खोल कर कहती है और उससे सलाह लेती है कि उन्हे अमुक स्थितिमें क्या करना चाहिए। यो किसीको सलाह देना हमेशा कोई आसान बात नही है, पर उसकी सलाहसे सबको ढाढस और तसल्ली मिलती है। तुमने अगर मीराकी मडैयाको अच्छी तरह ध्यानसे नही देखा, तो मेरी यह सलाह है कि यहाँसे लौटते समय जरूर वहाँ होते जाना।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-७-१९३६

१९१ डॉ० अम्बेडकरका दोषारोपण—२

वेद, उपनिषद्, 'स्मृतियाँ' और पुराण, जिसमें 'रामायण' तथा 'महाभारत' भी शामिल है, हिन्दुओके धर्मग्रन्थ हैं। लेकिन यह कोई अन्तिम सूची नही है। हरएक युग और हर पीढीतक ने इसमें वृद्धि की है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि छपी हुई या हस्तलिखित मिलनेवाली हरएक चीज धमग्रन्थ नही है। उदाहरणके लिए, स्मृतियोमे बहुत-सी ऐसी बातें हैं जिन्हे ईश्वरीय वचन हर्गिज नही माना जा सकता। इस प्रकार स्मृतियोसे डॉ० अम्बेडकरने जो बहुत-से उद्धरण दिये हैं उन्हे प्रामाणिक नही माना जा सकता। यथार्थत जो शास्त्र कहे जाते है उनका सम्बन्ध शाश्वत सत्योसे ही हो सकता है और वे अन्तरात्मा, यानी ऐसे हर हृदयको स्पर्श करेगे जिसके ज्ञान-चक्षु खुल गये हो। ऐसी किसी बातको ईश्वरका वचन नही माना जा सकता जिसकी तर्क-बुद्धि द्वारा परीक्षा न हो सके या आध्यात्मिक रूपमे जिसका अनुभव न किया जा सकता हो। और फिर, धर्मग्रन्थोके शुद्ध सस्करण आपके पास हो तो भी आपको उनकी व्याख्याकी जरूरत तो पडेगी ही। सर्वोत्तम भाष्यकार कौन माना जायेगा? निश्चय ही कोरे विद्वान सर्वश्रेष्ठ भाष्यकार नही माने जा सकते। विद्वत्ता तो होनी चाहिए, लेकिन कोरी विद्वत्ता धर्मका आधार नही होती, उसका आधार तो सन्तो और ऋषियोके अनुभवो, उनके जीवन और उपदेशोपर होता है। जब धर्मग्रन्थोके तमाम उद्भट भाष्य बिलकुल विस्मृत हो जायेंगे, ऋषियो और सन्तोके सचित अनुभव तो तब भी बने रहेगे और आगेके अनेक युगोतक प्रेरणा प्रदान करते रहेगे।

जातिका धर्मसे कोई सरोकार नही है। यह एक ऐसी प्रथा है जिसके मूलका मुझे पता नही और न अपनी आध्यात्मिक क्षुधाकी तृप्तिके लिए मुझे उसको जानने की ही कोई जरूरत है। लेकिन यह मै जानता हूँ कि आध्यात्मिक तथा राष्ट्रीय, इन दोनो प्रकारकी प्रगतियोके लिए वह हानिकारक है। वर्ण और आश्रमका जात-पाँतसे कोई सम्बन्ध नही है। वर्ण-व्यवस्थासे तो हमें यही शिक्षा मिलती है कि हममें से हरएक को अपने पुश्तैनी काम-धन्धेके द्वारा अपनी जीविका कमानी चाहिए। यह हमारे अधिकारोको नही, बल्कि कर्त्तव्योको स्पष्ट करती है। इसमें तो आवश्यक रूपसे उन्ही काम-धन्धोका उल्लेख है जो हमें केवल मानव-हितकी ओर ही ले जाते है। इसका यह भी अभिप्राय है कि कोई काम-धन्धा न तो बहुत नीचा है और न बहुत ऊँचा। सभी अच्छे, जायज और दर्जेमे बिलकुल समान हैं। आध्यात्मिक शिक्षा देने-वाले ब्राह्मणसे लेकर मैला उठानेवाले भगीतक के सब काम समान है, और ईश्वरके सामने उन सभीका महत्त्व समान है—और ऐसा मालूम पडता है कि एक समय ऐसा था जब मनुष्योको उन सबका समान ही प्रतिफल मिलता था। दोनोको अपने

गुजारे-भरके लिए पाने का हक था, उससे अधिक नही। ओर गॉवोमें तो वस्तुत अब भी इस सुन्दर नियमकी थोडी-बहुत धुँधली-सी रेखाएँ नजर आती है। ६००की आबादीवाले सेगाँवमें रहते हुए मुझे यह नही मालूम पडता कि विभिन्न प्रकारके धन्ध करनेवालो की —— जिनमे ब्राह्मण भी शामिल है —— कमाईमे कोई बहुत ज्यादा भेद हो। मै यह भी देखता हूँ कि धर्मकी ग्लानिके इस युगमे भी ऐसे सच्चे ब्राह्मण मौजूद है जो स्वेच्छापूवक उनको दी जानेवाली भिक्षापर निर्वाह करते हुए उनके पास जो आध्यात्मिक निधि है उसे उदारतापूर्वक दूसरोको प्रदान कर रहे है। वर्ण-व्यवस्थाका उसके उस विकृत स्वरूपसे निणय करना गलत और अनुचित है, जो कि हमे उन लोगोके जीवनमे मिलता है, जो दावा तो यह करते है कि हम अमुक वर्णके है, किन्तु जो अपने वर्णके एकमात्र नियमको खुले तौरपर भग कर रहे है। वर्ण-व्यवस्थामे ऐसी कोई बात है ही नही जिससे अस्पृश्यताको समर्थन मिलता हो। हिन्दू-धर्मका सार तो इसमें है कि सत्यको ही वह एकमात्र ईश्वर मानता है और अहिसाको उसने मानव-जातिके लिए अटल नियमके रूपमे साहसके साथ स्वीकार किया है।

मै जानता हूँ कि हिन्दू-धर्मकी मैने जो व्याख्या की है उसपर डॉ० अम्बेडकरके अलावा और भी बहुत-से लोग आपत्ति करेगे। मगर इससे मेरी स्थिति पर कोई असर नही पडता। क्योकि यह तो एक ऐसी व्यारया है जिसे मै कोई आधी सदीसे मानता आ रहा हूँ और जिसके अनुसार अपनी पूरी योग्यताके साथ मैने अपने जीवनको व्यवस्थित करने की कोशिश की है।

मेरी रायमे डॉ० अम्बेडकरने सबसे बडी जो गलती की वह यह है कि उन्होने ऐसे उद्धरण चुने है जिनकी प्रामाणिकता और महत्ता सदिग्ध है और ऐसे पतनोन्मुख हिन्दुओका उदाहरण दिया है जो हिन्दू-धर्मका अत्यन्त गलत रूपमे प्रतिनिधित्व करते है। डॉ० अम्बेडकरने जो मानदण्ड रखा है उसके हिसाबसे तो सम्भवत आजकलका कोई भी जीवित धर्म खरा नही उतरेगा।

अपने योग्यतापूर्ण भाषणमे विद्वान् डॉक्टर [अम्बेडकर] ने अपने पक्षको सिद्ध करने की कोशिशमे अतिशयोक्तिसे काम लिया है। जिस धर्ममे चैतन्य, ज्ञानदेव, तुकाराम, तिरुवल्लुवर, रामकृष्ण परमहस, राजा राममोहन राय, महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर, विवेकानन्द तथा अन्य बहुत-से ऐसे लोग हुए जिनके नाम सहज ही गिनाये जा सकते है, क्या वह धर्म गुणोसे इतना हीन हो सकता है जितना कि डॉ० अम्बेडकरने अपने भाषणमें सिद्ध करने की कोशिश की है? किसी धर्मका निर्णय उसके सबसे बुरे नमूनोसे नही, बल्कि उसके सर्वोत्तम नमूनोसे ही किया जा सकता है, क्योकि उस धर्मके सर्वोत्तम नमूनोको ही ऐसा आदर्श माना जा सकता है जिससे आगे न जा सकें तो भी उसतक पहुँचने की आकाक्षा तो करनी ही चाहिए।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-७-१९३६

१९२. टिप्पणियाँ

हरिजन सेवक सघ और नगरपालिकाओकी ओर से दी जानेवाली सहायता

हरिजन सेवक सघके मन्त्री लिखते है :

> **धूलियाकी नगरपालिकाने गत वर्ष हरिजन सेवक सघको जो सहायता दी उसपर सरकारी लेखा-परीक्षकोने एतराज किया है। उनका कहना है कि हरिजनोद्धारका काम शैक्षिक विषय नहीं है, इसलिए नगरपालिका उसके लिए खर्च नहीं कर सकती है। यह एक गम्भीर प्रश्न है, जिसका हल होना आवश्यक है।**
>
> **इसमें तो यह भी मान लिया गया है कि विद्यार्थियोके छात्रावास भी शिक्षण-सस्थाएँ नहीं है। यह एक आश्चर्यजनक व्याख्या है और अगर जल्दी ही यह दुरुस्त न हुई तो इससे सघ तथा अन्य सस्थाओके कामोको बडी हानि होगी।**

जो बात ऊपर कही गई है वह अगर सच है, तो जरूर कही-न-कही कुछ गलतफहमी हुई है। यह बात तो विवादास्पद हो सकती है कि हरिजनोद्धारका काम शिक्षणात्मक कहा जा सकता है या नही, लेकिन जब हरिजनोके लिए कोई स्कूल खोला जाये या विद्यार्थियोके लिए छात्रावास बनाया जाये तो ये दोनो निश्चय ही शिक्षणात्मक काम है, और वैसी हालतमें, नगरपालिका द्वारा उन सस्थाओको आर्थिक सहायता दिये जानेमे कोई एतराज नही होना चाहिए। मेरा खयाल है कि सरकारी लेखा-परीक्षको ने जो एतराज किये है वे स्थितिको गलत रूपमे समझने के कारण ही किये गये है। यह हो सकता है कि धूलिया-नगरपालिकाने हरिजनोद्धारके नामपर सहायता देने का अधिकार न होने के कारण, हरिजनोद्धारके नामपर दी जानेवाली सहायताको शिक्षा-सम्बन्धी सहायतामे शुमार न किया हो। अत इस सम्बन्धमे और प्रकाश डाले जाने की जरूरत है। जबतक इस मामलेके सारे तथ्य मालूम न हो, इस बारेमे और कोई टीका-टिप्पणी न करना ही ठीक होगा।

एक ग्रामवासीकी दयालुता

खेडी गाँवकी कुमारी मेरी बारके भेजे हुए नीचेके दो शब्द-चित्रोको देखकर पाठक प्रसन्न होगे। इन शब्द-चित्रोका नाम मैंने "एक ग्रामवासीकी दयालुता" रखा है।

> **१ कल मैंने देखा कि बेचारी एक बुढ़िया अपने बछियाके साथ वर्षामें भीगती हुई बैठी है। मैंने उससे पूछा कि अपने साथके दूसरे लोगोके साथ**

ओसारेमें (मतलब कुमारी मेरी बारके झोपडेके बरामदेसे है) आकर क्यों नहीं बैठ जाती हो? (ये लोग कोई बनजारे थे, और इन्होंने ओसारेमें २४ घंटेके लिए टिकने की इजाजत ले रखी थी।) बुढियाने जवाब दिया, "इस बच्ची [बछिया] के पास बैठी हूँ। इसकी माँ मर गई है।"

२ आज दोपहरको मैंने देखा कि दो गधोंने वर्षासे बचने के लिए ओसारे की शरण ले रखी है। उन्हें देखते ही मैंने वहाँसे खदेड दिया कि कहीं ये फर्श न खराब कर दें। बेचारे फौरन भाग गये। कलवाली उस बुढियाकी याद आते ही मुझे शर्म लगी, और मैं उन गधोंको फिरसे ओसारेमें ले आई। आकर वे खडे हो गये!

मुझे विश्वास है कि यह जानकर तारा कितनी प्रसन्न होती कि उसका ओसारा बारिशके इस मौसममें सभी तरहके आदमियों और जानवरोंको शरण दे रहा है।

तारा अर्थात् स्व० मेरी चेजलीके विषयमें मुझे जो-कुछ मालूम था वह यहाँ दिये हुए हवालेसे बिलकुल सही उतरता है। अब उनके अनेक घनिष्ठ मित्रोंके पास उनकी असामयिक और आकस्मिक मृत्युकी खबर पहुँच गई है। मेरे पास उन लोगोंके पत्र आते ही रहते हैं, जिनमें ताराकी सहृदयताका वर्णन रहता है। उनमें से एकको मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ[1]

पॉली (कुमारी चेजली)के स्वभावमें ही शहीदोंके सारे गुण थे। डर तो वह जानती ही न थी। वह दृढ शान्तिवादिनी थी और उसकी माँ कनाडाकी चिर सुलह-शान्ति करानेवाली एक संस्थाकी अधीक्षिका थीं। जब उनका स्वर्गवास हो गया तो मेरी चेजलीने मुझसे उस रिक्त स्थानको ग्रहण करने का आग्रह किया। रूस और चीनके दुर्भिक्ष-पीडितोंके लिए धन-संग्रह करने का काम पॉली और मैंने एक साथ मिलकर किया, और दस हजार डालर हम लोगोंने इकट्ठे कर लिये। जर्मनीके बच्चोंके कष्ट-निवारणार्थ भी हमने एक हजार डालर एकत्रित किये थे।

भूल-सुधार

"सच हो तो बर्बरतापूर्ण है"[2] शीर्षक मेरे लेखके सम्बन्धमें देवकोट्टईके पंचायत-बोर्डके अध्यक्ष लिखते हैं

बोर्डकी बैठकोंमें हरिजन सदस्य दूसरे सदस्योंके साथ बैठें, इसपर मैंने या बोर्डके अन्य किसी भी सदस्यने कभी कोई एतराज नहीं उठाया। बल्कि हरएक बैठकमें उनसे यह प्रार्थना की गई है कि वे हमारे साथ बैठा करें। इधर चार

१ यहाँ केवल कुछ अंश दिये गये हैं।

२ २७-६-१९३६ का लेख।

महीनेके अर्सेमें बोर्डकी जो बैठके हुई है, उनमे से कुछ-एकमें उन्होंने हमारी प्रार्थनाको माना भी है।

जो आक्षेप किया गया था उसके सम्बन्धमे हरिजन सदस्यसे पूछताछ की गई तो उन्होने यह बयान जारी किया है कि बोर्डकी बैठकोमे उनके बैठने पर किसीने कभी कोई एतराज नहीं किया, और कई बार तो युगोसे चले आये रिवाजके कारण जब उन्हे अन्य सदस्योके साथ बैठने मे सकोच हुआ, तो अध्यक्षने उन्ह सबके साथ बठने के लिए प्रोत्साहित किया है, ओर दिल छोटा न करने की सलाह भी दी हे।

अन्तमें आपको मै इतनी सूचना दे देना चाहता हूँ कि उक्त हरिजन सदस्य अब सब बैठकोमें बराबर दूसरे सदस्योके साथ बैठते है, और आपको मै विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि उन्हे म तमाम सुविधाएँ दे रहा हूँ, ताकि वे अपने अधिकारोका अच्छी तरह उपभोग कर सके।

इस पत्रको मै सहष प्रकाशित कर रहा हूँ। यह जानकर मुझे और भी हष होता है कि इस सम्बन्धमे जो खबर प्रकाशित हुई थी वह बिलकुल ही गलत थी। इन दिनो, जबकि हरिजनोके मनमे सशय और क्षोभ भरा हुआ है, अखबारोके सवाददाता जो खबरे भेजे उनमे उन्हे यथार्थतासे काम लेना चाहिए। यह जानने-जैसी चीज जरूर है कि उस सवाददाताने ऐसी बिलकुल निराधार खबर अखबारोमे किस तरह भेजी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-७-१९३६

१९३ पत्र : मणिलाल और सुशीला गाधीको

सेगाँव, वर्धा
१८ जुलाई, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारा पत्र मिला। इन दिनो मै तुम्हारे पत्रोका नियमित रूपसे उत्तर नही दे पाता।

हरिलालकी फिलहाल कोई खबर नही है। जो मनमे आता है, सो कहता फिरता है।

लगता है, सुशीलाका ऐसा कुछ खयाल है कि मुझे तुम लोगोके यहाँ आने के बारेमे आग्रह है। मुझे याद नही पडता कि मैंने किसी पत्रमे ऐसा कुछ कहा हो। अगर तुम लोग वहाँ ठीकसे जमे हुए हो तो मै तुम्हारे यहाँ आने की जरूरत नही

मानता। मै यह जरूर चाहता हूँ कि तगी न भोगो। तुम दोनोको जो योग्य जान पडे, वही करना।

बा, मनु और कानो कल मेरे साथ रहने के लिए आ गये। लीलावती तो है ही। अर्थात जगहकी तगी हो गई है।

यह तो लिख ही चुका हूँ न कि एक ही कोठरी है?

फिलहाल रामदास तो ठीक कामसे लग गया है। देखना है, कैसा क्या करता है। नीमू दो दिन पहले उसके पास चली गई।

देवदास और लक्ष्मी यहा आये थे। अब वे दिल्ली पहुँच गये है। छगनलाल और काशी अभी तो वर्धा मे ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५४) से।

१९४ पत्र मीराबहनको

सेगॉव
१९ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

वक्तव्यकी खातिर तुम्हे यहाँ आने का प्रयत्न करने की कोई आवश्यकता नही। कोई जल्दी नही है। और आज 'हरिजन' का सम्पादन-दिवस होने के कारण मै समय भी नही दे सकूगा। निस्सन्देह तुमने ठीक किया कि वक्तव्यकी अपेक्षा पौधो पर ध्यान दिया, क्योकि देहाती जीवनमे उन्हीका स्थान पहले आता है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२२ से भी

१९५. बातचीत : ग्राम-सेवक प्रशिक्षण विद्यालयके छात्रोसे[1]

[१९ जुलाई, १९३६][2]

ये[3] मेरी तरह बाते नही करते, भजन गा गाकर ये तो लोगोमे प्रचार करते और उपदेश देते है। मुझे न तो भजन बनाना आता है और न गाना ही। इससे मै बाते ही करता हूँ।

भजन-कीर्तनके बाद बातचीत सिरपर लम्बे-लम्बे बाल रखनेवाले एक विद्यार्थीपर किये गये कटाक्षसे आरभ हुई। गाधीजी ने पूछा

ये सिफ दिखानेके ही लिए है, या स्वास्थ्यके लिए? अगर इन लम्बे-लम्बे बालोसे कोई खास मतलब पूरा नही होता, तब इनसे पीछा क्यो नही छुडा लेते?

विद्यार्थियोको सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा

तुम यहाँसे कहीं यह कल्पना लेकर न जाना कि गाँवमे सिफ आ बैठने से ही ग्रामसेवा हो जायेगी। तुम सच्चे ग्रामवासी बनकर ही अपने ग्रामीण भाइयोकी सेवा कर सकते हो। और यह याद रखना कि बी० ए० या एम० ए० की डिग्री हासिल करना उतना मुश्किल नही, जितना कि सच्चा ग्रामवासी बनना है। गत ३० वर्षोसे मै गाँवो और गाँववालो के बारेमे बात कर रहा हूँ, पर गाँवमे आकर बस तो मै अब सका हूँ। और अभी यह डेरा-भर डाला है, काम अभी नही शुरू हुआ है। हम खुद तो बिना पालिशका चावल और हाथकी चक्कीका आटा खाते है, पर गाँववालो के आहारमे किस तरह यह सुधार कराया जाये? हमारे हाथमे ऐसा कराने की सत्ता होती, तो भी हम इस कामके लिए उसका उपयोग न करते। हमे तो धीरे-धीरे समझा-बुझाकर ही उन्हे ठीक रास्तेपर लाना है।

प्र० बगैर सत्ताके क्या हम सचमुच सफल हो सकते है?

उ० यह तो मैने अभी कहा ही कि हमारे हाथमे सत्ता हो, तो भी हमे उसका उपयोग नही करना चाहिए। हमे तो उनका हृदय बदलना है, ताकि वे हमारी ही तरह सोचने लगे, और यह उन्हे बराबर समझाते रहने से ही हो सकता है।

प्र० जब आप इस काममें इतने हतोत्साह-से मालूम पड़ रहे है, तो फिर हम लोग किस गिनतीमें हैं?

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२ महादेव देसाईके अनुसार यह बातचीत रविवारको हुई थी। २५ जुलाई अर्थात् इस लेखकी प्रकाशन-तिथिके पहलेका रविवार १९ जुलाईको पड़ा था।

३ तुकडोजी महाराज

उ० अव्वल तो यह बात है कि मै जरा भी हतोत्साह नही हूँ। दूसरे, यह कल्पना कर बैठना ठीक नही कि मेरी शक्तियोसे तुम्हारी शक्तियाँ क्षीण है। हाँ, यह हो सकता हे कि शारीरिक शक्तिमे तुम्हारे और मेरे बीचमे काफी अन्तर हो, और जो आत्मबल तुम्हारे भीतर सुषुप्त या निष्क्रिय पडा हुआ हो, सम्भवत मुझमे वह जागरूक या सक्रिय हो। पर ऐसा तो कोई भी काम नही जो जादूकी छडी घुमा देने से ही हो जाता हो। फिर, किसी गावमे जाकर बैठ जाने मे ही ऐसा कौन-सा जादू है? किसी गावमे छह महीने रहकर भी शायद वहाँ हम कोई सेवा न कर सके। जो भावना लेकर हम वहा जायेंगे, असलमे, उसीपर बहुत-कुछ निभर करेगा। शहरोमे वर्षो रहकर भी हम्ने अपने चारो तरफके जीवनपर अपना कोई असर नही डाला। इसलिए गाँवोमे हमे स्वयसेवक बनकर ही जाना होगा। गॉवोके लोग शहरोमे आकर मजदूरी लेकर हमारे लिए काम करते है। हमे गाँवोमे जाकर उनकी सेवा बिना मजदूरी लिये करनी होगी।

प्र० मै समझा। अच्छा गाँवके, लोग आपसे कभी मिलने आते है?

उ० आते है, पर कुछ डरते हुए-से, और शायद थोडी शका भी उनके मनमे रहती है। ग्रामवासियोकी ये भी कमजोरियाँ है। उनकी ये कमजोरियाँ भी हमे दूर करनी होगी।

प्र० सो कैसे?

उ० धीरे-धीरे उनके दिलमे जगह करके हमे उनका यह भय ओर सन्देह दूर करना होगा कि हम उनसे जबरन कोई काम कराने आये है। हम अपने बरताव से ही यह दिखा सकेगे कि हमारा जबरदस्ती या स्वाथ-साधनका कोई इरादा नही है। पर यह सब धीरजका काम है। तुम अपनी सचाई और ईमानदारीका एकाएक तो विश्वास दिला नही सकते।

प्र० क्या यह ठीक है कि जो लोग किसी सस्था या किसी गाँवसे बगैर कोई पारिश्रमिक या वेतन लिये काम करते है वे ही गॉववालो के विश्वासपात्र बन सकते है?

उ० नही, मेरा ऐसा खयाल नही है। बेचारे गाँववालो को तो यह भी पता नही होता कि कौन व्यक्ति वेतन लेकर काम कर रहा है और कौन नही। उनके ऊपर तो असलमे हमारी इन बातोका असर पडता है कि हम किस ढगसे रहते है, कैसी हमारी आदते है, हम कैसी बातचीत करते है। यही नही, हमारे हरएक भाव या चेष्टातक का उनके ऊपर असर पडता है। शायद उनमे से कुछ लोग हमपर यह सन्देह करे कि हम यहाँ रुपया-पैसा कमाने की गरजसे काम कर रहे है, हमे उनका यह सन्देह भी दूर करना होगा। पर तुम यह बात दिलमे न जमा लेना कि जो किसी सस्था या गाँवसे कुछ भी नही लेता वही आदर्श ग्रामसेवक है। ऐसा मनुष्य अक्सर घमण्डमें आकर अपनेको औरोसे ऊँचा समझने लगता है, जिससे उसका पतन हो जाता है।

प्र० आप हमें गॉवके उद्योग-धन्धे सिखा रहे है। इनका उद्देश्य क्या है? क्या ये धन्धे हमारे जीविका कमाने के साधन होगे या इन्हे हम गॉवके लोगोको सिखा सकेंगे? अगर गाँवके लोगोको सिखाने के लिए ही हमे ये विषय पढाये जा रहे हैं, तो एक सालमे हम इन उद्योग-धन्धोमे निष्णात कैसे हो सकते ह?

उ० तुम्हे तो मामूली धन्धोका ही ज्ञान कराया जा रहा है, क्योकि जबतक तुम्हे यह जानकारी न होगी तबतक तुम अपनी सलाहसे लोगोको मदद नही पहुँचा सकोगे। तुममे जो सबसे अधिक उत्साही और कर्मशील होगे, व बेशक किसी एक धन्धेके जरिये अपनी रोजी कमा सकते है। देखो, यहा जमनालालजी की कृपासे और मेरे "महात्मापन" की बदौलत मुझ तो यहा यह बनी-बनाई झोपडी मिल गई है। पर अपने लिए तुम्हे खुद अपने हाथो झोपडी बनानी होगी — और तुम्हारे लिए झोपडी बना देनेवाला कोई मित्र अगर मिल गया, तो मैं तो यही कहूगा कि तुम भी मेरी ही तरह जरा-जीर्ण और निबल हो।

प्र० श्री राजगोपालाचारीने उस दिन हमारे विद्यालयमें कहा था कि किसी उद्योगमें पूरी तरहसे कुशलता प्राप्त किये बगैर गाँवोमें जाना बेकार है। गाँवोमें जाकर तुम लोग उन्हें कोई उद्योग सिखाना चाहते हो तो तुम्हे उनसे अच्छे किसान, उनसे अच्छे बुनकर और उनसे अच्छे चर्मकार आदि बननेकी जरूरत है।

उ० यह उन्होने ठीक कहा था। पर हमने अपने शिक्षाक्रममे यहाँ कृषिका विषय नही रखा है, क्योकि अच्छा कुशल किसान बनने के लिए तो हमे शायद सौ बरस चाहिए। जो विषय यहाँ सिखाये जाते है वे ऐसे है कि उनसे तुम ग्राम-वासियोको कई बातोका अच्छा ज्ञान करा सकते हो। आटा पीसने की चक्की, धान कूटने की ओखली और तेलकी घानीमे हमने सुधार किये है। हम अपने औजारोमें सुधार करने के प्रयोग कर रहे है। तुम सुधरे हुए औजारोका गॉवोमे ले जा सकते हो। पर सबसे बडी बात जो हमे उन्हे सिखानी है वह है व्यापारमे सचाई और ईमानदारी। जरा-से फायदेके लिए वे दूधमे, घीमे, तेलमे, और सचाईतक मे मिलावट कर देते है। पर यह उनका नही, हमारा दोष है। हम इतने दिनो तक उनकी उपेक्षा और शोषण ही करते रहे। उन्हे कभी अच्छी बाते नही सिखाई। अब उनके निकट-सम्पर्कमे रहने से हम उनकी बुरी आदतोको आसानीसे सुधार सकेंगे। लम्बे समयतक उपेक्षित और अलग-थलग रहने के कारण उनकी बुद्धि और अन्तरात्मा तक जड हो गई है। हमे उनकी इन जड हो गई शक्तियोको फिरसे जाग्रत और अनुप्राणित करना है।

प्र० यहाँ हरिजन-समस्या कैसी है?

उ० वैसी ही, जैसी कि दूसरी जगहोमे है।

प्र० हरिजनोके बीच यहाँ भी ऊँच-नीचका भेदभाव है?

उ० अवश्य है। कोई महार किसी भगीको नही छुएगा, उससे दूर ही रहेगा। जमनालालजी का यहाँ एक कुआँ है, यह उनका अपना कुआँ है, सार्वजनिक

नही। जो सज्जन यहाँ उनकी जायदाद की देखरेख करते है उनसे सलाह करके हमने उसे सब हरिजनोके लिए खोल देने का निश्चय किया, और महारो, चमारो, भगियो आदि हरिजन जातियोको पानी भरने के लिए बुलाया। वे आये, पर पानी कैसे भरे? हिचकते थे। एक या दो महार आगे बढ़े। और एक भगी भी आ गया। इसपर बडा हो-हल्ला मचा। हरिजनोने कुएँका इस्तेमाल जब बन्द कर दिया तब कही हो-हल्ला कुछ शान्त हुआ। लेकिन भीतर-भीतर तो अशान्ति है ही। यह तो एक तरहकी सशस्त्र शान्ति है। पर उन्हे दोष देना व्यथ है। हम खुद अपनी तरफ देखे। हम क्या कर रहे है? मै तो राजपूतानेकी यह घटना सुनकर स्तब्ध रह गया कि वहाका एक हरिजन अपने जात-भाइयोको घी के मालपूए और लड्डू खिलाना चाहता था, पर सवर्णोंके रुकावट डालने से यहातक नौबत पहुँची कि पुलिसको गोली चलानी पडी। इसमे तीन सवण हिन्दू मारे गये। जब हम खुद अपने बीचसे अस्पृश्यता दूर नही कर रहे है, तो हरिजनोसे यह आशा कैसे की जाये कि वे इस बुराईको पल-भरमे दूर कर देगे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २५-७-१९३६

१९६ पत्र मीराबहनको

२० जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

कोई नही समझता कि सन्देशवाहक क्या सन्देश लाया है। लीलावती इतनी लापरवाह है कि समझती नही। मै बोल नही सकता। मुन्नालाल अधमरा-सा है। बलवन्तसिंहका भी यही हाल होता दीखता है। ऐसी परिस्थितिमे बेहतर यही है कि तुम्हे जो चाहिए सो लिख दिया करो। आशा तो थी कि यहाँ आश्रम बनेगा, मगर यह एक अस्तव्यस्त गृहस्थी-जैसा बन गया है। मेरा भाग्य ही ऐसा है। मुझे अपना आश्रम अपने भीतर ही खोजना पडेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२३ से भी

१९७. पत्र · गगाबहन वैद्यको

वर्धा
२० जुलाई, १९३६

चि० गगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। दानमे कोई बडी रकम दे तो भी सफाईके काममे तुम्हे बाहरका पैसा खच नही करना चाहिए। यहाँ जिस गाँवमे सफाई चलती है, मैंने उसमे एक भी रुपया खच करने की मनाही कर दी है, क्योकि हम खर्च करे तो लोगोको सीखने को नही मिलता। हमें तो केवल श्रम करके सन्तोष करना चाहिए। पैसा खच नही करना चाहिए। जबतक लोग स्वय खर्च नही उठाते तबतक काम अधूरा भले पडा रह जाये। झाडने-बुहारने, पाखाना उठाने और उसे गाडने का सब काम हम ही करे। किन्तु जबतक लोग अपने पैसेसे पाखाने नही बनवाते और खुलेमे शौच करते है तबतक उन्हे वैसा करने दें। लोगोको सभ्यता सिखाई जा सकती है किन्तु सभ्य रहने के साधन तो खुद उन्हीं को जुटाने चाहिए। तालुका-बोर्ड खर्च उठाये। इसमे १०-२० रुपये से अधिक खर्च की जरूरत नही पडती। मेरी पूरी बात समझमे न आई हो तो फिर पूछना।

सफाईका काम और आरोग्यवर्धक खुराकका प्रचार ही सच्चा चिकित्सा-शास्त्र है, यह पक्का समझ लो। शामलभाई, शिवाभाई और दूसरे सब लोगोके रहते हुए वहाँ पुरुष सफाईमे भाग क्यो नही लेते? यदि रोज १ घटा सफाई की जाये तो काफी है। सुबह भगीकी तरह झाडू, फावडा, टोकरी आदि लेकर निकल पडना चाहिए।

जो पूछना ठीक लगे सो पूछ लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० गगाबहेनने, पृ० ९३। सी० डब्ल्यू० ८८३५ से भी, सौजन्य गगाबहन वैद्य

१९८ पत्र बाबूराव डी० म्हात्रेको

सेगाँव
२१ जुलाई, १९३६

भाई म्हात्रे,

शूरजीभाईने[1] सन्देश भेजा है कि 'हरिजन'[2] मे आपके नामका उल्लेख न होने से आपको दु ख हुआ है। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसा जान-बूझकर नही किया गया। आपको पता होगा कि मै प्रशसाके मामलेमे कृपण हूँ। जहा श्री कर का उल्लेख हुआ वहाँ आपका भी होना चाहिए था, परन्तु उस समय आपका नाम मेरे सम्मुख नही था। आपकी बहुमूल्य सेवाओसे मै इतनी अच्छी तरह परिचित हू कि उनका मूल्य कम आँक ही नही सकता। परन्तु मै आपका उल्लेख करने के लिए विशेष अवसर नही निकालूगा। वह स्वय समयपर सहज रूपमे प्रकट होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८२४) से, सौजन्य बी० डी० म्हात्रे

१९९ पत्र : निर्मला गाधीको

सेगाँव, वर्धा
२१ जुलाई, १९३६

चि० नीमू,

कनुके बारेमे तुझे जो भय था वह सही निकला। तूने अपने पत्रमे लिखा है, इसलिए मै उसे किसीके साथ भेज रहा हूँ। इससे मुझे दु ख तो होता है किन्तु मै यह मानता हूँ कि फिलहाल ईश्वर की यही इच्छा है।

सत्यवानको जिस साँपने डसा था वह स्थूल साँप नही बल्कि विषय-वासना-रूपी साँप ही था। सावित्रीने उसके विषको अपनी पवित्रता और प्रेमसे उतारा था। सावित्रीकी कथाका यही रहस्य है। जिसकी पवित्रता विषय-वासनाको दूर कर सकती

१ शूरजी वल्लभदास।

२ तात्पर्य शायद ४ अप्रैल, १९३६ के **हरिजन**में प्रकाशित गांधीजी के भाषणसे है, देखिए खण्ड ६२, पृ० ३१३-१६।

है वह दूसरे सब दोषोको भी दूर कर सकती है। इस दृष्टिकोणसे तू अपनी पवित्रता और प्रेमसे रामदासके त्रिविध तापोको दूर करने योग्य बन, यही मेरी इच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे निर्मला गाधी पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०० पत्र : चन्द त्यागीको

२१ जुलाई, १९३६

भाई त्यागी,

तुमारा खत पूरा पढा नही जाता, बलवीरको[1] क्षय होना दुखद बात है। अब कैसे है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९७) से।

२०१ पत्र राजकिशोरीको

२१ जुलाई, १९३६

चि० राजकिशोरी,

तेरा खत मिला। जिस जगह तुमको शाति मिले वही रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३८) से। सी० डब्ल्यू० ४२८६ से भी, सौजन्य चन्द त्यागी

२०२ पत्र . अमतुस्सलामको

२१ जुलाई, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

मेरा खत मिला होगा। साथमे त्यागी[2] और राज[3]के लिए खत है। और भी एक खत[4] विद्यार्थियोके लिए है।

१ चन्द त्यागीका पुत्र।
२ और ३. देखिए पिछले दो शीर्षक।
४ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

राममेहरके[1] खतपर जो हकीकत हो वह लिखकर उसे मेरे पास लौटाना। मलकानीजी[2] से पूछना कि उसे क्यो मुक्त करना पडा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४१) से।

२०३. क्या हम प्रतिद्वन्द्वी है?

[२२ जुलाई, १९३६ या उसके पूर्व][3]

मेरे पास अमेरिकाके अखबारोकी दो कतरने आई है, जिनमे पण्डित जवाहरलाल नेहरू और मेरे पारस्परिक सम्बन्धोके बारेमे सरासर झूठी बाते लिखी है। उनमे कई बाते मेरे कथनोके रूपमे उद्धरण-चिह्नोमे दी गई है। उदाहरणार्थ, उन अखबारोके अनुसार मैने यह कहा कि "मेरे सारे जीवनका किया-धरा सब चौपट हो गया" (अर्थात् जवाहरलालके कार्यक्रमसे), "नेहरूकी नीतिसे मेरे कामको जितना धक्का पहुँचा है, उतना तो ब्रिटिश सरकारकी दृढता और दमन-नीतिसे भी नही पहुँचा।"[4]

इन दोनो लेखोमे मेरे मुँहसे जैसा कहलाया गया है उस तरहकी कोई भी बात मैने कभी कही ही नही, और न इस प्रकारका एक भी वाक्य मैने मुँह से कभी निकाला है। इसके अलावा, इन वाक्योमे जो विचार प्रकट किये गये है, मेरे दिलमे तो वे कभी उठे भी नही। जहातक मै जानता हूँ, जवाहरलाल इस नतीजेपर पहुँचे है कि भारतकी आजादी हिंसात्मक साधनोसे नही, बल्कि अहिंसात्मक साधनोसे ही प्राप्त हो सकेगी। यह भी मै अच्छी तरह जानता हूँ कि उन्होने लखनऊमे "स्वातन्त्र्य-संघर्षमे हिंसाके उपयोगका समर्थन" नही किया।[5]

इसमे सन्देह नही कि हम दोनोके बीच कुछ मतभेद है। कुछ वर्ष पहले हमने एक-दूसरेको जो पत्र लिखे थे उनमे ये मतभेद बिलकुल साफ बता दिये गये थे, और मुझे आशा है कि पत्र-लेखकोके प्रश्नोके उत्तरमे मै जल्द ही हम दोनो-के इन मतभेदोको और भी स्पष्ट रूपसे प्रस्तुत करूँगा। पर हमारे आपसके सम्बन्धो पर इन मतभेदोका जरा भी असर नही पड सकता। कांग्रेसके ध्येयके सम्बन्धमे आज भी हमारे विचार उतने ही दृढ है जितने कि हमेशासे थे। मेरे जीवनका किया-धरा काम जवाहरलालके कार्यक्रमसे न तो चौपट हुआ है और न हो सकता है। मैने तो यह भी कभी नही माना कि मेरे जीवनके कामको "ब्रिटिश सरकारकी दृढता और

१ दिल्लीके हरिजन आश्रमके सदस्य।

२. ना० र० मलकानी।

३ **हिन्दुस्तान टाइम्स** की जिस रिपोर्टमें यह लेख दिया गया था, वह दिनांक "२२ जुलाई, १९३६" के अन्तर्गत छपा था।

४ यह रिपोर्ट **लिटरेरी डाइजेस्ट**में छपी थी।

५ यह वाक्य **युनिटी**में प्रकाशित हुआ था, देखिए "पत्र के० नटराजनको", ७-७-१९३६ की पाद-टिप्पणी २।

दमन-नीति" से कोई धक्का पहुँचा है। मेरा अपना कोई दर्शन है, ऐसा अगर कहा जा सकता है, तो उस दर्शनके अनुसार किसीके कामको कोई भी बाह्य शक्ति हानि पहुँचा ही नही सकती। हानि तो कामको उसी सूरतमे पहुँचती है जब या तो उद्देश्य बुरा हो, या यदि वह अच्छा हो तो उसके समथक झूठे, कायर या मलिन हो, लेकिन ऐसी सूरतमे तो हानि पहुँचना उचित ही है। उक्त लेखमे "गाधीजी की गुप्त योजनाओ' का उल्लेख किया गया है।[1] गाधीको अगर मै जरा भी जानता हूँ तो मै यह दृढताके साथ कह सकता हूँ कि उसने अपने जीवनमे कभी भी कोई योजना गुप्त नही रखी। 'हरिजन' के पाठकोको जो-कुछ जानकारी है, उसके अलावा ऐसी कोई भी योजना यदि नही है जिसे मै प्रकट कर सकूँ, तो इसका कारण यही है कि ऐसी कोई योजना सचमुच है ही नही। दूसरे लेखमे यह कहा गया है कि जवाहरलाल और मै प्रतिद्वन्द्वी है। ऐसा विचार तक मेरे मनमे नही आ सकता कि मै जवाहरलालका प्रतिद्वन्द्वी हूँ, या जवाहरलाल मेरे। अगर हम एक-दूसरेके प्रतिस्पर्धी है भी, तो हमारी प्रतिस्पर्धा एक ही ध्येयकी प्राप्तिके प्रयत्नमे लगे दो व्यक्तियोकी एक-दूसरेसे प्रेम करने की प्रतिस्पर्धा है। अगर उस ध्येयतक पहुँचने के लिए हम दोनो कभी-कभी अलग-अलग रास्तोपर चलते हुए दिखाई दे तो मुझे आशा है कि दुनिया यह समझ लेगी कि दोनो क्षण-भरके लिए ही एक-दूसरेसे अलग हुए थे, और वह भी इसलिए कि हम फिर अधिकसे-अधिक प्रेम और आकर्षणके साथ एक-दूसरेसे मिले।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-७-१९३६

२०४ पत्र : साहबजी महाराजको

सेगाँव, वर्धा
२२ जुलाई, १९३६

प्रिय साहबजी महाराज,

मेरे पत्र[2] पर तत्काल गौर करने के लिए अनेक धन्यवाद। कृपा करके मिस्तरीको यथाशीघ्र अवश्य भेज दीजिए। मै बता देता हूँ कि हमारे पास नौ साचो, एक साधारण-सी सिलाईकी मशीन और एक देहाती सुतारीके अलावा और कोई औजार

१ **लिटरेरी डाइजेस्ट**में कहा गया था "गाधीजी की गुप्त योजना को जानने के लिए भारतके ३५ करोड लोग जितने उत्सुक हैं उतने ही उत्सुक मार्क्विस ऑफ लिनलिथगो हैं। लिनलिथगो अगले वर्ष ब्रिटिश सरकार द्वारा बनाया गया भारतका नया सविधान लागू करेंगे जिसके अन्तर्गत सघीय शासनकी स्थापना होगी। मुसलमानोंको, जिन्हें हिन्दुओंकी अधीनताका भय है, सन्तुष्ट करने के लिए, सविधानके अन्तर्गत उन्हें केन्द्रीय विधान सभामें लगभग बराबर सीटें प्रदान की गई है। केन्द्रीय विधान सभाको भारतके विदेश और प्रतिरक्षा सम्बन्धी मामलोंपर नियन्त्रण प्राप्त नहीं होगा। लिनलिथगो चूँकि जानते है कि न तो गाधी और न नेहरूके राष्ट्रवादी समर्थक ही नये सविधानको पसन्द करते है, इसलिए वे इन दो प्रतिद्वन्द्वियोंकी अगली चाल की सतर्कतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

२ ११ जुलाई, १९३६ का।

नही है। जिन औजारोकी आवश्यकता होगी उन्हे मिस्तरी अपने साथ ही लेता आये। यदि हमारी सामर्थ्य होगी तो हम खरीद लेगे, नही तो जाते समय अपने साथ ही वापस लेता जाये। वर्धा पहुँचने के दिनसे ६० रुपये प्रतिमास उसको मिलेगे या आप चाहे तो आगरासे रवाना होने के दिनसे। आप कृपया यह भी बताये कि उसके आवासके सम्बन्धमे हमसे क्या अपेक्षा रखी जायेगी। चर्मालय डाकघरसे डेढ मील दूर खुले मैदानमे है। चर्मालयमे ही उसको दो कमरे दिये जा सकते है।

आपने कृपापूर्वक इच्छा प्रकट की है कि मै कमसे-कम आपकी नयी गोशाला देखने दयालबाग दुबारा आऊँ, इसके लिए मै आभारी हूँ। मुझे तो देखने मे बहुत सुख मिलेगा, परन्तु मेरी वतमान साधना सेगाँव न छोडने मे है। मै इस छोटे-से गाँवमे अपने पैर जमा लेना और लगातार तीन ऋतुएँ यही बिताना चाहता हूँ। मुझे पता है कि इसमे तीन व्यतिक्रम तो आयेगे ही, पर उनकी सख्या बढाना नही चाहता। परन्तु इतना मै बता दू कि दयालबाग आने के लिए मुझे किसी प्रलोभनकी आवश्यकता नही।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६४) से।

२०५ पत्र : अमृतकौरको

२२ जुलाई, १९३६

प्रिय अमृत,

आज रात निकलने का साहस मत करना। कल प्रात काल यथाशक्य शीघ्रातिशीघ्र निकल पडना, परन्तु आराममे खलल डालकर नही। और हाँ, रास्तेमे मीराकी कुटीमे भी हो लेना।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३४) से, सौजन्य अमृतकौर।, जी० एन० ६८९० से भी

२०६ पत्र : प्रेमाबहन कटकको

२२ जुलाई, १९३६

चि० प्रेमा,

तेरे जन्मदिन पर लिखा हुआ कार्ड मेरे पास पहुंच गया था। मेरे आशीर्वाद तूने मान लिये थे, यह ठीक किया। शिष्या बननेके लिए तुझे काल्पनिक महात्मा बनाना पडेगा। जो इस नामसे प्रसिद्ध है वह महात्मा तो है ही नहीं, पिताका स्थान जरूर बहुतोंके लिए पूरा करता है। और इतनेसे उसे संतोष है। ये अनेक लोग अगर इस बातकी साक्षी भरें कि वह सत्पिता है तो उसे बडा सन्तोष होगा।[1]

तेरा काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मेरे साथ बा, मनु, लीलावती, बलवन्तसिंह और मुन्नालाल हैं।

तुकडो बुवा भी मेरे साथ रहते हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८३) से। सी० डब्ल्यू० ६८२१ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

२०७. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२२ जुलाई, १९३६

चि० नरहरि,

भास्कररावं[2] खरा नहीं निकल पाया। अब मेरा दुःख किसी बातसे नहीं बढता। समुद्रमें एक नदी न मिले या एक और आकर मिल जाये तो क्या घटता-बढता है? हम रोज प्रार्थनामें गाते ही हैं कि दुःख, दुःख नहीं है, सुख, सुख नहीं है। जब भगवान्को भूलेंगे तब दुःखका पहाड सामने खडा हो जायेगा।

१. प्रेमाबहन कटक गांधीजी को बहुत-से लोगोंकी तरह 'बापूजी' न कहकर 'महात्माजी' कहती थी। उनका कहना था कि 'बापू' शब्दका प्रयोग मैं अपने पिताके लिए करती हूँ, और एक शब्द दो का द्योतक कैसे हो सकता है?

२. भास्करराव वेहेरे।

भास्कररावकी मान्यता इस विचारके विरोधमें जाती है। आज मैंने विनोबाको भी सूचित कर दिया है।

रामजी के बारेमें तुम्हारी बात समझ गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९७) से।

२०८. पत्र : विजयाबहन गांधीको

२२ जुलाई, १९३६

चि० विजया,[1]

तेरा छोटा-सा पत्र मिला था। तू अभीतक दिल खोलकर नहीं लिख पाती। जमनाने[2] तेरे लिए मोटे अक्षरोंवाली मूल संस्कृत 'गीता' जी की प्रति माँगी है। मुझे यह बात ठीक लगी। मैंने मँगाई है, मिलने पर दोनोंके लिए भेजूंगा।

'गीता' जी का तीसरा अध्याय तो तेरा जाना हुआ है। वह हमारे लिए बहुत उपयोगी है। जैसा उसका नाम है वैसा ही उसका काम है।[3] उसमें यज्ञका अर्थ (पारमार्थिक दृष्टिसे) किया गया है और कहा गया है कि यज्ञका अर्थ है शारीरिक श्रम। मैंने तो पानी भरना, चक्की पीसना, अन्न कूटना, झाड़ू लगाना और सूत कातने की क्रिया को पंच महायज्ञ[4] कहा है, तू इनमें से कितने यज्ञ करती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१ पुरुषोत्तम गांधीकी पत्नी।

२. नारणदास गांधीकी पत्नी।

३ कर्मयोग।

४ स्वाध्याय, होम, बलिवैश्वदेव, पिंड-क्रिया और अतिथि पूजन, गृहस्थके लिए ये पाँच परम्परागत महायज्ञ बताये गये हैं।

२०९ तार . कमलनयन बजाजको

२३ जुलाई, १९३६

कमलनयन बजाज
इडियन कटिनजेट
ओलम्पिक विलेज
बर्लिन

सगाई[1] की घोषणा हो गई। भगवान् तुम्हे सुखी रखे। प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९०

२१० तार लक्ष्मणप्रसाद पोद्दारको

२३ जुलाई, १९३६

सेठ लक्ष्मणप्रसादजी पोद्दार
२ हेस्टिंग्स पार्क रोड
अलीपुर, कलकत्ता

कमलनयन और सावित्री दोनोको मेरा आशीर्वाद। ईश्वर करे यह सम्बन्ध उन दोनोके लिए और देशके लिए कल्याणकारी हो।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९७

१ कमलनयन और लक्ष्मणप्रसाद पोद्दारकी पुत्री सावित्रीकी, देखिए अगला शीर्षक।

२११. पुर्जा जमनालाल बजाजको

[२३ जुलाई, १९३६ के पश्चात्][1]

१ ४ वष तक या जबतक कमलनयनकी पढाई पूरी न हो जाये तबतक विवाह नही करना चाहिए।

२ भविष्यमे सावित्रीको जो शिक्षा लेनी हो वह उसे हिन्दुस्तानमे ही लेनी चाहिए। विवाहके बाद दोनो यात्रा या अन्य किसी कारणसे जहॉ चाहे वहॉ जाये।

३ कमलनयन और सावित्रीको एक-दूसरेसे पत्र-व्यवहार करने की पूरी आजादी अवश्य होनी चाहिए। मै यह नही मानता कि उक्त पत्र-व्यवहार गोपनीय हो।

४ सावित्रीको विवाहके पहले भी जब-तब या ज़हा जानकीबहन आदि हो वहाँ आना-जाना चाहिए।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५४) से।

२१२ पत्र कान्तिलाल गाधीको

सेगाँव, वर्धा
२४ जुलाई, १९३६

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। मै तेरा उद्वेग किस तरह शान्त करूँ? तू इतना नाजुक-मिजाज है कि कब किस बातपर दुखी हो जायेगा, समझ मे नही आता। एक तो यह बात तेरे स्वभावमे है, दूसरे इन दिनो तू दुखी भी है। हरिलालने जो-कुछ किया है, तू उसे भूल नही पाता। इसीलिए जो तुझे प्रिय नही लगता या जो तू समझ नही पाता, उससे उद्विग्न हो उठता है। इसमे तो ईश्वर ही तेरी सहायता कर सकता है और करेगा। तू जो भजन रस लेकर गाता है उनमे तेरे सभी तापोको शान्त करने की शक्ति है। ये भजन तेरी रक्षा करे।

रामचन्द्रन और पापरम्माका रोष मै तो समझ ही नही पाया। तूने समझा हो तो मुझे समझाना।

हरिलालके विषयमे तो जब तू आयेगा तब बाते करेगे। वह शराबमे चूर रहता है, ऐसा रामदासके पत्रसे मालूम हुआ। जब रामदासने उसके रादेरमे दिये गये अमर्यादित भाषणके बारेमे बातचीत की तो उसने कहा कि यह तो हमारे प्रचार करने की रीति है। रामदासने तुझे वह भाषण तो भेजा ही है।

१ देखिए "तार कमलनयन बजाजको", २३-७-१९३६।

पापरम्माका पत्र तो मैंने फाड दिया था। तेरे बारेमे उसमे कोई खास बात नही थी। शुरूसे अन्ततक उसमे तेरी तारीफ ही थी कि तू साधु है, बहुत होशियार है, यह उसका पुण्य ही है कि सरस्वतीको तू मिला और इसी तरहकी अन्य बाते। इसलिए मैंने जवाबमे लिखा था, "तुम्हारी आशाएँ पूरी हो।"

वे आग्रह करे तो भी तुझे एक महीनेसे ज्यादा वहा नही रहना है, यदि तेरी बहुत इच्छा हो तो काकासाहबकी अनुमति लेकर रह सकता है। किन्तु अनुमति लेना तभी योग्य है जब इसकी बहुत जरूरत हो। जरूरतका विचार तो तू ही करेगा।

देवदासका तार मेरी समझमे नही आया है। तुझे तो इसमे कुछ भी नही सोचना चाहिए।

तू वहाँ अपने शरीरको तो ठीक बना ही लेना।

सरस्वतीका पत्र इसके साथ है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३०१) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

२१३ पत्र सरस्वतीको

सेगाँव
[२४ जुलाई, १९३६][2]

चि० सरस्वती,

तुमारा खत अत मे मिला तो सही। ऐसे ही लिखा करो।

तू कैसी नहीं है? तूने नही कहा था अगर आज विवाह हो सके तो करना चाहती है। उसमे कोई दोष तो नही है? तुमारी इच्छा बालकपनकी थी। मै तो मामा का या मा का गुस्सा समज नही सकता।

कैसी उस्ताद लडकी है? काती को एक मास के लिए भेजा अब दो मागती है? ऐसे मत करो। एक माससे अधिक समय तक कातीको मत रखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५३) से। सी० डब्ल्यू० ३४२६ से भी, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

१ देखिए अगला शीर्षक।

२ देखिए पिछला शीर्षक।

२१४ पत्र : निर्मला गाधीको

सेगाँव
२५ जुलाई, १९३६

चि० नीमू,

इस बारका तेरा जाना मुझे बहुत बुरी तरहसे खटक रहा है। तेरा मेरे पास बने रहना मुझे अच्छा लगता था। इसके बाद मुझे साबरमती अच्छा लगता था। किन्तु तेरा कत्तव्य तो स्पष्टत बम्बई जाकर रामदासकी सेवा करना है। इसलिए बम्बई जा। वहाँ अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना, खूब सुखसे आनन्दपूर्वक रहना, और जैसी रामदासकी इच्छा है, उसकी गुरु बनना। मै यह तो तुझे समझा ही चुका हूँ न कि सावित्रीने किस चीजसे सत्यवानकी रक्षा की थी?[1] उसी प्रकार तू रामदासकी रक्षा करना। कानम के बारेमे चिन्ता मत करना। मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। सप्ताहमे कमसे-कम एक बार तो लिखना ही चाहिए।

इसके साथ ही रामदासके लिए एक पत्र है। इसके पहले मुझे उसे लिखने का समय ही नही मिला।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे निर्मला गाधी पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१५ ऐसी मुसीबत जिससे बच सकते हैं

एक सज्जनने अपनी कष्ट-कहानीसे भरा हुआ एक लम्बा पत्र भेजा है, जिसमे से मै निम्नलिखित अश यहाँ देता हूँ।[2]

इस तरहके जो बहुत-से पत्र मेरे पास आते रहते है उनमे से यह एक है। ऐसे पत्र ज्यादातर हिन्दीमे लिखे होते है। लेकिन अग्रेजी शिक्षासे लडकियोके माँ-बापोकी हालत सुधर जाती हो सो बात भी नही है। बल्कि बहुधा तो इस अर्थमे उनकी हालत और भी बदतर हो जाती है कि अग्रेजी पढी-लिखी लडकीके लिए जैसा वर चाहिए उसका बाजार-भाव बहुत ही बढा-चढा होता है।

१ देखिए "पत्र निर्मला गांधीको", २१-७-१९३६।

२ यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र लेखक एक बगाली स्कूल मास्टर थे, जिनके छह लड़कियाँ थी। उन्होंने अपनी आर्थिक दुरवस्थाका करुण विवरण देते हुए अपनी एक कन्याके लिए गाधीजीसे आर्थिक सहायताकी प्रार्थना की थी।

इस बगाली पिताके-जैसे मामलोमें तो कर्ज या किसी दूसरे रूपमे आवश्यक रकमकी व्यवस्था करने के बजाय सबसे अच्छी मदद यही हो सकती है कि माता-पिताको समझा-बुझाकर इस बातके लिए प्रेरित किया जाये कि वे अपनी लडकीके लिए वरका सौदा न करके उसके लिए किसी ऐसे लडकेका चुनाव करे, या खुद लडकीको ऐसा वर चुन लेने का मोका दे, जो प्रेमके लिए ही उससे ब्याह करे, न कि रुपयेके लिए। इसका अथ यह हुआ कि स्वेच्छापूवक पति चुनने की प्रवृत्ति बढाई जाये। जाति और प्रान्तकी यह दुहरी दीवार टूटनी ही चाहिए। क्योकि यदि भारत एक और अखण्ड है, तो निश्चय ही उसमे ऐसे कृत्रिम भेदभाव नही रहने चाहिए, जिनके कारण परस्पर खान-पान और ब्याह-शादीका व्यवहार न रखनेवाले अनगिनत छोटे-छोटे समूह बन जाये। इस निदय प्रथाका धमसे कोई सम्बन्ध नही है। ऐसी दलील करने से काम नही चलेगा कि इसकी शुरुआत व्यक्तियोसे नही हो सकती, इसलिए जबतक सारा समाज परिवतनके लिए तैयार न हो जाये तबतक उन्हे प्रतीक्षा ही करते रहना चाहिए। कभी ऐसा कोई सुधार नही हुआ जिसके लिए पहले कुछ साहसी व्यक्तियोने खुद ही समाजमे प्रचलित निदय रस्म-रिवाजोके खिलाफ विद्रोह न किया हो। और स्कूल मास्टरकी लडकी अगर विवाहको एक पवित्र सम्बन्धके बदले, जैसाकि वह निश्चित रूपसे है, बाजारू सौदा मानने से इनकार कर दे, तो भला उससे इन मास्टर साहबपर क्या मुसीबत आ जायेगी? इसलिए मै उन्हे यही सलाह दूगा कि वे ब्याहके लिए कर्ज या भीख माँगने का विचार साहसपूवक छोडकर अपनी लडकीकी सलाहसे उसके लिए, चाहे जिस जाति और जिस प्रान्तके, किसी उपयुक्त पतिका चुनाव करे, और इस प्रकार उन चार सौ रुपयोको भी बचा ले जो अपने जीवन बीमेसे वे पा सकते है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २५-७-१९३६

२१६ सेलममें पानीका अभाव

सेलम जिलेके हरिजन सेवक सघके मन्त्री लिखते है

यह जिला खुश्क है, और जिन कुओपर सवर्ण हिन्दुओका स्वामित्व है उनसे हरिजनोको पानी नहीं भरने दिया जाता। अलबत्ता, गाधी-आश्रमने दो-तीन गाँवोमें उनके लिए कुओकी व्यवस्था की है। अवगीर गाँवमें तो अब हरिजनोको रेलके इजनपर निर्भर रहना पडता है। वह जब स्टेशनपर आता है तब उससे वे अपने पीनेके लिए पानी लेते है। इजन-ड्राइवर कृपा करके थोडा पानी उन्हे दे देता है, उसीपर उन्हें सन्तोष करना पडता है। मगल-पुरम् नामका एक और ऐसा स्थान है जहाँ पानीकी किल्लत बहुत ज्यादा है।

इस पत्रसे दिल हिला देनेवाली स्थितिका पता लगता है। कोई खानगी सस्था तो कभी इस भयानक दुर्दशाका उपाय कर ही नही सकती। सेलम जिलेमें तो वैसे

ही हमेशा पानीका बडा अभाव रहता है। फिर इसके अलावा जब इसके बाशिन्दोके एक बडे भागमे साधारण भाईचारेका भाव भी न रहे तब तो कष्ट, और भी असहनीय हो जाता है। सेलम जिलेके हरिजनोके साथ यही हुआ है। क्या यह जिला बोडका प्रथम कत्तव्य नही है कि वह हरिजनोके लिए नियमित जल-व्यवस्था करे? हरिजन लोग समाज द्वारा सबसे ज्यादा उपेक्षित किन्तु उसके सबसे ज्यादा उपयोगी सेवक है। और अब, जबकि मद्रास सरकारने एक ऐसा महकमा खोल रखा है जिसका काम हरिजनो-जैसे वर्गोकी कठिनाइयोको दूर करनेके उपाय करना ही है, हरिजनोको शुद्ध पानी मिलने मे दिक्कत होने की दिन-दिन कमसे-कम शिकायते हमारे सामने आनी चाहिए। लेकिन इसका यह मतलब नही है कि हरिजनसेवक अपनी सतकता कम कर दे या दानी लोग निजी तौरपर हरिजनोके लिए पानीकी व्यवस्था करने की ओरसे लापरवाह हो जाये। हरिजनोके लिए पानीका प्रबन्ध तो होना ही चाहिए, चाहे वह किसी भी जरियेसे क्यो न हो। और यह होगा तभी जब इस दुर्दशाको दूर करने मे सब एक होकर प्रयत्न करे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-७-१९३६

२१७ पत्र: एम० सी० राजाको

सेगॉव, वर्धा

२६ जुलाई, १९३६

प्रिय राव बहादुर,

डाक्टर मुजेके नाम आपके पत्रका[1] आम तौरपर अनुमोदन करने मे मुझे कोई आपत्ति नही है। मै डॉक्टर मुजे या डॉक्टर अम्बेडकरके दृष्टिकोणको बिलकुल भी समझ नही पाता।[2] मेरे लिए अस्पृश्यता-निवारणका प्रश्न एक स्वतन्त्र प्रश्न है। यह मेरे लिए एक अत्यधिक धार्मिक प्रश्न है। पश्चात्ताप-भावसे सवर्ण हिन्दुओ द्वारा इसके स्वैच्छिक निवारणपर ही हमारे धर्मका अस्तित्व निर्भर है। यह मेरे लिए

१ और २ डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा स्वीकृत डॉ० बी० एस० मुजेका प्रस्ताव इस प्रकार था "यदि डॉ० अम्बेडकर अपना यह निश्चय घोषित कर दें कि वे तथा उनके अनुयायी इस्लाम और ईसाई धर्मके बजाय सिख धर्म ग्रहण करने को तैयार है और सचाई तथा पूरे हृदयसे अपनी संस्कृतिके प्रचारमें हिन्दुओ और सिखोंके साथ सहयोग करेंगे और दलित जातियोंको इस्लाम धममें खीचने का जो मुस्लिम आन्दोलन चल रहा है, उसका प्रतिकार करेंगे तो हिन्दू महासभा, उनके हिन्दू संस्कृतिके अन्तगत बने रहने के निश्चयको दृष्टिमें रखकर, घोषणा करेगी कि उसे निम्नलिखित बातोंमें कोई आपत्ति नही है

(१) दलित जातियाँ सिख मत अपना लें।

(२) नव सिखोको अनुसूचित जातियोंकी सूचीमें शामिल किया जाये, और

(३) पूना-समझौतेके अन्तगत दलित जातियोंको जो राजनीतिक अधिकार प्रदान किये गये हैं उन अधिकारोंका दलित वर्गके नव सिख और गैर सिख सदस्य खुली आपसी प्रतियोगिताके आधारपर उपभोग करें। गांधीजी के विचारों के लिए देखिए "पत्र बी० एस० मुजेको", ३-७-१९३६।

कभी सौदेबाजीका विषय नही बन सकता। और मुझे प्रसन्नता है कि आपने भी लगभग मेरे जैसा ही दृष्टिकोण अपनाया है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७८७) से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

२१८ पत्र : छगनलाल जोशीको

२६ जुलाई, १९३६

चि० छगनलाल,

आज तो पत्र लिखना ही पडेगा। लिखने की इच्छा तो थी ही किन्तु समय नही मिल पाता था।

इसके साथ भावनगरके भगियोका पत्र है। मैने उन्हे लिखा है कि स्थानीय सघके सेवक जैसा कहे वैसा किया जाये। पत्र तुम्हारी जानकारीके लिए ही भेज रहा हूँ।[2] देख लेना और कुछ आवश्यक समझो तो करना।

तुम्हारे व्यक्तिगत पत्रके विषयमे प्राय सोचता रहता हूँ। यह समय तूफानका है। इसमे अपने पाँव जमाये रहना कठिन है। इतना तो निश्चित समझ लो कि नीतिहीन बुद्धि, वेश्याके समान है। बाहरसे दीप्त, नाचती है, गाती है, मुग्ध करती है, किन्तु हमे उतारती है गड्ढेमे। देखता हूँ कि यह बुद्धि-वेश्या आज कितनोको ही गड्ढेमे उतार रही है।

आश्रमके छोटेसे-छोटे नियमका भी तुमको तो कदापि उल्लघन नही करना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३९) से।

२१९ पत्र : तारा एन० मशरूवालाको

२६ जुलाई, १९३६

चि० तारा,

तेरे पत्रका जवाब तो तुरन्त दे देना था। विस्तारसे जवाब देना चाहता था, किन्तु वह सम्भव नही हुआ। अब जवाब दिये दे रहा हू। डॉक्टर गौरीकी दवा तो जारी ही रखना।

१ अपने पत्रमें एम० सी० राजाने मुंजेके दृष्टिकोणको चुनौती देते हुए बताया था कि धर्मान्तरण और किसी सम्प्रदायके लोगोंके अन्यत्र जा बसनेमें अन्तर है। उन्होंने लिखा था कि मुंजे द्वारा सुझाये गये राजनीतिक जोड़-तोड़में वे शामिल नहीं हो सकते।

२ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

मुझे नियमित पत्र लिखते ही रहना चाहिए।

यदि अकोलामे रहना स्पष्ट रूपसे धर्म न दिखाई दे तो तुझे महिला-आश्रममे रहकर देख ही लेना चाहिए। यदि तू वहाँ अंग्रेजीका अपना ज्ञान बढाना चाहे तो बढा सकती है, इसके सिवाय, महिला-आश्रममे रहेगी तो बीच-बीचमे मुझसे मिलना हो जायेगा। किशोरलाल और गोमती तो वहाँ है ही। जमनालालजी भी अधिकतर वहा रहते है।

मैने तेरी तरफ सहायताका हाथ बढाया तो है, देखता हूँ, तू उसका लाभ किस हदतक उठाती है। मै नही थकूँगा। तू भी मत थकना। मै तो, तेरी बुद्धि और हृदय जहातक जा सकते है, वहाँतक तुझे ले जाना चाहता हूँ, अर्थात् तू मेरे पास निश्चित होकर रह।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२७) से। सी० डब्ल्यू० ५००३ से भी, सौजन्य कनुभाई एन० मशरूवाला

२२० पत्र : मीराबहनको

सेगाँव
२७ जुलाई, १९३६

चि० मीरा,

मैने तो ऐसी खबरके लिए अपना मन पक्का कर रखा था, विशेषत जब पता चला कि तुम नही आई हो। तुम्हे मनु चाहिए या लीलावती? सध्याको आऊँगा तब बताना। चाहे कीटाणु-प्रकोप हो, अथवा ठड लग गई हो, आशा है, कलतक तुम ठीक हो जाओगी। कल पहाडीकी राह नही बल्कि सीधे तुम्हारे पास आऊँगा। मै चाहता हूँ, तुम सिरपर मिट्टीकी पट्टी रखो, उससे दर्द मिट जायेगा। गरम या ठडे पानीमे सोडा लो। शेष जब आऊँगा तब।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२६ से भी

२२१ पत्र · उत्तमचन्दको

२८ जुलाई, १९३६

तुमने अपने चन्देकी रकमोको बूद बताया है और पूछा है कि उनके विषयमे हम मौन क्यो है। इससे तुम्हारा ठीक तात्पर्य मेरी समझमे नही आया। मै तुम्हे विश्वास दिलाता हूँ कि जिन उपेक्षित कार्योको मै कर रहा हूँ उनमे एक-एक बूद महासागरके समान है। तुमने सबसे हालमे जो चेक भेजा है, उसका बहुत-बहुत स्वागत है।

कमला-स्मारकके विषयमे तुम्हारी चेतावनी मुझे अच्छी लगी। उसका नियन्त्रण एक न्यासके सदस्य करेगे। मुझे आशा है कि बीमार स्त्रियो और बच्चोंके लिए वह सुख-धाम बनेगा।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

२२२. पत्र : मैडी मैकार्थीको

२८ जुलाई, १९३६

आपके लेख मुझे मिले और मैने उन्हे दिलचस्पीके साथ देखा है। परन्तु उन्हे 'हरिजन' मे छापने के पूर्व मै आपके बारेमे उससे आगे भी बहुत-कुछ जानना चाहूँगा जितना आपने अपने पोस्टकार्डमें बताया है। आपका क्या धधा है, क्या उम्र है, किस प्रेरणासे आप भारत आईं और भारतीय नाम[1] ग्रहण किया, आपका धर्म क्या है तथा आपकी जीविकाका साधन क्या है? आशा है, आपको इन प्रश्नोमे कोई अशिष्टता नही प्रतीत होगी। साधारणत हम 'हरिजन' मे उन्ही व्यक्तियो के लेख छापते है जिनसे हमारा परिचय हो और जो अपने व्यक्त आदर्शोंको अपने जीवनमें उतारने का प्रयत्न करते हो। पिछले ५० वर्षोमे मैने देखा है कि सदात्मा व्यक्तियोका सीधा-सादा लेखन प्रभावकारी होता है, जबकि केवल चतुर व्यक्तियोका प्रतिभाशाली लेखन भी प्रभावहीन सिद्ध होता है। लगता है, लेखक या वक्ताका अपना ओज शब्दोमे उतर आता है।

१ तन्द्रादेवी।

लेखोको छापने के पूव मुझे आपकी पूर्ण अनुमति चाहिए कि लेखका भाव बदले बिना उनकी काट-छाँट कर सकू।

आपका,
मो० क० गा०

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

२२३ पत्र . एफी एरिस्टार्शीको

२८ जुलाई, १९३६

तुम्हे पत्र लिखे तो युग बीत गया। तो, तुम्हारे निकट-सम्बन्धीकी मृत्यु हो गई। ईश्वरकी शोध करनेवालो के लिए तो प्रत्येक क्षतिमे एक लाभ ही है। यह वियोग तो नाममात्रका ओर अस्थायी है। मृत्यु निरपवाद रूपसे सबके लिए मुक्ति ही है। परन्तु तुम्हे मेरे उपदेशकी कोई आवश्यकता नही। चूकि तुम्हारे सम्बन्धीकी मृत्युपर मै कुछ लिखना चाहता था, अत मै तुम्हे मृत्युके विषयमे अपना वह आन्तरिक विचार ही बता सकता था जो मेरे मनमे काफी लम्बे अरसेसे कायम है। इस छोटे-से गॉवमे जो-कुछ हो रहा है उसका विवरण तुम्हे देनेमे समय व्यय करने का साहस नही कर सकता।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सोजन्य नारायण देसाई

२२४. पत्र · वल्लभभाई पटेलको

सेगॉव
२८ जुलाई, १९३६

भाई वल्लभभाई,

तुम काफी कष्ट भोग रहे हो। अबतक ऑपरेशन हो गया होगा।[1]
[2]का ढोग जबरदस्त कहा जायेगा। परन्तु यह गन्दगी प्रजा-परिषद् मे ही हो, सो बात नही है। ऐसा समझ लो कि यह व्यापक वस्तु है। हमारे समाजमे [3] जैसे बहुत-से लोग मौजूद है। [4]का भण्डा फूट गया। अब यह देखना है कि वे क्या करते है।

बापूके आशीर्वाद

१ वल्लभभाईकी नाकका ऑपरेशन ३० जुलाई, १९३६ को हुआ था।
२, ३ और ४ साधन सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

[पुनश्च]

भले ही यहाँ न आ सको पर तुम आराम पूरा लो। मेरी तबीयत अच्छी है।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९६

२२५ पत्र · लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

२८ जुलाई, १९३६

भाई लक्ष्मीनारायण,

दोनोके[1] हस्ताक्षर देखकर मुझे आनद होता है। हिप बाथ तो अभी तक चल रहा है। यहा तो पसीना आता है इसलिये स्टम [स्टीम] की आवश्यकता नही रहती। रात्रिको मिट्टी तो नही लेता हूँ। सिट्झ बाथकी मुझे आदत नही है। अब देखुगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६२५) से।

२२६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेगाव, वर्धा
२९ जुलाई, १९३६

भाई सतीश बाबु,

चन्द्रनाथ यदि सत्य व अहिंसा को पूणतया नही मानते है तो शायद ही तुमारा कहना माने।

हेमप्रभा क्यो चिन्ता करती रहती है?

हरिजन सेवक सघका कैसे चलता है? अरुण[2] कैसा है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२७) से।

१ गाधीजी का अभिप्राय शायद लक्ष्मीनारायण गाडोदिया और प्राकृतिक उपचार करनेवाले एक चिकित्सक से है।

२ सतीशचन्द्र दासगुप्तका सबसे छोटा लड़का।

२२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
३० जुलाई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मै कितना चाहता हूँ कि तुम 'पागलपन' के कामोको बन्द कर दो और आम भलाईके कामोके लिए अपनी शक्तिको बचाओ।

अगर तुम अपनी विनोद वृत्ति कभी न छोडो और अवधि समाप्त होनेतक अपने पदपर बने रहने का निश्चय करके अपनी नीतिको मौजूदा साथियोके द्वारा ही अधिकसे-अधिक आगे बढाने का प्रयत्न करो तो सब ठीक हो जायेगा। समय आ पहुचा है कि भविष्यका अर्थात् अगले वर्षकी योजनाओका विचार किया जाये। कुछ भी हो, तुम्हे विरोधी पक्षमे नही होना चाहिए। यह मेरी पक्की राय है। जब पिताजी की तरह तुम महसूस करो कि तुम काग्रेसको अकेले ही सँभालने को तैयार हो तब मेरे खयालसे मौजूदा साथियोकी तरफसे कोई विरोध नही पाओगे। आशा है, बम्बईमे तुम्हारा माग साफ रहेगा।[1]

कमला-स्मारकके बारेमे मुझे बेचैनी हो रही है। मुझे मालूम नही कि चन्दे या योजनाके बारेमे क्या हो रहा है। अगर खुर्शेद या सरूप[2] या वे दोनो इस चीज पर पूरा ध्यान लगा रही है तो अच्छा है। सरूपसे कहना कि मै आशा रखता हूँ कि इस सम्बन्धमे वह जो-कुछ करेगी, उससे मुझे अवगत रखेगी।

मै यहाँ समाजवादके प्रश्नकी चर्चा नही करूँगा। मै अपनी टिप्पणीको दुबारा देख रहा हूँ। देख चुकते ही तुम्हारे पास उसका मसौदा पहुँच जायेगा। अखबारोको वह बादमे भेजा जायेगा। मेरी कठिनाई सुदूर भविष्यके बारेमे नही है। मै तो सदा वतमानपर ही पूरा ध्यान लगा सकता हूँ और उसीकी मुझे कभी-कभी चिन्ता होती है। अगर वतमानको सँभाल लिया जाये तो भविष्य अपने-आप सँभल जायेगा। लेकिन मुझे आगेकी बात नही सोचनी चाहिए।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य सचमुच अच्छा होगा।

सप्रेम,

बापू

१ बम्बईमें २२ और २३ अगस्तको होनेवाली अ० भा० काग्रेस कमेटीकी बैठकमें।

२ विजयलक्ष्मी पण्डित।

[पुनश्च]

मेरे और जेकिन्सके बीचका पत्र-व्यवहार तुम देख लेना। मुझे भी कानूनी कार्रवाई से घृणा है। परन्तु यह मामला मुझे ऐसा लगता है, जिसमे कारवाई जरूरी है।

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२२८ चन्देकी अपीलका मसौदा[1]

[३० जुलाई, १९३६][2]

हरिजन सेवक सघकी ओरसे विनयपूर्वक कमसे-कम रु० के लिए अपील की जा रही है। १९३३-३४ मे चन्दा इकट्ठा करने और जनताके अन्त करणको झकझोरने के निमित्त गाधीजी ने दौरा किया था, परन्तु अब पुन उनसे यह आशा नही की जा सकती। अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मका कलक समझनेवाले सवर्ण हि दुओके लिए हरिजनोद्धारके कायको समथन देनेसे बडा और कोई काय नही हो सकता। अत अब जनताके लिए विचारणीय प्रश्न यह है कि हरिजन सेवक सघने जो उत्तरदायित्व उठाया है उसे पूरा करने के लिए वह सस्था क्या पर्याप्त योग्यता रखती है।

परिशिष्टमे दिये हुए विस्तृत ब्योरेसे जनता इसका निर्णय स्वय कर सकती है। और यदि वह सस्थाकी योग्यताको सन्तोषजनक माने, तो हम आशा करत है कि इस अपीलका बडी उदारतासे प्रत्युत्तर मिलेगा।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०३) से। सी० डब्ल्यू० ७९७६ बी से भी, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

२२९ चन्देकी अपीलका अनुमोदन

३० जुलाई, १९३६

मै इस अपीलका[3] बडे उत्साहसे समर्थन करता हूँ। अस्पृश्यता-निवारण हृदय-परिवतन पर आधारित है। धनका व्यय चाहे कितनी ही बुद्धिमत्तासे किया जाये, वह हृदय-परिवर्तन नही ला सकता। वह परिवर्तन तभी आयेगा जब हमारे पास नि स्वाथ और धार्मिक भावना रखनेवाले कार्यकर्त्ता काफी हो। आर्थिक चदे इस बातकी खरी कसौटी होगे कि ऐसे व्यक्ति है या नही। क्योकि हृदय-परिवतनका एक फल होना चाहिए —– हरिजनोके बीच अविरत कार्य। और यह काम पर्याप्त धनके बिना असम्भव

१ और २ यह मसौदा गाधीजी ने तैयार किया था, देखिए "पत्र एस० आर० वेंकटरामनको", ३० ७-१९३६।

३ देखिए पिछला शीर्षक।

है। बिना विपुल धनके न तो पाठशाला या छात्रावास खुल सकते है, न कुएँ खुद सकते हैं। मै आशा करता हूँ कि धनी और निर्धन दोनो अपनी सामर्थ्यके अनुसार इस अपीलके उत्तरमे उदारतापूर्वक दान देगे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०३) से। सी० डब्ल्यू० ७९७६ ए से भी, सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला

२३०. पत्र : एस० आर० वेंकटरामनको

३० जुलाई, १९३६

प्रिय वेंकटरामन,

श्री बिड़लाकी इच्छानुसार मैंने चन्देकी अपीलका[1] मसोदा बनाया है। उसके साथ ही मै अपना अनुमोदन[2] भी भेज रहा हूँ। फोटो-नकल छापने के निमित्त उसकी एक सुलिखित प्रति बनाने का समय नही रहा। यदि श्री बिड़लाके मनमे कुछ भिन्न रूपरेखा हो तो उनकी इच्छानुसार इस मसौदेमें फेर-बदल कर लिया जाये। मेरी रायमे तो यह अपील तभी निकालनी चाहिए जब सहायताके पक्के वचन मिल जाये और सम्पूण भारतमे चन्दा इकट्ठा करने का प्रबन्ध हो जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०३)से। सी० डब्ल्यू० ७९७६ से भी, सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला

२३१. पत्र : अमतुस्सलामको

३० जुलाई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,[3]

मुझे तेरे दो खतोका जवाब देना है। तेरा ऑपरेशन वहाँ भी हो सकता है। देवदासकी मारफत जो हो सकेगा, करूँगा। ब्रजकिशन जब आयेगे तब वे तो रहेगे ही। साथका पत्र[4] देवदासको देना।

रुक्मिणीके बारेमे समझा। अब तो वह गई न? मलकानीका उसे हैदराबाद पहुँचा आना ही ठीक होगा।

१ और २ देखिए पिछले दो शीर्षक।
३ यह सम्बोधन उर्दूमें है।
४ उपलब्ध नहीं है।

तेरा ऑपरेशन हो जाने के बाद तुझे बुलाऊँगा। इस बीच अपना शरीर ठीकसे सँभालना। जो चाहिए सो मँगा लेना। देवदासको अगर तू सचमुच भाई मानती है तो तुझे जो चाहिए वह उससे निसकोच माँगना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२)से।

२३२. पत्र : आनन्दशकर बा० ध्रुवको

३० जुलाई, १९३६[1]

सुज्ञ भाईश्री (प्रो० ध्रुव),[2]

आपके महादेवको लिखे दोनो पत्र मै ध्यानपूर्वक पढ गया हू। मुझे जो चाहिए वह ज्ञानियोके लिए नही बल्कि हरिजनो और सेवकोंके लिए चाहिए, जो उसे समझ सके और उसपर अमल भी कर सके। मै आपसे नये सिरे से अध्ययन नही करवाना चाहता किन्तु आप अपने विस्तृत ज्ञानके आधारपर कोई ऐसी चीज दीजिए जिसे आप [3] घटेमे या अधिकसे-अधिक आठ घटेमे लिख सके।

मैने आपको लिखा तो था ही कि आपकी हिन्दू-धम-सम्बन्धी पुस्तक मुझे बहुत अच्छी लगी थी। मै उसे दुबारा पढ जाऊँगा। किन्तु मुझे उसमे से उद्धृत अग नही चाहिए। घडी-भरके लिए कल्पना कीजिए कि आप किसी गाँवमे हरिजन समाजके बीच बैठे हुए है, और फिर कल्पनामे ही आप हरिजन बूढे-बूढियो और बच्चोसे चर्चा करे और उन्हे धार्मिक शिक्षा दे। इस तरहसे जो मिले वह मुझे चाहिए और उसपर आपकी मोहर होनी चाहिए। महादेव इसका अग्रेजीमे अनुवाद भी नही करेगे। आपने उन्हे जो प्रमाण-पत्र दिया है वह तो बिलकुल सही है लेकिन एक तो उन्हे समय नही है और दूसरी बात यह कि मुझे आपकी भाषा चाहिए। सरल अग्रेजी लिखना आपकी सामर्थ्यके बाहर नही है और अन्तमे किसी तरहका सुझाव देने का अधिकार तो हम दोनोको देगे न? आपकी स्वीकृतिसे ही उन सुझावोको स्थान दिया जायेगा।

अब आपके कार्यक्रमके बारेमे। उक्त कायक्रमको पढकर ही मै घबरा गया। फिलहाल गुजरात या हिन्दू-धमको पाण्डित्यकी जरूरत नही है। उससे न तो धर्मकी रक्षा होगी और न हिन्दुस्तान या गुजरातकी ही। मेरे कहने का तात्पर्य यह नही है कि पाण्डित्यकी कोई आवश्यकता ही नही है। पाण्डित्यके खयालसे नीरस रचनाएँ देनेवाले तो बहुत लोग पडे है। किन्तु लोगोमे घुलमिल जानेवाले और सच्ची धार्मिक

१ साधन-सूत्रमें स्थानकी जगह अहमदाबाद दिया हुआ है जो स्पष्ट ही चूक है।

२ १८६९-१९४२, सस्कृतके पण्डित और गुजराती लेखक।

३ साधन सूत्र अस्पष्ट होने के कारण यहाँ एक शब्द पढ़ा नहीं जा सका।

लगनवाले लोग थोडे ही है। उनमे से एक मै आपको मानता हूँ। यह माना जा सकता है कि पण्डितो और पढे-लिखोके लिए आपने अपने पाण्डित्यका अच्छा-खासा हिस्सा दिया है। किन्तु ग्रामीणो और मुझ-जैसोको आपने क्या दिया है? शिक्षितोको आपने जो दिया है उसमे से मुझ-जैसा यदि कुछ चुरा ले तो उसे देना नही माना जायेगा। टॉल्स्टॉयने जो किया वही आप कीजिए। उन्होने परवर्ती कालमे केवल रूसके अनजान किसानोको अपनी नजरके सामने रखा और उनके लिए जिस साहित्यकी रचना की वह सदा रहेगा। क्या मै आपसे इस तरहकी चीजकी कुछ आशा न करूँ?

जो हो, मै जो चाहता हूँ वह मैने कह दिया। मै इतना अधिक नही लिखना चाहता था। इसमे से जो आपके गले उतरे उसे ले ले और बाकी सब छोड दे। इससे मुझे दु ख नही होगा। याचकके लिए लज्जा कैसी? दाता तो अपनी इच्छा और सामर्थ्यके अनुसार ही देता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

२३३. पत्र . सत्यानन्द बोसको

[३० जुलाई, १९३६][१]

प्रिय सत्यानन्द बाबू,

आप ठीक ही कहते है कि लोकमतमे समय-समयपर जो परिवर्तन आते रहते है, काग्रेसको उनका पूरा खयाल रखकर चलना है। पडित जवाहरलाल इस बातके प्रति पूरी तरह सजग है और इस तरहके सवाल जैसे-जैसे सामने आते है, उन्हे हल करने की वे कोशिश करते रहते है। मेरा काम तो उन लोगोको सलाह-मशविरा देना-भर है जिन्हे किसी मामलेमे मेरी राय लेना जरूरी लगता है।

इसलिए अच्छा हो कि आप अपने विचार पडित नेहरूको सूचित करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ प्यारेलाल नैयरने इस पत्रको १९३६ के पत्रोंके साथ रखा है। इसके अतिरिक्त अगले शीर्षकसे लगता है कि यह पत्र इसी तिथिको लिखा गया होगा।

२३४ पत्र कनु गाधीको

३० जुलाई, १९३६

चि० कनु,

इसके साथ छह पत्र है। सेठ जुगलकिशोर और गगाबहनके पत्रोकी[1] नकल रख लेना। बाकीके बिना कुछ किये डाकमे छोड देना। सत्यानन्द बोसके पत्रकी नकल भी कर रखना।

इस प्रकार तू महादेवका काम सँभालने के योग्य बनता चला जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२३५ पत्र . जयन्ती एन० पारेखको

३० जुलाई, १९३६[2]

चि० जयन्ती,[3]

तेरे बारेमे समाचार पाता ओर लेता ही रहता था। तूने मुझे लिखा इससे मुझे प्रसन्नता हुई। तेरे विचार-परिवर्तनके बारेमे मुझे कुछ नही कहना है। तू अपनी चिन्तन-शक्तिमे उत्तरोत्तर वृद्धि किया कर और तुझे जो सच लगे उसपर निर्भयता से अमल किया कर। इसमे तेरा श्रेय ही है।

परन्तु तू प्रतिज्ञासे बँधा हुआ था और उसे भग करने से पहले तुझे अपनी टुकडीके नायकके पास जाकर अपने धमसकटकी बात बताना तेरा धम था। इसमे तू चूक गया। सैनिकका धम सहज नही है। यदि सभी ८० सैनिक अपनी-अपनी इच्छासे प्रतिज्ञाका अथ लगायेगे तो नायक क्या करेगा? ऐसे कही देशका काम होता है? किन्तु जो दूध बिखर गया वह फिर नही मिल सकता। यह तो भविष्यमे याद रखने की बात हुई।

मै यह जानता हूँ कि गुजरातमे वैमनस्य बढ रहा है। यह कहना मुश्किल है कि इसमे किसका दोष है। किन्तु मैने देखा है कि गुजरातके समाजवादी सत्यासत्यमे भेद नही करते। और उनमे कुछ ऐसे लोग भी है जिनके बारेमे मैने ऐसा सोचा भी नही था। इसका निश्चय ही मुझे दुख है। मै यह आशा किये हुए हूँ कि स्वय तूने कूटनीतिको धर्म नही माना होगा।

१ ये पत्र उपलब्ध नहीं हैं।
२ साधन सूत्रमें स्थानकी जगह अहमदाबाद दिया हुआ है, जो स्पष्ट ही चूक है।
३ एक आश्रमवासी जो बादमें साम्यवादी हो गये थे।

तू मुझसे आकर मिल गया था। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम दोनो भाई आर्थिक रूपमे उन्नति कर रहे हो।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२३६ पत्र : हीरालाल शर्माको

३० जुलाई, १९३६

भाई शर्मा,

बेबिटकी[१] खोज हो रही है। अबतक पता नही चला। सूत[२] कितना था? इतनी उस नबरकी खद्दर भेजी जायगी। बारीक सूतकी तलाशमे हूँ। भूल हि गया था। ग्राममे जानेकी मेरी विचारधारा तो जानते हो। बडे खच मे न पडो। द्रौपदी और बच्चा अच्छे होगे। मुझको लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वष, पृ० २५८ के सामने प्रकाशित प्रतिकृति से

२३७ पत्र बी० एस० मुजेको

सेगॉव, वर्धा
३१ जुलाई, १९३६

प्रिय डॉ० मुजे,

राव बहादुर एम० सी० राजाने सेठ बिडलाको ओर मुझे यरवडा-पैक्ट[३] पर आप दोनाके पत्र-व्यवहारकी प्रतियॉ भेजी है और कहा है कि हम उनका इच्छानुसार उपयोग करे। परन्तु आपके पत्रो पर "गोपनीय" लिखा है। मेरे विचारमे तो विषय-वस्तुमे गोपनीयताका कोई स्थान नही। परन्तु पत्र-व्यवहारके प्रकाशनके लिए राव बहादुरकी अनुमतिका लाभ उठाने से पहले मैं आपकी अनुमति चाहता हूँ। इसी सिलसिलेमे मै यह कहने की इजाजत चाहता हूँ कि आपका प्रस्ताव[४] यरवडा-पैक्टकी मूलभूत भावनापर कुठाराघात करता है और अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके उद्देश्यके पूर्णत विपरीत है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७८८)से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ ई० डी० बैबिट द्वारा लिखित **प्रिंसिपल्ज ऑफ लाइट ऐंड कलर**, जो हीरालाल शर्माने स्विट्जरलैंडमें प्राप्त की थी।

२ जिसे हीरालाल शर्माने अपने कुर्तोंके लिए स्वय काता था।

३ देखिए खण्ड ५१, परिशिष्ट २।

४ देखिए "पत्र एम० सी० राजाको", २६-७-१९३६ की पाद टिप्पणियाँ १ और २।

२३८ पत्र कान्तिलाल गाधीको

३१ जुलाई, १९३६

चि० कान्ति,

यहाँ ओजारोकी जरूरत तो पल-पल पडती है। मैंने गावमें बने औजार पाने की कोशिश की। वे नही मिले। अभी बगलोरमे ओजार बन रहे हैं। इस बीच औजारोकी तेरी पेटीकी कोई जरूरत मगनवाडीमे नही थी, इसलिए मैंने उसे यहाँ मँगवा लिया है।

लगता है कि उसमे से कुछ औजार गुम हो गये है। कुछ भी हो, मुझे जितने मिले मैंने उनकी एक सूची बना ली है। पत्रके पीछे सूची भेज रहा हूँ। जिनके गुम हो जाने की याद आये उनके बारेमे लिखना, उन्हे ढुँढवाने की कोशिश करूंगा।

पत्रके पीछेकी लिखावटसे तू जान जायेगा कि राजकुमारी यहाँ है। वह कल शामको आई। अब तो तू स्वीकार कर लेगा कि यह जगह भी तेरी धर्मशालाकी तरह हो गई है। एक कोना मेरा, एक राजकुमारीका, एक तुकडोजी महाराजका और एक मुन्नालालका। बीचमे बा, लीलावती और मनु। तुकडोजी महाराजसे मेरा तात्पय है—वे खुद और उनके भक्तगण। सारे दिन भक्तोकी टोलियो-पर टोलियाँ आती रहती हैं। क्या तूने इनका नाम सुना है? नागपुरमे मुझसे मिलने आये थे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३०३) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

२३९ एक बातचीत[1]

[१ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

अब, यह तो तुम देखती ही हो कि मुझे दाढी बढानी पड रही है।

इसपर उस महिलाने कहा, "पर मेरे पतिने आने से इनकार ही कब किया? जब भी आप बुलायें, वे आने को तैयार तो हैं।"

सो तो मै जानता हूँ, पर वह हरिजनोके बाल बनायेगा?

यह मै नहीं जानती, महाराज, पर आपके बाल वह खुशीसे बनाने को तैयार है।

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। सेगाँवके मुखियाने गाधीजी से स्पष्ट कह दिया था कि वह अस्पृश्यताके मामलेमें उनका साथ नही देगा और इसी कारण गाँवके नाईको गाधीजी की हजामत बनाने से रोका गया था। गाँवके मुखियासे गांधीजी की बातचीतके लिए देखिए अगला शीर्षक।

लेकिन जब वह मेरे हरिजन भाइयोकी हजामत बनाने को तैयार नही है, तो फिर मै उससे अपनी दाढी कैसे बनवा सकता हूँ?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-८-१९३६

२४०. एक बातचीत[1]

[१ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

तो, पाटिल, क्या तुम्हारे गाँवमे मुझे नाई मिलेगा ही नही?

नहीं महात्माजी, वह तो तैयार है। क्या मैं उसे भेज दूं?

यह मै जानता हूँ कि तुम उसे भेज सकते हो। पर मेरे हरिजन लडकेका क्या होगा? यह तो तुम्हे मालूम ही है कि मै यहाँ अपने एक कुटुम्बके साथ रहता हूँ और गोविन्दको तो मेरा पुत्र समझो। अगर तुम्हारा नाई मेरे गोविन्दको अपने पास नही आने देगा, तो मै उससे कैसे दाढी बनवा सकता हूँ? तुम अगर मेरी स्थितिमे होते तो क्या करते? बतलाओ न! मान लो, तुम्हे ऐसी जगह बुलाया जाये, जहाँसे तुम्हारा लडका जान-बूझकर निकाल बाहर कर दिया गया हो, तो क्या तुम वहा जाओगे?

जमनालालजी, जो बूढे पाटिलको बरसोसे जानते है, बोले, "बापूजी, क्यो बेचारेको फदेमे फँसा रहे है? हाँ, अगर इन्हे कोई यह यकीन दिला सके कि आप अस्पृश्यता दूर कर दें तो वे सीधे स्वर्ग चले जायेंगे, तभी ये ऐसा करेंगे। पर ये विश्वसनीय आश्वासन चाहते है, और हम लोगोका आश्वासन मानने को तैयार नहीं है।" इसपर सब लोग जोरसे हँस पडे। बूढे पाटिलको भी हँसी आ गई। उसने कहा, "आप सरीखे महात्मा जो भी करे सब उचित है, पर हम तो साधारण लोग है।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-८-१९३६

[1] महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२४१ बातचीत आगन्तुकोसे[1]

[१ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

वे साधु[2] या बुवा फिलहाल तो गाधीजी के कुटुम्ब के सदस्य ही है। उनके अनेक भक्तजन उनके दर्शन करने आते है। उन्हे बडा आश्चर्य होता है कि साधु बाबा न केवल महात्मा गाधीके साथ रहते है, बल्कि उनकी झोपडीमें एक हरिजन लडकेके हाथका पकाया हुआ खाना भी खाते है। वे आते और उनसे बहस करते है। कभी-कभी साधु बाबा जब उनकी शकाओ और कठिनाइयोका निवारण नहीं कर पाते, तब वे गाधीजी से पूछते है।

[एक आगन्तुक] लेकिन अस्पृश्यता तो, महात्माजी, पशु-पक्षी तक मानते है, पर आप मनुष्यसे भी अस्पृश्यता दूर कराना चाहते है।

[गाधीजी] यह तो आपने कुछ नयी-सी बात सुनाई। मै जरा समझ तो लूँ।

गधा कभी कुत्तेके साथ नहीं रहेगा, कौआ कबूतरके अडोको नही छुएगा, प्रत्येक योनिका अपना-अपना मण्डल है, अपना-अपना स्थान है, और ईश्वरकी सृष्टिमें प्रत्येकका अपना-अपना उपयोग है।

किन्तु गायो, गधो और कुत्तोको अगर आप साथ-साथ खिलाये और रखे तो वे खुशीसे एक ही जगह बने रहेगे। फिर आप क्या यह मानते है कि जो अन्तर गाय और कुत्तेके बीच है वही आपके और एक अस्पृश्यके बीच है?

क्या हम जगली खूँखार जानवरोसे नही बचा करते है?

तो शेर, चीता और साँपसे क्या हम इसलिए बचते रहते है कि वे अस्पृश्य है? यह भी भला कोई उपमा है। उनसे तो इसलिए दूर रहते है कि हम उनसे डरते है। हम उन्हे पाल सके तो बडे शौकसे पाल लेगे, और वे हमसे हिल-मिल भी जायेगे। जो उन्हे हिला-मिला लेता है, उसके चारो ओर लोगोके ठठ लगे रहते है, और कहते है कि अवश्य इस मनुष्यमे कोई चमत्कारी सिद्धि है।

लेकिन हम जो सूअरोको नहीं छूते इसका यह कारण थोडे ही है कि हम उनसे डरते है, बल्कि इसलिए कि वे गन्दे है।

मान लीजिए, एक आदमीकी नजरमे, जो आपसे अधिक स्वच्छ कपडे पहने हुए है, आप गन्दे मालूम हो, और आपको वह अस्पृश्य समझे, तो कैसा लगेगा? और

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२ तुकडोजी महाराज।

आप अपने घरकी स्त्रियोंके विषयमें क्या कहेंगे? क्या वे आपके बच्चोंका तमाम मल-मूत्र साफ नहीं करतीं? फिर भी वे गृहस्वामिनी हैं। ऐसा क्यों?

अच्छा, मान लें कि जिन्हें आप अस्पृश्य कहते हैं वे आपकी ही तरह साफ कपड़े पहन लें और आपकी खातिर वे जो गन्दा काम करते हैं — जिसके लिए आपको उनका आभार मानना चाहिए, न कि उन्हें नीच मानकर उनसे बचना चाहिए — वह कर चुकने के बाद अच्छी तरह नहा-धो डालें, तो फिर आप उन्हें छुएंगे? मान लीजिए, वे अच्छा साफ खाना खाते हैं, और गोमांस या मुर्दार मांसको छूते भी नहीं, तो क्या आप उनका स्पर्श करेंगे? हिन्दुस्तानमें ऐसे न मालूम कितने हरिजन हैं, जो स्वच्छ और पवित्र रहते हैं, तो भी हम उन्हें अस्पृश्य ही समझते हैं। हमारे इस घोर पापको ईश्वर किस तरह क्षमा करेगा?

पर आप तो यह भी चाहते हैं कि हम उन्हें अपने मन्दिरोंमें भी ले जायें। गलीज काम करनेवाले लोगोंको हम मन्दिरोंमें कैसे ले जा सकते हैं?

मैंने यह कब कहा कि वे मलकी टोकरियां सिरपर लिये हुए मन्दिरोंमें जायें? मैंने क्या यह नहीं कहा है कि स्नान और स्वच्छता-सम्बन्धी जो शर्तें दूसरे हिन्दुओंके लिए रखी हैं, उन्हें पूरा करके ही हरिजन मन्दिरोंमें जायेंगे? आपके अनुसार तो चीर-फाड़ करनेवाला एक भी डॉक्टर और दाई हमारे मन्दिरोंमें जाने के योग्य नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-८-१९३६

२४२. बातचीत एक मित्रसे[1]

[१ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

[मित्र] आठ घंटे रोजके शारीरिक श्रमपर आप क्यों जोर देते हैं? एक सुव्यवस्थित समाजमें क्या सम्भव नहीं कि केवल दो घंटे शारीरिक श्रम कराया जाये, और बौद्धिक तथा कलात्मक प्रवृत्तियोंके लिए काफी फुरसतका समय छोड़ दिया जाये?

[गांधीजी] हम यह जानते हैं कि श्रमिक और बौद्धिक दोनों वर्गोंके लोगोंमें से, जिन्हें यह सब फुरसतका समय मिलता है, वे उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग नहीं करते। सच पूछिए तो हमने तो अक्सर 'खाली दिमाग शैतानका घर' वाली कहावत ही चरितार्थ होते देखी है।

नहीं, फुरसतका समय हम बेकार नहीं जाने देंगे। मान लीजिए, हम दिनमें दो घंटे तो शारीरिक श्रम करें और छह घंटे मानसिक श्रम, तो क्या यह राष्ट्रके लिए हितकर न होगा?

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

मैं नही जानता कि आपकी इस योजनापर कहाँतक अमल हो सकेगा। मैंने इसका हिसाब लगाकर तो नही देखा, पर अगर कोई मनुष्य मानसिक श्रम केवल अपने लाभके लिए करेगा, न कि राष्ट्रके लिए, तो मुझे इसमे सन्देह नही कि यह योजना विफल ही होगी। हाँ, सरकार उसे उसके दो घटेके शरीर-श्रमके लिए काफी मजदूरी दे दे, और फिर उसे बगैर कुछ दिये दूसरा काम करने के लिए मजबूर करे, तो अलबत्ता वह एक अच्छी चीज हो सकती है। पर यह तो सरकारकी जोर-जबरदस्तीसे ही हो सकता है।

उदाहरणके लिए, आप अपनेको ही ले लीजिए। आप आठ घटेका शारीरिक श्रम तो रोज कर नहीं सकते, आठ घटे या इससे भी ज्यादा आपको मानसिक श्रम करना पडता है। आप अपनी फुरसतके समयका यह दुरुपयोग तो नही करते?

यह तो अनिवाय रूपसे करना पडता है। फुरमत इसमे कहा ह? इस फुरसतमे मै टैनिस वगैराह खेलने तो जाता नही। लेकिन अपने उदाहरणको लेकर भी मैं आपसे यह कहूँगा कि अगर हम अपने हाथसे आठ घटे राज मेहनत करत होत, तो हमारी मानसिक शक्तियोका इतना अच्छा विकास होता जिसकी कोई हद नही। हमारे मनमे एक भी निरथक विचार न उठना। यह बात नही कि मेरा मन निरथक विचारोसे एकदम मुक्त हो गया है। अब भी मेरी जो-कुछ प्रगति हे वह इस कारण हे कि जीवनमे बहुत पहले मैंने शारीरिक श्रमका महत्त्व जान लिया था।

पर अगर शारीरिक श्रमकी स्वभावत ऐसी महिमा हे तो हमारे यहाँके लोग तो आठ घटेसे भी ज्यादा मेहनत करते है, पर इसका उनकी मानसिक पवित्रता या दृढ़तापर कोई ऐसा उल्लेखनीय असर तो पडा नहीं।

केवल शारीरिक या मानसिक श्रमसे कोई शिक्षा मिलती हो यह बात नही, पर हमारे देशके लोग सख्तसे-सख्त मशक्कत बिना समझे-बूझे जडकी तरह किये चले जाते है और इससे उनकी सूक्ष्म सहज बुद्धि निष्प्राण हो गई है। यही मेरी सवर्ण हिन्दुओसे जबरदस्त शिकायत है। श्रमजीवी वगके लोगोको उन्होने जो काम दिया है वह सख्त और नीरस मेहनतका है, जिसमे न तो उन्हे कोई आनन्द मिलता है और न कुछ दिलचस्पी ही। अगर समाजमे वे सवण हिन्दुओकी बराबरीके समझे जाते, तो जीवनमे उनका स्थान आज सबसे अधिक गौरवका होता। यह युग तो कलियुग समझा जाता है। मै कह सकता हूँ कि सत्ययुगमे — चाहे यह युग जब भी रहा हो — हमारे समाजकी व्यवस्था वर्तमान युगसे कही अच्छी थी। हमारे प्राचीन देशमे कितनी ही सभ्यताएँ आईं और चली गई। इसलिए यह ठीक-ठीक कहना कठिन है कि किसी खास युगमे हमारी कैसी स्थिति थी। लेकिन इसमे तो जरा भी शक नही कि हमारी यह हालत शूद्रोके प्रति कई सदियोसे उपेक्षाका भाव रखने से ही हुई है। आज गाँवोकी सस्कृति — अगर वह कोई सस्कृति कही जा सकती है तो — एक भयकर सस्कृति है। गाँवके लोग आज जानवरोसे भी बदतर हालतमे रहते है। प्रकृति जानवरोको काममे लगाने और स्वाभाविक रीतिसे रहने के लिए मजबूर करती है। पर हमने अपने श्रमजीवी वर्गोको ठुकराकर इतना नीचे गिरा दिया है कि वे प्राकृतिक रीतिसे न काम कर सकते है और न रह ही सकते

है। अगर ये लोग बुद्धि और रसपूर्वक काम करते, तो हमारी हालत आज कुछ दूसरी ही होती।

तो श्रम और संस्कृतिको क्या हम अलग नहीं कर सकते?

नहीं, प्राचीन रोमवासियोंने ऐसा करने का प्रयत्न किया था, पर वे बुरी तरह असफल हुए। बिना श्रमकी संस्कृति, या वह संस्कृति जो श्रमका फल नहीं है, एक रोमन कैथलिक लेखकके अनुसार, नाशकारक ही है। रोम-निवासी भोग-विलासमें पडकर नष्ट हो गये, उनकी संस्कृतिका नाम-निशान भी न रहा। सिर्फ लिख-पढकर या तमाम दिन व्याख्यान देकर मनुष्य अपनी मानसिक शक्तियोंको विकसित नहीं कर सकता। मैंने जितना-कुछ पढा है वह जेलमें मिले हुए फुरसतके वक्तमें पढा। उसे पढने से मुझे इसीलिए लाभ हुआ कि मैंने यों ही ऊटपटाँग तौरसे नहीं, बल्कि किसी प्रयोजनसे ही पढा था। हालाकि मैंने लगातार महीनों आठ-आठ घंटे शारीरिक श्रम किया है, तो भी मैं समझता हूँ कि मानसिक शक्ति उससे कुछ कम नहीं हुई है। मैं अक्सर दिनमें चालीस-चालीस मील चला हूँ, तब भी मुझे कोई शिथिलता मालूम नहीं हुई।

लेकिन आपकी तो मानसिक शक्ति ही इस प्रकारकी है।

नहीं, यह बात नहीं है। आपको मालूम नहीं कि मैं स्कूलमें और इंग्लैंडमें भी एक औसत दरजेका विद्यार्थी था। किसी सभा-सोसाइटी या निरामिषाहारियोंकी जमात तक में मुझे बोलने का साहस नहीं होता था। आप यह कल्पना न कर बैठें कि ईश्वर ने मुझे कोई असाधारण शक्ति दी है। मेरा खयाल है कि ईश्वरने उस समय मुझे बोलने की शक्ति न देकर अच्छा ही किया। आपको जानना चाहिए कि हम लोगोंमें सबसे कम अगर किसीने पढा है तो वह मैं हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-८-१९३६

२४३. बातचीत : ग्राम-सेवक प्रशिक्षणशालाके छात्रोंसे[1]

[१ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

प्र० समाजवादियों को इसी बात की लगन है कि लोगोंके अन्यायपूर्वक कमाये हुए धनको कैसे छीना जाये।

उ० इस बातका निर्णय कौन करेगा कि यह न्यायपूर्वक कमाया हुआ है और वह अन्यायपूर्वक? इसका निर्णय तो केवल अन्तर्यामी ईश्वर ही कर सकता है, या फिर धनिकों और निर्धनोंके द्वारा नियत किये गये योग्य विशेषज्ञ। इसका निर्णय हर कोई नहीं कर सकता। पर अगर तुम यह कहते हो कि सभी तरहकी मिल्कियत और धन-दौलतका रखना चोरी है, तो फिर सभीको अपनी-अपनी धन-सम्पत्तिका

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

त्याग कर देना चाहिए। क्या हमने यह त्याग किया है? यह आशा रखकर कि दूसरे हमारा अनुसरण करेगे, हम खुद सम्पत्तिका परित्याग आरम्भ कर दे। जिनका यह विश्वास है कि उनकी खुदकी सम्पत्ति अन्याय-अर्जित है, उनके लिए उसके त्याग के सिवा दूसरा कोई मार्ग ही नही है।

प्र० हिंसाका मूल क्या है? क्या अन्याय और अपमानको रोकने के लिए हिंसाकी उत्पत्ति नहीं हुई?

उ० नही, हिंसाके कारण तो स्वार्थ, क्रोध, काम, लोभ आदि है।

प्र० मैं अपना प्रश्न शायद अच्छी तरह स्पष्ट नहीं कर सका। मान लीजिए, मेरे सामने एक भयकर अन्याय हो रहा है, जिसे देखकर मेरी हिंसक वृत्ति उत्तेजित हो उठती है। तो क्या इस हिंसाकी उत्पत्ति उस अन्यायके कारण ही नहीं हुई?

उ० नही, क्रोध तुम्हारी हिंसाका मूल कारण है। यह प्रश्न अलग है कि ऐसे मौकेपर हिसा करना उचित् है या अनुचित, पर इसमे कोई शक नही कि क्रोध ही हिसाका मूल है।

प्र० भिखमगोके साथ कैसा सलूक किया जाये? उन्हे भूखो मरते देखकर दरवाजेसे कैसे हटा सकते है?

उ० हमे यह भेद अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि कौन भिखारी है और कौन भूखो मरनेवाला। ये भिखमगे अक्सर काफी हट्टे-कट्टे होते हैं। उनमे कुछ तो चोरी भी करते है। मनुष्यको भीख मॉगने का कोई अधिकार नही। हाँ, उसे रोजीके लिए काम माँगने का अधिकार अवश्य है। हम भीख न दे, पर जो काम मॉगे उसे किसी-न-किसी काममे लगा देना हमारा धर्म है।

प्र० पर इस कर्तव्यका पालन आप कैसे करेगे, जब कि चार आदमियोके लिए आपके पास काम है, और आ जाते है आठ? क्या आप आठोको काममें लगा लेगे?

उ० नही, क्योकि मुझे अपनी मर्यादाओका ध्यान तो रखना ही चाहिए।

प्र० तब तो वे भूखो मरने की अपेक्षा भीख ही माँगेंगे।

उ० नही, उन्हे भीख माँगने के बजाय कोई-न-कोई काम ही करना होगा। अभी सेगॉवमे मेरा काम अच्छी तरह नही जमा है। जब सब ठीक-ठीक जम जायेगा, तो फिर एक भी आदमी काम न होने के कारण भूखा नही रह सकेगा। जो बेकार आदमी मुझसे काम माँगेगा, उसके हाथमे मैं चरखा और चक्की दे दूंगा।

प्र० गाँवोमें विरोध तो हमारा अवश्य होगा। जैसे, सफाईके कामका वे विरोध करते हैं। तो ऐसी स्थितिमें हमें क्या करना चाहिए?

उ० विरोध बर्दाश्त करना चाहिए।

प्र० वे हमारा बहिष्कार कर दें, हमें अपने कुओसे पानी न भरने दें, तो?

उ० भले करे। हम दूसरे कुओसे पानी भरेगे, पर उनके साथ हम लडाई-झगडा नही करेगे। हम तो उन्हे शान्तिके साथ समझाने का ही जतन करेगे। हमे सभी तरहकी कठिनाइयोका वहाँ शान्ति और साहसके साथ सामना करना पडेगा।

प्र० कठिनाई मेरे लिए यह है कि अगर मेरे सफाईके कामसे नाराज होकर लोग प्रार्थनामें सम्मिलित न हों, चरखा चलाना छोड़ दें, तब भी क्या मुझे अपना काम जारी रखना ही चाहिए?

उ० यह तुम्हारी उस भावनापर निर्भर करता है जिससे प्रेरित होकर तुम वहाँ जाओगे। अगर तुम खासकर सफाईके कामके लिए ही वहाँ जाओगे तो तुम्हें वह काम हर्गिज नहीं छोड़ना चाहिए। कमसे-कम हम अपने घरकी सफाई तो करेंगे ही। अपने इर्दगिर्दकी जगह भी साफ रखेंगे। पर अगर तुम्हारे खयालमें, पहले कताई और रात्रि-पाठशाला जारी करनेसे काममें आसानी होती है, तो सफाईका काम बादमें भी हाथमें लिया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-८-१९३६

२४४. गलतफहमियोंकी गुत्थी

मेरे सामने कई उर्दू अखबारोंकी कतरनें पड़ी हुई हैं, जिनमें हालमें ही स्थापित अखिल भारतीय साहित्य परिषद्‌की कार्यवाहियोंकी[1], और साथ ही बाबू राजेन्द्रप्रसाद, बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन, पंडित जवाहरलाल नेहरू और मेरी बहुत सख्त और कटु आलोचना की गई है। हमपर यह इलजाम लगाया गया है कि इसमें हमारा कुछ छिपा हुआ मतलब है। लेकिन मुझे मालूम है कि हमारा ऐसा कोई मतलब नहीं है। लिखनेवालोंने यह समझनेकी भी तकलीफ गवारा नहीं की कि हमने परिषद्‌में क्या कहा और क्या किया था। उनका यह खयाल है कि परिषद्‌का अन्दरूनी मंशा यह है कि उर्दूको हटाकर उसकी गद्दी हिन्दीको दे दी जाये, और उसे संस्कृतके शब्दोंसे इस कदर लाद दिया जाये कि मुसलमानोंके लिए उसका समझना करीब-करीब असम्भव हो जाये। बाबू पुरुषोत्तमदास टंडनने इलाहाबादमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनका संग्रहालय खोले जानेके अवसरपर जो भाषण दिया था, उससे ये लोग यह नतीजा निकालते हैं कि उनके इस दावेमें, कि २३ करोड़ हिन्दुस्तानी हिन्दी बोलते हैं या कमसे-कम समझ लेते हैं, सचाईका गला घोंट दिया गया है। इन लेखोंमें इतना ही नहीं, और भी ताने दिये गये हैं। पर उनकी तरफ मुझे ध्यान देनेकी जरूरत नहीं। मेरा मतलब तो सिर्फ यह है कि अगर हो सके तो उन गलतफहमियोंको दूर कर दूँ, जिनकी वजहसे हम लोगोंपर ये कटाक्ष किये गये हैं।

पहले आखिरी बातको लूँ। इन लेखकोंके पास टंडनजीका पूरा भाषण होता, तो उनको यह पता चल जाता कि इन २३ करोड़ हिन्दुस्तानियोंमें उन्होंने जान-बूझकर उर्दू बोलनेवाले हिन्दुओं और मुसलमानोंको शामिल किया था। इसीसे उन्होंने

१ नागपुरमें, देखिए खण्ड ६२, पृ० ३७०-७३।

हिन्दी शब्दके प्रयोगमे उर्दूको शामिल कर लिया था। १९३५ मे इन्दौरके साहित्य सम्मेलनमे[1] टंडनजी की सलाहसे जो प्रस्ताव पास हुआ था, उसके मुताबिक हिन्दीका मतलब उस जबानसे था जिसे उत्तर हिन्दुस्तानमे हिन्दू और मुसलमान दोनो बोलते है और जो देवनागरी या उर्दू लिपिमे लिखी जाती है। लेखकोको अगर यह व्याख्या मालूम होती तो उन्हे किसी तरहकी शिकायत न होती — हाँ, अगर हिन्दी शब्दपर ही उन्हे आपत्ति हो तो बात दूसरी है। अगर इसपर भी वे आपत्ति करते, तो वह दुःखकी बात होती। उत्तर हिन्दुस्तानमे बोली जानेवाली भाषाके लिए "हिन्दी" ही मूल शब्द है। उर्दू नाम तो — जैसाकि सब अच्छी तरह जानते है — खास तौरसे और खास मतलबसे रखा गया। अरबी लिपि भी मुसलमान शासकोके सुभीतेके लिए रखी गई थी। इतिहासका अगर यही क्रम है, तो जबतक "हिन्दी" शब्दमे दोनो जबानोको शामिल माना जाता है, तबतक उसके प्रयोगकी कोई मुखाल्फत नही होनी चाहिए। खैर, जो-कुछ भी हो, ज्यादासे-ज्यादा जो मतभेद है वह यही रह जाता है कि एक ही चीजका बोध कराने के लिए दो शब्दोमे से कौन-सा काममे लाया जाये।

हिन्दीको संस्कृत शब्दोसे लादने की शिकायतमे कुछ सचाई तो है। हिन्दीके कुछ लेखक अपने लेखोमे बेमतलब संस्कृत शब्द ठूसने का आग्रह रखते है। पर इसी तरहकी शिकायत उन उर्दू लेखकोके खिलाफ भी की जा सकती है जो फारसी या अरबी शब्दोके इस्तेमालपर अनावश्यक जोर देते है। इससे भी बुरी बात यह है कि वे भाषाका व्याकरण भी बदल देते है। ये दोनो ही तरहकी ज्यादतियाँ कुछ ही समयमे गायब हो जायेगी, क्योकि साधारण जनता ऐसी भाषाको कभी अपना नही सकती। जिस जबानको सामान्य जनता नही समझ सकती, उसकी उम्र लम्बी नही होती।

रही भारतीय साहित्य परिषद्की बात, सो उसका मंशा तो भिन्न भिन्न प्रान्तोके अच्छे-अच्छे विचारोको हिन्दी भाषाके द्वारा सारे भारतके लिए सुलभ बनाना है। इसमे, जैसाकि कुछ लेखोमे ताना दिया गया है, हमारा कोई छिपा हुआ मंशा या साम्प्रदायिक हेतु नही है।

"हिन्दी-हिन्दुस्तानी" शब्द तो मेरे कहने से अपनाया गया था। यह शब्द हिन्दीकी परिभाषा एक संयुक्त शब्दके द्वारा बतलाने के लिए अपनाया गया था। मौलवी अब्दुल कादर साहबने "हिन्दी-हिन्दुस्तानी" के बजाय सिर्फ "हिन्दुस्तानी" या "हिन्दी-उर्दू" के प्रयोगका प्रस्ताव रखा था। मुझे तो इन दोनोमे से किसी पर कोई एतराज नही है। लेकिन भारतीय साहित्य परिषद् अपने जन्मको नही भूल सकती थी। परिषद्का विचार तो इन्दौरके साहित्य सम्मेलनमे उठा था, और नागपुरमे सम्मेलनकी संरक्षकता मे ही उसने एक निश्चित रूप धारण किया। इसीलिए हिन्दी शब्दको रखना जरूरी हो गया। उसकी जगह उर्दू शब्दको रखने मे जो बुराई होती,

१ हिन्दी साहित्य सम्मेलन में, जो २० अप्रैल से २३ अप्रैल तक हुआ था, देखिए खण्ड ६१, पृ० ३३ ३४।

उसकी वजह तो मै बतला ही चुका हूँ। लेकिन, जैसाकि मैने दिखलाने की कोशिश की है, "हिन्दी", "हिन्दुस्तानी" और "उर्दू" एक ही अथ प्रकट करनेवाले विभिन्न शब्द है और उनसे एक ही भाषा या जबानका मतलब निकलता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-८-१९३६

२४५ एक जरायमपेशा जाति

इस पृथ्वीपर शायद ऐसी जगहे बहुत नही है जहाँ हिन्दुस्तानकी तरह जुर्म करना ही कुछ जातियोका पेशा हो और धमके आवरणमे वह पनपता रहता हो। इसीके कारण, हमारे देशमे जरायमपेशा अधिनियम (क्रिमिनल ट्राइब्स ऐक्ट) नामका एक कानून भी बना हुआ है। हिसार जिलेके अहेरी लोग भी ऐसी ही एक जाति माने जाते है। ७ जूनको गाँगन खेडी गाँवमे उनका एक सम्मेलन हुआ था, जिसके सभापति लाला ठाकुरदास भागव थे। इस सम्मेलनमे कोई १,००० से ऊपर अहेरी और २०० से अधिक सवण हिन्दू शामिल हुए थे। इसकी जो रिपोर्ट मेरे पास आई है उससे मालूम पडता है कि कुछ लोगोने अहेरियोसे यह कहा था कि अगर वे मुसलमान हो जाये तो उन्हे इस कानूनके अमलसे मुक्त करने मे मदद दी जायेगी और उनपर जरायमपेशा जाति होने का जो कलक लगा हुआ है वह दूर हो जायेगा। इसलिए अहेरियोने एक जगह एकत्रित होकर हिन्दू-धर्मके प्रति अपनी अटल श्रद्धाकी घोषणा की और सरकारसे प्रार्थना की कि वह उन्हे इस जरायमपेशा कानूनके अमलसे मुक्त कर दे।

लेकिन इन दिनो उत्तेजनाका जैसा वातावरण बना हुआ है उसमे सिर्फ सम्मेलनो और प्रस्तावोके जोरपर न तो सासारिक प्रलोभनोके सहारे चलाई जानेवाली धर्मान्तरणकी प्रवृत्ति को रोका जा सकता है और न वह मुक्ति ही हासिलकी जा सकती है जो वे चाहते है। अपना धम छोडकर दूसरे धर्ममे चले जाने के खतरेको रोकने और विशेष कठिनाइयोसे मुक्ति पाने का तो एकमात्र उपाय आत्म-शुद्धि तथा सवर्णों द्वारा दलितोकी निरन्तर नि स्वार्थ सेवा ही है। जरायमपेशा कौमे और अस्पृश्य जातियाँ तो, हिन्दू-समाज धर्मके पवित्र नामपर अपने ही लोगोके साथ जो अमानवीय और धर्म-विरुद्ध व्यवहार करता आ रहा है, उसके लिए उसे मिलनेवाला दण्ड है। और शरीरके किसी भी अवयवमे कोई तकलीफ हो तो सारे शरीरपर उसका असर पडता ही है। इसलिए इसका एकमात्र प्रभावकारी उपाय यही है कि अन्दर से ही सुधार किया जाये। अगर सारा समाज शुद्ध हो जाये तो उसपर होनेवाले बाहरी आक्रमण कितने ही भयकर क्यो न हो, उसपर उनका कोई प्रभाव नही पडेगा। इसके विपरीत, बाहरी आक्रमणोसे कितना ही लडते रहिए, उससे अन्दरूनी खराबी नही रुकेगी। अलबत्ता, बाहरी आक्रमणोका मुकाबला करने मे जो शक्ति खर्च होगी उससे और थकावट जरूर आयेगी, जिससे विनाश और जल्दी

होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जो जिम्मेदार सवर्ण हिन्दू इस सम्मेलनमें शामिल हुए थे वे सम्मेलनमें शुरू किये गये कामको जारी रखेंगे और रचनात्मक दिशामें ही अपनी शक्ति लगायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-८-१९३६

२४६ पत्र : रफी अहमद किदवईको

सेगाँव, वर्धा
१ अगस्त, १९३६

प्रिय किदवई,

मुझसे सन्देश देने को कहना तो यो भी [मेरे जबड़ोंमें से][1] किसी सही-सलामत दाँतको उखाड़ने-जैसा है, और उसपर भी जिसका आपने वर्णन किया है, वैसी सभाके लिए सन्देश देने को कहना!

जिस सभाकी अध्यक्षता मोहम्मद अली जिन्ना और उद्घाटन जवाहरलाल करें उसके लिए कोई सन्देश भेजना तो निश्चय ही बेकार होगा।

हृदयसे आपका,

मौलवी रफी अहमद किदवई
४ ए, रटलेज रोड
लखनऊ

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२४७ पत्र : बाल द० कालेलकरको

१ अगस्त, १९३६

चि० बाल,

स्वयं भोजन बनाने के अपने प्रयोगोंके आधारपर मैं जिस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ वह यह है स्वयं भोजन बनाने से पैसे बचते हैं, तन्दुरुस्ती बढ़ती है, उत्साह और व्यावहारिक ज्ञान बढ़ता है। इससे अनायास ही आहार-शास्त्रका ज्ञान हो जाता है, जिससे अन्य लोगोंके लिए भोजनका प्रबन्ध करने की शक्ति बढ़ जाती है।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके। उन्हें अनुमान से पूरा किया गया है।

२४८ पत्र कीकाभाई लावजीको

१ अगस्त, १९३६

भाई कीकाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। हम कह सकते है कि यरवडा-समझौता तो सबके लिए है। यदि यह हृदयमे उतर जाये तो सब अच्छा ही होगा। फिलहाल तो उसे दुबारा छापने की आवश्यकता नही है। आवश्यकता जान पडने पर मै इसे अवश्य छपवाऊँगा।

डॉ० अम्बेडकर जो कहते हैं वह हमे सहन करना चाहिए। जिसकी शिराओमे हिन्दू रक्त है वह अन्य हिन्दुओके अनुचित कृत्योके कारण अपना धर्म कदापि नही छोडेगा। हम यह भले ही कहे कि हरिजन अपने कर्मोके कारण दु खी है, किन्तु मुझ-जैसे लोग यह कदापि नही भूल सकते कि सवण माने जानेवाले हिन्दुओके जुल्म उनका दु ख बढा देते है। यदि सवर्ण हिन्दू सुधर जाये और प्रायश्चित्त करे तो आजकल हरिजनामे जो दोष जान पडते हैं, वे यदि जड-मूलसे दूर नही होगे तो हलके तो पड ही जायेगे।

मिलोकी सख्या बढने के साथ-साथ शराबखोरी तो निश्चय ही बढेगी।

बापू

कीकाभाई लावजी
पत्थर कुआँ
अहमदाबाद

गुजरातीकी नकल प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२४९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१ अगस्त, १९३६

भाई वल्लभभाई,

ऑपरेशन ठीक हो गया। सफल हो जाये तो तुम मुक्त हो जाओगे।

राजारामको मैंने जो जवाब दिया[1] उसकी नकल तो तुम्हे मिल गई होगी। तुमने अगर अभीतक जवाब न दिया हो, तो मेरा सुझाव यह है "तुम्हारे पत्रमे उत्तर देने-जैसी कोई नयी महत्त्वकी बात नही है। इसलिए मुझे अपने पहले पत्रमें कुछ भी जोडना नही है।"

अस्पताल छोडने की जल्दी मत करना और पूरा आराम लिये बिना काममे मत लगना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९६-९७

२५०. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

१ अगस्त, १९३६

चि० गगाबहन,

काफी समय बाद तुम्हारा पत्र मिला तो सही। नयी पाठशालाके बारेमे मैं कोई राय कायम नही कर सकता। उसके सचालकके नीतिनाशक विचार मेरे गले नही उतरते। किन्तु मेरे इस विचारको भी निरर्थक मानना। पन्नालालकी सलाह लेना और उनकी राय जान लेने के बाद तुमने जो सोचा हो वैसा करना।

समाजवादके बारेमे यदि तुमने सब-कुछ पढा न हो तो थोडा-बहुत पढने के बाद निर्णय करना। समाजवाद एक बात है और जवाहरलाल दूसरी बात। व्यक्ति और विचारधारामे सदा ही अन्तर रहा है।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२५१ पत्र . कृष्णचन्द्रको

१ अगस्त, १९३६

चि० कृष्णचन्द्र,

तुमारा खत मिला। गिरोगे, चढोगे, गिरोगे और चढोगे ऐसे होते होते कभी विजय पाओगे। प्रयत्न से कभी मत हारना। मुझको अवश्य लिखा करो। मेरे तरफ से उत्तर की प्रतीक्षा न की जाय। मुझे फुरसद नही रहती। कभी हो सका तो दो पक्ति लिखुगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८७) से।

२५२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गाधीको

सेगाँव, वर्धा
२ अगस्त, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

इस बार मणिलालने मुझे नही लिखा। मै पत्र बाये हाथसे लिख रहा हूँ, क्योकि दाहिना हाथ थोडा थक गया है। जो लोग हरिलालकी तारीफ करना चाहते है, वे खुशीसे करे। यहाँ तो वह बिलकुल भुला दिया गया है। शराबमे गक रहता है। यह ऐसा निकला, इसमे मेरी लालन-पालन करने की पद्धतिका कोई दोष होना चाहिए। मेरा जीवन भ्रमणमे गुजरा, उसमे बडे परिवर्तन होते रहे, यह स्पष्ट है कि मै उसे सँभाल नही सका।

मनु अब मेरे पास है। मजेमे है। बा और लीलावती तो है ही। सुशीलाको स्वादपर काबू करना चाहिए और अपना शरीर सुधारना चाहिए। केवल स्टार्च और चीनी खाने मे ही स्वाद नही है। तुम्हे वहाँ फल पर्याप्त मिल सकते है और तुम आसानीसे स्वास्थ्य बनाये रख सकते हो। दूध और ताजे फलोसे शरीर ठीक हो ही जाता है। रोज घूमना तो चाहिए ही।

लगता है, फिलहाल तो रामदास स्थिर हो गया है। नीमू भी उसके साथ रहने के लिए चली गई है। देवदास और लक्ष्मी दिल्लीमे है।

किशोरलाल अकोला गये थे। वहाँसे बम्बई चले गये है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५५) से।

२५३. पत्र : रावजीभाई एम० पटेलको

सेगाँव, वर्धा
३ अगस्त, १९३६

चि० रावजीभाई,

पत्र मिला। एन्ड्रयूजको फिजीसे चला गया समझो। फिर भी मैं पूछताछ करूँगा।

अगर तुम अच्छा घी इकट्ठा कर सको तो ठीक हो। मैं तो फिलहाल मगन-वाड़ीमें ही तैयार कराने का आग्रह कर रहा हूँ। एक अच्छा विशेषज्ञ मिल गया है। मैंने तो सेगाँवमें भी गाय रखी है।

लगता है, तुम्हारा काम ठीक तरहसे चल रहा है। पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत रावजीभाई पटेल
पो० ऑ० पेटलाद बरास्ता आणन्द
बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००८) से।

२५४ पत्र . बी० के० दीवानजीको

सेगाव, वर्धा, म० प्रा०
४ अगस्त, १९३६

प्रिय दीवानजी,

विदेशी पेढ़ियोके एजेन्टोकी तरह काम करना भारतीयोके लिए वाछनीय नही हो सकता, क्योकि इन पेढ़ियोका कारोबार देशके नैतिक और भौतिक हितोके लिए बाधक है। इतनेमे आपके सभी प्रश्नोका उत्तर आ जाता है। लेकिन मैं यहाँ इतना और कह दूँ कि भारतीय या विदेशी कोई भी ऐसा विज्ञापन स्वीकार करना, जिसका उद्देश्य ऐसी चीजोको विज्ञापित करना हो जो सम्बन्धित अखबार द्वारा प्रतिपादित नीतिके विरुद्ध हो, उचित नही ठहराया जा सकता।

चिकित्सकका धधा नेक तो जरूर है, लेकिन तभी जब वह पैसेके लिए नही, बल्कि सेवाके लिए किया जाये और चिकित्सक रोगोके इलाजको नही, वरन् उसकी

रोकथामको प्रमुखता दे और उनके इलाजके सम्बन्धमे ऐसी मर्यादा स्वीकार करे जिससे मानवेतर प्राणियाके प्रति दयाभाव का हनन न हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

२५५ पत्र : क० मा० मुशीको

४ अगस्त, १९३६

भाई मुशी,

वे[1] दूसरा पत्र निकालना चाहते है तो फिर हम 'हस'को किसलिए रखे? तुम उन्हे ऐसा क्यो नही लिख देते

"चूकि आप अन्य कोई पत्रिका निकालना ही चाहते है तो फिर आप 'हस' ही चलाते रहे। परिषद् अपने मुखपत्र का कोई और नाम रख लेगी।"[2]

यदि तुम ऐसा लिखना ठीक न समझो तो अपने विचारके अनुसार लिख देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६०४) से, सौजन्य क० मा० मुशी

२५६. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

सेगाँव, वर्धा
अगस्त, १९३६

प्रिय सुभाष,

आप जवाब देने में देर कर सकते है लेकिन मुझे तो लौटती डाकसे ही लिखना है। मुझे मालूम है, कैदीके लिए मित्रोके पत्र पाने का क्या महत्त्व होता है।

मुझे भी इस बातका खेद है कि हम नितान्त अराजनीतिक मामलोपर भी खुलकर चर्चा नही कर सकते।

मुझे हैरानी है कि आपको 'हरिजन' की प्रति नही मिल रही है। मै पूछताछ कर रहा हूँ।

१ मुंशी प्रेमचन्द।
२ मूलमें यह अनुच्छेद अंग्रेजीमें है।

मै अपने आहार-सम्बन्धी प्रयोगोमे निरन्तर जुटा हुआ हूँ। आजकल मै खाने-योग्य जगली पत्तियाँ ढूँढ रहा हूँ और मुझे इसमे आशातीत सफलता मिली है। मै सेगाँवके बाहरसे ताजी शाकभाजी नही मँगा रहा हूँ। मै दूसरी बात यह कर रहा हूँ कि ताजे फलोके विकल्पकी तरह नीबू और गुडका उपयोग कर रहा हूँ।

कई तरहके प्रयोगोके बाद मै इस निष्कषपर पहुँचा हूँ कि गायका दूध, ताजी हरी साग-भाजी (इसमे पौधोके फल और पत्ते भी शामिल है), प्याज और लहसुन, गेहूँ या और कोई अनाज, गुड और कोई रसीला फल सम्पूर्ण आहार है। जिन लोगोको दिमागी काम करना होता है मै उन्हे सामान्यतया दालोका उपयोग न करने की सलाह देता हूँ। वनस्पतिमे पाया जानेवाला प्रोटीन उतनी आसानीसे नही पचता जितनी आसानीसे जीवोसे प्राप्त प्रोटीन पचता है। मैने प्याज और लहसुनका उल्लेख किया है। बहुत-से चिकित्सक प्याज और लहसुनके उपयोगकी जोरदार सिफारिश करते है।

हृदयसे आपका,

श्री सुभाष बोस
माफत सुपरिटेन्डेन्ट ऑफ पुलिस
दार्जिलिग

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२५७ पत्र : साहबजी महाराजको

५ अगस्त, १९३६

प्रिय साहबजी महाराज,

आपके पत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। हम १२ तारीखको मिस्तरीका इन्तजार करेगे। उसके आने-जाने का खर्च उसे दिया जायेगा, और आगरासे उसके प्रस्थानके दिनसे ही उसका वेतन शुरू हो जायेगा।

इस प्रयोगसे[1] मै काफी आशा रख रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६५) से।

१ देखिए "पत्र साहबजी महाराजको", २२-७-१९३६।

२५८ पत्र . गगाबहन वैद्यको

५ अगस्त, १९३६

चि० गगाबहन,

तुम्हारे मनमें निराशा किसलिए? ५७ वर्ष किस तरह गये? मैंने तो तुम्हे जबसे जाना है, परिश्रमशील ही जाना है। परिश्रम करने की शक्तिके सिवा और कुछ हमें ईश्वरने दिया ही नही है। आलस्य न करके कर्त्तव्यमे लगे रहे तो फिर निराश होने का कोई कारण ही नही दिखता।

रमीबाई बहुत दु खी हो गई, ऐसा लगता है। उसकी कोई मदद की जा सकती है क्या? बधूभाईके बारेमे मालूम हुआ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती गगाबहन वैद्य
रामबाग, बोरीवली
बी० बी० ऐड सी० आई० रेलवे

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ ग स्व० गगाबहेनने, पृ० ९४। सी० डब्ल्यू० ८८३४ से भी, सौजन्य गगाबहन वैद्य

२५९. पत्र : न० चि० केलकरको

सेगाँव, वर्धा
६ अगस्त, १९३६

प्रिय श्री केलकर,

खबर है कि आपने कहा है "जब वे (गाधीजी) खुलेआम कहते है कि उनका उद्देश्य तिलककी राजनीतिक विचारधाराको कमजोर बनाना है, इत्यादि, इत्यादि।" यदि आपने ऐसा कहा हो तो कृपया मुझे बताये कि मैंने कब ये शब्द कहे? ऐसा-कुछ कभी कहने का मुझे तो स्मरण नही है, और भला मैं कह भी कैसे सकता था,

जबकि आपके कथनानुसार ही, जो सत्य भी है, "मैने श्री तिलकके कार्यको आगे बढाया है"?[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१२०) से, सौजन्य काशिनाथ नरसिंह केलकर

२६०. पत्र : घनश्यामदास बिडलाको

सेगॉव, वर्धा
७ अगस्त, १९३६

भाई घनश्यामदास,

दोनो खत पढ गया। बाकी सब बाद मे। पारनेरकर अबतक मुझे मिला नही है।

इटरव्यु[2] ठीक है। मुझे उसमे से कुछ आशाजनक नही है, वह कुछ भी कर नही पायगा। उनकी नीति और हमारी मे जमीन-आसमान का फरक है। अब उसकी ओर जाना ही नही, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। मैने किसी प्रकार का वचन दिया था ऐसा कहना ठीक नही। जो-कुछ भी किया वह सब करने योग्य था, इसलिये हुआ। कुछ प्रतिज्ञा के कारण नही। आगे बढने मे प्रजाहित नही था। इतना भविष्यकी स्पष्टता के लिये लिखता हू।

इलेकशनमे मै क्या कर सकता हू? हा, काग्रेसमे झगडा रोकने की चेष्टा अवश्य करूगा। कर रहा हूँ।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०२१ से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ इसके जवाबमें श्री केलकरने लिखा "तिलकके जिस कार्यको आपने आगे बढ़ाया है वह है जोरदार राजनीतिक आन्दोलन। लेकिन तिलककी राजनीतिक विचारधारा से मेरा अर्थ है तिलकका राजनीतिक दर्शन और पद्धति। राजनीतिक दर्शन और पद्धतिकी दृष्टिसे उनमें और आपमें बहुत बड़ा अन्तर है। अहिंसा, सत्य और असहयोगपर आपके आग्रहका अर्थ यह लगाया गया कि जिस राजनीतिक विचारधाराको आपने अपदस्थ किया उसमें उक्त तीनों चीजों के विलोमका समर्थन किया जाता था। " देखिए "पत्र न० चि० केलकरको", २४-८-१९३६ भी।

२ घनश्यामदास बिड़लाने वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगोसे ५ अगस्त, १९३६ को भेंट की थी।

२६१. भेंट . पॉला लेकलर और वाई० एस० चेनको[1]

[८ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

कई प्रश्नोके जवाबमें गाधीजी ने कहा

राजनीतिक कायक्रमके विषयमे तो आपको पण्डित नेहरूके पास जाना चाहिए। वैसे तो वे मुझसे भी ज्यादा व्यस्त रहत है, फिर भी सम्भवत आपको अपना उपयोगी आध घटा दे सकेगे। मै तो अपनेको राजनीतिक मामलोपर बोलने का अधिकारी नही समझता, और काग्रेससे अवकाश ग्रहण किये दो साल हो जाने के कारण अब एक तरहसे पिछड-सा गया हूँ।

लेकिन क्या यह बात नहीं है कि सम्भवत दूसरोको मौका देने के लिए, और इस खयालसे कि हार-थककर वे फिर आपके ही पास आयेंगे, आपने काग्रेससे अवकाश ग्रहण किया है?

मेरा यह ढग नही है। मै तो सत्यका उपासक हूँ। जब मैंने काग्रेस और देशकी तथाकथित राजनीतिसे अवकाश ग्रहण किया तब मैने सच्चे अर्थोमे अवकाश ग्रहण किया था। अब तो मेरा शरीर और मन दोनो इस सेगावमे ही है। आगे क्या होगा, यह तो केवल ईश्वर ही जानता है।

[वाई० एस० चेन] आपका शरीर ही यहाँ है, लेकिन आपकी आत्मा तो सारे ससारमें भ्रमण कर रही है।

हॉ, मगर मेरी राजनीतिक आत्मा नही। आज मै जो कर रहा हूँ, यानी गावमे रह रहा हूँ, वह तो मुझे अपने कार्य-कालके आरम्भमे ही करना चाहिए था, लेकिन उसके बजाय, अब अपने जीवनकी साध्य-वेलामे मै वह काम कर रहा हूँ।[2]

अमेरिकी महिला चाहती थीं कि बातचीत करके वे विक्षुब्ध ससारके लिए गाधीजी से यह सन्देश प्राप्त करें कि अपनी इस विपन्नावस्था और अस्त-व्यस्तता से वह किस प्रकार मुक्त हो सकता है।

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। पाला लेकलर अमेरिकी महिला थीं और वाई० एस० चेन चीनके कपास उद्योग आयोगके सदस्य थे।

२ पॉला लेकलरने गाधीजी के कथनको यो उद्धृत किया है "आप विश्वास कीजिए कि मैं अब जिस प्रकार रहना चाहता हूँ उसी प्रकार रह रहा हूँ। यदि मुझे प्रकाश दिख गया होता तो जो काम मैं अपने जीवनकी साध्यवेला में कर रहा हूँ, उसे जीवनके शुरूमें करता। अपने कार्य कालके अन्तमें अब मैं नव निर्माणका काम नींवसे शुरू कर रहा हूँ। अगर आप जानना चाहें कि मैं क्या हूँ तो यहीं मेरे रहन सहनके ढगका, मेरे आसपासके वातावरणका अध्ययन कीजिए। ग्रामोद्धार ही ऐसी बुनियाद है जिसके आधारपर भारतकी दशाको स्थायी रूपमें सुधारा जा सकता है।"

मै अब बाते नही करता। मै सन्देश नही दे सकता। यदि आप इस गाँवमे ठहरे, तो खुद देख सकती है कि मै क्या कर रहा हूँ। और अस्त-व्यस्ततासे ससारको कैसे मुक्त किया जाये, यह तो ऐसा विशाल प्रश्न है कि तत्काल इसका कोई उत्तर नही दिया जा सकता। लेकिन अगर इसका कोई जवाब हो सकता है तो वह यह है 'बस, एक ईश्वरके भरोसे।'

ईश्वरमें आपकी जो आस्था है और जो प्रकाश आपको प्राप्त है, मैं अमेरिकाको उसका दर्शन कराना चाहती हूँ।

शब्दो द्वारा मै ऐसा नही कर सकता। इस वक्त बातचीत करने की मेरी तबीयत नही है।

लेकिन आपके मनमें निष्ठा तो है न?

हा, वह तो जरूर है।

तब क्या आप उसे थोडे-से शब्दोमें नही बता सकते?

भला, मै शब्दोमे उसे कैसे व्यक्त कर सकता हूँ?

तब, आप प्राथनाके रूपमें ही कुछ शब्द, यानी आपकी जो आन्तरिक आकाक्षा है उसे ही कह दीजिए। आप बोलकर प्रार्थना ही कर ले।

नही! शायद मै ऐसा नही कर सकता। क्या आपके लिए इतना जानना काफी नही है कि मै एक सीधे-सादे देहातीकी तरह गावका सरल जीवन बिताने का प्रयत्न कर रहा हूँ। जब मै सफल हो जाऊँगा, तो मेरी आकाक्षा पूरी हो जायेगी।

और आपके बच्चो, यानी भारतवासियोका क्या होगा?

वे गावोमे रहते है। मै उनके साथ रहता हूँ और वे मेरे साथ रहेगे।

क्या आप सुखी हैं?

हाँ! इस सवालका जवाब मै दे सकता हूँ। मै पूरी तरह सुखी हूँ।

गाँवमें न रहते हुए जितने सुखी थे उससे भी अधिक?

यह मै नही कह सकता, क्योकि मेरा सुख बाहरी परिस्थितियो पर अवलम्बित नही है।

[वाई० एस० चेन] समाज-सुधारके कार्यक्रमके बारेमें कुछ जानना चाहते थे।

मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि अस्पृश्यता खत्म हो रही है। यह और जल्दी समाप्त हो सकती है, लेकिन हमारे पास इस कायके लिए पर्याप्त सख्यामे कार्यकर्त्ता नही है। यह सामाजिक कार्य बेशक है, लेकिन उससे भी ज्यादा यह एक जबरदस्त आध्यात्मिक आन्दोलन है। यदि अस्पृश्यता बनी रही तो हिन्दू-धम नष्ट हो जायेगा और उसके साथ ही हिन्दू-सस्कृति भी। यदि ऐसी विपत्ति आई तो सारे भारतका स्वरूप ही बदल जायेगा। हिन्दू सस्कृतिके नाशका भारतकी सामान्य सस्कृतिपर अत्यन्त घातक प्रभाव होगा। लेकिन मेरा सुदृढ विश्वास है कि अस्पृश्यताका अन्त अवश्यम्भावी है, वह खत्म हो रही है। यहाँ आप देखेंगे कि मै चारो ओर अस्पृश्योसे घिरा हुआ हूँ। उदाहरणके लिए, हमारा रसोइया एक अस्पृश्य लडका है। उसे खाना बनाना नही आता था, और स्वच्छता-सफाईके साथ बनाना

तो निश्चित ही नही आता था। अब वह खाना बनाना सीख रहा है। यह लडका बहुत अच्छा है, सीखना चाहता है और मेहनती है। यह चीज भारत-भरमे हो रही है। हमारे अच्छेसे-अच्छे कार्यकर्त्ता अस्पृश्योके बीच इसी ढगसे काम करने की कोशिश कर रहे है। यही पूर्ण सुधार है। हमे सामाजिक ऊँच-नीचको बिलकुल मिटा देना है। हमारे समाज-सुधार-कार्यक्रमके इस अगकी यही मुख्य बात है।

अमेरिकामे जो यह खयाल फैल गया है कि गाधीजी का प्रभाव अब कम हो रहा है उसे मै दुरुस्त करना चाहती हूँ। लेकिन नेहरूजी और आपके बीच विरोधकी जो कल्पना की गई है, उसमें सचाई क्या है?

इसके लिए आपको मेरा प्रतिवाद देखना चाहिए।[१]

उसे तो मैने देखा है।

मै कह चुका हूँ कि यह सरासर सत्यका उपहास है, बिलकुल झूठ है।

अच्छा, नेहरूके बारेमें आपके भाव क्या है?

नेहरूके लिए मेरे मनमे प्रेम और प्रशसाके सिवा और कोई भाव नही है। हम दोनो एक-दूसरेसे अलग नही है। करीब-करीब हर हफ्ते उनके दो पत्र मेरे पास आते है।[२] यह ठीक है कि ऐसी भी कई बाते है जिनके बारेमे मेरे और उनके विचार बिलकुल एक नही है। हमारे दृष्टिकोणमे जो अन्तर है वह स्पष्ट है। लेकिन फिर भी हमारे प्रेममे कोई कमी नही आई है। और यह अन्तर कोई नया हो, सो बात भी नही है। समय-समयपर उन्हे जो-कुछ महसूस हुआ उसे उन्होने मुझसे कभी छिपाया नही है। यहाँतक कि लखनऊमे उन्होने जो-कुछ कहा उसमे भी कोई नयी बात नही थी। यह तो उन विचारोका साराश-मात्र था, जो उन्होने भिन्न-भिन्न स्थानोपर भिन्न-भिन्न अवसरोपर प्रकट किये थे।

लेकिन क्या सचाई उन्हींके पक्षमें नहीं है?

नही। लेकिन यह कहना एक बात है कि उनके कुछ विचारोसे मै सहमत नही हूँ, और यह एकदम दूसरी बात है कि उन्होने मेरी सारी जिन्दगी के किये-धरे पर पानी फेर दिया है। यह तो सफेद झूठ है। इसके सिवा इसको और कुछ कहा ही नही जा सकता।[३] मुझे तो कभी ऐसा सन्देह भी नही हुआ कि जवाहरलालकी नीतिसे मेरे किसी कामको कोई भी हानि पहुँची है।

१ देखिए "क्या हम प्रतिद्वन्द्वी हैं?", २२-७-१९३६।

२ पॉला लेकलरने यहाँ गांधीजी के कथनको यों उद्धृत किया है "जवाहरलाल नेहरू और मैं मित्र हैं। यह सही है कि हमारे विचारोंमें कुछ अन्तर हो सकता है, लेकिन यह झूठ है कि हमारे बीच शत्रुता है। जब वे भाषण देने के लिए देशका दौरा कर रहे होते हैं, जैसाकि वे अक्सर करते हैं, तब भी हर सप्ताह उनके दो पत्र मुझे मिलते हैं। जो काम हम कर रहे हैं उसमें प्रतिस्पर्द्धा हो ही नहीं सकती।"

३ पॉला लेकलरने गांधीजी के कथनको इन शब्दोंमें उद्धृत किया है "उन लोगोंके अनुसार मैंने कहा कि 'मेरे जीवनका किया धरा सब चौपट हो गया . . . नेहरू की नीतिसे मेरे कामको जितना धक्का पहुँचा है उतना तो ब्रिटिश सरकारकी दृढ़ता और दमनसे भी नहीं पहुँचा।' लेकिन कड़े शब्दोंके प्रयोगसे बचने की अपनी प्रवृत्तिके बावजूद मैं कहूँगा कि यह सरासर झूठ है। मैंने ऐसी कोई बात न कभी कही और न कभी सोचता हूँ।"

क्या इसलिए कि जिस सत्यका आपने प्रतिपादन किया है, वह अब भी मौजूद है?

यह कहना सच तो है, लेकिन मै किसी बडे दार्शनिक दृष्टिकोणसे बात नही कर रहा हूँ। मै तो सिर्फ सासारिक अथमे ही यह कह रहा हूँ। मै कहना चाहता हूँ कि उन्होने ऐसा कोई काम नही किया है, जिससे मेरा कायक्रम या काम चौपट हो गया हो। अगर उन्होने यह कहा होता, जैसाकि कुछ ने कहा भी है कि 'आप जिन्दगी-भर बडी-बडी गलतियाँ करते रहे है। अब आपको अपने कदम वापस लेने चाहिए। आप देशको एक सदी पीछे ले गये है', तो मुझे जरूर परेशानी होती, क्योकि मेरे लिए उनकी बात बहुत मूल्य रखती है। पर इस तरहकी तो उन्होने कोई भी बात नही कही है। यह कहना भी बिलकुल सही नही कि उनके कार्यक्रममे मेरी सहानुभूति नही है। वे आज ऐसा कौन-सा काम कर रहे है, जिससे मेरी सहानुभूति न हो सके? वे जो वैज्ञानिक समाजवादकी बात कर रहे है उसके साथ मेरा कोई झगडा नही है। जिस प्रकारकी जिन्दगी आज वे सारे हिन्दुस्तानको जीते देखना चाहते है, मै उसी प्रकारका जीवन १९०६ से व्यतीत कर रहा हूँ। यह कहना कि वे रूसी साम्यवादके पक्षमे है, सत्यका मजाक उडाना है।[1] वे तो यह कहते है कि साम्यवाद रूसके लिए अच्छा है, पर उसे कोई असदिग्ध प्रमाणपत्र तो वे रूसके बारेमें भी नही देते। हिन्दुस्तानके बारेमे तो उन्होने साफ ही कह दिया है कि जो तरीके हिन्दुस्तानमे अख्तियार किये जाये वे ऐसे होने चाहिए जो हिन्दुस्तानकी जरूरते पूरी कर सके। वे यह नही कहते कि वर्ग-सघर्ष होना ही चाहिए, हालाकि उनका ऐसा खयाल है कि वह शायद अवश्यम्भावी है,[2] और यह तो अभी हाल ही मे उन्होने जोर देकर कहा था कि बगैर मुआवजा दिये कोई भी जब्ती नही होनी चाहिए। इस सबमे ऐसी कोई भी बात नही जिसका मै विरोध करूँ। बेशक तरीकेमें मतभेद है, पर यह कहना कि उन मतभेदोने हमे एक-दूसरेका शत्रु या प्रतिद्वन्द्वी बना दिया है, सत्यका उपहास करना है।[3]

उनके विश्वासो, उनके कार्यक्रममे आज ऐसी कोई चीज नही है जिसके बारेमे मै कह सकूँ इसका मै पूरी शक्तिसे विरोध करता हूँ। यदि मुझे वैसा लगता तो मै निश्चय ही वैसा कह देता। वे चीजोको जिस ढगसे रखते है, मै उस ढगमे नही रखूँगा। कुछ तरीके जो मैने अपनाये, उन्हे जवाहरलाल नही अपनायेगे।

क्या उनपर आपका स्नेह है?

जरूर, जैसाकि मेरा आपपर स्नेह है। पर इसमे ऐसी कोई खास बात तो नही है।

१ पॉला लेकलरकी रिपोर्ट के अनुसार गाधीजी के शब्द ये थे "यह कहना कि वे रूसी ढगके साम्यवादके पक्षमें हैं, जवाहरलालके साथ गम्भीर अन्याय करना है।"

२ पॉला लेकलरकी रिपोर्ट के अनुसार "मैं मानता हूँ कि वे वर्ग-सघर्षको अवश्यम्भावी मानते हैं, लेकिन वे उसे बचानेकी भरसक कोशिश कर रहे है।"

३ इसके बादके अनुच्छेद पॉला लेकलरकी उस रिपोर्ट से लिये गये है, जो बॉम्बे क्रॉनिकलमें पुनर्प्रकाशित हुई थी।

क्या हिन्दुस्तानके हितोकी दृष्टिसे आप उन्हें ठीक मानते है?

हाँ।

हमारी इस अमेरिकी मित्रके मनमें कराचीमें किसीने यह धारणा पैदा कर दी थी कि बाहरका जुल्म इतना बुरा नहीं है जितनी बुरी कि हमारी यह अन्दरकी फूट है, और वह मनमें इसी छापको लेकर अमेरिका उडनेवाली थी।

उसके ऐसा बताने पर गाधीजी के मुँहसे काफी कडी आलोचनाका यह वाक्य निकल गया, जिससे उसका मुँह ही बन्द हो गया

अगर मानव-प्रकृतिमे मेरा विश्वास न होता, तो मै यह कहता कि आपके मनपर ऐसी छाप डालना हिन्दुस्तानका नाम कलकित करने के लिए शैतानियतसे भरा हुआ एक षड्यन्त्र था।

यह पूछने पर कि यदि जनताको उनकी आवश्यकता होगी तो क्या वे फिर सक्रिय रूपसे मैदानमें आ जायेंगे, गाधीजी ने प्रश्नकर्त्ताकी ओर तेजीसे देखा और दृढ़ स्वरमें बोले

यह ईश्वरकी मर्जीपर है। मै पहलेसे कोई चीज तय नही करता बल्कि आवश्यकता कैसी है इसको देखता हू। अगले चन्द वर्षोंके लिए भी पहलेसे कुछ योजना बनाना मेरे सिद्धान्तके विरुद्ध है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ८-८-१९३६ और **बॉम्बे क्रानिकल**, ७-३-१९३७

२६२ दो शब्द-चित्र

बगालके पितामह बाबू हरदयाल नाग सेवा-प्रवृत्तिसे तो कभी थकते ही नही। उनके अटल देशानुरागमे कौन उनकी बराबरी कर सकता है? नीचे वे अपने गाँवके दो शब्द-चित्र देते हैं। एक चित्र तो उस समयका है, जब उन्होने उस गाँवको अपनी युवावस्थामें देखा था, और दूसरा आजका है। पाठकोको ये वर्णन रुचिकर प्रतीत होगे।[1]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ८-८-१९३६

१ यहाँ नहीं दिये गये हैं।

२६३ निन्दाकी नींवपर प्रचार

एक सज्जनने मेरे पास तबलीग-सम्बन्धी एक परचा भेजा है। मूल परचा उर्दूमें है, जिसका यह गुजराती अनुवाद है। इस गुजराती परचेके अनुवादक तथा प्रकाशक शेख उमरभाई मोहम्मदभाई है, और यह अहमदाबादमे छपा है। जिन सज्जनने मेरे पास यह भेजा है, उनके पत्रसे मै नीचे कुछ भाग उद्धृत कर रहा हूँ

> **आपके पास मैं एक परचेकी नकल भेज रहा हूँ, जिसे एक स्थानीय मुस्लिमने प्रकाशित किया है। स्पष्ट ही उन्होंने इसे इस विचारसे प्रकाशित किया है कि हरिजनोको इस्लाम ग्रहण कर लेने का प्रलोभन दिया जाये, और हिन्दुओके खिलाफ उनमें घृणाके भाव फैलाये जायें। इस परचेमें हिन्दू-धर्म और हिन्दू सस्कारोके बारेमे ऐसी-ऐसी बातें लिखी गई है जो न सिर्फ सरासर झूठी है, बल्कि हमारे देशके साम्प्रदायिक तनावको और भी बढ़ा सकती है।**
>
> **हालमें, मैंने उत्तर भारतके दो लडकोको बचाने का प्रयत्न किया है। उनका पता लगाकर उनके रिश्तेदारोके साथ, जो उनकी तलाशमें आये हुए थे, उन लडकोको घर भिजवा दिया है। अभी हालमें हरिजन लडकियोतक को इस्लाम ग्रहण कर लेने का लोभ दिया गया है।**
>
> **कृपाकर आप इस परचेको एक बार पढ़ जाइए, और फिर हमें कोई ऐसा रास्ता सुझाइए, जिससे ये गरीब और अपढ़ हरिजन ऐसे झूठे और द्वेषकी आग भडकानेवाले परचोंके जालमें न फँसें।**

मै दुःखके साथ परचेको पढ गया। जैसाकि भेजनेवाले सज्जनने इसके बारेमे लिखा है, यह काफी शरारतसे भरा हुआ है। पिता और पुत्र, दो हरिजनोके सवादके रूपमे यह लिखा गया है। पिताके कहने से लडका हिन्दू-शास्त्रोको पढता है और उनका मजाक उडाता है। इसमे हिन्दुओकी हरएक पवित्र चीजका ऐसा वाहियात व्यग्य-चित्र खीचा गया है जिसे देखकर हिन्दू-धर्म और सवर्ण हिन्दुओके प्रति घृणाका भाव भडक उठे। स्वामी श्रद्धानन्दजी तकका पवित्र नाम इस मुबाहसेमे घसीटा गया है, और उनके मुँहसे ऐसे-ऐसे शब्द कहलाये गये है, जो मै जानता हूँ, उन्होंने कभी नही कहे होगे। इसी एक वाक्यको लीजिए, "कुछ हिन्दू गोबरसे लिपे हुए चौकोमे इस तरह खाने बैठ जाते है, गोया वे टट्टी करने बैठे हो। बुरा हो ऐसे खानेवालो का!" क्या कोई भला आदमी अपने मानव बन्धुओ के बारेमे ऐसी बाते लिख सकता है? सारा परचा तोडी-मरोडी हुई बातोसे भरा हुआ है और उसमें हरिजनोको ऐसी-ऐसी आर्थिक आशाएँ दिलाई गई है, जो कभी पूरी नही हो सकती — खासकर यदि हरिजनो का कोई बडा समुदाय अपने बाप-दादाओका धर्म छोड देने के प्रलोभन के जालमे फँस जाये। जो

मौलवी हरिजनके लडकेको मुसलमान बनाता है वह कहता है कि "मै खुद पहले चमार था, पर मुसलमान हो जाने से मेरी शादी एक शरीफ मुस्लिम खानदानकी लडकीसे हुई।" नया मुसलमान उसी प्यालीसे पानी पीता है, जिससे कि वह मौल्वी पीता है, और जो बाकी पानी बचता है उसे सारी मजलिस पीती है। एक मुशीजी के आलीशान मकानमे अब उसे दावत दी जाती है। खानेका कमरा खुशबूसे महक रहा है। "हरएक लुकमा अमृत है, हरएक शबत आबेहयात है", और जो अभी-अभी तक हरिजन था उसके आगे हुक्का रखा जाता है, और फिर उसे सारी मजलिस पीती है।

यह देखकर कितना दुख होता है कि लोगोको फुसलाने के लिए धर्मको असस्कृत भौतिकवादकी इस निचाई तक घसीटा जाता है, लाखो-करोडो मानव प्राणियोकी चिरपाषित भावनाओको इस तरह पैरो तले कुचला जाता है!

मै आशा करता हूँ कि इस परचेको किसी भी विचारशील मुसलमानका समर्थन नही मिलेगा, पर यह जानने के लिए कि ऐसे-ऐसे परचे कैसी शरारत पैदा करते है, उन्हे इसे पढना जरूर चाहिए।

परचा भेजनेवाले सज्जनने मुझसे पूछा है कि इस शरारत-भरे प्रचारका मुकाबला किस तरह किया जाये। एक उपाय तो मेरे पास यह है कि इस तरह झूठ-मूठ बदनाम करनेवाले कुत्सित प्रचार-कायकी तरफ जिम्मेदार मुसलमानोका ध्यान खीचा जाये। वे खुद इस परचेकी तरफ स्थानीय मुसलमान नेताओका ध्यान आकर्षित कर सकते है। और दूसरा, और सबसे महत्त्वपूर्ण, उपाय यह है कि हिन्दू-धमकी आन्तरिक शुद्धि की जाये। जबतक हिन्दू-समाजमे यह अस्पृश्यताका जहर बना रहेगा, तबतक बाहरसे उसपर इस तरहके हमले होते ही रहेगे। जब हम आत्मशुद्धिकी सुदृढ और अडिग दीवार खडी कर देगे, तभी ऐसे हमलोसे हिन्दू-समाजकी रक्षा हो सकेगी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ८-८-१९३६

२६४. टिप्पणियाँ

कन्धोंके बजाय गाडियाँ

राजकोटके श्री सी० तेजपाल कई सालसे यह आन्दोलन कर रहे हैं कि मुर्दोको कन्धोपर ले जाने के बजाय हलकी ठेलागाडिया पर ले जाया जाये। वे भली-भाँति जानते है कि इसके लिए उन्हे एक ऐसी भावनाका मुकाबला करना पडेगा जो लाखो हिन्दू-मुसलमानोमें न जाने कबसे चली आ रही है। लोग तो मुर्देको कन्धा लगाने के लिए एक-दूसरेसे होड करते हैं। कन्धोपर मुर्देको ले जाने का दृश्य भी बडा असर डालनेवाला होता है। कमसे-कम हम ऐसा समझने के आदी तो हो ही गये है। लेकिन सिवा भावुकताके इस प्रथाके पक्षमे और कुछ भी नही है। जहाँ श्मशान या कब्रिस्तान कुछ दूर हो, वहाँ तो मुर्देको कन्धोपर ढोकर ले जाना बडा दिक्कततलब होता है। फिर, जब मरनेवाले की जात-बिरादरीके लोग थोडे हो, या किसी गरीबके यहाँ कोई मौत हुई हो, तब तो श्मशान नजदीक ही क्यो न हो, फिर भी मुश्किल ही पडती है। प्लेग और अकालके दिनोमे अक्सर लाशे किस प्रकार गली-सडकोपर पडी सडा करती है और चील-कौए उन्हे नोच-नोचकर खाते रहते है, यह हम सभी जानते हैं। इसलिए इसमे कोई सन्देह नही कि मुर्दोको गाडियोपर ले जाने के पक्षमे बहुत-कुछ कहा जा सकता है। श्री तेजपालने इसके लिए जो गाडी बनाई है उसपर १०० रुपयेसे कुछ ही ज्यादा खच पडता है। हिन्दुस्तान-जैसे गरीब देशमे सौ रुपये ऐसी बात नही है जिसकी हम कोई परवाह न करे। लेकिन अगर गाँवके महाजन और नगरपालिकाएँ इन गाडियोको रखने लगे और बरायनाम रकमपर भाडेपर दिया करे तो खर्चका यह सवाल हल हो सकता है। उस हालतमे, जो स्थानीय व्यक्ति इस सुधारके समर्थक होगे वे उत्साहपूर्वक अपने आसपास इसका प्रचार करेगे। श्री तेजपालने मुझे बताया है कि अहमदाबादकी नगरपालिकाने ऐसी एक गाडी रख ली है और सूरत, बडौदा, जामनगर और पोरबन्दरके महाजनो या सेवा-समितियोने भी यही किया है। बम्बईके प्रार्थना-समाजने भी एक गाडी रखी बताते है। यह पता लगे तो बडा अच्छा हो कि जहाँ-जहाँ ऐसी गाडियाँ रखी गई है, वहाँ अबतक इस दिशामे कितना क्या सुधार हुआ है।

कपास ओटनेकी चरखी

चरखेकी तरह, पीजने और कपास ओटनेकी चरखीमे भी बराबर सुधार हो रहा है, हालाँकि वह चरखेके-जितना नही हुआ है। लेकिन कताईसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य काम भी कताई-जितने ही महत्त्वपूर्ण है। अच्छी रुई और उसकी अच्छी तरह

सफाई, ओटाई और पिजाईका कपडा तैयार हाने के समय उसके सुथरेपन व उसकी मजबूनीपर बहुत असर पडता है। इनमे से कोई भी बात अगर दोषपूण हो तो निश्चित समयमे तैयार होनेवाले सूतकी मिकदार और उम्दापनपर उसका असर पडता है। इसलिए वर्धामे श्री राधाकृष्ण बजाज इस बातके प्रयोग कर रहे है कि कपास आटने की चरखीमे कोई सुधार होने की सम्भावना है या नही। अगर कही कोई ऐसे खादी-प्रेमी हो, जिन्होने इस दिशामे सुधार किया हो, तो उन्हे श्री राधाकृष्णसे पत्र-व्यवहार करना चाहिए, और अगर कोई नमूने भी उनके पास हो तो वे भी भेजने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-८-१९३६

२६५ पत्र : मीराबहनको

९ अगस्त, १९३६

चि० मीरा,

हा, तुम्हारा न आना ही अच्छा है। मै और अधिक दूध भेज रहा हूँ। अगर इसकी जरूरत न हो तो मोतीबहन इसको वापस ले आये।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५८) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२४ से भी

२६६ पत्र : कान्तिलाल गाधीको

सेगाँव, वर्धा
९ अगस्त, १९३६

चि० कान्ति,

मेरे मनमे तूने काँटा क्या चुभा दिया?[१] तूने जबसे मुझे पिस्तौल की यह गोली मारी, तबसे तेरा चेहरा मेरे सामने घूमता रहा है। यह क्या हुआ? तूने यह क्या किया? किन्तु इसमे तू क्या कर सकता है? स्वभावको कौन जीत सकता है? जो तेरे मनमे उठे, उसे तू जाहिर करे, यही ठीक है, नही तो

१ कान्ति गांधीने परम्परागत विद्याभ्यास करके उपाधि लेने की इच्छा व्यक्त की थी। देखिए "पत्र मणिलाल और सुशीला गाधीको", १६-८-१९३६।

पाखण्डकी सृष्टि होती है। इसलिए मैं अपने मनको धीरज बँधा रहा हूँ और जितना मुझसे बन सकता है, उतना तेरी मदद करने के बारेमे सोच रहा हूँ।

तू लम्बाई-चौडाईका अनुमान भेजे तो मै धोती यहाँसे भेज दूँगा। या तू जब यहाँ आये तब खुद उस नापकी धोती काट लेना। मेरे पास तीन थान है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३०८)से, सौजन्य कान्तिलाल गांधी

२६७ पत्र : कनु गांधीको

सेगाँव, वर्धा
९/१० अगस्त, १९३६

चि० कनैयो,

छोटेलालसे कहना कि जिनमे पाँच-सात सेर दूध आ जाये, ऐसे दो बरतन भेज दे। कलईदार पीतलके हो तो अधिक अच्छा। जस्तेके सस्ते मिले तो भी काम चल जायेगा।

राईका तेल भेजना।

साथमे कुछ पत्र भेज रहा हू।

हाथके बने कुछ कागज नोट-बुक वगैरह बनाने के लिए चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

पीछे देखो

१० अगस्त, १९३६

पीछे जो-कुछ लिखा है, सो कल का लिखा हुआ है, किन्तु पत्र यही छूट गया। बहुत महत्त्वपूर्ण तो नही था। अब मै कुछ पत्र और एक लेख इसके साथ भेज रहा हूँ। बादमे कुछ और भेजूगा। वहाँ जो एनिमा है, वह मुझे चाहिए। यदि वह वहाँ काममे आ रहा हो तो यहाँके लिए नया ले लेना जरूरी है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

२६८ पत्र : मीराबहनको

१० अगस्त, १९३६

चि० मीरा,

आशा है, प्रगति जारी रहेगी। अगर कोई गडबड हो तो मुझे तुरन्त सूचना देना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३५९)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२५ से भी

२६९ पत्र . जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३६[1]

प्रिय जवाहरलाल,

खान साहबको बम्बईमे होनेवाली बैठको[2] मे शामिल होने की सामान्य सूचना प्राप्त हुई है। उनमे शामिल होने की उनकी बिलकुल इच्छा नही है और मै उनको मजबूर नही करना चाहता। बम्बईमे उन्हे ऐसी सभाओ और समारोहोमे आने के लिए कहा जायेगा जिनमे उन्हे भाषण देने को भी आमन्त्रित किया जायेगा। मै नही चाहता कि उन्हे अभीसे यह सब करना पडे। वस्तुत मै चाहता हूँ कि वे साल-भर मेरे साथ बिताये। उनमे इतनी शक्ति नही है और न वे ऐसे ही है कि बीमारीके हमलोका उनपर असर न हो। इसलिए क्या तुम अनुपस्थितिके लिए उन्हे क्षमा कर दोगे?

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]
गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३४, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ साधन-सूत्रमें यह पत्र १९३४ के कागजातके साथ रखा गया है और ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्समें भी इसे इसी वर्षका बताया गया है। लेकिन यह चूक है, क्योंकि गांधीजी १९३६ में सेगाँवमें बसे थे।

२ अ० भा० काग्रेस कमेटी की।

२७०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१० अगस्त, १९३६

चि० प्रेमा,

तीन पैसेका कार्ड न लिखने मे हेतु था।[1]

तेरी राखी मेरे हाथ नही लगी। लगती तो मै जरूर बाँधता। परन्तु तूने भेज दी इसलिए उसका रस अथवा पुण्य तुझे मिल गया।

तू नये-नये काम हाथमे ले रही है, यह अच्छा है। तेरी पुस्तक ऊपर-ऊपरसे देख तो जाऊँगा।

सेगाँवके अनुभवोमे वृद्धि हो तो सकती है, परन्तु अभी नही। न फुरसत है, न इच्छा। अनुभवोको मै किसीको देने-जैसा नही मानता।

जिस भाषाका मनुष्य उपयोग करते है उसका रूढ अर्थ तो होगा ही, परन्तु उनका अपना अर्थ उसमे जरूर होगा, जो आगे-पीछेके प्रसगमे से निकाला जा सकता है। सत्यको सम्पूर्ण रूपमे किसीने जाना ही नही है, इसलिए जो मनुष्य जिस वस्तु को जिस रूपमे देखे उसी रूपमे कहे, यही उसके लिए सत्य है, भले ही वस्तुत वह असत्य हो।

इसी प्रकार एक ही वस्तु के सम्बन्ध मे लोगोंके विचार युगके अनुसार बदलते रहते है और वे ही सम्बन्धित युगके लिए सत्य माने जाते है। "असतो मा सद्गमय" मे यही अर्थ अथवा विचार निहित है।

जहाँ ऊँच-नीचका भाव उड जाता है वहाँ शूद्र अन्य तीन वर्णोकी सेवा करे, तो उसमे मुझे दोष दिखाई नही देता।[2] [किसीको कोई][3] शूद्र बनाता नही। [तब यदि स्वाभाविक रूपमे परिचर्या उसका धर्म हो][4] तो उसे बदलने का क्या प्रयोजन? ब्राह्मण और भगी पेटके लायक ही कमाते हो तो दोनोमे भेद क्या है? भगीके ज्ञानी बनने मे कोई रुकावट नही। मेरी कल्पनाके वर्णमे ज्ञानका एकाधिकार किसी का नही है। स्त्रियोकी प्रार्थनाके श्लोको[5] पर विचार करना। चार वर्णोके सामान्य

१ गांधीजी का २२ जुलाई, १९३६ का पत्र छोटा था। उतना कार्डपर भी लिखा जा सकता था, फिर लिफाफा क्यों भेजा, ऐसा प्रेमाबहनने पूछा था।

२ प्रेमाबहनने लिखा था कि महाराष्ट्रके प्राय सभी सन्त कवियोंने वर्ण-धर्ममें ऊँच-नीचका अस्तित्व स्वीकार किया है।

३ और ४ साधन-सूत्रमें ये दो वाक्य अधूरे हैं।

५ देखिए खण्ड ४४, पृ० ४०४५।

धर्म कौन-से हैं? ज्ञानदेव[1] आदिके वचनामे, शायद, ऊँच-नीचके भावका समर्थन करनेवाले वचन भी मिले। लेकिन किसी सतके बारेमे इस तरह उसके दो चार वचनो के आधारपर राय नही कायम की जा सकती। रामदासके[2] बारे मे तू जो कहना चाहती है वह मैं जानना हू। ये उदाहरण अनुपयुक्त सिद्ध हो तो भी मेरी दलीलपर आँच नही आती।

तेरी प्रार्थना मैं स्वीकार नही कर सकता, क्योकि तूने इस प्रार्थनाके औचित्यका पूरी तरह विचार ही नही किया है। तू प्रचलित प्रवाहमे बह गई है। तू, मैं और सब अपने-अपने माता-पिताके चौखटे मे ही पडे हुए हैं। उसे भूलकर नये कहलाने मे जितना अर्थ या अनर्थ है, उतना ही पुराने चौखटेके त्यागमे है। उसमे रहकर हम अनेक परिवर्तन कर सकते हैं। इसीका नाम प्रगति या उन्नति है। सर्वथा नये होने का अर्थ है उल्कापात या नया धर्म। हिन्दू-धर्मके लिए भी कही कोई चौखटा होगा या नही? बच्चे रोज पानीमें नये अक्षर बनाते है और बनाते ही वे मिट जाते है। परन्तु इसमे भी उनके लिए तो आनन्द है ही। लगता है, ऐसा ही आनन्द तू लेना चाहती है। परन्तु पुराने चौखटेमे पले हुए मुझ ६७ वर्षके बूढेको तू पानीमे अक्षर लिखने के लिए कैसे खींच सकेगी? मैं तो किनारेपर खडा तेरे और तुझ जैसोके खेल देखा करता हूँ। आगामी 'हरिजन' मे एक पत्रकी आलोचनामे इससे सम्बन्धित कुछ देखेगी।[3]

मेरा अज्ञान तेरे हाथ ठीक ही लगा। अभी और खोज करे तो इससे भी घोर अज्ञान तेरे हाथ लगे। परन्तु जब तुझे मेरे पूर्ण अज्ञान का पता चलेगा तब तू भाग तो नही जायेगी? इतना वचन दे दे तो मैं साफ कह दू कि मैं कुछ जानता ही नही, क्योकि ऐसा अध्ययन मैंने किया ही नही है।

साम्यवादके विषयमे अपने सन्तोषके लायक मैंने पढा है। स्वराज्यमे किसकी जरूरत होगी, यह तो स्वराज्यको देखू तभी कह सकता हूँ। मेरा विरोध तू जहाँ देखे वहाँ सत्य-असत्य तथा हिंसा-अहिंसाके सम्बन्धमे ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८४)से। सी० डब्ल्यू० ६८२२ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

१ ज्ञानेश्वर, महाराष्ट्रके सत कवि।

२ समर्थ रामदास, शिवाजी के गुरु।

३ देखिए "वर्ण बनाम जाति", १५-१२-१९३६।

२७१. पत्र : नारणदास गांधीको

१० अगस्त, १९३६

चि० नारणदास,

प्रेमाका पत्र सलग्न है। तुम लीलावतीको बुला रहे हो। मैंने तो उसे खुशीसे इजाजत दे दी है। किन्तु उसका मन यहामे हिलने का नही होता। बहुत अस्थिर है। एक वर्ष स्थिरता पाने का प्रयत्न करके देखना चाहती है। मानती है कि अगर वहा चली जायेगी तो उसमे विक्षेप आयेगा। इसमे तथ्य तो जरूर है।

इसलिए यदि उसके बिना काम चलाया जा सकता हो तो मेरी राय है कि चला लेना चाहिए। कल कह रही थी कि मै खुद लिखूगी। कनैयो अक्सर आ जाता है। देखता हूँ, बहुत प्रसन्न है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५०१ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

२७२. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१० अगस्त, १९३६

चि० नरहरि,

सूखे हुए नीबूमे से क्या तुमने कभी रस निकाला है? यदि जवाबमे 'ना' कहो तो फिर मेरे द्वारा वाचनमालाके लिए पाठ किस तरह लिखवा सकोगे? तुम्हारी पत्रिका पढ गया हूँ, अच्छी है। किन्तु मेरे लिए नही है। मुझसे बने तो मै सारा लिखना बन्द कर दूँ। नया कुछ लिखने के लिए तो मत कहो। मुझे गया-बीता मानकर अपना काम चलाते रहो।

मारुति[1] की इच्छा घर बनाने की है। जमीन हरिजन आश्रमकी चाहिए। अवन्तिकाबाईकी[2] जमीनका क्या हुआ? क्या वह या उसमे से कुछ दी जा सकती है? या फिर वह जो पैसा खर्च करना चाहता है सो हमारे पास जमा कर दे और

१ गांधीजीकी गोद ली हुई हरिजन पुत्री लक्ष्मीका पति।

२ अवन्तिकाबाई गोखले।

इस रकमके हमारे पास जमा रहते हुए जबतक चाहे जमीनका उपयोग करे और अपनेको घरका मालिक माने। यदि हमें यह सुविधाजनक न लगे तो हम घरकी उस समयकी कीमत कूतकर उसका पैसा वापस कर दें। यह सब तो उस हालतमें करना पड़ेगा जब अवन्तिकाबाईकी जमीन न मिले या आश्रमकी जमीन न बेची जा सके। मुझे तो बेचने में कोई हर्ज नहीं दिखता। सब-कुछ सोचकर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९८)से।

२७३. पत्र: हीरालाल शर्माको

१० अगस्त, १९३६

चि० शर्मा,

तुमारा पत्र मिला। मैं लज्जित होता हूँ कि बेबिट अबतक नहीं मिलता,। मिल तो जायगा। सूत दूसरे सूत के साथ मिल गया। तुमारे मेरे पाससे खादीका स्वीकार करना चाहीये।[१]

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २५९ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

२७४. पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगाँव, वर्धा
१२ अगस्त, १९३६

बापा,

एक ही पत्रमें कितनी विविध बातें लिख भेजी हैं। देवदासके रहने से वहाँकी जीवन-चर्यामें विक्षेप तो नहीं पड रहा होगा।

मलकानीने मुझे लम्बा पत्र लिखा था। उसकी स्थिति बड़ी दयनीय है। मैं सोचता रहता हूँ कि रुक्मिणीको कुमार्या मानूं कि बिलकुल ही मूर्ख स्त्री!

सतीश बाबूका क्या करें? एक तरफ उनका जबरदस्त त्याग और दूसरी तरफ उनका शकालु स्वभाव। हम जबतक उन्हें रखना चाहें, तबतक रखना तो सम्भव है ही।

रामचन्द्रनके बारेमें आश्चय होता है। उसको लेकर कठिनाई पैदा हो, तो खबर देना।

१. मूल कटा-फटा होनेसे अन्तिम वाक्य अस्पष्ट है।

किसी-न-किसी दिन तुम सेगावको आकर देखोगे ही। [1] मूलम है। मेरे सामने तुकडोजी, बाजूमे खान साहब, तुकडोजी के बाजूमे मुन्नालाल, तुकडोजी और मेरे बीचमे राजकुमारीकी गद्दी लगी हुई है। उसके सामने एक पाटेके ऊपर दवाओकी एक कामचलाऊ पेटी है, जो असलमे तो खोखा है, जिसमे कभी फल आये थे। और भी कुछ फुटकर सामान उस पाटेपर है। बा, लीलावती और मनु जहाँ जगह मिल जाये वही समा जाती हैं। रातका दृश्य तो इससे भी अलग होता है। भक्तका एक लक्षण अनिकेत होता है न? भक्त बननेकी चालो का इस्तेमाल तो मै चाहे जहाँ करता ही रहता हूँ न? सेगावमे मुझे तो बडा मजा मिलता है। कल कोठरीका आखिरी कोना खाली हो गया है। अभीतक तो खाली है। मुन्नालाल स्थायी निवासी है।

तुम मजेमे होगे।

बापू

[पुनश्च]

यह जो-सो लिखनेका भी बिलकुल समय नही था। इस तरहका कुछ आराम तो मुझे भी चाहिए न? तुम्हारा अनुकरण किया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६९) से।

२७५ पत्र : मॉगीबाईको

सेगाँव
१३ अगस्त, १९३६

चि० मागीबाई,

तुमारे वैधव्यकी खबर अभी सुनी। प्रियजनाके मृत्युसे दु:ख क्यो माने? मृत्यु तो सबको पीछे है ही। यह भी ईश्वरकी प्रसादी समजी जाय। अब शात रहो और सेवा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२) से।

१ मूल कटा-फटा होने के कारण यह वाक्य ठीकसे पढ़ा नहीं जा सका।

२७६. बातचीत : एक पाटिलसे[1]

[१५ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

एक दिन शामको गाँवके बूढ़े पाटिलने गाधीजी के पास जाकर कहा `
"मैं तो इसके लिए भी तैयार हूँ कि इधर नाई गोविन्दकी[2] हजामत बनाकर उठे और उधर मेरी बना दे।"

[गाधीजी] तो फिर कठिनाई क्या है?

[पाटिल] अब वह एक ऐसी बात कहता है जिसके लिए मैं तैयार नहीं हूँ।

वह क्या है?

बात यह है कि वह मुझसे एक बार अपने घरपर खाने को कहता है। महाराज, भगवान् जानता है, मैं लगभग ८० सालका होने को आया हूँ, पर आजतक मैंने होटलका पानी भी नहीं छुआ। फिर वह यह उम्मीद कैसे करता है कि मैं उसके घर खाऊँगा?

भाई, तुम्हारी बात समझता हूँ, पर वह तुम्हे अपने घर खाना खिलाने का हठ क्यो करता है?

इसलिए करता है कि वह जानता है कि शायद उसकी जातिवाले उसे बिरादरीसे निकाल दें। इसलिए मुझे अपने घर खिलाकर वह अपनी पक्की तसल्ली कर लेना चाहता है। अच्छा महाराज, आप ही बताइए, क्या यह बात भी आपके अस्पृश्यता-निवारणके काममें शामिल है?

कभी नही। मैं तो इतनेसे ही सन्तुष्ट हूँ कि अब तुमने छूने का परहेज तो छोड दिया है। तुम जानते हो कि मैं गोविन्दसे अपना खाना बनवाता हूँ, फिर भी एक-दूसरेके साथ खाने का छुआछूत दूर करने के आन्दोलनसे कोई सम्बन्ध नही है। पर इस बातकी आशा मैं तुमसे नही, हरिजन-सेवकोसे रखता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-८-१९३६

१ पाटिल, अर्थात् गाँवके मुखियाके साथ गाधीजी की बातचीतका यह विवरण महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है।

२ नाईने इस डरसे गोविन्दकी हजामत बनाने से इनकार कर दिया था कि गाँवका मुखिया और अन्य लोग कहीं उसका बहिष्कार न कर दें।

२७७ बातचीत एक नाईसे[1]

सेगाव
[१५ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

एक दिन सुबह जब मैं सेगाँव पहुँचा तो देखता क्या हूँ कि एक बाल काटने की मशीनको साफ करने और तेल देने के लिए गाधीजी उसके पुरजे अलग कर रहे हैं। जब मशीन साफ हो गई तो सामने एक शीशा रखकर वे खुद ही अपने बाल काटने लगे।

उसी समय साधु महाराजका एक भक्त, जो इत्तफाकसे जातिका नाई था, आ पहुँचा। "बापूजी", सामनेके कोनेमें बैठे साधुने जोरसे कहा, "भीमाको हजामत बनाने दीजिए न, वह तो अच्छी तरह बाल बनाना जानता है।"

[गाधीजी] उसे बाल बनाना कैसे आ गया?

इसका तो पेशा ही यही है।

अरे! तब तो ठीक है। अच्छा, तो आओ।

पर ज्यो ही भीमाने मशीन चलानी शुरू की, गाधीजी ने उससे पूछा

मेरे खयालमे, अपने हरिजन भाइयोकी हजामत बनाने मे तो तुम्हे कोई परहेज नही होगा? क्यो?

"दिलमें तो मेरे कोई परहेज नहीं", उसने कुछ हिचकिचाहटसे कहा।

सो तो मै मानता हूँ, पर जैसे तुम मेरी हजामत बनाते हो, उसी तरह हरिजनकी भी बना दोगे?

वह फिर कुछ हिचका। तब गाधीजी साधुसे बोले

मै तो इस खयालमे था कि मुझे नाईसे हजामत बनवाने को कहने के पहले ही आपने उससे इस बातका पता लगा लिया होगा।

"मुझे खेद है", साधुने कहा, "यह बात तो उस वक्त मेरे ध्यान में ही नहीं आई।"

तो फिर मुझे इस बातपर जरा विचार करना पडेगा कि हजामतको बीचमे ही रोककर भीमाको छुट्टी दे दूँ या नही।

पर भीमा बोल उठा "नहीं, ऐसा न करें। मैं यो आम तौरसे तो हरिजनोकी हजामत नहीं बनाता, पर अब वादा करता हूँ कि आजसे उनके साथ कोई भेदभाव नहीं रखूँगा।"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-८-१९३६

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२७८ और भी गलतफहमियाँ

सत्यशोधकका किसीको खुश करने के लिए ही लिखना या बोलना नही पुसा सकता। जिन-जिन बातोसे मेरा वास्ता पडा है, उन सभीमे सत्यकी शोध करते हुए मुझे काफी लम्बा अरसा हो गया है। मगर मै जानता हूँ कि समय-समयपर उपस्थित होनेवाले मामलोमे मै सदा और सबको यह नही समझा सका हूँ कि मै जो कहता हूँ या करता हूँ वह सही ही है। हिन्दी प्रचारको ही लीजिए। इस बारेमे जहाँ कुछ मुसलमान दोस्त मुझसे नाखुश है, वहाँ हिन्दू मित्र भी कम असन्तुष्ट नही है। पर जबतक मेरे आलोचक मेरी भूलका मुझे विश्वास न करा दे, तबतक उन्हे यह आशा नही रखनी चाहिए कि वे चाहते है इसीलिए मै अपनी राय बदल दूगा। एक सज्जनने तो मुझे सचमुच ही ऐसा लिखा है कि हालाँकि तर्क और इतिहासकी दृष्टिसे मेरी स्थिति सही है फिर भी मुझे मुसलमान आलोचकोको सन्तुष्ट करने के लिए अपनी राय बदल लेनी चाहिए। यह आलोचक चाहते है कि एक ही भाषाका परिचय देने के लिए या तो मै 'हिन्दी-उर्दू' शब्दके प्रयोगका समर्थन करूँ, या सिर्फ 'उर्दू' शब्दका। इनका एतराज भाषापर नही है, बल्कि उसके उस नामपर है, जो अबतक चला आ रहा है। अब मुझे एक और पत्र मिला है। इसमे झगडा दूसरे दृष्टिकोणसे है, और वह है उस भाषणके सम्बन्धमें जो मैंने हाल मे ही बगलोरमे हिन्दी-प्रचार पदवीदान समारोहमे दिया था।[1] पत्र लम्बा है। मै यहाँ उन्ही अशोको देता हूँ जिनका विषयसे अधिकसे-अधिक सम्बन्ध है

बगलोरमें पदवीदान-समारोहमें दिये गये अपने भाषणमें आपने कहा है कि भारतके २० करोड लोगोंसे सम्पर्क स्थापित करने के लिए कर्नाटकके १ करोड १० लाख नर-नारियोको उनकी भाषा हिन्दी सीखनी चाहिए। ध्यातव्य है कि यह बात आपने उन्हींके लिए नहीं कही जो मातृभाषा पढ चुके है। मान लीजिए, सब लोग मातृभाषा सीख भी लें, फिर भी न तो यह सम्भव है, और सम्भव हो भी तो न वाछनीय है और न स्वाभाविक ही, कि सर्वसाधारण लोग मातृभाषाके अतिरिक्त एक दूसरी भाषा और सीखें। राष्ट्रीय कार्यकर्ता, व्यापारी और दूसरे लोग जो उत्तर भारतवासियोके सम्पर्कमें आते है वे ही हिन्दी सीख सकते हैं और उन्हींको सीखनी चाहिए। वे लोग तो बिना किसी प्रचारके भी आवश्यकतावश ही यह भाषा सीख लेगे।

१ देखिए "दीक्षान्त भाषण हिन्दी प्रचार सभाके समारोहमें", १२-६-१९३६।

आप कहते तो हैं कि हिन्दी प्रान्तीय भाषाओंके स्थानपर नहीं, बल्कि उनके साथ-साथ सीखी जाये। पर हो ऐसा नहीं रहा है। तमिलनाडुके अधिकांश शिक्षित लोग तमिलके बजाय अंग्रेजीमें सोचते हैं और महसूस भी करते हैं। तमिलकी वे पूरी उपेक्षा करते हैं। अंग्रेजी सभ्यताके वे किस हदतक गुलाम हो गये हैं, यह हम इसीसे समझ सकते हैं कि सार्वजनिक सभाओं और दूसरी जगहोंमें भी वे गर्वके साथ उच्च स्वरसे कहते हैं कि वे तमिलमें न तो बोल सकते हैं और न लिख सकते हैं, पर अंग्रेजीमें वे दोनों काम धड़ल्लेसे कर सकते हैं। इनमें से कुछ लोग हिन्दीका अध्ययन भी तमिलकी अपेक्षा अंग्रेजीकी मददसे अधिक करने लगे हैं। नतीजा एक ही होगा — यह कि अंग्रेजीके बजाय वे हिन्दीमें सोचने लगेंगे। अगर कोई गुजराती भाई आपसे कहे कि वह गुजरातीमें तो नहीं पर हिन्दीमें सुन्दर निबन्ध लिख सकता है, तो आपको उसपर अफसोस ही होगा। आपको लगेगा कि देश अभी पूर्ण स्वराज्यसे बहुत दूर है। तमिल-नाडुमें बहुतेरे लोग कहने लगे हैं कि वे तमिलसे हिन्दी अच्छी जानते हैं।

दूसरी भाषा देवभाषा हो तो भी अपनी मातृभाषाको हानि पहुँचाकर नहीं सीखनी चाहिए। हिन्दीके अन्धसमर्थकोंको इस सम्बन्धमें मैं आपकी ही मिसाल दिया करता था। आप कहते तो हैं कि हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा है, पर न तो अपनी 'आत्मकथा' ही आपने हिन्दीमें लिखी है और न 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास' ही। दोनों पुस्तकें गुजरातीमें लिखी हैं। हिन्दी में आप अगर लिखते तो बहुत अधिक लोगोंको आपकी बात आपके ही शब्दोंमें जानने को मिलती। पर आपने दोनोंको गुजरातीमें लिखना पसन्द किया। हालांकि इस मामलेमें आपके उपदेशसे आपका आचरण भिन्न है, तो भी मैं आपके आचरणको ही ठीक समझता हूँ। इसलिए मैं चाहता हूँ कि लोग, आप जो कहते हैं, उसे न मानकर आप जो करते हैं, उसका अनुसरण करें।

स्वराज्यका अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलने-वालों पर एक ही भाषा लाद दी जाये। प्रथम स्थान मातृभाषाको ही मिलना चाहिए। भारतकी सामान्य भाषा हिन्दीको गौण स्थान ही देना चाहिए। सच्ची प्रेरणा और प्रगति तो मातृभाषासे ही मिल सकती है।

अब मैं लिपिका प्रश्न लेता हूँ। ४ मई, १९३५ के 'हरिजन' में इन्दौरके हिन्दी साहित्य सम्मेलनके प्रस्तावोंपर लिखते हुए आपने उर्दू लिपिका पक्षपात किया है। यह मेरी समझमें नहीं आया। बंगलोरके भाषणमें भी आपने उर्दू लिपिके प्रति अपना वही पक्षपात प्रकट किया है। आप तो संस्कृतसे निकली हुई या उससे प्रभावित समस्त भारतीय भाषाओंकी लिपियाँ नष्ट करके उनकी जगह देवनागरीको आसीन कर देना चाहते हैं, ताकि जो लोग विभिन्न भाषाएँ

सीखना चाहे उन्हे सुविधा हो। हिन्दू और मुसलमान दोनो जिस एक ही भाषाको बोलते है उसके लिए आप देवनागरी और उर्दू दोनो लिपियाँ कायम रखना चाहते है। तो क्या अन्य करोडो लोग, जो दुर्भाग्यसे भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलते है, अपनी लिपियाँ नष्ट हो जाने दें, उनकी जगह देवनागरीको दे दें और हिन्दी-हिन्दुस्तानी भाषा और उर्दू लिपि सीखकर १३ करोड हिन्दुओ और ७ करोड मुसलमानोको समझने और उनके सम्पर्कमें आने की कोशिश करें? क्या यह बात हास्यास्पद नहीं लगती और इसमें घोरसे-घोर अत्याचार नहीं है? इस नीतिका साफ नतीजा यही हो सकता है कि अन्य सभी भाषाएँ मिट जायें और केवल एक हिन्दी रह जाये — वह भी दोनो लिपियोंमें। क्योकि, सब भाषाओकी लिपि तो देवनागरी हो ही जायेगी, हिन्दी सब सीख ही लेगे और मातृभाषाओके महत्त्वपूण ग्रथोका हिन्दीमें अनुवाद हो ही जायेगा। मै चाहता हूँ, आप जरा विचारकर देखिए कि क्या वह स्थिति हम सबकी जन्मभूमि भारतवर्षके लिए वाछनीय होगी? सब लिपियोको नष्ट करने का प्रयत्न करने से पहले देवनागरी और उर्दूमें से — जो एक ही भाषाकी दो लिपियाँ है — एकको मिटाने की कोशिश आप क्यो नहीं करते? एक ही भाषा बोलनेवाले हिन्दू और मुसलमान अपने लिए दो अलग-अलग लिपियाँ क्यो रखें?

मुझे मालूम नही कि मैंने कर्नाटकके सभी, अर्थात् एक करोड दस लाख स्त्री-पुरुषोसे हिन्दी-हिन्दुस्तानी सीखने की बात कही थी। जिन्हे उत्तर भारतके लोगोंके कभी भी सम्पर्कमे आना पडता है, वे सभी हिन्दी-हिन्दुस्तानी सीख ले तो मुझे बहुत सन्तोष होगा। लेकिन यदि अहिन्दी-भाषी प्रान्तोके सभी लोग हिन्दी सीख ले तो मै इसका स्वागत ही करूँगा और, जैसा पत्र-लेखक सज्जन चाहते है, इसपर अफसोस तो मैं निश्चय ही नही करूँगा। हरएक प्रान्तके लोग अपनी-अपनी भाषा जान लेनें के साथ-साथ एक अखिल भारतीय भाषा और सीख ले तो इसमे भारतवर्षके लिए अवाछनीय या अस्वाभाविक बात क्या हो जायेगी? इस तरहका ज्ञान थोडे-से सुसस्कृत लोगोका ही विशेषाधिकार क्यो रहे, और जन-साधारण उससे क्यो वचित रहे? तीस करोडसे अधिक आबादीवाले एक राष्ट्रके लोग दो भाषाएँ जानते हो तो अवश्य ही यह बात एक बहुत उच्च कोटिकी सस्कृतिकी सूचक होगी। दुर्भाग्यसे यह बिलकुल सही है कि ऐसा होना लगभग असम्भव है।

मगर सबसे अधिक दुर्भाग्यकी बात तो यह होगी कि कोई प्रान्त अपनी भाषाकी उपेक्षा कर दूसरी भाषाको अधिक पसन्द करने लग जाये। पत्र-लेखककी शिकायत है कि तमिलनाडुमें ऐसा ही हो रहा है। उनकी रायकी पुष्टि मेरी तमिलनाडुकी बार-बारकी यात्राओसे भी होती है। परन्तु इधर मैंने देखा है कि उस प्रान्तमे शुभ परिवर्तन भी हो रहा है। और जैसे-जैसे प्रत्येक प्रान्तके शिक्षित लोग सर्व-साधारणके साथ सम्पर्क बढाने की अधिकाधिक आवश्यकता महसूस करेंगे, वैसे-वैसे जहाँ सम्भव

होगा वहाँ अन्य भाषाओपर प्रान्तीय भाषाको प्राथमिकता देने की प्रवृत्ति और गति भी बढती जायेगी।

पत्र-लेखकने प्रसगवश राष्ट्रभाषा होने के विषयमे अग्रेजी और हिन्दी हिन्दुस्तानीकी चिरकालीन प्रतिस्पर्धाका भी जिक्र किया है। मैंने तो जबसे सार्वजनिक जीवनमे प्रवेश किया है सदा यही निश्चित राय रखी और जाहिर की है कि अग्रेजी न कभी सारे हिन्दुस्तानकी भाषा हो सकती है और न होनी चाहिए। ऐसी भाषा तो हिन्दी यानी हिन्दुस्तानी ही हो सकती है, क्योकि उत्तर भारतके करोडो हिन्दू और मुसलमान इसे बोलते है। अग्रेजीके बारेमे ऐसा समझना जनसाधारण और अग्रेजी पढे-लिखे लोगोके बीचमे स्थायी दीवार खडी करना और अपने ध्येयतक पहुचने मे देशकी प्रगतिका पीछे ढकेलना है। मैंने बार-बार यह समझाया है कि हमारी उन्नतिमे अग्रेजी का एक निश्चित स्थान है। हमारे शासको और सारी पश्चिमी दुनियाकी बात समझने के लिए और पश्चिमकी अच्छी-अच्छी बाते हिन्दुस्तानको सिखाने के लिए हमारे कुछ आदमियाको जरूर अग्रेजी सीखनी चाहिए, क्योकि पश्चिमी भाषाओमे इसका सबसे अधिक प्रचार है। पर अगर शिक्षित-वर्गको निरक्षर जनताके साथ एक होना है तो अग्रेजी सीखनेवालासे हजार गुना अधिक हिन्दुस्तानियाको हिन्दी-हिन्दुस्तानी जाननी पडेगी।

पत्र-लेखकका यह सोचना कि मैंने प्रान्तीय भाषाओपर हिन्दीको प्राथमिकता देने की सलाह देने का अपराध किया है, मेरी रायसे उनकी बिल्कुल अनभिज्ञताका सूचक है। इस बारेमे मेरी कथनी और करनीमे कोई अन्तर नही। मैं इस प्रस्तावका दिलसे समर्थन करता हूँ कि मातृभाषाको प्रथम स्थान दिया जाना चाहिए।

हाँ, लिपिके मामलेमे पत्र-लेखककी आशका सही है। मुझे अपनी रायपर पछतावा भी नही है। जो अलग-अलग भाषाएँ सस्कृतसे निकली है या जिनका उसके साथ गहरा सम्बन्ध रहा है, पर जो लिखी जाती है भिन्न-भिन्न लिपियोमे, उनकी एक ही लिपि होनी चाहिए, और वह लिपि निस्सन्देह देवनागरी ही है। अलग-अलग लिपियाँ एक प्रान्तके लोगोके लिए दूसरे प्रान्तोकी भाषाएँ सीखने मे अनावश्यक बाधास्वरूप है। यूरोप तो कोई एक राष्ट्र नही है। फिर भी उसने एक सामान्य लिपि स्वीकार कर ली है। पर हिन्दुस्तान एक राष्ट्र होने का दावा करता है, और है। तो उसकी लिपि एक क्या न हो? मैं जानता हूँ कि एक ही भाषाके लिए देवनागरी और उर्दू, इन दोना लिपियोको सहन कर लेने की मेरी बात असगत है। मगर मेरी यह असगति निरी मूर्खता नही है। इस समय हिन्दू-मुसलमानोमे सघर्ष है। पढे-लिखे हिन्दुओ और मुसलमानोके लिए एक-दूसरेके प्रति अधिकसे अधिक आदर और सहिष्णुता दिखाना जरूरी और बुद्धिमानीका काम है, इसीलिए मेरी यह राय है कि लिपिके मामलेमे देवनागरी या उर्दूका विकल्प रहे। यह सद्भाग्यकी बात है कि प्रान्त-प्रान्तमे सघर्ष नही है। इसलिए जिस सुधारसे अनेक दिशाओमे प्रान्तोका गहरा मेल हो सकता है उसकी हिमायत करना वाछनीय है। और यह भी नही भूल जाना चाहिए कि राष्ट्रका बहुजन समाज बिलकुल निरक्षर है। उसपर भिन्न-भिन्न

लिपियोका बोझ लादना, और वह भी खाली झूठे मोह और दिमागी आलस्यके कारण, अपने हाथो अपने पैरोपर कुल्हाडी मारना होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-८-१९३६

२७९ वर्ण बनाम जाति

जात-पॉत तोडक मण्डलके श्री सन्तरामजी ने निम्नलिखित पत्र मेरे पास प्रकाशनार्थ भेजा है

> डॉ० अम्बेडकर और लाहौरके जात-पाँत तोडक मण्डलके बारेमें आपने जो-कुछ लिखा,[1] वह मैंने पढा। इस सम्बन्धमें मै नीचे लिखी बातें आपके सामने रखना चाहता हूँ
>
> डॉ० अम्बेडकरको अपने सम्मेलनका सभापति बनाने के लिए हमने इसलिए आमन्त्रित नहीं किया था कि वे दलित जातिके हैं, क्योंकि सवर्ण और अवर्ण (दलित) हिन्दूमें हम कोई भेदभाव नहीं मानते। उलटे, हमने तो उन्हे इसलिए चुना था कि हिन्दू-जातिके महारोगका उनका निदान भी वही है जो कि हमारा है, यानी उनका भी यही मत है कि जाति-प्रथा ही हिन्दुओके पतन और बिखरावका मूल कारण है। डॉ० अम्बेडकरने डॉक्टरेटके लिए जाति-प्रथा पर ही अपना प्रबन्ध लिखा था और उन्होने इस विषयका गहराईसे अध्ययन किया है। हमारे सम्मेलनका तो उद्देश्य ही यह था कि हिन्दुओको जात-पाँत तोडने के लिए प्रेरित किया जाये, लेकिन सामाजिक तथा राजनीतिक मामलोमें किसी अहिन्दूकी सलाहका उनपर कोई असर नहीं हो सकता। मगर डॉक्टर अम्बेडकरने अपने भाषणके परिशिष्टाशमें यह कहने पर आग्रह किया कि बहैसियत हिन्दू यह मेरा आखिरी भाषण है'। यह चीज हमारे सम्मेलनके लिए बिलकुल अप्रासगिक, बल्कि उसके हकमें खतरनाक भी थी। इसलिए हमने उनसे प्रार्थना की कि वे भाषणसे उस अशको निकाल दें, क्योकि और मौकेपर वे इस बातको बडी आसानीसे कह सकते थे। मगर उन्होने ऐसा करने से इनकार किया। तब अपने समारोहका सिर्फ दिखावा करने में हमें कोई अर्थ दिखाई न पडा। लेकिन इस सबके बावजूद, मै उनके भाषणकी प्रशसा किये बगैर नहीं रह सकता। वह तो, जहाँतक मै जानता हूँ, इस विषयपर एक अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण प्रबन्ध है और हिन्दुस्तानकी हरएक देशी भाषामें अनूदित होने लायक है।

१ देखिए "डॉ० अम्बेडकरका दोषारोपण-१", ११-७-१९३६।

अलावा इसके, मैं यह बात भी आपके ध्यानमें लाना चाहता हूँ कि जाति और वर्णके बीच आप जो तात्त्विक भेद करते है वह इतना गूढ़ है कि आम लोग उसे नहीं समझ सकते, क्योंकि व्यवहारत देखा जाये तो हिन्दू-समाजके अन्दर जाति और वर्णमें कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनो का प्रयोजन अन्तर्जातीय विवाहो और सहभोजोपर प्रतिबन्ध लगाना ही है। वर्ण-व्यवस्थाका आपका सिद्धान्त इस युगमें अव्यावहारिक है और निकट-भविष्यमें उसके पुनरुद्धारकी कोई आशा नहीं है। लेकिन हिन्दू तो जात-पाँतके गुलाम है और उसे नष्ट नहीं करना चाहते। इसलिए जब आप अपने आदर्श या काल्पनिक वर्ण-व्यवस्थाका प्रतिपादन करते है तो वे जात-पाँतसे चिपटे रहने का औचित्य पा जाते है। इस प्रकार वर्णभेदकी अपनी काल्पनिक उपयोगिताका प्रतिपादन करके समाज-सुधारके पक्षका आप बडा नुकसान कर रहे है। वर्ण-व्यवस्थाकी जडपर कुठाराघात किये बगैर अस्पृश्यताको दूर करने की कोशिश तो मानो रोगके ऊपरी लक्षणोका इलाज करना या पानीके ऊपर लकीर खींचना है। द्विजोका दिली मशा तो यह है कि तथाकथित स्पृश्य और अस्पृश्य शूद्रोको सामाजिक समानता न दी जाये, इसलिए वे जात-पाँतको नहीं तोडते और इस प्रश्नको टालनेकी खातिर अस्पृश्यता-निवारणके लिए चन्देमें बडी-बडी रकमें देते है। और अस्पृश्यता तथा जात-पाँतके निवारणार्थ शास्त्रोकी सहायता लेना तो मानों कीचडको कीचडसे धोना ही है।

इस पत्रके आखिरी अनुच्छेदसे पहला अनुच्छेद तो निश्चय ही रद हो जाता है। जात-पाँत तोडक मण्डल शास्त्रोकी मददको अस्वीकार करके वही करता है जो डॉ० अम्बेडकर कर रहे है, यानी ऐसा करके वह हिन्दू नही रह जाता। और ऐसी हालतमे, वह डॉ० अम्बेडकरके भाषणपर सिर्फ इसलिए कैसे एतराज कर सकता है कि उसमे उन्होने यह कहा कि बहैसियत हिन्दू यह मेरा आखिरी भाषण है? यह स्थिति तो बिलकुल असगत है, खासकर उस हालतमे जबकि श्री सन्तराम जिसकी ओरसे बोलने का दावा करते है वह मण्डल डॉ० अम्बेडकरके सारे भाषणकी प्रशसा करता है।

लेकिन यह पूछना अप्रासगिक न होगा कि जात-पाँत तोडक मण्डल शास्त्रोको नही मानता तो आखिर मानता किसको है? अगर कोई मुसलमान कुरानको न माने या कोई ईसाई बाइबिलको मानने से इनकार करे, तो भला ये मुसलमान या ईसाई रहेंगे? जाति और वर्ण अगर एक ही बात है और वर्ण उन शास्त्रोका अभिन्न अग है जिनमें हिन्दू-धर्मकी व्याख्या की गई है, तो मैं नही जानता कि जो व्यक्ति जाति, यानी वर्णको मानने से इनकार करता है वह अपनेको हिन्दू कैसे कह सकता है।

श्री सन्तराम शास्त्रोको कीचडकी उपमा देते हैं। जहाँतक मुझे याद है, डॉ० अम्बेडकरने शास्त्रोके बारेमें अभीतक ऐसा कुछ नही कहा है। मैंने जो यह कहा है कि शास्त्रो द्वारा अगर वर्तमान अस्पृश्यताका समर्थन होता हो तो मै अपनेको हिन्दू कहना बन्द कर दूँगा, वह अवश्य किसी अर्थमें ही कहा था। इसी प्रकार

आज जातिका जो बीभत्स रूप हमे दिखाई पडता है उसका यदि शास्त्रोसे समर्थन होता हो, तो सम्भवत मैं अपनेको हिन्दू नही कहूँगा, या हिन्दू नही रहूँगा, क्योकि विभिन्न जातियोके रोटी-बेटी-व्यवहारमे मुझे कोई आपत्ति नही है। शास्त्रो और उनकी व्याख्याके बारेमे मेरी जो स्थिति है उसे यहाँ दुहराने की मैं कोई जरूरत नही समझता। मैं तो श्री सन्तरामसे यह कहने-भरका साहस करता हूँ कि बुद्धि, सचाई और नैतिकताके लिहाजसे जो स्थिति वाछनीय है वह एकमात्र वही है और हिन्दू-परम्परामे उसके लिए काफी गुजाइश है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-८-१९३६

२८० पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१६ अगस्त, १९३६

चि० मणिलाल, सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। जबतक तुम लोग वहाँ आनन्दसे हो तबतक तुम्हे यहाँ आने की कोई जरूरत नही है। हम चाहे जहाँ रहे, जो कर सकते है सो सेवा करे। जहाँ रहते है वहाँके लोगोको कुटुम्बी-जन समझे। मिलना तो हृदयका होता है। और यह तो करोडो योजन दूर रहकर भी सम्भव है और एक कोठरीमे पास-पास रहना भी उन दो कैदियोके शारीरिक सान्निध्यकी तरह निरर्थक है, जिनका दिल एक नही है। इसलिए मुझे इस बातका लोभ नही है कि तुम मुझे यहाँ देखने आओ। यदि तुम्हे वहाँ शान्ति मिलती है तो तुम सदा ही वहा बने रहो।

अब तुम्हे एक ऐसी बात लिखता हूँ जो अजीब लगेगी। कान्तिका मन परम्परागत विद्याभ्यास करके उपाधिकी छाप अपने ऊपर लगवा लेने का है। चाहे जितना रोको वह रुक नही सकता। मैंने बहुत कोशिश की किन्तु सफलता नही मिली। अब सवाल रह जाता है उसके शिक्षणके खर्चका। कान्ति भी मानता है कि सार्वजनिक कोषसे खर्च नही दिया जा सकता। मौसी तो बहुत दे चुकी है, अब उससे लेना एक गुनाह ही हो जायेगा। इसलिए या तो तुम तीनो भाई मिलकर खर्च दो या वह कमाये और पढे। मेरी समझमे तो तुम तीनोको यह बोझ उठाना चाहिए। हर महीने ७८ से १०० रुपयेके बीचमे खर्च आने की सम्भावना है। मैं ठीक नही जानता, फिर भी यदि तू अपना हिस्सा यानी ३३ रुपये दे सके तो काफी है। यदि यह बात तेरे गले उतरती हो तो मुझे भेजना शुरू कर देना।

मनु और बा मेरे साथ हैं। हमारा ठीक चल रहा है।

मुझे हरिलालका एक पत्र मिला था। धर्म-परिवर्तनके बाद पहला पत्र। उसने [‘इंडियन ओपिनियन’] के स्वर्ण-जयंती अंककी प्रति माँगी है और मुझसे मिलना

भी चाहता है। मैंने लिख दिया है[1] कि अगर मिलने की मेरी शर्तें स्वीकार करे तो आ सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५६) से।

२८१ तार : कस्तूरभाई लालभाईको[2]

[१७ अगस्त, १९३६ या उसके पूर्व][3]

ये नोटिस पच-फैसलेके सिद्धान्तके विपरीत है और इनके गम्भीर परिणाम हो सकते है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-८-१९३६

२८२. पत्र : ना० र० मलकानीको

सेगाँव, वर्धा
१७ अगस्त, १९३६

प्रिय मलकानी,

तुमने अच्छा किया कि मेरे सामने अपना दिल उँडेलकर रख दिया। दूसरे क्या कहते है इसपर बिलकुल ध्यान मत देना। ठक्कर बापाने लोगोको पहचानने मे अनेक बार भूल की है और बहुधा वे ध्यानपूर्वक सोचे बिना ही पत्र लिख डालते है। परन्तु अब इस उम्रमे वे अपना ढग बदलेगें ऐसी आशा बेकार है। हमें तो अब वे जैसे है उसी रूपमे उनको स्वीकार करना चाहिए और उनके त्यागको, दीन और दलित लोगोके प्रति उनके अनन्य प्रेमको देखते हुए उनसे प्रेम करना चाहिए। उस महिलाके आने के विषयमे उन्होने जो लिखा है उसे मैंने कोई महत्त्व नही दिया। हाँ, उनका इस घटनाके बारेमे कुछ भी लिखना नि सन्देह गलत था, विशेष रूपसे जिस ढगसे उन्होने लिखा वह तो और भी गलत था।

१ पत्र उपलब्ध नहीं है।

२ मिल-मालिक सघके अध्यक्ष। **बॉम्बे क्रॉनिकल**के अनुसार ऐसा ही एक तार चिमनलाल परीखके लिए भी था, जिन्होंने अपनी मिलमें वेतन-कटौतीके नोटिस लगवा दिये थे।

३ जिस रिपोर्टमें यह तार छपा था वह दिनांक "१७ अगस्त, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

रुक्मिणीको सिन्ध छोड आये सो ठीक किया। यह उसके हितमे है कि तुम उसके साथ जरा कडाई बरतो। उसको तुम्हारा जीवन दु खी करने या तुम्हारे काममे विघ्न नही डालने दिया जा सकता।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९)से।

२८३ पत्र एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
२० अगस्त, १९३६

चि० अम्बुजम,

तो, मेरे लिखे पत्र पाये बिना तुम्हे सन्तोष नही होगा। अच्छा, तो तुम्हे अवश्य मिलेगे।

चाहे कुछ भी हो जाये, तुम्हे शान्त रहना चाहिए। किचीके कमजोर स्वास्थ्य पर तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए। भगवान् हम सबका रक्षक है, और जब परिस्थितियाँ हमारी इच्छानुसार न हो, या प्रियजन बीमार पडें तब भी हमे उसपर अविश्वास नही करना चाहिए। इसीलिए जब तुम कहती हो कि तुमने अपनेको भगवान्के आसरे छोड दिया है, तो मुझे खुशी होती है। यह समर्पण केवल निष्प्राण भावसे नही प्रत्युत अन्तरतमसे होना चाहिए। बहुधा हम ऐसे सद्वचनोका उच्चारण उन्हे बिना हृदयगम किये ही कर डालते है।

आजकल मेरी खुराक है दूध, कुम्हडा या सेगाँव अथवा निकटवर्ती गाँवोमे प्राप्य कोई सब्जी, थोडा लहसुन, और जब फल मिल जाये तब फल। अब मुझे पहलेके समान फलोकी आवश्यकता प्रतीत नही होती।

आशा है, अब तुम पहलेके समान स्वस्थ हो गई होगी, और पिताजी तथा माताजी भी कुशलसे होगी।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०९)से, सौजन्य एस० अम्बुजम्माल

२८४. एक पत्र

२० अगस्त, १९३६

तुम्हारा पत्र मुझे सोचने को मजबूर कर देता है। यदि सभी खास रिश्तेदारोको कोई आपत्ति न हो, अगर [1] अपनी आस्था कायम रखने को स्वतन्त्र हो और वास्तवमे ऐसा कर सकती है और भावी साथी भी ऐसा ही है तथा दोनो एक-दूसरेके विश्वास व व्यवहारकी एक-जैसी कद्र करते है, तो जहाँतक अभी मेरी समझमें आता है, मुझे इस सम्मिलनको अपना आशीर्वाद देनेमे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

२८५ पत्र : नारणदास गाधीको

२० अगस्त, १९३६

चि० नारणदास,

अगर मै यहाँसे कुमीके लिए हर महीने १५ रुपयेका प्रबन्ध कर दूं तो क्या तुम उसे शाला या किसी दूसरी जगह कोई काम दिला सकते हो? दूसरे शब्दोमे मै यह पूछता हूँ कि क्या तुम्हारी दृष्टिमे उसका स्वभाव काम सौपने योग्य है?

पुरुषोत्तम और विजयके लिए पदच्छेद और शब्दार्थ-सहित 'गीता' ठीक रहेगी? माँग तो सिर्फ मूल की ही थी। मुझे अभी मालूम हुआ है कि बडे अक्षरोमें अर्थ-सहित एक ऐसा सस्करण है। मूल सस्कृत 'गीता' प्राप्त करने में तो कोई कठिनाई आयेगी ही नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५०२ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ साधन-सूत्रमें नाम छोड दिया गया है।

२८६. पत्र प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
२१ अगस्त, १९३६

चि० प्रभा,

बहुत दिनोंके बाद तेरा पत्र आया। रोज राह देखता था। तू क्यों नहीं लिख सकी, मैं इसका कारण बिलकुल ठीक समझ गया। जब इतना अधिक काम हो तो एक कार्ड लिख देना काफी है। तेरी चिन्ता करनेवाला मैं कौन? और चिन्ता करके लाभ भी क्या है? हम सबकी चिन्ता और रक्षा प्रभु ही करता है। वह प्रत्येक श्वासका स्वामी है। तेरे मनमें ऐसा विश्वास उत्पन्न हो तो फिर सब कुशल ही है। यों तो तेरी कठिन परीक्षा हो रही है। तू उसमें उत्तीर्ण होगी ही। सामर्थ्यसे अधिक कुछ मत करना। चाहे जिस प्रकार बने, दूध और फल लेती रहना। फिर दूसरी किसी खुराककी परवाह नहीं रहेगी। वहाँ कौन-कौन हैं? आज इतना ही लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८०) से।

२८७. पत्र . हीरालाल शर्माको

२१ अगस्त, १९३६

चि० शर्मा,

[1] बेबिट के पुस्तक का पूरा नाम दो। तुमको इसके गुमने का दुख भले न हो वह पुस्तक न मिले तबतक मैं अवश्य बेचैन रहूँगा। ऐसे पुस्तक क्यों गुम हो सकता है? इसी तरह खादी का। लेकिन हाँ उसके गुम होने का दुख इतना नहीं जितना बेबिट जानेका। मैं तो अभी भी आशा रखता हूँ कि पुस्तक हाथमें आयेगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६०

१ साधन-सूत्रके अनुसार।

२८८. एक पत्र[1]

[२२ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

मै देखता हूँ कि तथाकथित अस्पृश्योके लिए प्रयुक्त "हरिजन" नामका मूल अर्थ आप नही जानते। हिन्दू साहित्य, और जहाँतक मै जानता हूँ, ईसाई साहित्यमे भी, इस बातका बराबर कहा गया है कि पृथ्वीपर जो लोग तिरस्कृत है उन्हे भगवान् विशेष रूपमे प्यार करता है। इसी कारण हमारे दैनिक जीवनमे मुहावरा चलता है "निबलके बल राम"। मनुष्योने अहकारवश जिन करोडो मनुष्योको समाज मे अछूत बना दिया है, भला "हरिजन" कहलाने का अधिकारी उनसे ज्यादा कौन हो सकता है? यदि अस्पृश्य स्वय कहते कि "हम हरिजन है क्योकि हम निष्पाप है", तब और बात होती। परन्तु आप जिसे "नवजन्म" कहते है, उसका अनुभव हुआ हो अथवा न हुआ हो, कौन माईका लाल कह सकता है कि वह निष्पाप है?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-८-१९३६

२८९ बातचीत: एक पंडितसे[2]

[२२ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

उस दिन एक पंडितजी सेगाँव पहुँचे। गांधीजी से उनका परिचय कराते समय बताया गया कि इन्होंने शास्त्रोंका अच्छा अध्ययन किया है और 'गीता' पर ये नियमित रूपसे प्रवचन करते है। गांधीजी ने उनसे पूछा कि क्या 'गीता' में अस्पृश्यता के पक्षमें कोई प्रमाण मिलता है। पंडितजी के कथनानुसार ऐसा मालूम हुआ कि यह तो अस्पृश्यकी परिभाषापर निर्भर करता है। उन्होंने कहा

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। यह पत्र एक मिशनरीको लिखा गया था, जिसने गांधीजी से पूछा था, "क्या इससे यह पता नहीं चलता कि वास्तविक और सच्चे अर्थमें हरिजन बनने के लिए हमें नवजन्म लेने का या आध्यात्मिक पुनरुज्जीवनका अनुभव होना आवश्यक है? और जबतक कोई साधारण मनुष्य अपुनरुज्जीवित दशामें है, तबतक उसको नवजन्म या आध्यात्मिक पुनरुज्जीवनकी कोई ठीक समझ नहीं हो सकती। बेचारे देहाती जो भूलों और पापोंमें आकण्ठ डूबे हुए मृतक-समान हो रहे हैं, उन्हें 'हरिजन' नाम देने के बजाय क्या यह अच्छा नहीं होगा कि उन्हें केवल स्त्री और पुरुष कहा जाये, जो चाहें तो भगवान्के सच्चे बालक बन सकते हैं?"

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

अस्पृश्य तो वह है, जो बुरी-बुरी बातें सोचता है, गन्दे या कटु शब्द मुँहसे निकालता है और कुकर्मोंमें प्रवृत्त रहता है। 'गीता' के अनुसार अस्पृश्य ऐसा ही व्यक्ति माना जायेगा।

पर इस दृष्टिसे विचार किया जाये, तब तो हममे से हरएक अस्पृश्य है। ऐसा यहाँ कौन है, जो पाप-रहित हो? मै जरा जान तो लूँ। क्यो तुकडो महाराज, आप पाप-रहित है?

नहीं, किसी प्रकार नहीं।

तब खान साहब, कहिए, आप क्या कहते है?

मै भी यही कहूँगा। बेगुनाह होने का दावा कौन कर सकता है?

तब इसका यह मतलब हुआ कि हम सभी अस्पृश्य है। कुछ भी हो, अच्छा तो यही है कि हम अपनेको दूसरोसे कम पवित्र समझे, क्योकि जितना हमे अपने बारेमें पता है उतना दूसरोके बारेमें नही, और दूसरोके दोष निकालनेवाले हम होते कौन है! इसीसे तो भक्त सूरदास अपना अन्तर्निरीक्षण करते हुए गा रहे है "मो सम कौन कुटिल खल कामी।"

"किन्तु अपनेको बुरे विचारोसे मुक्त रखने के लिए शास्त्रोकी सहायता तो आवश्यक ही है", पडितजी ने कहा।

हाँ, है। पर मै ऐसे किसी शास्त्रको प्रामाणिक नही मानता, जो अस्पृश्यताका समर्थन करता हो अर्थात्, जो मनुष्योके विशेष वर्गोंको जन्मना अस्पृश्य मानता हो। ऐसा शास्त्र भला हमें पापोंसे उबारेगा? अरे, वह तो हमे उलटा पाप-पकमे और डुबायेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २२-८-१९३६

२९० बातचीत: एक साधुसे[1]

[२२ अगस्त, १९३६ के पूर्व]

एक दूसरा साधु, जो हरिजनोका नेता है, एक दिन एक विचित्र-सी पहेली लेकर पहुँचा। उसका कूट प्रश्न यह था "ईश्वरको जब हम जानते ही नहीं, तो फिर उसकी सेवा हम कैसे कर सकते हैं?"

[गांधीजी] ईश्वरको हम भले ही न जाने, पर उसकी रची हुई सृष्टिको तो हम जानते है। और सृष्टिकी सेवा उस सिरजनहारकी ही सेवा है।

पर सिरजनहारकी समस्त सृष्टिकी हम किस प्रकार सेवा कर सकते हैं?

हम केवल परमात्माकी सृष्टिके उस भागकी सेवा कर सकते है जो हमारे सबसे अधिक नजदीक हो और जिसके विषयमे हमे अधिकसे-अधिक ज्ञान हो। इसका आरम्भ हम अपने सबसे नजदीकी पडोसीसे कर सकते है। हमारा आँगन साफ है, बस इतनेसे ही हमे सन्तोष नही मान लेना चाहिए, हमें यह भी देखना चाहिए कि हमारे पडोसीका आँगन भी साफ है न। हम अपने कुटुम्बकी सेवा करे, पर कुटुम्बके स्वार्थकी खातिर गावको कुर्बान न कर दे। गाँवकी इज्जत-आबरू बनाये रखने मे ही हमारी मान-प्रतिष्ठा है। लेकिन हम सबको अपनी-अपनी मर्यादाएँ समझ लेनी चाहिए। जिस दुनियामे हम रहते है उसका हमें जो ज्ञान है, उससे हमारी सेवा-शक्ति या योग्यता स्वत ही मर्यादित है। पर इसे मैं सरलसे-सरल शब्दोमे कह दूँ। जितना खयाल हम अपना रखते हैं, अपने पडोसीका उससे ज्यादा खयाल रखे। अपने आँगनका कूडा-कचरा अपने पडोसमे डाल देना, यह मानव-जातिकी सेवा नही, कुसेवा है। इसलिए अपने पडोसियोकी सेवा से ही हमे परमात्माकी सेवाका आरम्भ करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-८-१९३६

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२९१ एक खतरनाक योजना

रावबहादुर राजा ने अपने और डॉ० मुजेके बीच हुआ पत्र-व्यवहार[१] प्रकाशित करके सावजनिक सेवा ही की है। इस पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करने में कोई विश्वासघातकी बात नही हे। क्योकि पत्र पानेवाला जिस बातको खतरनाक या भयानक समझे, जैसाकि मुजे-अम्बेडकरकी योजना निश्चित रूपसे है, उसे गुप्त रखना लाजिमी नही है। डॉ० मुजे और डॉ० अम्बेडकर, दोनो अपनी योजनाको खतरनाक नही समझते, इस बातसे उनके लिए वह कम खतरनाक नही हो जाती जो उसे नापसन्द करते है। और जब रावबहादुर राजा का इरादा हर तरहके उचित उपायोका सहारा लेकर उसे अमलम आने से रोकने का था, तब इसके सिवा वे और करते भी क्या? उन्होने उन कुछ व्यक्तियोसे इस बारेमे पत्र-व्यवहार शुरू किया जो यरवडा-समझौतेमे शामिल थे, और जब यह देखा कि उनमे से कोई भी इस योजनाको पसन्द नही करता तब उन्होने तुरन्त वह पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर दिया। आशा करनी चाहिए कि सवण हिन्दुओ तथा डॉ० अम्बेडकरके बीच आगे कोई ऐसा सौदा नही होगा जिसमे लाखा मूक हरिजनोके धमको इस तरह बदल देने की तजवीज हो, जैसेकि हरिजन लोग मनुष्य नही, कोई माल-असबाब हा।

जहातक यरवडा-समझौतेका ताल्लुक है, वह हिन्दुओके दो बडे समुदायोके बीचमे हुआ समझौता है। उसने हिन्दू जातिको उसके दो टुकडे होने से बचाया है और सवण हिन्दुओको उन लाखो-करोडोकी क्षति-पूर्ति करने का मौका दिया है जिनके साथ वे सदियोसे दुर्व्यवहार करते चले आ रहे है।

डॉ० अम्बेडकर इसके लिए हिन्दुओको दण्ड देना चाहते है और उन्हे ऐसा करने का हर तरहका हक भी है, लेकिन उन्ह यह आशा नही करनी चाहिए कि सवण हिन्दू भी इसमे उनका साथ देगे। उन्ह अधीर होने का पूरा हक है। मगर सदियो पुराने पूर्वग्रह व अन्ध-विश्वास एक क्षणमे दूर नही हो जाते। सुधार-आदोलन का जिसने जरा भी अध्ययन करने की कोशिश की है, ऐसा कोई व्यक्ति इस बातसे इनकार नही करेगा कि अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलनका सन्देश सवण हिन्दुओ तक पहुँचाने का वह सब प्रयत्न किया जा रहा है, जो मनुष्यके लिए शक्य है। डॉ० अम्बेडकरकी योजना अगर मान ली गई तो सुधार-आन्दोलनको ऐसा धक्का लगेगा जो अन्तमे जाकर शायद उसकी मौत ही साबित हो। क्योकि इसमे हरिजनाको कागजी, लेकिन कानूनी तौरपर, हिन्दू-धर्मके दायरेसे दूसरे दायरेमे रख देने की बात है, चाहे उस दूसरे दायरेका नाम कुछ भी क्यो न हो। इसका अर्थ अवश्य ही भ्रातृघात है।

१ देखिए "पत्र एम० सी० राजाको", २६-७-१९३६।

क्योंकि इससे खुद हरिजन ही दो परस्पर-विरोधी भागोमे बँट जायेंगे और अगर उन दोनाको यरवडा-समझौतेके अर्थमे हरिजन शुमार किया गया तो उनकी हालत आजसे भी बदतर हो जायेगी, और यदि दु खी भारतपर यह विपत्ति आई तो वह उसके लिए बहुत ही बुरा दिन होगा।

यह दलील बेकार है कि इसमे धर्मका नाम-मात्रके लिए परिवतन भले ही हो, पर वस्तुत कोई धम-परिवर्तन नही होगा, और अगर हुआ भी तो वह वैसा खराब नही होगा जैसाकि हरिजनोके ईसाई या मुसलमान बन जाने पर होता। अगर धर्म-परिवतन ही हो, तो इससे कोई फक नही पडता कि वे (अर्थात् हरिजन) किस नामसे पुकारे जाते है। अगर सिर्फ कहने मात्रके लिए व दूसरे धर्ममे चले जाय, मगर बने रह फिर भी हरिजन ही, तो इससे तो उनके अन्दरूनी झगडाके लिए एक अतिरिक्त कारण पैदा हो जायेगा —और वह सब होगा सवण हिन्दुओको सजा देने की इच्छा पूरी करने के लिए। अपनी नाराजगी या अधीरताके कारण डा० अम्बेडकर इस स्पष्ट परिणामको न देखना चाह तो न देखें, लेकिन डॉ० मुजेको तो इसे दखना ही चाहिए।

और, हम स्वयभू नेता हरिजनाकी धार्मिक स्वतन्त्रताका सौदा करनेवाले होत कौन है? क्या हरएक हरिजनको, फिर वह चाहे बेवकूफ और मन्दबुद्धि ही क्या न हो, अपना चुनाव स्वय करने का हक नही है? डॉ० अम्बेडकर और दूसरे जो लोग धर्म-परिवतन करना चाहते है, उनके लिए ऐसा करना एक बात है, लेकिन राजनीतिक या अन्य प्रकारके दलोके लिए तमाम हरिजनोकी ओरसे ऐसा मान बैठना और उसपर कानूनी तथा दूसरे दूरगामी परिणामाको आधारित करना बिलकुल ही अलग बात है।

हिन्दुस्तानमे भिन्न-भिन्न धर्मोके जो नेता है वे अगर हरिजनोको अपने-अपने धर्ममे मिलाने के लिए आपसमे प्रतिस्पर्द्धा करना बन्द कर दे, तो यह इस अभागे देशके लिए सद्‌भाग्य की बात होगी। मेरा तो पक्का विश्वास है कि जो लोग इस चढा-ऊपरी मे लगे हुए है वे धर्मकी कोई सेवा नही कर रहे है। राजनीतिक या आर्थिक रूपमे उसका सौदा करके उलटे वे तो धर्मके महत्त्वको घटा रहे है। उचित तो यह है कि खुद राजनीति और अन्य सब बातो का मूल्याकन धर्मकी दृष्टिसे हो। कारण, धर्मका सम्बन्ध तो आत्मासे है। दुनियाकी दूसरी शक्तियाँ कितनी ही बडी क्यो न हो, अगर ईश्वर-जैसी कोई चीज है, तो आत्म-शक्ति सबसे प्रबल शक्ति है। वस्तुत यह तो हम जानते ही है कि जो शक्ति जितनी बडी होगी वह उतनी ही बढिया भी होगी। बढिया भौतिक शक्तियोमे अभीतक विद्युत् ही सर्वप्रधान है। मगर उसके आश्चर्य-जनक परिणामोके सिवा अन्य रूपमे अभीतक उसे किसीने नही देखा है। हाँ, वैज्ञानिक चिन्तनमें विद्युत्‌से भी श्रेष्ठ शक्तिके अस्तित्वकी परिकल्पना की जाती है। लेकिन मनुष्य रचित कोई औजार ऐसा नही है जो आत्माका, अर्थात् आध्यात्मिक शक्तिका किसी निश्चित रूपमे पता लगा सके। सच्चे धार्मिक सुधारकोने अभीतक इसी शक्ति पर अपना आधार रखा है, और उनकी आशा कभी निष्फल नही हुई। इसी शक्तिसे

अन्तमे हरिजनोका तथा अन्य हरएक व्यक्तिका कल्याण होगा और मनुष्योके लगाये सारे अनुमान गडबड हो जायेगे, फिर वे मनुष्य बौद्धिक दृष्टिसे कितने ही प्रतिभाशाली क्यो न हो। जो सुधारक हिन्दू-धर्मको अस्पृश्यताके रोगमे मुक्त करने के कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ है उन्हे तो हरएक बातमे इसी एक शक्तिपर निभर रहना पडेगा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २२-८-१९३६

२९२. पत्र · मेहरचन्द अहलुवालियाको

सेगाँव, वर्धा
२२ अगस्त, १९३६

प्रिय मित्र,

मेरी सहमति आम ढगकी है। मैने न कभी पहले और न आज ही वग-सघष या वर्ग-द्वेषका समर्थन किया है। मै वग-सघषको अवश्यम्भावी भी नही मानता। लेकिन मैने ऐसा कभी नही कहा और न यह माना ही है कि काग्रेसके उद्देश्यके लिए पूँजीपतियोकी मदद आवश्यक है।

हृदयसे आपका,

श्री मेहरचन्द अहलुवालिया
राजपुरा
एन० डब्ल्यू० आर०

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२९३ पत्र : मेहराबहन झाबवालाको

२२ अगस्त, १९३६

प्रिय बहन,

आपका सुन्दर पत्र मिला। हरिजन-कार्यकर्त्ताओ और खादीके बीच कोई सीधा सम्बन्ध नही है। विदेशी वस्त्र पहननेवाला भी हरिजन-सेवा कर सकता है। अत आप तो आलोचनाकी चिन्ता न करके अपना सेवा-कार्य करती ही जाये।

लेकिन आप तो दरिद्रनारायणकी भी सेविका है। दरिद्रनारायणसे तात्पर्य है गाँवोके करोडो भूखे मरनेवाले लोग। उनकी सेवा करनेवाला निश्चय ही खादीका बोझ उठा सकता है। आपसे जितना सम्भव है उतना तो आप करती है, इतना ही काफी है। आपको एक सुझाव दूँ? आप अपने हाथसे बहुत बारीक सूत कात सकती

है। यदि आप ऐसा करे तो वजनमें बिलकुल हलकी साडी पांच-छह रुपयेमें तैयार करवा सकती है। बहुत-सी गरीब बहनें ऐसा करती हैं।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२९४ पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगाँव, वर्धा
२३ अगस्त, १९३६

बापा,

दक्षिण हिन्दुस्तानके सेवक मण्डलके विषयमें हुई बातें मुझे याद नही पडती। अब तो मैं प्रत्येक बातके बारेमें उसी समय अपनी राय बनाता हूँ जब वह मेरे सामने रखी जाती है। दक्षिण हिन्दुस्तानके मण्डलके योग्य सेवक मिले और दक्षिण हिन्दुस्तानसे ही उनका खर्च निकल आये तो मुझे कोई हर्ज दिखाई नही देता। केन्द्रसे कोई मदद नही दी जा सकती।

अमतुस्सलाम तुम्हारे लिए कुल मिलाकर चिन्ताका कारण तो नही है न? वह वहाँसे वापस लौटने की तैयारी कर रही है। नीलमका खर्च तो तुम्हें यहाँसे लेना है। उसका बोझ वहाँ तुमपर नही डालना है। शायद यह खर्च जमनालालजी उठायेंगे, और नही तो फिर मेरी थैली तो है ही।

वालुजकरको और पैसेकी जरूरत पडेगी। मैंने उसकी हुंडी स्वीकार करने की बात लिखी थी, वह मेरी देखरेखमें काम कर रहा है। हरएक बातके बारेमें मुझसे पूछता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६५) से।

२९५. पत्र: न० चि० केलकरको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३६

प्रिय श्री केलकर,

आपके पत्रका उत्तर देने मे देर हो गई।

आपका कथन[1] क्या बहुत ही कमजोर साक्ष्यपर आधारित नही था? आप तथ्यों की पुष्टिके लिए स्वामी सत्यदेवका लेख मेरे पास भेज सकते थे। यदि समय होता तो मैं बडी खुशीसे उनसे पत्र-व्यवहार करके उन लोगोंके नाम जानता जिनसे मैंने

१ देखिए "पत्र न० चि० केलकरको", ६-८-१९३६।

तथाकथित बाते कही थी। परन्तु इस विषयकी चर्चा आगे बढाने को न मेरे पास समय है न इच्छा ही। सत्य अजेय है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३११९) से, सौजन्य काशिनाथ एन० केलकर

२९६. पत्र : अमृतकौरको

२४ अगस्त, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

मेरे पास केवल इतना ही समय है कि तुम्हारे दो तारोके लिए तुम्हे खूब प्यार भेज सकू। भगवान्‌का शुक्र है कि अँगूठा ठीक हो गया है।

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९१ से भी

२९७. पत्र . मीराबहनको

२४ अगस्त, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे देखने के लिए इसके साथ सीताराम शास्त्रीका पत्र भेज रहा हूँ। तुम सैंडिल भूल गईं। मुझे पता नही कि तुम्हे अपना जोडा मिल गया या नही। यदि ऐसा नही है तो तुम्हे एक जोडा वही प्राप्त कर लेना चाहिए अथवा एकदम ही वालुजकरको लिख देना चाहिए।

मुझे उम्मीद है कि तुम ठीक-ठाक होगी और वहाँ अच्छी तरह जम गई होगी।[1] अपने नये जीवन मे रम जाने के पश्चात् तुम जो पहला पत्र लिखोगी उसकी प्रतीक्षामे हूँ। कोई भी समय-सारणी मत बनाओ।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२८ से भी

१ मीराबहन बैतूलमें रहने चली गई थीं।

२९८ पत्र बाल गगाधर खेरको

२४ अगस्त, १९३६

प्रिय भाई खेर,

समयाभावके कारण तुम्हारे महत्त्वपूण पत्रका[1] उत्तर देने मे देरी हो गई। यहा किसीके बौद्ध बनने का कोई सवाल ही नही है। जिस प्रकार राम, कृष्ण आदिके मन्दिर है, उसी प्रकार इस मन्दिरमे बुद्धकी प्रतिष्ठा होगी। यह आन्दोलन धर्म-परिवर्तन कराने के दोषमे मुक्त है। अधिकमे-अधिक यह आधुनिक प्रकारका एक हिन्दू मन्दिर होगा, जिसका रक्षक या पुजारी कोई अत्यन्त विद्वान् व्यक्ति होगा। प्रोफेसर कोसम्बीकी समूची योजनाको मैंने इसी रूपमे समझा है। इस पत्रको तुम प्रोफेसरको दिखा लो और यदि वे मेरे दृष्टिकोणका अनुमोदन करे तो श्री नटराजन्‌को भी, ताकि मन्दिरके विषयमे सबकी एक राय रहे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९७७) से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

२९९ पत्र . मणिलाल और सुशीला गांधीको

२४ अगस्त, १९३६

चि० मणिलाल, सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। किशोरलालके नामका पत्र भी पढ लिया। शेयर होल्डराके बारेमे तुम्हारा विचार ठीक नही लगता। जहा शेयर होल्डरोके लिए क्षेत्र हो सकता है, वहाँ ग्राहकका और योग्य व्यक्तिका क्षेत्र हो ही सकता है। शेयर-होल्डर प्राप्त करने का मतलब पत्रका चन्दा देनेवाले और कुशल ढगसे काम करनेवाले योग्य लोगोका

१ श्री खरने अपने पत्रमें लिखा था "श्री धर्मानन्द कोसम्बीने मुझे बताया कि आप चाहते है कि नायगाँव विहारके निमित्त बिड़लाजी द्वारा दिये गये दानके व्ययपर मैं नजर रखूँ। मैं ऐसा ही करूँगा। भवन निर्माणका कार्य पूरा होने तक मैं उस धनके व्ययका ध्यान रखूँगा। परन्तु मैं तो इस समय हरिजन सेवक सघसे सम्बन्धित माना जाता हूँ। इस कारण उसके बाद मैं क्या कर सकूँगा, कह नहीं सकता। मैं भला बुद्ध विहार समितिका सदस्य कैसे बन सकता हूँ? क्या वे सब बौद्ध बन जायेंगे? और इसकी आवश्यकता ही क्या है? "

मिल जाना नही है। मेरी समझमे तो भरपूर पैसा आ रहा हो तो भी ठीक आदमी मिलना मुश्किल होता है। सीधी बात तो यह है कि अभीतक 'इडियन ओपिनियन' के ग्राहक उसके पाठक न होकर उसके सरक्षक है। यह एक करुणाजनक स्थिति है। तुम्हे यहॉ-वहॉ भटकना बन्द करके कोई दूसरा ऐसा प्रामाणिक काम खोज लेना चाहिए जिससे तुम दोनोका खर्च निकल सके। 'इडियन ओपिनियन' चलाये तो उसका नुकसान या तो तुमको भरना चाहिए या उन लोगोको यह नुकसान भरने का वचन देना चाहिए जो चाहते है कि पत्र चलाया जाता रहे। अगर यह सम्भव न हो तो 'इडियन ओपिनियन' बन्द कर देना चाहिए। उसे चलाने का आग्रह रखना एक सीमातक ठीक माना जा सकता है। 'इडियन ओपिनियन' के बन्द हो जानेपर तुममे दूसरा धन्धा करके पेट भरने की सामर्थ्य तो होनी ही चाहिए। केवल खेतीके बलपर गुजारा कर सकने की शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। इन सब बातोपर धीरजके साथ विचार करना चाहिए। यहॉसे सुझाव भेजने मे भी बडी मदद नही हो सकती। वहाकी आजकी परिस्थिति तुम्ही जानते हो। फिर भी अन्तिम निणय करने के पहले यहॉ लिखकर सूचित कर देना ठीक होगा। यदि उतना समय न हो तो तुम स्वतन्त्र रीतिसे निणय कर सकते हो। इतनी शर्तोका पालन तो करना ही चाहिए

(१) कर्ज न करना,
(२) धन्धेको उधारपर न चलाना,
(३) कोई अनुचित धन्धा—जैसे बीडी बेचना आदि—न करना,
(४) जिसमे जल्दी धनवान होने की आशका हो, ऐसा धन्धा न करना।

सोराबजी की बात पढकर दु ख हुआ। इनके बारेमे रुस्तमजी सेठको जो भय रहता था वह सही सिद्ध हुआ लगता है। जिसका जैसा नसीब उसकी बुद्धि उसी प्रकार चलती है।

शायद कान्तिके विषयमे लिख चुका हूँ। वह भी परीक्षा और उपाधियोके प्रवाहमे पड गया है। इसके बिना उसे सन्तोष ही नही होता। हाँ, मुझे याद आया कि मैंने उसके लिए तुमसे मदद माँगी थी।[1] जान पडता है, देवदासने कुछ मदद दी भी है। परसो-नरसो तक मददकी रकम आ जाने की उम्मीद है। तब फिर अधिक मालूम होगा। रामदास लिखता है कि वह मदद नही कर सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५७) से।

१ देखिए "पत्र मणिलाल और सुशीला गाधीको", १६-८-१९३६।

३०० बातचीत : मॉरिस फ्राइडमनसे[1]

[२५ अगस्त, १९३६ या उसके पूर्व][2]

[गांधीजी] अच्छा, तो ये फ्राइडमन हैं। आप तो चरखेका अध्ययन करने के लिए आये हैं न?[3] पर वह एक लाख रुपयेका इनाम आपको मिलने से रहा। वह तो रद्द कर दिया गया है।

[मॉरिस फ्राइडमन] भी गांधीजी के साथ जोरसे हँसते हुए बोले, "जी नहीं, मैं वह इनाम नहीं चाहता। मैं तो आपको सिर्फ वह चरखा बना देना चाहता हूँ, जिसकी आपको जरूरत है।"

मॉरिस फ्राइडमनने चरखेके बारेमें फिर कई सवाल पूछे, अनेक सुधार सुझाकर उनपर बहस की, और इसके बाद वर्धाके लिए रवाना हो गये।[3]

उन्होंने पूछा, यहाँ गाँवमें आनेमें आपका उद्देश्य शुद्ध मानव-सेवा ही है न, जिससे आप अपनी शक्ति-भर इन ग्रामवासियोंकी अधिकसे-अधिक सेवा कर सकें?

यहाँ तो मैं सिवा अपने और किसीकी सेवा करने नहीं आया हूँ। इन देहातियों की सेवा द्वारा मैं आत्म-साक्षात्कार करना चाहता हूँ। मनुष्यका अन्तिम उद्देश्य है ईश्वरका साक्षात्कार — उसकी अनुभूति प्राप्त करना। उसके राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी कार्य इस अन्तिम उद्देश्य — ईश्वरानुभूति — को ध्यानमें रखकर ही सम्पादित होने चाहिए। इसलिए मानव-जातिकी सेवा इस प्रयत्नका एक अनिवार्य भाग है, क्योंकि ईश्वरको पाने का एकमात्र उपाय है उसीकी बनाई सृष्टिमें परमात्माका दर्शन करना और उसमें तादात्म्य स्थापित कर लेना। यह तो सबकी सेवा द्वारा ही हो सकता है। स्वदेश-सेवाके बगैर विश्व-सेवा हो ही नहीं सकती। मैं इस विश्वका एक छोटा-सा अंश-मात्र हूँ। इसलिए मैं इस मानव-जातिको छोड़कर उसे कहीं पा ही नहीं सकता। मेरे देशभाई मेरे सबसे नजदीकी पड़ोसी हैं। वे इतने असहाय, इतने साधनहीन, इतने सुस्त और जड़ हो गये हैं कि उन्हींकी सेवामें मुझे अपना सारा ध्यान और शक्ति लगा देनी पड़ेगी। अगर मुझे यह विश्वास हो जाता

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। मॉरिस फ्राइडमन एक पोलिश इंजीनियर थे और ग्रामोद्धार आन्दोलनमें उनकी बड़ी दिलचस्पी थी। इससे पहले वे नन्दी हिल पर गांधीजी से मिल चुके थे। उन्हें भारतानन्द नाम दिया गया था।

२ साधन-सूत्रके अनुसार बातचीत मंगलवारको हुई थी। २९-८-१९३६ से पहलेका मंगलवार २५-८-१९३६ को पड़ा था।

३ इसके बादकी बातचीत अगली भेंटमें हुई थी।

कि मै हिमालयकी किसी गुफामे ईश्वरको पा सकता हूँ तो मै तुरन्त वहाँ चल देता। पर मै तो जानता हूँ कि मै इस मनुष्य-जातिको छोडकर उसे और कही नही पा सकता।

पर मनुष्यकी आध्यात्मिक उन्नतिके लिए भी कुछ सुख-सुविधाओकी तो जरूरत रहती ही है। ग्रामवासियोके असुविधा-भरे और गन्दे जीवनसे एकरूप होकर भी क्या कभी कोई अपनी उन्नति कर सकता है?

शारीरिक सुख और शान्ति एक हदतक अवश्य जरूरी है। पर उस हद तक पहुँच जाने के बाद उनसे आगे बढने मे सहायता पहुँचने के बजाय रुकावट पडने लगती है। इसलिए अपनी जरूरतोको अन्धाधुन्ध बढाकर उनकी पूर्ति करने का आदर्श एक प्रकारका मोहजाल ही है। मनुष्यकी शारीरिक जरूरतोको, बल्कि उसकी व्यक्तिगत बौद्धिक जरूरतोको भी एक हदतक पहुँचने के बाद रोकना ही चाहिए, नही तो वे शारीरिक तथा बौद्धिक विलासमे परिणत होने लग जायेगी। मनुष्यको अपनी भौतिक और सास्कृतिक परिस्थितियोको इस तरह व्यवस्थित और नियमित कर लेना चाहिए जिससे वे उसके सेवामार्गमे बाधक न हो पायें। असलमे, सेवामे ही उसकी सारी शक्तियाँ केन्द्रित होनी चाहिए।

आप जो गाँवोपर सारा ध्यान और प्रयत्न केन्द्रित करते है, इसका रहस्य क्या है?

मैं बराबर कहता रहा हूँ कि अस्पृश्यता बनी रही तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। इसी प्रकार मै कहूँगा कि यदि गाँव तबाह हुए तो भारत भी नष्ट हो जायेगा। वह फिर भारत नही रह जायेगा। ससारमे भारतका जो मिशन है, वह खत्म हो जायेगा। गाँवोका भविष्यमे शोषण न हो तभी उनका पुनरुद्धार हो सकता है। बडे पैमानेपर औद्योगीकरण किये जाने का परिणाम यह होगा कि होड और बाजारकी समस्याएँ पैदा होगी और इनके फलस्वरूप गाँववालोका किसी-न-किसी प्रकार शोषण किया जायेगा। इसलिए हमे इस बातपर आग्रह रखकर चलना है कि गाँव आत्म-निर्भर हो, और अपनी जरूरतका सामान मुख्यत वही तैयार कर ले। यदि ग्रामोद्योगोका यह स्वरूप कायम रखा जाये तो फिर इसपर कोई आपत्ति नही है कि गाँववाले आधुनिक यन्त्र और औजारोका उपयोग करे — ऐसे यत्र-ओजारोका जो वे आसानीसे प्राप्त कर सके और स्वय बना सके। शर्त यही है कि इन यन्त्रोका उपयोग दूसरोका शोषण करने के लिए नही होना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २९-८-१९३६

३०१. तार अमृतकौरको

वर्धागंज
२५ अगस्त, १९३६

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले
शिमला

तारसे ठीक-ठीक सूचित करो कि डॉक्टरकी रायमे अँगूठे समेत शरीरकी दशा कैसी है। सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९२ से भी।

३०२ पत्र अमृतकौरको

२५ अगस्त, १९३६

प्रिय अमृत,

तुमने यह क्या कर डाला? शम्मी कहते है कि तुम "बीमार होकर लौटी" हो और स्वभावत यह भी कि उन्हे "सब प्रकारसे बडी निराशा हुई है।" सच्ची बात बता देने के कारण उनसे नाराज मत होना। तार पढकर मै व्यथित हो गया हूँ। तुम्हे हुआ क्या है? मैने तुम्हे कडा तार भेजा है।

आशा है, तुम मुझे सशयमे नही रखोगी और ठीक-ठीक ब्योरा दोगी। शम्मीको सब प्रकारसे निराशा क्यो हुई है, इसपर भी प्रकाश डालना। तुमने मुझे शम्मीको लिखने का निषेध किया था। किन्तु मै उनके तारकी अवहेलना नही कर सका। उन्हे छोटा-सा पत्र[1] भेजा है।

आशा करता हूँ, तुम्हे कोई गम्भीर रोग नही होगा। पूरा सच्चा हाल जानने के बाद ही और कुछ लिखूँगा।

१ उपलब्ध नहीं है।

हाँ, मीरा कल बैतूल चली गई और उसकी कुटीमे पुरी[1] रहता है।

तुम्हारे कोने खाली पडे है! और गुसलखाना? वहाँके सारे खिलौने चले गये! परन्तु जब तुम यहाँ स्वस्थ रह ही नही सकती तब तुम मेरे पास आ भी कैसे सकती हो?

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

तुम्हारी यह मजाल कि मुझे कोरा पन्ना भेज दिया, जबकि लिखे हुए पन्नेपर एक कोना भी रीता नही छोडती!

बा०

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३७) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९३ से भी

३०३. पत्र एफ० मेरी बारको

२५ अगस्त, १९३६

चि० मेरी,

इस पत्रसे[2] तुम मेरी नजरो मे और भी उठ गई हो और यदि मेरे-तुम्हारे बीच अब भी कोई दूरी थी तो वह इससे मिट गई है। हमें सत्यका ध्यानपूर्वक पालन करने की आवश्यकता है। बात यह है कि मैंने केवल यह जानने के लिए पूछा था कि तुम्हारे आराममे कोई विघ्न तो नही पडा! मै यह नही चाहता था कि घटी बजने पर तुम आओ ही। मेरे पास सेगाँवमे जो थोडे-से लोग है उनके साथ भी मै कडाई नही बरतता। उन्हे स्वतन्त्रता है कि चाहे तो प्रातःकालीन प्रार्थनामे शरीक न हो। इसमे सीखकी बात यह है कि प्रियसे-प्रिय व्यक्तियोकी प्रसन्नताकी खातिर भी कोई कार्य तबतक न किया जाये जबतक वह स्वयको भी प्रिय न लगे। इस सामान्य सिद्धान्तसे अनेक छोटे प्रश्न उठते है सही, परन्तु तुम मेरा तात्पर्य तो समझती हो।

मोतीसे मेरा प्यार कहना। खुशी है कि उसे वहाँका जीवन पसन्द है। आशा है, उसकी तबीयत ठीक रहती होगी।

मीरा चली गई है। आशा है, वहाँ आरामसे रहेगी। ऐसा न हो, तो उसे लौट आना चाहिए। मै उसको एक दूसरी परन्तु दूरकी जगह भेज सकता था, परन्तु दूर जाने मे उसकी अनिच्छा थी।

१ अनन्तराम पुरी।

२ एफ० मेरी बारने पत्रमें लिखा था कि गांधीजी को सेगाँवकी प्रातःकालीन प्रार्थनामें शामिल न होने का कारण बतानेमें वे "एक प्रकारका झूठ बोली" थीं क्योंकि उनका सुबह उठने का इरादा ही नहीं था।

महादेव मालवाही जहाजोके विषयमे पूछ-ताछ करेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६७) से। सी० डब्ल्यू० ३३९७ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

३०४ पत्र ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२५ अगस्त, १९३६

चि० ब्रजकिसन,

तुमारे पत्र के उत्तर देने मे बहूत देरी हुई, कारण सिर्फ समयाभाव ही थी। आज भी सोने के समय लिख रहा हू।

मेरे पास कौन रहते है? तीन तो थे ही। बाकी मे बा और मनु खानसाहेब। जिसको रोक सकता हू उसे रोक लेता हू। तुमको आने देने से क्या लाभ? यहा तुमारी सेहत अच्छी तो रहती ही नही।

ग्रामउद्योग मे किसीकी मदद न मिले तो उसे छोडो।

वहा शरीर अच्छा न रहे भी तो मुझे लिखो।

बापु

[पुनश्च]

यहा कुछ खत खतम नही हुआ था। आखरी वाक्य नीद मे ही लिखा। कलम छुट गई और सो गया। अब नीद से उठकर और गरम पानी पीकर इसे लिख रहा हू। यह बात कोई बीमारी की या कम शक्ति की निशानी नही है आरोग्य की निशानी अलबत्ता है। मेरे साथ रहने का लोभ छोडो और वहा या अन्य स्थलपर जिधर कुछ भी धधा कर सको वहाँ धधा करो और खर्च जितना कमाओ। कोई खादी भडार मे क्यो नही? अथवा नरेला जाकर रहो। दूसरो की मदद से कार्य करो। ऐसे ही बैठे रहना अच्छी बात नही है। देवदास से मश्वार करो। यह जानो कि मैं नही लिखता हू उसका कारण जो तुमने निकाला है सो कभी हो ही नही सकता है। मै तुमे कैसे भूलू?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४५) से।

३०५ पत्र रणजीत एस० पंडितको

वर्धा
२६ अगस्त, १९३६

चि० रणजीत,

तुम्हारी तबीयत खराब क्यो रहा करती है? सरूप लिखती है कि अब तुम्हारी तबीयत पहलेसे कुछ अच्छी है। प्रयास करके भी तुम्हे अपना शरीर वज्र-जैसा बना लेना चाहिए। गगा पार करने के लिए नाव तो बन सकती है। बात तो तब बनेगी जब गुलामीमे पार उतरने की नाव बनाओ। लेकिन छातीमे दम न हो तो ऐसा साहस नही किया जा सकता। इसके लिए तो इतनी मजबूत छाती होनी चाहिए कि हाथमे लिये हुए चप्पू छूटे ही नही।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३०६ पत्र . अमतुस्सलामको

[२७ अगस्त, १९३६ के पूर्व][१]

प्यारी बेटी,[२]

तेरे दो खत मिले हैं। डॉ० भारद्वाज जो कहते है उसपर विश्वास रखना है। डॉ० अन्सारी भी वही करते। इसलिए तुझे नाक साफ करनी है और दूसरी जो सिफारिशे उन्होने की हैं, उन्हे मानना है।

नीलमका खत[३] साथमे है। नीलमकी बीमारी अगर न होती तो तुझे जरूर बुला लेता। कान्तिको तेरे दोना खत दिखाऊँगा। वह आना चाहेगा तो इजाजन दे दूगा। उसने जो कदम उठाया है वह मुझे भी पसन्द तो नही है। लेकिन उसपर मै दबाव नही डालना चाहता।

अभी समय नही है, इसलिए यही खत्म करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०३)) से।

१ कान्तिलाल गांधीके अमतुस्सलाम के यहाँ जाने के इरादे के उल्लेखसे, देखिए पृ० २६७ पर अमतुस्सलामको ही लिखा एक अन्य पत्र।

२ ये शब्द उर्दू लिपिमें हैं।

३ पत्र उपलब्ध नहीं है।

३०७ तार अमृतकौरको

वर्धागंज
२७ अगस्त, १९३६

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले
शिमला वेस्ट

तुम्हारा तार मिला। परमात्माका शुक्र है। तार द्वारा रोज हालत बताओ। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३८)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९४ से भी

३०८ पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
२७ अगस्त, १९३६

चि० अमतुस्सलाम

अब तो कान्ति वहाँ पहुँच गया है। देखता हूँ, अब तू क्या पराक्रम करती है? झगडना मत। मिठाससे जो समझाना हो वह समझाना। अब उसे रोका नहीं जा सकेगा, ऐसा मुझे तो लगता है।

डॉ० भारद्वाज जैसा कहे वैसा करना। सबको नसीहत देती है, अपने शरीरकी सँभाल रखना। मुझसे अभी लम्बे खतकी आशा न रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३)से।

३०९. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

सेगाँव, वर्धा
[२७] अगस्त, [१९३६][1]

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि तुम्हे ऐसा लगता है कि बापाने भूल की है तो तुम्हे चाहिए कि स्पष्ट रूपसे उन्हे वैसा लिख दो। मैंने सब-कुछ पूरी तरह नही पढा है, इसलिए मैंने उन्हे कुछ नही लिखा। मै इतना जरूर जानता हूँ कि निर्णय देने के बाद न्यायाधीशका काम पूरा हो जाता है और अपने निर्णयका अर्थ करने का अधिकार भी उसे नही रहता। मैंने बापाको यह भी नही लिखा कि यदि दोनो पक्ष उनके सामने अपनी बात पेश करे तो वे उसे सुन ले और इसका कारण यह है कि मै अपने काममे इतना लगा हुआ हूँ कि ऐसी बहुत-सी चीजे कर नही पाता। अगर तुम बापाको लिख रहे हो तो यह पत्र उन्हे भेज सकते हो। तुम्हे इतना लिखा इसलिए अब उन्हे लिखने की इच्छा भी हो आई है, किन्तु लिखने का वक्त कहाँ है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३७) से।

३१०. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
[२७ अगस्त, १९३६ के आसपास][2]

चि० प्रभा,

तू पटना गई, फिर भी तुझे मेरा सिताब दियारा भेजा गया पत्र तो मिला ही होगा। अब पटनामे दूध, फल लेकर तबीयत सुधार लेना। घरकी ठीक देखरेख करना। अब तुझे जयप्रकाशकी खुराककी तरफ ठीक ध्यान देने का अवसर मिला है। तेरे प्रश्नोका तफसीलसे जवाब दे ही चुका हूँ, इसलिए दुबारा यहाँ नही लिख रहा हूँ। वहा घरमे कैसा चल रहा है? मेरे जानने योग्य और जो-कुछ हो, सो लिखना। आबोहवा कैसी है? घूमनेका क्रम जारी रखना। कल मैंने वजन लिया था। १०९ पौंड निकला।

बापूके आशीर्वाद

१ जी० एन० रजिस्टरसे।

२ नीलमकी बीमारी और अमतुस्सलामके साथ उसके ठहरने के उल्लेखके आधारपर, देखिए "पत्र अमतुस्सलामको", २७-८-१९३६ के पूर्व।

[पुनश्च]

महादेवी वगैरह बद्रीनारायणसे वापस आ गई है, इनमें से एक, नीलम, बीमार हो गई थी। वह अमतुलके पास है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६४)से।

३११ तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२८ अगस्त, १९३६

अमतुस्सलाम
सेवक
दिल्ली

तुम अपनेको शान्त रखो। जल्दी ठीक हो जाओ। मैं कान्तिकी देखभाल कर रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४)से।

३१२ पत्र : अमृतकौरको

वर्धा
[२८][1] अगस्त, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

यह पत्र मैं ज०[मनालालजी] के यहाँसे सवेरे तडके लिख रहा हूँ ताकि पहलेकी ट्रेनसे चला जाये।

यह आश्वासन भला तुम्हें कैसे दूँ कि मैं चिन्ता-मुक्त हूँ? और मैं हो भी कैसे सकता हूँ जब तुम ऐसा विद्रोहाचरण कर रही हो? तानाशाहके सामने तो तुम आज्ञाकारी थी। उसकी पीठ पीछे तुम्हारा विद्रोही स्वभाव फूट पडा। तो मुझे चिन्ता-मुक्त करने का उपाय यह है कि तुम जल्दीसे स्वस्थ हो जाओ और यदि मछली खाने से तुम्हें लाभ हो तो बेहिचक खाना आरम्भ कर दो।

१ साधन-सूत्रमें "२९-८-१९३६" है, लेकिन उसके नीचे किसीने लिख दिया है, "वास्तवमें २८-८-१९३६"। इसकी पुष्टि डाककी मुहरसे भी होती है।

फिर भी यह विश्वास तो मै तुम्हे दिला सकता हूँ कि शम्मी चाहे कुछ भी कहे, मै उसका बिलकुल बुरा नही मानूँगा। उनका यह भयकर क्रोध तुम्हारे प्रति उनके प्रेमकी गहराईका सूचक है। जिस वातावरणमे वे पले है, उसे देखते हुए मै कहूँगा कि उन्हे पूरा अधिकार है कि वे मुझपर तुम्हारा स्वास्थ्य बिगाडने और सब प्रकारसे तुम्हारे सामान्य नियमित जीवनमें व्यतिक्रम पैदा कर देने का दोषारोपण करे। वे और कुछ सोच भी कैसे सकते है? मैने तुमसे पहले ही कहा था कि तुम्हारे पूर्ण स्वस्थ रूपमे शिमला लौटने पर बहुत-कुछ निर्भर करेगा। तुमने ध्यान नही दिया, दे भी नही सकती थी। अच्छा, अब तुम ठीक हो जाओ और पहलेसे भी स्वस्थ दिखने लगो, तब हम सारा हिसाब कर लेगे। जबतक बीमारी रहे, प्रतिदिन पत्र और तार भेजती रहो। पूणत नीरोग होनेतक तुम कोई काम मत उठाना। आशा है, कल तुम्हे मेरा तार[1] मिला होगा।

कल मै वर्धा आया और आज शामको पैदल वापस चला जाऊंगा।

मीरा आज बैतूलसे लौट रही है।

तुम्हे और शम्मी दोनोको प्यार।

तानाशाह
डाकू, बापू आदि

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८४)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९३ से भी

३१३ पत्र. जवाहरलाल नेहरूको

सेगॉव
२८ अगस्त, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

कल की हमारी बातचीतने मुझे विचारमे डाल दिया है। क्या कारण है कि पूरी इच्छा होते हुए भी मै उस चीजको नही समझ सकता, जो तुम्हारे लिए इतनी स्पष्ट है? जहातक मै जानता हूँ, मेरी बुद्धि अभी सठियाई नही है। ऐसी हालतमे क्या यह ठीक नही होगा कि तुम मुझे यह समझाने की पूरी कोशिश तो करो कि तुम चाहते क्या हो? सम्भव है, मै तुमसे सहमत न होऊँ। मगर मुझे वैसा कह सकने की स्थितिमे होना चाहिए। कलकी बातचीतसे इसपर प्रकाश नही पडता कि तुम्हारे मनमे क्या है। और शायद जो बात मेरे मामलेमे सही है वही कुछ और लोगोके मामलेमे भी हो। मै इस समय राजाजी से इसी बातकी चर्चा कर रहा हूँ। तुम समय निकाल सको तो मै चाहूँगा कि अपने कार्यक्रमकी चर्चा उनसे कर लो।

१ देखिए "तार अमृतकौरको", २७-८-१९३६।

मेरे पास समय नही है, इसलिए विस्तारसे नही लिखूगा। तुम जानते हो मरा क्या मतलब है।

सप्रेम,

बापू

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपस, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

३१४ टिप्पणियाँ

प्रमाणित बनाम अप्रमाणित खादी

कताईकी नयी दर लागू करने पर जो कठिनाई तमिलनाडुमे पैदा हुई थी, वही आन्ध्रदेशमे भी हो रही है, जैसाकि मेर पास उस तरफमे आये हुए अनेक पत्रोमे मालूम होता है। पत्र-प्रेषकोने खादीके अप्रमाणित व्यापारियोके खिलाफ कडी शिकायत करते हुए लिखा है कि किस तरह ये लोग उन गरीब कत्तिनोको हानि पहुँचा रह है, जिनके पास दो पैसे अतिरिक्त कमाने का और कोई साधन ही नही है। मै नही जानता कि अगर मै उन अप्रमाणित खादीके व्यापारियोसे कहूँ कि वे ऐसे खुदगज बनकर उन हजारो गरीब कातनेवालियो क पैसे न छीने तो वे मेरी सुनेगे या नही। मुझे आशा तो है कि वे सुनेगे। पर इसका वास्तविक इलाज खादी खरीदनेवालो के हाथमे है। अगर वे अखिल भारतीय चरखा सघ द्वारा प्रमाणित भण्डारोको छोडकर दूसरी दुकानोसे खादी खरीदना कतई बन्द कर दे तो अप्रमाणित दुकाने अपने आप बन्द हो जायेगी। जनताको यह समझ लेना चाहिए कि चरखा सघ नही रहेगा ता खादी भी नही रहेगी। जबतक खादी एक प्रचलित सिक्केकी तरह देहातामे सवप्रिय नही बन जाती, यह जरूरी है कि एक ऐसी सावधान सस्था उसका सवर्धन करती रहे जो इस कठिन कायको करने की क्षमता रखती हो। चरखा सघ इसी प्रकार की एक सस्था है। जनता तो जानती ही है, और अगर नही जानती तो उसे जान लेना चाहिए कि चरखा सघ पूणतया एक परोपकारी सस्था है, जिसे सिवा गाँवोकी लाखो गरीब कत्तिनोके और किसीका स्वाथ प्रिय नही है। यह तो उसके नामसे ही प्रकट है कि उसकी सारी प्रवृत्ति उन गरीबोको फायदा पहुँचाने के लिए ही है। जबतक उन लाखो-करोडो बहनोको, जो सालमे लगभग छह महीने बेकार रहती है, उनकी शक्तिके लायक कोई स्थायी फायदा पहुँचानेवाला उद्योग नही मिल जाता, तबतक गावोकी आर्थिक मुक्ति एक असम्भव-सी बात है, और हाथ कताईके समान दूसरा कोई उद्योग ही नहो जो सबके लिए उपयोगी हो। जनताको चाहिए कि अगर अप्रमाणित व्यापारी चरखा सघकी अपेक्षा कम दामोपर खादी बेचते हो तो भी वह हमेशा खादी तो चरखा सघके भण्डारोसे ही खरीदे। मै कई बार पहले

यह बात कह चुका हूँ। पर फिर भी इसे बार-बार इसलिए कहना पडता है जिससे जनताके मनपर यह बात अच्छी तरह अकित हो जाये, जनता यह जान ले कि चरखा सघके दामोपर खादी बेचने पर ही कातनेवालो को अधिक मजदूरी दी जा सकती है।

बगैर पैसेकी झोपडियाँ

> **पिछले वष मैंने अपने भावी निवासके गाँवमें साठ हरिजनोको लाकर बसाया था। उनके लिए झोपडियाँ खडी करने का सवाल जरा टेढा था। लेकिन खुद हरिजनोने ही उसे मेरी ओरसे हल कर दिया। एक महीने के बाद जब मै उस गाँवमें गया तो देखता क्या हूँ कि बारह झोपडियाँ तो बन चुकी थीं, और सो भी बगैर एक पैसा भी लगाये। दीवारे ज्वार, कपास या तुवरके डठलो तथा ताडकी डालियोकी बनी थीं। ऊपर छाने के लिए ज्वारके डठलोको चीरकर उनकी चटाइयाँ बुन ली गई थीं, और उनपर ढाकके पत्ते अच्छी तरह बाँध दिये गये थे। रस्सियाँ ढाककी जडोको कूट-पीटकर उनके तन्तुओसे बना ली थीं।**

यह पत्र कृषि-शास्त्रकी उपाधि पाये हुए एक उत्साही ग्रेजुएट नवयुवकने लिखा है जिसने किसी गाँवमे बसने का निश्चय कर लिया है। ऐसे स्थानोपर हरिजनोको अपने लिए आरामदेह झोपडियाँ और जीवनकी अन्य सुविधाएँ प्राप्त करने मे कोई कठिनाई नही होती, जहाँ मजदूरोको आजादी है और जहाँ वे उन प्राकृतिक साधनोका बेरोक-टोक उपयोग कर सकते है जो अन्यथा या तो यो ही पडे-पडे सड जाते है या कौडियोके मोल बेच दिये जाते हैं। पर रूढिग्रस्त लोगोके दुराग्रहने तो हरिजनोको अपने कुओपर चढने देना भी पाप और जुर्म करार दे रखा है! ! !

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-८-१९३६

३१५. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२९ अगस्त, १९३६

प्रिय अमृत,

आशा है, तुम्हे मेरा कलका पत्र मिला होगा। यह मै सेगाँवसे लिख रहा हूँ, इसलिए इसे विलम्ब-शुल्क देकर भी आजकी डाकसे नही भेज सकता। मेरी मन की शान्तिके लिए अत्यावश्यक है कि तुम प्रतिदिन तार और पत्रोसे सोलहो आने सही समाचार भेजो। तुमने सब्जियाँ भी क्यो भेजी? यह बात गाँवमे रहने के उद्देश्यके विपरीत पडती है। भरोसा रखो, जो आवश्यक होगा तुमसे माँग लूँगा।

चीर-फाडके औजारोकी कोई जल्दी नही है। शम्मीके शान्त हो जानेतक मै प्रतीक्षा कर लूगा। तुम्हे उन्हे मना लेनेका निश्चय कर लेना है। घरसे भाग निकलने की बात तो निपट मूर्खता है। ऐसी बाते तुम्हारे स्वभावमे मेल नही खाती। 'प्रेम तो धीरज और अपार कष्ट-सहनका नाम है।' तुम प्रेमका मूर्तरूप नही तो और क्या हो? मुझसे तुम्हारे मूल्यवान साहचर्यका नतीजा यह नही हो सकता कि तुम पहले से कम प्रेमल और कम प्रेमभाजन बन जाओ। यदि तुम अपने परिवारको सन्तुष्ट करनेके लिए अपना स्वास्थ्य और अच्छा बनाकर नही दिखा सकी तो न सही, लेकिन यह तो तुम्हारे बसकी बात है कि शान्त-चित्त रहो और इतना प्रेम दिखाओ कि दूसरोका तीव्रतम कोप ठडा हो जाये। मुझे तार भेजो कि तुमने शम्मीको मना लिया है। तुम्हे बताता हूँ कि तुम्हारी बीमारीके कारण उन्हे जो दुख हुआ है उसका ध्यान मुझे दिन-भर सताता रहता है। मेरी समझमे नही आता कि मै किस प्रकार उन्हे सन्तुष्ट करू। इसका एकमात्र उपाय यही है कि तुम बिलकुल स्पष्ट रूपमे उनपर प्रकट कर सको कि मेरे सम्पर्कसे तुमने कुछ खोया नही है बल्कि सम्भवत जीवनके महत्त्वपूर्ण विषयोमे कुछ पाया ही है।

मीरा कल वापस आ गई। बैतूलमे रहन-सहनका ढग उसको बहुत गन्दा लगा।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९४ से भी

३१६ पत्र : अमृतकौरको

सेगाव, वर्धा
३० अगस्त, १९३६

प्रिय अमृत,

तुम बहुत अच्छी हो। लम्बे पत्र और तार भेज रही हो। मुझे उन सबकी आवश्यकता थी। तुम्हारे पत्रोमे प्रसन्नता भी झलकती है। परन्तु हालाँकि तुम्हारे समान मै चिन्ता नही करता, फिर भी मै स्वीकार करता हूँ कि तुम्हारी बीमारीने मुझे कडा धक्का पहुँचाया है और शम्मीसे मनमुटाव तो असह्य लगता है। तुम्हे चाहिए कि तुम उनके कमरेमे जाओ और अपनी नम्रतासे उन्हे जीत लो। अपने आँसुओसे उनको नहला दो। मै चाहता हूँ कि वह मुझे तार भेजे कि उन्होने मुझे हृदयसे क्षमा कर दिया है। मुझे यह सोचकर कष्ट होता है कि तुम दोनोके अलगावका मै कारण हूँ।

यहाँ तो तुम पूर्णरूपेण आज्ञाकारिणी थी। अब इसमे भी मै तुमसे पूरे दिलसे आज्ञाकारिता चाहता हूँ। स्वैच्छिक आज्ञाकारिताका अपने-आप असर होता है। और मै जानता हूँ, तुम्हारी आज्ञाकारिता परिवारमे फिर से शान्ति और प्रेम स्थापित कर देगी। शम्मीको मनाने का ठीक तरीका तो तुमपर ही छोड देता हूँ।

जब तुम पूरी तरह नीरोग हो जाओ तबतक यदि शम्मी भी सुस्थिर-चित्त हो गये हो, तो मै तुम दोनोके साथ इस दुःखदायी बीमारीके कारणके बारेमे अपनी रायके बारेमे चर्चा करना चाहता हूँ।

तुम्हारे लिए अडे छोडने की अपेक्षा दूधका परिमाण घटा देना लाभदायी होगा। भारीपनका कारण सीधे अडोको मानना उचित नही। और यदि डॉक्टर माने तो तुमको हमेशा थोडा लहसुन लेना चाहिए। मै पूरे विश्वाससे तो नही कह सकता, परन्तु मुझे लगता है अपरस (एक्जीमा) के लिए प्याजका तेल अच्छा होगा।

सुभाषको जो डर है उसपर मुझे हँसी नही आई। उसके कथनमे काफी सत्य है। उत्साह और मेरे प्रति अत्यधिक प्रेमसे प्रेरित होकर यदि तुम, अनजाने ही सही, शारीरिक शक्तिका दिखावा कर रही थी, तो वियोग होने पर स्वभावत शरीर जवाब दे बैठेगा। वास्तविकता क्या है, इसका निणय तो आत्म-निरीक्षण द्वारा स्वय तुम्ही कर सकती हो। आजकी रात इतना ही।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८६) से, सोजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९५ से भी

३१७ पत्र . प्रभावतीको

३० अगस्त, १९३६

चि० प्रभा,

इस बार तेरा पत्र देरसे मिला है। तुझे पत्र लिखने का दिन निश्चित कर ही लेना चाहिए। मैंने तो बिलकुल ढील नही दी। जैसे ही तेरा पत्र मिलता है, तुरन्त जवाब दे देता हूँ। इस बारका पत्र कल मिला, आज जवाब लिख रहा हूँ। सुनता हूँ कि जयप्रकाश आज वर्धा पहुँच रहा है। यह नही समझ पाया कि आने का कारण क्या है। आगेके पत्र क्या किसी नये पतेपर भेजने है? क्या 'सर्चलाइट' के पतेपर भेजने से पत्र देर से मिलता है? तुझे खाँसी क्यो होने लगी। अगर अब दूध मिलने लगा हो तो अपनी शक्ति जल्दी वापस पा लेना।

कुटुम्बका जितना बोझ उठाया जा सके उतना ही उठाना। शक्तिको समझ कर सेवा करने से पछताना नही पडता।

अभी-अभी सुना कि जयप्रकाश आ गया है।

तेरे पत्रमे लिंगकी गलतियाँ रहती है। आज उन्हे सुधारकर पत्र वापस भेज रहा हू। अगर तू न समझ पाये तो पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८८१) से।

३१८. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
३१ अगस्त, १९३६

घनश्यामदास
मारफत लकी
बम्बई

यथाशीघ्र आ जाइए। वल्लभभाई आपकी प्रतीक्षामे है। तारसे उत्तर दे।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९७९) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३१९. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव
३१ अगस्त, १९३६

चि० जमनालाल,

तुम्हारे साथ तीन बाते करनी रह गई।

बाबाराव हरकरेका क्या हुआ? मुझे लगता है कि उसे हर महीने २५ रुपये भेजना अच्छा है।

उसके भाईकी योग्यता अधिक की हो तो उसे ज्यादा देना उचित होगा।

शंकरराव टिकेकरकी स्थिति दयाजनक लगती है। उसके ऊपर १,५०० रुपयेके सम्मन है और वह बेकार है। उसके लिए कुछ करने का विचार किया है क्या?

इन सब बातोके बारेमे तुम अधिक ठीक विचार कर सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८३) से।

३२० एक बातचीत[1]

[२ सितम्बर, १९३६ के पूर्व][2]

गाधीजी की कुटियाके बरामदेमें एक दिन सुबह कई नग-धडग और अधनगे बच्चे इकट्ठे हो गये थे। तमाम लडकोकी आँखें उस साँपपर लगी हुई थीं, जो उस मेजपर रखे हुए एक कॉचके बरतनमें बन्द था। यह तो नहीं कह सकते कि सेगाँवमें साँप बहुत अधिक सख्यामें है, पर इस मौसममें जरूर वहाँ काफी साँप पाये गये हैं। इससे यह अनुमान होता है कि सॉप वहाँ कई लोगोको काटते भी होगे। पर आम तौरपर तो लोग साँपको देखते ही मार डालते है। गाधीजी नें इस सॉपको यहाँ रखने का प्रयोजन बतलाते हुए कहा

पर इस तरह हरएक साँपको मारना न तो आवश्यक है और न उचित ही। हमे अभी यह ज्ञान नही है कि जहरीला आर बगैर जहरवाला सॉप कैसा होता है। इसलिए हम बिना समझे-बूझे ही सबको मार डालते है। पर इनमे से ज्यादातर साँप जहरीले नही होते। और सापके डँसे हुए आदमियामे अधिकाश तो साँपके जहरकी अपेक्षा उसके भयके कारण ही प्राण छोड देते है। फसलकी रक्षामे साँपोका एक खास स्थान है। पर शायद गाँवोके लोगोको इसका ज्ञान नही है। सॉप अकसर खेती को नुकसान पहुँचानेवाले चूहो और दूसरे जीव-जन्तुओंको मारकर खा जाते है। इसलिए साँपोके बारेमे आवश्यक जानकारी हासिल करके उसे किसानोतक पहुँचा देना जरूरी है। उन्हे यह बताया जाये कि जहरीले और बगैर जहरवाले साँप कैसे होते है। किसानोको जान लेना चाहिए कि सर्पको मात्र मार डालना जरूरी नही है। क्योकि जहरीले होनेपर भी वे तबतक नही काटते, जबतक कि वे पैरके नीचे न पड जाये या उन्हे छेडा न जाये। फिर कमसे-कम कुछ सॉप तो निश्चित रूपसे उपयोगी होते ही है। इस दृष्टिसे मैंने यह निश्चय किया है कि कुछ जिन्दा या मरे हुए साप यहॉ पर गावोके लोगोको दिखाने के लिए रख दू। आपके सामने काँचके बतनमे रखे हुए इस साँपको तो हमारे एक आश्रमवासीने जिन्दा ही पकड लिया था। हम लोग एक बिलकुल आसान तरकीबसे काम लेते है, जिसके जरिये साँपोको बगैर किसी प्रकारकी शारीरिक चोट पहुँचाये जिन्दा ही पकडा जा सकता है। यह साँप वहाँ, उस तरफ एक झोपडीके छप्परसे लटक रहा था। मैने सोचा कि इसे जाँचके लिए सिविल सर्जनके पास भिजवा दूँ। उन्होने बडी खुशीसे इसकी जॉच की, और बताया कि यह तो

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२ यह और आगेकी भेंट स्पष्टत २ सितम्बर, १९३६ को गाधीजी के अस्पतालमें भरती होने के पूर्व हुई थीं।

करैत साँप है। करैत साप सबसे ज्यादा जहरीले साँपोमे से है। इसलिए उन्होने उसे मारकर मेरे पास लौटा दिया। मै चाहता था कि इसे लोगाको दिखाने के लिए रख छोडूँ। इसलिए मैने काँचका बरतन और मेथिलेटेड स्पिरिट मँगाया। पर इसमे कई घटे बीत गये और जब वह बरतन आया और हमने सापका पिटारा खोला तो यह देखकर हमे बडा अचरज हुआ कि वह तो जिन्दा था। मालूम होता है, इस जातिमे खास तौरपर बहुत अधिक जीवन-शक्ति होती है। इसलिए उसके तीन दिनतक प्राण नही निकले। आखिर उसकी मृत्यु-वेदनाका अन्त करने के विचारसे हमने उसे पानीमे डुबा देने का निश्चय किया। बात यह थी कि सिविल सर्जनने उसके सरको तो कुचल दिया था, पर जैसाकि उन्होने बादमे बताया, उसकी रीढ नही तोडी गई थी। वह तो ज्यो-की-त्यो थी। इसलिए वह जीवित रह गया था। अब तो नमूनेके लिए जीवित साँप रखने का मेरे पास एक पिजरा ही आ गया है। इसी-लिए तो अभीसे ये बच्चे आकर्षित होने लग गये है। मैने सर्पोसे सम्बन्धित साहित्य पढना शुरू कर दिया है, और आशा करता हू कि इन प्राणियाके सम्बन्धमे कुछ मोटी-मोटी बाते शीघ्र ही ग्रामवासियाके सामने रख सकूगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ५-९-१९३६

३२१ बातचीत. अध्यापकोंसे[1]

[२ सितम्बर, १९३६ के पूर्व]

एक दिन कुछ अध्यापकगण सेगाँव पहुँचे और प्लेटोके इस प्रसिद्ध सिद्धान्त पर कि "ज्ञान ही सदाचार है", गाधीजी की राय माँगी। यह जानते हुए भी कि अमुक कार्य नैतिक दृष्टिसे सदोष है, हम उसे टाल क्यो नहीं सकते? इस प्रश्नके उत्तरमें गाधीजी ने कहा

मानव-जीवन समझौतेकी एक शृखला है, और सिद्धान्तकी दृष्टिसे सही दिखाई देनेवाली बातपर भी अमल करना मनुष्यके लिए आसान नही होता। यही एक सीधी-सी बात लीजिए। सिद्धान्त यह है कि प्राणिमात्र समान हैं। पापी और पुण्यवान, दोनोके साथ समतापूर्वक बरतना चाहिए। 'गीता' मे लिखा है न कि विद्वान् पुरुष, कुत्ता और कुत्तेका मास खानेवाला, ये तीनो हमारी दृष्टिमे बराबर होने चाहिए। पर अब मेरी ओर देखिए। यद्यपि मैने अपने हाथो इस सापको नही मारा, तो भी यह तो मै जानता ही हूँ कि उसे मारने मे मै कारण तो हुआ ही हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि मुझे यह नही करना चाहिए था। मुझे यह भी पता है कि साँप तो खेतीकी रक्षा करनेवाला "क्षेत्रपाल" है। इस कारणसे

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

भी उसे मारनेमे मुझे सहायक नही होना चाहिए था। पर आप देखते ही है कि मै इसे टाल नही सका। पर केवल यह सोचना काफी नही कि मै अमुक बातको रोक नही सकता। मै इस सनातन सिद्धान्तको तो नही छोड रहा हू कि प्राणिमात्रमे एक ही आत्म-तत्त्व मौजूद है। मै तो ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हू कि वह मेरे हृदयसे सर्प-जनित भयको दूर कर दे और मुझे इतना अहिंसक बना दे जिससे मैं साँपोको भी उसी तरह प्रेमसे रख सकू, जिस तरह अपने अन्य घरेलू जानवरोको रखता हूँ। दूसरा उदाहरण ही लीजिए। बात बहुत सीधी-सी है। एक देहातीकी हैसियतसे और खास तौरपर ग्रामोद्योगोके हिमायतीकी हैसियतसे, मुझे गाँवोके बने उस्तरेसे बाल बनाने चाहिए। पर आप तो देख रहे है कि मै एक विदेशी उस्तरेसे हजामत बना रहा हूँ।[१]

अगर मै चाहता तो कुछ मित्रोको लिखकर गाँवका बना उस्तरा भी मंगवा लेता। पर मैने सोचा कि मुझे गाँवके नाईकी ही मदद करनी चाहिए, चाहे वह किसी भी उस्तरेसे बाल बनाता हो। इसलिए मैने उसके गन्दे कपडे और निकम्मे उस्तरेकी परवाह न करते हुए भी उसी को बुलाया। पर मैने एक बात नही छोडी। जब उसने कहा कि वह मेरी ही भांति हरिजनोकी हजामत नही बना सकता, तो मैने उससे दाढी बनवानेसे साफ इनकार कर दिया। अब आप लोग देख रहे है कि मै विदेशी उस्तरेसे अपनी हजामत बना रहा हूँ, हालांकि गांवका बना उस्तरा मुझे मिल सकता है। यह एक ऐसी बात है जिसका बचाव मै नही कर सकता, फिर भी इसका कारण तो है ही। मै बहुत दिनोसे इसी सेटसे काम ले रहा हूँ। यह एक प्यारी बहनका दिया हुआ है। उसकी भेटको मै यह कहकर कि इसमे तो विदेशी उस्तरा है, लेकिन मै तो देशी उस्तरेसे काम लेना चाहता हूँ, अस्वीकार नही कर सका। बात जो है, वह यह है। थोडा भी क्यो न हो, सिद्धांतसे हटना तो इसमे है ही। कोई इसका अनुसरण करे, मै यह नही चाहूँगा। सिद्धान्त-रक्षाकी खातिर तो अपने प्रियसे-प्रिय व्यक्तिकी भी नाराजगी बरदाश्त करनेका साहस हमारे अन्दर होना चाहिए।

पर कुछ सिद्धान्त सनातन होते है, जिसमे समझौता हो ही नही सकता। उनके पालनके लिए तो हमे अपने प्राणोकी भी कुर्बानी करने को तैयार रहना चाहिए। मान लीजिए, कोई आपसे अपना धर्म छोडकर दूसरा धर्म ग्रहण करने के लिए कहता है और इनकार करनेपर आपको छुरा या तलवार दिखाता है, तो क्या आप अपना धर्म छोड देगे? कभी नही। एक दूसरा व्यक्ति आपको शराब पीने, गोमांस खाने या झूठ बोलने के लिए मजबूर करना चाहता है, तो क्या आप उसके सामने सिर झुकानेके बजाय अपने प्राण ही दे देना पसन्द नही करेगे? सिद्धान्त तो सिद्धान्त ही है। उसका मूल्य इसलिए नही घट सकता कि उसे हम अपने आचरणमे लानेमे असमर्थ है। उसका पालन करनेके लिए हमें निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिए। और वह यत्न भी सजग, बुद्धिपूर्वक और सुदृढ होना चाहिए।

१ जब अध्यापकगण वहाँ पहुँचे, गांधीजी दाढ़ी बना रहे थे।

हमारे कवि [रवीन्द्रनाथ] ने अपनी अमरवाणी में क्या यह नही कहा है कि निर्भय और अविश्रान्त यत्न स्वाधीनताकी पहली शर्त है?

> **ओ पिता, स्वाधीनताके उस स्वर्गका उदय हमारे देशमें हो, जहा हमारा मन निर्भय हो, मस्तक स्वाभिमानपूवक ऊँचा हो, और पूर्णता तक पहुँचानेवाला बलवान अविश्रान्त प्रयत्न हो।**[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-९-१९३६

३२२ बातचीत: भारतन कुमारप्पासे[2]

[२ सितम्बर, १९३६ क पूव]

इस चिट्ठी-पत्रीके काममे अब मेरा दिल नही लगता। इसमे कोई उत्साह नही रहा। मैं तो सचमुच इससे थक-सा गया हू। कभी कभी तो ऐसा मन होता है कि लोगोंसे कह दू कि मुझे अब कोई एक भी खत न भेजे। वर्धा कई मित्र आते है, इससे मुझे भी वहाँ जाना पडता है। पर इसके बजाय अब जी तो चाहता है कि इन आसपासके गावोमे ही कुछ घूमू। अपने कामको छोडकर कही भी जाते हुए मुझे बडी पीडा होती है। यह तो मेरी साधना समझो, और अगर मेरा बस चले तो इसमें किसी प्रकारका विघ्न न आने दू। बहुत अरसे से मैंने दो-तीन काम अपने जिम्मे ले रखे है। उन्हे निभाना पडता है, हालाकि उन्हे छोडने या टालने के लिए कोई बहाना मिल जाये तो मुझे बडी खुशी हो। मेरी तो इच्छा है कि मैं रोज सवेरे पास-पडोसके गावोका एक चक्कर लगा लिया करूँ। यो भी आजकल मैं बहुत कम शारीरिक परिश्रम कर रहा हूँ, और कुछ-न-कुछ परिश्रम करने की लालसा प्रबल हो रही है। हमने दो गौएँ रख ली है और अब अपने लिए यही घी निकालने का प्रयोग कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि इन गाँवोकी देख-भाल मैं खुद किया करूँ। मेरी यह कल्पना है कि इन लोगोको दिखा दू कि गायें खुद अपना खर्चा बडी आसानी से निकाल सकती है। फिर इन गरीब देहातियोकी बीमारियोको देखिए। दुनिया-भरकी फालतू दवाएँ करेगे, लेकिन बिलकुल सीधी-सादी वे बाते नही करेगे जो उन्हे करनी चाहिए।

यह सब धीरे-धीरे होने वाला काम है। इसमे सोवियत रूसकी पचवर्षीय योजना की भाँति आश्चर्यजनक परिणामोकी उम्मीद भी नही कर सकते। हमे यह महसूस करना चाहिए कि हम देहातके लोगोका नमक खा रहे है और हमे उसका पूरी तरहसे बदला चुकाना है। अगर इस कठिन कामके लिए आपको एजेंट न मिलते हों तो

१ **गीताजलि**, ३५।
२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

कोई चिन्ता न करे। हमे अगर एक भी सच्चा एजेंट मिल गया, तो मुझे सन्तोष हो जायेगा और अगर एक भी न मिला, तो भी मुझे दुःख नही होगा। हमारी सच्ची कसोटी तो यह है कि अपने कार्यक्रमके अनुसार हम एक भी गाँवका सगठन कर सके है या नही। हम उनके आहारमे सुधार कर सके है या नही? उस गाँवके रास्ते और गलिया पूरी तरह साफ-सुथरी ओर अच्छी बना सके है या नही? वहाँके गृहोद्योगोमे हम नयी जान डाल सके है या नही? शराबखोरी और दुर्व्यसनोके सवालको हल कर सके है या नही? अगर हम एक भी गाँवमे यह सब करके दिखा दे, तो मै तो समझूगा कि हमने बहुत-कुछ कर लिया। कुछ इने-गिने आदमी आपके काममे सहयोग दे सकते है। पर इससे हमारा काम आगे नही बढ सकता। उसके लिए तो सम्पूर्ण गावको हाथमे लेना चाहिए। जाजूजी[1] कह रहे थे कि क्या इससे अधिक व्यापक कोई योजना नही हो सकती? नही, इससे अधिक व्यापक नही हो सकती। यह कताई की तरह कोई एक चीज तो है नही। यह तो सारे गावके सुधारका प्रश्न है। आज हमारे काममे भल तीन या चार चीजे ही हो, पर किसी दिन ये तीनकी तीस भी हो जायेगी, हाँ, आज नही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-९-१९३६

३२३ तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२ सितम्बर, १९३६

अमतुस्सलाम
मार्फत सेवक
दिल्ली

तबीयत सुधारने के लिए इन्दौर, पटियाला, बम्बई या वर्धा जा सकती है। कान्ति बम्बईमे वकील के स्कूल मे भर्ती हुआ है। बा, मै, देवदास जब चिन्ता नही करते, तब तेरा चिन्ता करना गलत है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५)से।

1 श्रीकृष्णदास जाजू।

३२४ सन्देश : विश्व शान्ति कांग्रेसको[1]

२ सितम्बर, १९३६

पाश्चात्य देशोमे हो रहे शान्ति-प्रयत्नोका कोई भी भारतीय समर्थन किये बगैर नही रह सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-९-१९३६

३२५ तार : अमतुस्सलामको

वर्धागज
३ [सितम्बर][2], १९३६

अमतुल सलाम
मार्फत सेवक
दिल्ली

सरस्वती सोमवारको त्रिवेन्द्रम जा रही है। सम्भव हो तो इससे पहले आ जा।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६)से।

१ यह सन्देश सरोजिनी नायडू की मार्फत भेजा गया था।
२ **बापूके पत्र–८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम**, पृ० ९० से। मूल यहाँ कट-फट गया है।

३२६ तार अमृतकौरको

वर्धागज
४ सितम्बर, १९३६

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले
शिमला

ठीक ढगसे रहो आर मेरी बीमारी[1] पर दुखी मत हो। अभीतक बुखार नही आया है। सप्रेम।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७३९)से, सौजन्य अमृतकोर। जी० एन० ६८९५ मे भी

३२७ सन्देश अमृतकौरके लिए[2]

४ सितम्बर, १९३६

उसे बता दो कि कमसे-कम दो-तीन दिन तो उसे तुम्हारे पत्रसे ही सन्तोष करना पडेगा। उसे यह भी बता देना कि थर्मसके बारेमे मैंने जो बात कही थी वह ठीक निकली, वह टूट गया है और अब उसे दूसरा देना होगा।

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१००) से, सौजन्य अमृतकौर

१ गाधीजी को मलेरिया हो गया था, देखिए अगला शीर्षक भी।

२ यह सदेश महादेव देसाईने अपने पत्रमें अमृतकौरको भेजा था। पत्रमें और बातोंके साथ यह भी लिखा था "[गाधीजी] जान बूझकर अस्पताल चले गये, ताकि डॉक्टरोंको बार बार तकलीफ न उठानी पड़े। उनकी अच्छी देखरेख हो रही है और ठीक प्रगति है। [दिनमें] ढाई बजे तक तो बुखार नही आया। यदि आया भी, तो मुझे विश्वास है, हल्का ही होगा। वे पूरा आराम कर रहे हैं। "

३२८ अहिंसा परमो धर्म

कैनन शेफर्ड और दूसरे सच्चे और उत्साही ईसाई इंग्लैंडमे युद्धोके खिलाफ आंदोलन कर रहे है। दिल्लीके 'स्टेट्समैन' ने चार लेख लिखकर इस आंदोलनकी बेहद निन्दा की है। इस पत्रने अपने पक्ष-समर्थनमे 'भगवदगीता' को भी इन शब्दोमे घसीटा है

असलमें, ईसाई धर्मकी वास्तविक किन्तु कठिन शिक्षा यही मालूम पडती है कि समाजको अपने शत्रुओसे लडना चाहिए, पर साथ ही उनसे प्रेम भी करना चाहिए।

श्री गांधी भी इस बातपर खास तौरसे ध्यान दें कि 'भगवद्‌गीता' की भी साफ-साफ यही शिक्षा है। कृष्णने अर्जुनसे कहा है कि विजय उसे मिलती है, जो पूर्णतया निर्भय और निर्वैर होकर लडता है। सचमुच, इस महान् ग्रन्थके द्वितीय अध्यायमें धर्मके आधारपर युद्धका विरोध करनेवाले तथा एक सच्चे योद्धाके बीच सारे विवादका सर्वोच्च धरातलपर, सदाके लिए, समाधान कर दिया गया है। स्थानाभावके कारण, हम उसमें से उद्धरण तो नहीं दे सकते। पर वह सारा काव्य एक बार नहीं, बार-बार पढने की चीज है।

इन लेखोका लेखक शायद यह नही जानता कि उसने जो श्लोक उद्धृत किये है, आतंकवादियोने भी अपने पक्षमे ठीक उन्ही श्लोकोका हवाला दिया है। सच्ची बात तो यह है कि निर्विकार चित्तसे 'भगवद्‌गीता' पढने पर मुझे तो 'स्टेट्समैन' के इस लेखकने जो अर्थ लगाया है, उससे ठीक विपरीत अर्थ मिला है।

वह भूल जाता है कि पश्चिमके युद्ध-विरोधी, जिस अर्थमे धार्मिक आपत्ति-कर्त्ता कहे जाते है वैसा अर्जुन नही था। अर्जुन तो युद्धका हिमायती था। कौरवोकी सेनासे वह पहले भी कई बार लोहा ले चुका था। उसके हाथ-पैर तो तब ढील पड गये जब उसने दोनो सेनाओको युद्धके लिए तैयार देखा और उनमें अपने प्यारेसे-प्यारे स्वजनो तथा पूज्य गुरुजनोको पाया, जिनसे उसे युद्ध करना था। न तो वहाँ मानवताके प्रति प्रेम था, और न युद्धके प्रति घृणा ही थी, जिससे प्रेरित होकर अर्जुनने कृष्णसे वे प्रश्न पूछे थे। और कृष्ण भी ऐसी परिस्थितिमे दूसरा कोई उत्तर दे ही नही सकते थे। 'महाभारत' तो रत्नोकी एक खान है, जिनमे से 'गीता' केवल एक किन्तु सबसे अधिक देदीप्यमान रत्न है। लिखा है कि उस युद्धमे लाखो योद्धा एकत्र हुए थे और दोनो तरफसे अवर्णनीय अमानुषिकताएँ बरती गई थी। इन लाखोंकी सेनामें से केवल सातको जीवित रखकर तथा उन्हे वह निःसार विजय प्रदान करके इस

महाकाव्यके अमर कविने तो युद्धकी निरर्थकता ही सिद्ध की है। किन्तु केवल युद्धको एक मूर्खतापूर्ण और धोखेकी चीज सिद्ध करनेके अलावा, 'महाभारत' एक उससे भी ऊँचा सन्देश हमे देता है। मनुष्यको अगर एक अमर प्राणी समझा जाये तो 'महाभारत' उसका एक आध्यात्मिक इतिहास है, और 'महाभारत' के रचयिताने इसके वर्णनमे एक ऐतिहासिक घटनाका उपयोग-मात्र किया है, जो तत्कालीन छोटे-से जगत्के लिए तो बडी महत्त्वपूर्ण थी, पर जो आजकलकी दुनियाके लिए कोई भी महत्त्व नही रखती। अनेक आधुनिक आविष्कारोके कारण आज तो यह सारा ससार हथेलीपर रखे हुए आँवलेके समान मालूम होने लगा है। उसके किसी एक कोनेमे घटी हुई घटनाका असर सारे ससारमे दूर-दूरतक फैल जाता है। यह बात उस समय नही थी। हमारे हृदयोमे जो दिन-रात सत् और असत्के बीच सनातन सघर्ष चल रहा है, महाभारतकार उसे इस कथा द्वारा एक अमर काव्यके रूपमे हमारे सामने प्रस्तुत करता है। वह बताता है कि यद्यपि अन्तमे तो सत्यकी ही विजय होती है, तो भी असत् किस तरह सशक्त होकर अत्यन्त विवेकशील पुरुषको भी किंकर्त्तव्यविमूढ बना देता है। 'महाभारत' सदाचारका एकमात्र मार्ग भी हमे बताता है।

लेकिन 'भगवद्गीता' का वास्तविक सन्देश जो-कुछ भी हो, शान्ति-स्थापना-आन्दोलनके नेताओके लिए तो 'गीता' की शिक्षा नही, 'बाइबिल' की शिक्षा महत्त्व रखती है, क्योकि उसीको उन्होने अपना आध्यात्मिक मार्गदर्शक बना रखा है। फिर, 'बाइबिल' का भी तो कई तरहसे अर्थ लगाया जाता है। उन्हे 'बाइबिल' का वह अर्थ स्वीकार नही है, जो साधारणतया ईसाई धर्माधिकारी लगाते हैं। उन्हे तो वह अर्थ मजूर है जो 'बाइबिल' को श्रद्धायुक्त मनसे पढने पर उन्हे प्रतीत होता है। असलमें, सबसे महत्त्वपूर्ण चीज तो है युद्ध-विरोधियोका अहिसा अर्थात् प्रेम-धर्म-विषयक ज्ञान। अहिंसाका अर्थ बहुत व्यापक है। अग्रेजीका "नॉन-वॉयलेन्स" शब्द उसके लिए बिलकुल अपर्याप्त है। 'स्टेट्समैन' के ये लेख युद्ध-विरोधियोके लिए एक खासी चुनौती ही हैं। मुझे दु ख है कि इस आन्दोलनके विषयमे मुझे पूरी जानकारी नही है जिससे मैं उसके बारेमे अपनी निश्चित राय दे सकूँ। युद्ध-विरोधियोके नजदीक भले मेरे विचारोका विशेष महत्त्व न हो, पर जहाँतक मुझे भीतरी बातोका पता है, कुछ लोग तो जरूर उसका खयाल करेगे। क्योकि वे अक्सर मुझसे पत्र-व्यवहार करते हैं। और अब तो वे एक कदम और आगे बढ गये हैं, क्योकि उन्होने रिचर्ड ग्रेगकी 'द पॉवर ऑफ नॉन-वॉयलेन्स' नामक पुस्तकको लगभग अपनी पाठ्य-पुस्तक बना लिया है। लेखकके शब्दोमे, यह पुस्तक अहिसाके सिद्धान्तकी मेरी व्याख्याको पाश्चात्य ससारकी भाषामें प्रस्तुत करती है। इसलिए बगैर किसी प्रकारकी दलील वगैरह दिये, अगर मैं यहाँ अहिंसाकी सफलताकी कुछ शर्तें तथा फलितार्थ लिख दू, तो शायद धृष्टता न होगी। वे है

(१) अहिंसा परमश्रेष्ठ मानव-धर्म है, और पशुबलसे वह अनन्त गुना महान् और उच्च है।

(२) अन्ततोगत्वा, वह उन लोगोको कोई लाभ नही पहुँचा सकती, जिनकी प्रेम-रूपी परमेश्वरमे सजीव श्रद्धा नही है।

(३) मनुष्यके स्वाभिमान और सम्मान-भावनाकी वह सबसे बडी रक्षक है। हाँ, वह मनुष्यकी चल-अचल सम्पत्तिकी हमेशा रक्षा करने का आश्वासन नही देती—हालाँकि अगर मनुष्य उसका अच्छा अभ्यास कर ले तो शस्त्रधारियोकी सेनाओकी अपेक्षा वह सम्पत्तिकी अधिक अच्छी तरह रक्षा कर सकती है। यह तो स्पष्ट है कि अन्यायसे अर्जित सम्पत्ति तथा दुराचारकी रक्षामे वह जरा भी सहायक नहीं हो सकती।

(४) जो व्यक्ति और राष्ट्र अहिसाका अवलम्बन करना चाहे, उन्हे आत्म-सम्मानको छोडकर, अपना सवस्व (राष्ट्रोको तो एक-एक आदमी तक) बलिदान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसलिए वह दूसरेके देशापर आधिपत्य रखने अर्थात् आधुनिक साम्राज्यवादसे, जो कि अपनी रक्षाके लिए पशुबल पर निर्भर रहता है, बिलकुल मेल नही खा सकता।

(५) अहिसा एक ऐसी शक्ति है जिसका सहारा बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष सब ले सकते हैं, बशर्ते कि प्रेम-रूपी ईश्वरमे तथा मनुष्य-मात्रमे उनकी सजीव श्रद्धा हो। जब हम अहिसाको अपना जीवन-सिद्धान्त बना ले, तो यह हमारे सम्पूर्ण जीवनमे व्याप्त होना चाहिए। यो कभी-कभी छिटपुट मामलामे उसका पालन करने से लाभ नही हो सकता।

(६) यह समझना एक जबरदस्त भूल है कि अहिंसाका यह नियम केवल व्यक्तियोके लिए ही ठीक और लाभदायक है, ससारके सामान्य मानव-समूहके लिए नही।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ५-९-१९३६

३२९. लडकीको क्या चाहिए

एक महिला लिखती है [१]

आपका "ऐसी मुसीबत जिससे बच सकते है" शीर्षक लेख [२] मुझे अधूरा-सा लगता है। अगर वे अपनी लडकियोंको भी लड़कोकी तरह ऐसी शिक्षा देने लग जायें जिससे कि वे स्वतन्त्रतापूवक अपनी आजीविका भी कमाने लगें तो उन्हे लडकियोंके लिए वर तलाश करने में इतना कष्ट और चिन्ताएँ न करनी पडें। मेरा अपना तो यह अनुभव है कि जब लडकियोंको अपनी मानसिक उन्नति करने का अवकाश मिल जाता है और वे इज्जतके साथ अपना

१ यहाँ केवल कुछ अश ही दिये गये हैं।
२ २५ जुलाई, १९३६ का।

भरण-पोषण करने लायक हो जाती है, तब अगर वे शादी करना चाहती हैं तो उन्हे अपने लायक वर तलाशने में कोई कठिनाई नहीं उठानी पडती। मेरा मतलब यह है कि लडकियोको उपयोगी ज्ञानके साथ-साथ किसी ऐसे धन्धेकी शिक्षा भी दी जाये जिससे उन्हे यह पूरा विश्वास हो जाये कि वे अपने माता-पिता या पतिकी निरी आश्रिता बनकर नहीं रहेंगी, बल्कि अगर मौका आया तो ससारमें अपने पैरोपर भी खडी रह सकती हैं। विवाह-योग्य कन्याओके माता-पिताओकी कठिनाइयोका विचार करते समय, आप सवालके इस पहलूपर भी जोर दें तो बडा अच्छा हो।'

पत्र भेजनेवाली महिलाने जो भाव प्रकट किये है उनका मै हृदयसे समथन करता हूँ। मुझे तो एक ऐसे पिताके मामलेपर विचार करना था जिसने अपने-आपको बडी मुसीबतमे डाल लिया था —— इसलिए नही कि उनकी लडकी अयोग्य थी, बल्कि इसलिए कि वे और शायद उनकी लडकी भी वरका चुनाव अपनी जातिके छोटे-से दायरेमे ही करना चाहत थे। इस मामलेमे तो लडकीका सुयोग्य होना ही एक विघ्न साबित हो रहा था। अगर लडकी निरक्षर होती तो हर किसी युवकके अनुकूल अपनेको बना लेती। पर चूकि वह खुद सुशिक्षिता थी, इसलिए स्वभावत उसके लिए उतने ही सुयोग्य वरकी भी जरूरत थी। दुर्भाग्यवश, समाजमे लोग किसी लडकीसे शादी करने के लिए बतौर कीमतके रुपये माँगना नीचता और बुराई नही मानते। कॉलेजकी अग्रेजी शिक्षाको व्यथ ही इतना अधिक कृत्रिम महत्त्व प्रदान किया गया है। उसमे तो न जाने कितने पाप छिपे रहते है। जिन वर्गोके युवक लडकियोसे शादी करने के प्रस्ताव मजूर करनेपर कीमते वसूल करने है, बडा अच्छा होता अगर उनमे सुयोग्यताकी परिभाषा बनाने मे कुछ अधिक अक्लसे काम लिया जाता। ऐसा होता तो लडकियोके लिए वर ढूँढनेकी चिन्ता अगर पूरी तरह न भी दूर होती तो कमसे-कम काफी घट जाती। इसलिए पाठकोसे मै सिफारिश करूगा कि वे पत्र लिखनेवाली इन महिलाके विचारोपर जरूर गौर करे। पर साथ ही, जात-पातकी इन महान् हानिकर दीवारोको भी तोडने की उन्हे मै जोरोसे सलाह दूगा। ये दीवार तोडनेपर चुनावके लिए एक विशाल क्षेत्र खुल जायेगा और यह पैसे वसूल करने की बुराई बहुत हदतक अपने-आप कम हो जायेगी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ५-९-१९३६

३३० तार : अमृतकौरको

वर्धागंज
५ सितम्बर, १९३६

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले

शिमला

साठ घटोसे बिल्कुल मुक्त हूँ । काफी प्रसन्न हूँ । तुम्हे केवल जालधरके लिए स्मारक की[1] एजेंसी स्वीकार करनी चाहिए ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४०)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९६से भी

३३१ पत्र · अमृतकौरको

वर्धा
६/७ सितम्बर, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

पिछले कुछ दिनो खिलवाड करने की मेरी बिलकुल मन स्थिति नही थी। अत मै भूल ही गया था कि तुम विद्रोहिणी, मूर्खा आदि-आदि हो। अब मै कुछ प्रकृतिस्थ हूँ। मुझे अभीतक यह खबर तुमसे नही मिली है कि तुम्हारी और शम्मीकी सुलह हो गई। तुम यदि अभीतक उनके पास नही गई हो तो फौरन जाओ।

मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि अँगूठेकी वह फुन्सी ठीक नही है। उसका इलाज तुम्हे स्वय नही करना चाहिए। यदि शम्मी न देखें तो किसी कुशल डॉक्टरको दिखाओ। और भोजनके बारेमे भी मामान्य सलाह देने के अलावा मैं यहाँसे तुम्हारा माग-निर्देशन नही कर सकता। स्नान तो ठीक है। पानीका तापमान बढाया सा ठीक किया। यदि पानीका तापमान शरीरसे कमसे-कम ५ डिग्री कम हो तो पर्याप्त है।

तुम्हारे सहसा अस्वस्थ हो जाने का कारण मेरी रायमे क्या था, इसे मैं बादमे बताऊँगा। यह पत्र तो मै रातमे ८ बजेके बाद लिख रहा हूँ, इसलिए अब और नही लिखूंगा।

१ कमला नेहरू स्मारक।

महादेव मेरे स्वास्थ्यके बारेमे तुमको बराबर सूचित करता रहा है। अत मुझे अधिक कहने की आवश्यकता नही — सिवाय इसके कि मै खूब अच्छा हूँ।

साँपोके विषयकी पुस्तकके लिए शम्मीसे मेरा धन्यवाद कहना। उनके कुछ सुन्दर जीवित नमूने मैने कल देखे।

ढेर सारे प्यार-सहित,

डाकू

७ सितम्बर, १९३६

[पुनश्च]

मेरा द्वार तुम्हारे लिए कभी बन्द नही हो सकता।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८७)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९६ से भी

३३२ पत्र : अमतुस्सलामको

वर्धा

७ सितम्बर, १९३६

प्यारी बेटी,[1]

तीन दिनसे बुखार नही है, इसलिए उसे गया समझ। अस्पतालमे बिस्तरमे से यह लिख रहा हूँ। कान्तिका खत इसके साथ है।

तू उसकी चिन्ता करती है सो ठीक नही है। क्या बा से और मुझसे भी तेरा-उसका सम्बन्ध ज्यादा गहरा है? क्या तेरे प्रेमका प्रमाण उसके प्रति हमारे प्रेमसे अधिक है? जरा समझ और शान्त हो।

तेरी सेहत सुधरती नही, यह ठीक नही है। मेरा तार[2] मिला होगा। उसका जवाब नही आया है। कैसी निर्दय है तू!

पूरा हाल भेजकर अन्तिम निर्णय कर।

वर्धा आने से डरती है, इससे तेरी मूर्खता झलकती है। फिर भी मेरा कोई आग्रह नही है। तू जहाँ अच्छी हो सके, वही जा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

क्या चित्रे वहाँ है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७) से।

१ इतना उर्दूमें है।

२ २ सितम्बर, १९३६ का।

३३३. पत्र कान्तिलाल गाधीको

७ सितम्बर, १९३६

चि० कान्ति,

मै रोज तरे नामकी माला जपता हूँ। किन्तु बीमारी भला मुझे क्या लिखने देगी? आज तो मै लिखे बिना नही रह सकता। मुझे अब बुखार नही है। मैने 'हरिजन' के लिए लिखा है तो तुझे क्यो नही लिखना चाहिए? तेरा पत्र मिला। मुझे तो अपार दु ख हुआ। मेरी आस्थाका प्रासाद एक क्षणमे ढह गया। तू अचानक मुझसे दूर फिसल गया। मेरी अपेक्षा बा का दु ख अधिक है, और सबमे अधिक बेचारी अ० का। मैने तुझे जो उपाधि दी थी उसे तूने सही सिद्ध कर दिया है। तू जालिम है, कपटी है। तूने अ० का चित्त चोरी किया और फिर उसे ठुकरा दिया। क्या तू इससे अधिक निर्दयताकी कल्पना कर सकता है? तेरे पाठ्यक्रममे जीवित प्राणियोको सुई भोकना और उनका अग-भग करना होगा। उस समय मेरे इस पत्रकी याद करना। तूने अपना पाठ जीवित प्राणीको सतानेसे आरम्भ किया है। किन्तु मै तेरे इस विचित्र त्यागसे तनिक भी क्रुद्ध नही हूँ। तू क्या कर सकता है? तू अपने स्वभावपर कहातक काबू पा सकता है? तेरा स्वभाव तुझे वातावरणके प्रवाहमें घसीट ले गया है। थोडे-बहुत अनुपातमे ऐसा सभीके साथ होता है। तेरा कल्याण हो। एक बात मुझे बहुत खटकी। साँझको तू मेरे पास आया है और एक निश्चय करके गया। अगले दिन तूने उसे बिलकुल बदल दिया। उस बारेमे मुझसे बात करने की जरूरत भी तुझे नजर नही आई! यह कैसा व्यवहार है? अपने वचनकी तूने कोई कीमत ही नही गिनी? यह आघात भयकर था। तूने मुझे बहुत रुलाया। इस कृत्यसे तू अनायास बच सकता था। लेकिन बिखरे हुए पानीको फिर उठाया नही जा सकता। इस दु खद घटनासे यदि तू अपने वचनकी कीमत आँकना सीख जाये तो बहुत अच्छा होगा। यह याद रखना कि नीतिविहीन ज्ञानकी कोई कीमत नही होती। यह ताँबेके अधन्ने पर पारा चढाकर बनाये गये रुपयेकी तरह है।

अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। अत्यधिक काम करके अपने शरीरको हड्डियो का ढाँचा मत बना लेना। अपने दिमागको खाली मत कर डालना। मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि सभी परीक्षाओमें तुझे सफलते मिलेगी।

मुझे नियमित रूपसे लिखते रहना।

मै अब भी अस्पतालमे हूँ। कहा जा सकता है कि बुखार तो चला गया। मीराबहनकी खटिया मेरी बगलमे है। उसे तो अभी बुखार है ही। तीसरी रोगिणी बा है जो खाँसीसे पीडित है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०७०७) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

३३४ पत्र : जुगलकिशोर बिडलाको

वर्धा
७ सितम्बर, १९३६

भाई जुगलकिशोरजी,

आपका २६-८का खत मेरे हाथमे आया तब बुखारके हमलकी तैयारी हो रही थी। अब तो मुक्त हू लेकिन अस्पतालमे बिछाने पर हू तदपि आपको उत्तर देना चाहिए। विषय-बुद्धि भ्रम अवश्य है। मुझे कोई दैवी सदेश नही है। यदि आपकी बुद्धि मेरी बात का स्वीकार न करे तो आप कभी मेरे बात न माने। पत्र से हम और मेरी इस हालत मे मै ही आपको समझाने की आशा नही कर सकता हू। जब मिलेगे तब मै अवश्य कोशीश करूगा। शायद समझा भी सकु।

आज तो इतना ही कहू — मेरे नजदिक सिख धर्म हिंदु-धमका अग है। परतु कानूनी स्थिति भिन्न है। दा० आम्बेडकर धर्मान्तर करना चाहते हैं। यदि सिख होना धर्मान्तर है तो हरिजनो का यह धर्मान्तर खतरनाक है। और वह भी एक कलमके इशारे से बगैर हरिजनो के पूछताछ के। धर्मांतर, सप्रदायान्तर भी, व्यक्तिगत ही हो सकता है। यहा तो ऐसी कोई बात ही नही है। सिख भाई लोगसे कबूल करवा लो कि वे हिदु-धम का अग है, उनसे भिन्न इलेक्टरेट छुडवा लो, फिर मुझे कोई आपत्ति नही। हरिजन अपने को रामनुजी कहे या सिख कहे।

अधिक अवसर मिलने पर।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३३५ पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

८/९ सितम्बर, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारी तरफसे बराबर अच्छी खबरे मिलती जा रही है। अभी-अभी सुबह सात बजे तुम्हारी चिटठी मिली है। इस बातसे दुःख हुआ कि तुम लोगोके मन ही नही मिल पाते थे। इतना ही नही, इसके कारण काममे बाधा भी होती थी। अब हम लोग आशा करते है कि एक बार [मन][1] मिल जाने पर फिर वैमनस्य पैदा नही होगा।

गोविन्दके बारेमे समझ गया। तुम्हे चाहिए कि उसके और दूसरे बीमारोके पास तुम जाते रहो।

अखबार भेज रहा हू।

वहाँ शहदके लिए पीतलकी बर्नी है और कुकरके अन्दरके सफेद धातुके डिब्बेका ढक्कन भी है। दोनो भेजना। यह डिब्बा राधाकिशनके पास भेजा गया था, लेकिन वहाँ उसका ढक्कन बदल गया, जिससे डिब्बेका पूरा उपयोग नही हो पाता।

पुरीसे कहना कि वह अपनी तबीयत और कामके बारेमे मुझे लिखकर भेजे।

मुझे ज्वर बिलकुल नही है। कमजोरी भी कम होती जा रही है। अब भी पूरी तरहसे दूध और फलो पर हू। ऐसा लगता है कि मुझे मुक्त करने मे डॉक्टर थोडा समय और लेगा। मीराबहनको कल ज्वर आ गया। उसे जुलाब दिया गया था। अब ठीक है। वह भी दूध और फल ही ले रही है।

बा को अभीतक खाँसी चल रही है, मगर कह सकते है, कुछ कम हुई है।

राजेन्द्र बाबू, ब्रजकिशोर बाबू और जयप्रकाश फिलहाल यही है। राजेन्द्र बाबू और जयप्रकाश बीमार है। ब्रजकिशोर बाबू जयप्रकाशकी देखरेख के लिए रोक लिये गये है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मैंने प्रह्लादको रोक लिया है। कल सुई निकाल ली जायेगी। कहा है, यह तो कल ही मालूम होगा।

[९ सितम्बर, १९३६]

पत्र कल नही भेजा जा सका। अब १० बज गये है। प्रह्लादका ऑपरेशन हो रहा है। सुई दिखाई पड गई है।

१ यह अंश साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है।

१०-३० बजे[1]

मीराबहन और मै ऑपरेशन देखने गये थे। सुई निकल गई है। वह अच्छा है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९८) से। सी० डब्ल्यू० ६९९८ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

३३६. पत्र मुन्नालाल जी० शाहको

९ सितम्बर, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मगर यहाँ अस्पतालमे। हाँ, मै दूसरे अखबारोकी बात भूल गया। अब तो कल ही मँगाये जा सकेगे। आज तो 'बॉम्बे क्रॉनिकल' और 'हरिजन' भेज रहा हूँ। जान पडता है, ढक्कन तुम्हारे पास वापस पहुँच गया है। ऐसा हो तो कल यहाँ भिजवा देना।

प्रह्लादकी तबीयत ठीक सुधर रही है। खानेको माँग रहा है। आज तो उसे दूध ही मिलेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९७) से। सी० डब्ल्यू० ६९९९ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

३३७ पत्र : बलवन्तसिंहको

वर्धा अस्पताल
१० सितम्बर, १९३६

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारे तीन कागद मीले है। मुन्नालाल परके खतमे तुमारे खतकी पहोच दी है। रमणीकलालका खत भी मीला है। मैंने तुमको धन्यवाद भी भेजे है। मेरी उमीद है कि शायद परसो मे वहा पहूच जाउगा।

मुझको आराम है।

मुन्नालालको अब तो नही बुलाता हू लेकिन दाक्तर महोदयको भेजनेकी कोशिश करूगा। दरम्यान सिर्फ दूधपर रहे दस्त साफ न आवें तो दीवेल तेल लेवे और कमसे-कम दस ग्रेन क्विनीन लेवे। उसकी सेवा तो करते ही हो।

१ यह हिन्दी में है।

गगावहन का खत नही मीला है। न मुन्नालाल का। प्रह्लाद या किसी के लिये बगैर मागे हुए दूध मत भेजो। प्रह्लादको दूध कल भी दिया था और आज भी दिया है। मगनवाडी से प्रह्लाद अच्छी तरह है। दस दिन कमसे-कम रहना होगा। पुरी को आज नही लिखुगा।

बाकी कल। दो बोतल [तो वापस][1] आती है। बाकी कल भेजने की कोशिश करुगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटा-नकल (जी० एन० १८८६) से।

३३८ पत्र : अमृतकौरको

१० सितम्बर, १९३६

मूर्खारानी,

पिछले दिनो पत्र लिखने की शारीरिक शक्ति ता थी परन्तु कितनी ही चर्चाओमे इतना व्यस्त रहा कि सोमवारके अतिरिक्त और किसी दिन लिखनेका कोई काम नही कर सका। आशा है, तुम्हे मेरा उस दिनका पत्र[2] मिल गया होगा।

आज भी रातको सोने से पहले यह लिख रहा हूँ।

हाँ, मुझे शम्मीका एक अच्छा-सा पत्र मिला। मै तुम्हारी इस बातसे असहमत हूँ कि सेगाँवकी जलवायुका मेरे मलेरियामे कोई सम्बन्ध नही था। सच तो यह है कि सेगाँवकी जलवायु मलेरियाके लिए प्रसिद्ध है। परन्तु मुझे उससे दूर नही भागना है बल्कि उसपर विजय पानी है। आशा है, वहाँ शनिवारको पहुँचूगा। कल मेरा एक्स-रे होगा। उसीके आधार पर मेरे भाग्यका फैसला होगा।

तुम्हारे पत्र असाधारण नियमिततासे आये है और मेरे लिए अमूल्य निधि सिद्ध हुए है। तुम्हे अपने एक्जीमा और अँगूठेके घावके प्रति लापरवाही नही करनी चाहिए। किसी कुशल डॉक्टरको दिखलाओ और जैसा वह कहे वैसा करो। मै तो नही सोचता कि यदि तुम अडे खाती रहो तो कोई मास खाने की जिद करेगा। अब तुमसे एक तारकी आशा करता हूँ कि तुमने योग्य डॉक्टरसे सलाह की है। शम्मीसे भी इस विषयमे पूछ लो। इसमे हठ नही रखना चाहिए।

इस समय अब बस।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८८) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९७ से भी

१ साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है।

२ देखिए "पत्र अमृतकौरको", ६/७-९-१९३६।

३३९ पत्र मुन्नालाल जी० शाह और बलवन्तसिंहको

११ सितम्बर, १९३६

चि० मुन्नालाल और चि० बलवन्तसिंह,

तुम्हारा पत्र मिला। डॉक्टर तो आज आयेगा ही। इसके सिवाय वह बुरहानपुरी है और तुम भी बुरहानपुरी हो। कल वह नही आयेगा। आज कुछ मरीज होगे तो उन्हे देखेगा। प्रह्लाद मजेमे है। बलवन्तसिंहके पत्रोके बारेमे तुमने जैसा लिखा है, वैसा ही हुआ होगा। मुझे तो यह याद है कि मैने पत्रकी पहुँच दी थी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९७) से। सी० डब्ल्यू० ७००० से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

३४० पत्र : अमृतलाल ठा० नानावटीको

११ सितम्बर, १९३६

चि० अमृतलाल,

आजसे दूध वगैरहकी जिम्मेदारी किसपर आनेवाली है? अगर मीराबहनके लिए खाखरी बनी हो तो खाखरी और मक्खन भिजवाना है। साथका मक्खन वहाँ रख लेना और दूसरा भेजना। नमककी शीशी भेज रहा हूँ। इसे भी भर देना। अगर खाखरी तैयार न हो तो १० तोला आटा, छोटा तवा, बेलन और चौकी भेजना। इनमे से जो चीजे नये रसोईघरसे भेजी जाये, उनका बिल भेज देना। प्रह्लादके लिये दाल-भात और शाक भिजवाना। तीनो चीजे मिलाकर भी भेजी जा सकती हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१९) से।

३४१ पत्र : अमृतलाल ठा० नानावटीको

[१२ सितम्बर, १९३६ के पूर्व][1]

चि० अमृतलाल,

आजके दहीमे दो सुन्दर-से बाल तो मैंने निकाले। जो पेटमे चले गये होंगे, सो अलग। बाल बकरी-माताके थे। इसका मतलब हुआ कि दूध दुहनेवालेकी भूल है। दही बहुत खट्टा था। यदि सुबहके दूधका दही जम गया हो तो मैं उसे इस वक्त ले सकता हूँ। अगर भेज सको तो लहसुनकी जरूरत है। दूध हो तो लहसुनकी जरूरत नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७२०) मे।

३४२ सन्तति-निरोधके नुकसान

डॉ० सोखे और डॉ० मगलदास मेहताके बीच हाल मे ही जो उस बारहमासी विषय अर्थात् सन्तति-निरोधपर वाद-विवाद हुआ था, उसमे मुझे पुण्यस्मरण स्वर्गीय डॉ० अन्सारीके मतको प्रकट करने की हिम्मत हो रही है, जिससे डॉ० मगलदासके पक्षका समर्थन होता है। तकरीबन एक साल हुआ, मैंने डॉ० अन्सारीको लिखा था कि चिकित्सा-शास्त्रीकी दृष्टिसे आप इस विवाद-ग्रस्त विषयमे मेरे मतका समर्थन कर सकते हैं या नही। मुझे यह जानकर आश्चर्य और खुशी हुई कि उन्होंने तहेदिलसे मेरा समर्थन किया। पिछली बार जब मैं दिल्ली गया था, तब इस विषयमे उनसे मेरी रूबरू बातचीत भी हुई थी, और मेरे अनुरोध करनेपर उन्होंने अपने निजी तथा अपने अन्य व्यवसाय-बन्धुओके अनुभवके आधारपर तथ्य-आँकडा-सहित यह सिद्ध करने के लिए कि इन कृत्रिम साधनोका उपयोग करनेवालोको कितनी जबरदस्त हानि पहुँच रही है, एक लेखमाला लिखने का वचन दिया था। उन्होंने उन लोगोकी दयनीय अवस्थाका अत्यत सजीव वर्णन सुनाया था, जिन्होंने यह जानते हुए कि उनकी पत्नियाँ और अन्य स्त्रियाँ सन्तति-निरोधके कृत्रिम साधनोको काममे ला रही है, उनसे कुछ

1. अमृतलाल नानावटीने पत्रको अगस्त-सितम्बर १९३६ में रखा है। जान पड़ता है, यह पत्र गांधीजी ने वर्धा अस्पतालसे लिखा होगा। वहाँ गांधीजी के खाने पीनेकी चीजें मगनवाड़ीसे भेजी जाती थीं। देखिए पिछला शीर्षक, गांधीजी १२ सितम्बरको अस्पतालसे मुक्त हो गये थे।

दिन सभोग किया था। सभोगके स्वाभाविक परिणामके भयसे मुक्त होनेपर वे अमर्यादित भोग-विलास पर टूट पडे। नित्य नयी-नयी औरतोसे मिलने की उन्हे अदम्य लालसा होने लगी और आखिर वे पागल हो गये। अफसोस ! डॉ० साहब अपनी उस लेखमालाको शुरू करने ही वाले थे कि चल बसे।

कहा जाता है कि बर्नाड शॉ ने भी यही कहा है कि सन्तति-निरोधक साधनोका उपयोग करनेवाले स्त्री-पुरुषोका सभोग तो हस्त-मैथुनसे किसी प्रकार कम नही है। क्षण-भर सोचने से पता चल जायेगा कि उनका कथन कितना यथाथ है।

इस बुरी टेवके शिकार बनकर धीरे-धीरे अपने पौरुषसे हाथ धो लेनेवाले विद्यार्थियोके करुणाजनक पत्र तो मुझे करीब-करीब रोज मिलते हैं। कभी-कभी शिक्षकोके भी खत मिलते हैं। लाहौरके सनातन धम कॉलेजके आचार्यका जो पत्र-व्यवहार इन स्तम्भोमे प्रकाशित हुआ था,[१] वह भी पाठकोको याद होगा। उसमे उन्होने उन शिक्षकोके विरुद्ध बडी कडी शिकायत की थी जो अपने विद्यार्थियोके साथ अप्राकृतिक व्यभिचार करते थे। इससे उनके शरीर और चरित्रकी जो दुर्गति हुई थी उसका भी जिक्र आचार्यजी ने अपने पत्रमे किया था। इन उदाहरणोसे तो मै यही नतीजा निकालता हूँ कि अगर पति-पत्नीके बीच भी मैथुनके स्वाभाविक परिणामके भयमे मुक्त होने की सम्भावनाको लेकर सभोग होगा, तो उसका भी वही घातक परिणाम होगा, जो हस्त-मैथुन या अप्राकृतिक कृत्यसे निश्चित रूपसे होता है।

नि सन्देह कृत्रिम साधनोके बहुत-से हिमायती परोपकारकी भावनासे ही प्रेरित होकर इन चीजोका अन्धाधुन्ध प्रचार कर रहे है, पर यह लोकोपकारी भावनाका गलत क्षेत्रमे प्रयोग है। मैं इन भले आदमियोसे अनुरोध करता हूँ कि वे इसके परिणामोका तो खयाल करे। वे गरीब लोग कभी पर्याप्त मात्रामे इनका उपयोग नही कर सकेंगे, जिनतक ये उपकारी पुरुष पहुँचना चाहते है, और जिन्हे इनका उपयोग नही करना चाहिए वे जरूर इनका उपयोग करेगे, और अपना और अपने साथियोका नाश करेगे। पर अगर यह पूरी तरहसे सिद्ध हो जाता कि शारीरिक या नैतिक आरोग्यकी दृष्टिसे यह चीज लाभदायक है, तो इसे भी सह लिया जाता। इन सुधारको और भावी सुधारकोंके लिए डॉ० अन्सारीकी राय — अगर उसके विषयमे मेरे शब्दोको प्रामाणिक माने तो — एक गम्भीर चेतावनी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-९-१९३६

१ देखिए खण्ड ६१, पृ० ७-८।

३४३ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३६

मूर्खारानी,

आखिरकार मैं प्यारे सुपरिचित सेगाँवमें वापस आ ही गया हूँ, परन्तु बा, लीलावती और मोतीके बिना। अमतुस्सलाम कुछ घटाके लिए यहा है, फिर वर्धा वापस चली जायेगी। लीलावती मगनवाडीमें दण्डस्वरूप रह रही है और बा उसकी सहानुभूतिमें वहीं रुक गई है। यहा सबकुछ शान्त और भला लग रहा है। मेरे सामने पिंजरेमें कल के पकडे हुए दो जीवित साप हैं। तुम्हारे हरे साबुनका टुकडा वहीं अपने ठिकाने पर है। कुछ दिन और काम आ ही जायेगा।

तुम्हे जानकर प्रसन्नता होगी कि तुम्हारा थर्मस एक रात अच्छी तरह उपयोगमें आकर टुकडे-टुकडे हो गया। गाडीका दरवाजा अचानक खुल गया और थर्मस बाहर गिर पडा। अब तुम्हे बदलेमें फिरसे दूसरा नही भेजना है। मुझे हिकमतसे बनी चीजोसे ही जैसे काम चले, चलाना होगा। अबतक तो तुम्हे पता चल गया होगा कि जिन चीजोकी मुझे आवश्यकता होती है उन्हे मागने में मुझे लज्जा नही लगती, ऐसी एक चीज है खूब बढिया मैग्निफाइग ग्लास (आतशी शीशा)। परन्तु वह फुरसतसे भेजना, और डाकसे नहीं। आज जो थर्मस टूटा, उसका मूल्य बताना। यह प्रश्न केवल जिज्ञासावश ही पूछ रहा हूँ।

आशा करता हूँ, तुमने मेरा कहना मानकर एक्जीमाके लिए विशेषज्ञकी सलाह ली होगी। इसको इतना साधारण रोग नही समझना चाहिए।

मेरी चिन्ता मत करना। मैं अपना पूरा ध्यान रखूगा।

मीरा अब अपनी कुटीमें है।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५८९) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९८ से भी

३४४ पत्र . मीराबहनको

१२ सितम्बर, १९३६

चि० मीरा,

पुरीने मुझे सहमा आश्चर्यमे डाल दिया है। वह कहता है तुम्हे उसकी आवश्यकता नही, और उसकी उपस्थितिसे तुम्हे असुविधा होगी। तुम बिलकुल एकान्त चाहती हो। यदि ऐसा है तो उसे चले जाना चाहिए। वह स्वय कहता है कि तुम जितनी अपेक्षा रखती हो उतना योग्य वह नही बन सकेगा। बलवन्तसिह बादमे दूध लेकर जायेगा। तुम्हे उससे जो सेवा लेनी हो, लेना। वहाँ सोयेगा कौन ? तुम्हे अपने ऊपर बहुत बोझ नही डालना है। इच्छा होती है कि स्वय तुम्हारे पास आकर तुम्हे साक्षात् देख सकता, परन्तु वह तो अभी कुछ समय तक असम्भव है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६३) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८२९ से भी

३४५ पत्र प्रेमाबहन कटकको

१२ सितम्बर, १९३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

महात्माकी सेवा कैसी होनी चाहिए, इसका अर्थ तो तू महात्मा बने तभी जाने। अभी तो तेरी कल्पना जहाँतक तुझे ले जायेगी वहीतक तू जायेगी। महात्माको एक फुसी भी हो जाये तो दुनिया-भरमे शोर मच जाता है। बेचारे सामान्य आदमीको भगदर हो जाये तो उसे फुसी मान लिया जाता है और उसके बारेमे कोई नही जानता। क्या करे ?

आज ही अस्पताल छोडकर यहाँ आया हूँ। अभी कमजोरी तो खूब है, परन्तु अब यहाँ शक्ति आ जाने की आशा रखता हूँ।

अब वहाँ बरसात शुरू हुई मालूम होती है। यहाँ तो जरूरतसे ज्यादा होती रहती है।

तेरे दूसरे वर्णन रोचक है। तू अपना काम आगे बढा रही है। परिणाम तो जो आना होगा वह आयेगा।

तेरी लेखन-प्रवृत्तिकी[1] आलोचना करने की बात ही नहीं है। जो शक्ति ईश्वरने तुझे प्रदान की है, उसका सदुपयोग तुझे अवश्य करना चाहिए।

लीलावतीका मामला बहुत कठिन तो है ही। एक प्रयत्न करके तो मैं हार गया। अब दूसरा शुरू किया है। मैं बिल्कुल हार तो कभी नही मानूँगा।

तेरा प्रश्न ठीक है। परन्तु मुझे स्वराज्य लेना है। मौनमे पहले कैसे मरू?

मीराबहनके बारेमे भी तूने जो लिखा है, वह सही है। वह मुझसे दूर बिलकुल नही रह सकती। अब जो हो सो सही।

आज अधिक नही लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३७७) से। सी० डब्ल्यू० ६८२३ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

३४६ पत्र : नारणदास गाधीको

१२ सितम्बर, १९३६

चि० नारणदास,

प्रेमाका पत्र सलग्न है। मेरी बीमारीका समाचार तो मिलता ही रहा होगा। सरदार या जमनालालजी तो वहाँ नहीं जा सकते। दूसरे किसकी आशा रखते हो? मेरी तो यह सलाह है कि किसीकी आशा न रखकर जो वहाँ पहुँच जाये उन्हीसे सन्तोष कर लो। मेरी कोशिशको इसमे बिलकुल अलग मानना।

यदि वहाँ अकालकी स्थिति उत्पन्न होनी है तो चरखा-कोषको अकाल-निवारण के काममे लाना। फिर भी यह केवल एक सुझावके रूपमे है।

पुरुषोत्तम और विद्याके योग्य 'गीता' की प्रतिपर आज हस्ताक्षर किये हैं।

आज अस्पतालसे सेगाँव आ गया हूँ। बा और लीलावती मगनवाडीमे रह गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५०४ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ सासवड जाने के बाद प्रेमाबहन लेख, कहानियाँ, यहाँतक कि किताबें भी लिख रही थीं। उन्हें ऐसी आशका थी कि गाधीजी को उनकी लेखन प्रवृत्ति शायद न रुचे। इसलिए उन्होंने गाधीजी की राय मागी थी।

३४७ पत्र : रमणीकलाल मोदीको

१२ सितम्बर, १९३६

चि० रमणीकलाल,

तुम्हे केवल कार्ड लिखकर सन्तोष कर रहा हूँ। अभी काफी शक्ति नही आई है। तुम ऐसा किसलिए मानते हो कि तुम मुझसे दूर पडते जा रहे हो। सब अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार करते है। इसीमे शोभा है। इसीमें सत्य है। शर्मसे या जोर-जबरदस्तीसे कहाँतक काम चल सकता है? तारा[1] अगर फिलहाल पटेल स्त्रियोपर प्रभाव नही डाल पाती तो उसे हार नही माननी चाहिए। वे जो सेवा स्वीकार करे हमे तो उतनी सेवा करके सन्तोष मान लेना चाहिए। सुरेन्द्रसे कहना कि उसे लिखने की बात मैंने दर्ज करके तो रखी है, किन्तु बीचमे बहुत-से विघ्न आ जाते है। तुम्हे भी आश्वासन देने लायक लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत रमणीकलाल
मार्फत भाईलालभाई
हरिजन सेवक सघ
बोरिआवी, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१८३)से।

३४८ पत्रका अश

१२ सितम्बर, १९३६

वह पढे और विचार करे। "अशोच्यानन्वशोचस्त्व"[2] से प्रारम्भ करे। बा के साथ बहसमे न पडे। उसके या किसी औरके सामने रोना-धोना न करे। अपने दु:खकी चर्चा न करे।

मुन्नालाल, बलवन्तसिंह, मीराबहनके गुण यदि उसे याद हो तो उनका स्मरण करे और उनके कारण मनमें उनका आदर करे। उनके दोषोका स्मरण न करे और यदि दोष याद आये तो भी चुपचाप बर्दाश्त करे।

१ रमणीकलाल मोदीकी पत्नी।
२ भगवद्गीता, २/११।

आज तो इतना ही लिखूंगा। इसकी नकल करके मुझे भेज देना। कुछ और लिखने योग्य होगा तो पत्र भेजूगा।

राजकुमारीका पत्र आज नही भेजा जा सके तो कल लेट फीस लगाकर भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

बैलगाडीका प्रबन्ध कर लिया होगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७९) से। सी० डब्ल्यू० ६५५१ स भी, सौजन्य लीलावती आसर

३४९. पत्र मीराबहनको

१३ सितम्बर, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा प्रसन्नता-भरा पत्र मिला। यदि रास्ता सूखा होता ता मैं तुम्हारे पास पैदल आ जाता। अपनेको अधिक थकाओ मत। धैर्यसे पुरीको सब-कुछ सिखाओ। इतनी जल्दी उसकी ओरसे आशा मत खो वैठो।

क्या तुम्हारे पास मेरी टार्च है? और अटेरन भी है क्या?

आशा है, तुम्हारे पास सब आवश्यक चीज है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६४)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८३० से भी।

३५०. पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१३ सितम्बर, १९३६

मूर्खारानी,

मुझे हर बार स्मरण-शक्तिपर भरोसा रखकर ही उत्तर देना पडता है क्योकि तुम चाहती हो कि पढते ही तुम्हारे पत्र फाड दिये जाये। हाँ, शम्मीने एक मधुर पत्र भेजा था, जिसका उत्तर दूंगा, हालाँकि वे तो नही चाहते।

यह है मेरा तुम्हारे रोगका निदान। तुमने निसर्गोपचार बीचमे ही छोड दिया। चूंकि वह अधूरा रह गया था, इसलिए जलवायुमे एकाएक बहुत बडा अन्तर पड जाने से प्रतिक्रिया हुई। यदि उसका निराकरण निसर्गोपचार द्वारा ही हुआ होता

तो वह प्रतिक्रिया ठीक मानी जाती। इसका आशय केवल कटि-स्नानसे ही नही है। वाष्प-स्नान, प्रकाश-स्नान इत्यादि और भी कई प्रकारके उपचार होते हैं। परन्तु वह सब तो हुआ नही। मुझे घबराहट शारीरिक प्रतिक्रियाके कारण नही परन्तु तुम्हारे परिवारके सर्वथा उचित रोषके कारण हुई। उनको तो निसर्गोपचारकी विधियोसे कोई सहानुभूति नही हो सकती।

मेरा तात्पर्य स्पष्ट हो गया न? भगवान्‌को धन्यवाद कि अब परिवारमे पुन शान्ति स्थापित हो गई है।

परन्तु तुम्हे अपने एक्जीमाके साथ खिलवाड नही करना चाहिए। यदि मेरे पास होती तो मै अवश्य इलाज करता। किन्तु आना, और वह भी इलाजके लिए, तो बिलकुल असम्भव है। तुम्हे पारम्परिक चिकित्सा-पद्धतिसे ही उपचार कराना होगा। जितनी जल्दी करा लो, उतना अच्छा है।

तुमने परम्परागत जीवन-क्रमसे भिन्न क्रम अपनाया है। अत तुम्हे परिवारकी आलोचनाका बुरा नही मानना है। तुम हृदयकी विशालता और उदारतासे काम लो, तुम्हारे आन्तरिक आनन्दमे वृद्धि हो, तुम शान्ति और समभाव रखो और अपना स्वास्थ्य सुन्दर रखो, तभी तुम्हारे विद्रोहका औचित्य सिद्ध होगा। विद्रोहका औचित्य उसकी सफलतासे ही सिद्ध होता है। अत तुम अपने जीवनके इन परिवतनोमे धीरज और समझसे काम लोगी तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

यदि ताई अभीतक वहाँ है तो उन्हे मेरा प्यार कहना।

अगर तुम्हे समयाभाव हो या आलस्य लगे तो बेशक दैनिक पत्र लिखना बन्द कर दो। पत्र-लेखनसे तुम्हारे मन या शरीरको थकान नही होनी चाहिए।

ढेरो प्यार।

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४१) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९७ से भी

३५१. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

१३ सितम्बर, १९३६

प्रिय सुभाष,

आपने जो पूछताछ की थी उसके उत्तरमें मैंने तार भेजा था। आशा है, मिल गया होगा। बारह वर्षोंके बाद मुझे बुखार हो आया था। इसी कारणसे आपके प्रश्नोंके उत्तर देने में देर हुई।

(१) मैं स्वास्थ्यके खयालसे चाय या काफीमें से किसीको भी आवश्यक नहीं मानता। बल्कि उनसे अक्सर नुकसान ही होता है। यदि चाय हलकी, सूखी घासके रंगकी बनी हो और काफीमें दूधकी मात्रा अधिक और एक या दो ही चम्मच काफी हो तो चाय और काफीसे नुकसान नहीं भी हो सकता है।

(२) स्वस्थ गायके साफ-सुथरे थनोंसे निकला ताजा दूध यदि बिना उबाले और गरम किये कच्चा ही पिया जाये तो वह सर्वश्रेष्ठ आहार होता है। इसके बाद सुखाये हुए दूधको मैं श्रेष्ठ मानता हूँ। कुछ लोगोंके लिए मीठा दही उत्तम होता है। दहीके माध्यमसे खमीर मिल जाता है और इस तरह फलोंकी आवश्यकता भी नहीं रह जाती।

(३) पत्तेदार भाजियोंका उपयोग सलादकी तरह किया जाये तो अधिक अच्छा अवश्य होना चाहिए। वैसे हर तरहके पत्ते कच्चे नहीं खाये जा सकते। पत्ती-वाली सब्जियोंके अलावा प्याज, छिलके-सहित भूरा कुम्हड़ा, परवल, बैंगन, भिंडी, शलजम, गाजर, पत्तागोभी, चुकन्दर, फूलगोभी आदि भी गुणकारी हैं। आलू और जमीनके अन्दर होनेवाली दूसरी स्टार्च-युक्त चीजोंका उपयोग कम होना चाहिए।

(४) अच्छी पाचन-शक्तिवाले के लिए खजूर बहुत ठीक आहार है। किशमिश अधिक आसानीसे पचती है। मैं दोनों जी-भरकर ले सकता हूँ पर सबके लिए यह सम्भव नहीं है। बाकी लोग किशमिश और मुनक्का ले सकते हैं।

(५) पश्चिममें कच्चे लहसुन और प्याजके प्रयोगपर काफी जोर दिया जाता है। मैं रक्तचापके लिए नियमित तौरपर कच्चा लहसुन लेता हूँ। यह सर्वोत्तम विषनाशक ओषधि है। क्षयके रोगियोंको भी लहसुनके उपयोगकी सलाह दी जाती है।

मेरा खयाल है इन दोनों भाजियोंके खिलाफ लोगोंके पूर्वग्रहका कारण इनकी गंध है, हालाँकि यही इनका सार-तत्त्व है। यह पूर्वग्रह वैष्णव सम्प्रदायके उदयके साथ पैदा हुआ। आयुर्वेदमें दोनोंकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की गई है। लहसुनको तो गरीबोंकी कस्तूरी कहा जाता है और वास्तवमें वह है भी। मैं कह नहीं सकता कि कौन-से ग्रामीण लोग प्याज-लहसुनके बिना काम चला सकते हैं।

(६) हाँ, मीठे सन्तरोंकी जगह नीबू और गुड़ या शहद लिया जा सकता है।

आपके सारे प्रश्नोंके जवाब मैंने दे दिये हैं। आशा है, आप स्वस्थ होंगे। डॉ० राय और डॉ० सरकारने जो जाँच की थी उसके परिणाम मैं जानना चाहूँगा।

सप्रेम,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३५२ पत्र पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

१३ सितम्बर, १९३६

प्रिय सर पुरुषोत्तमदास,

मैं खुद दक्षिण आफ्रिकी शिष्टमण्डलका स्वागत करने नहीं आ पा रहा हूँ, इसका मुझे दुःख है।[1] कृपया उन लोगोंको मेरे इस हार्दिक दुःखसे अवगत करा दें। स्वास्थ्य-लाभके सिवा और कारणोंसे भी अपने नये निवास-स्थान सेगाँवसे निकल पाना मेरे लिए कठिन है। मैं भगवान्‌से प्रार्थना करता हूँ कि दोनों देशोंके बीच जो गलतफहमियोंका जाल है, वह इस यात्राके फलस्वरूप नष्ट हो जाये तथा दोनों देश एक-दूसरेके और निकट आयें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ शिष्टमण्डलके १९ सितम्बर, १९३६ को बम्बई पहुँचनेपर। पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासने यह पत्र शिष्टमण्डलके नेता जे० एफ० हॉफमेयरको दे दिया था।

३५३ एक पत्र

१३ सितम्बर, १९३६

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके सम्बन्धमे मेरा निवेदन है कि मै आपकी मदद करने मे असमर्थ हूँ। शायद आपको मालूम होगा कि आजकल मैं सक्रिय सार्वजनिक जीवनसे अलग हूँ। लेकिन भारतकी सार्वजनिक सस्थाएँ, विशेषकर राष्ट्रीय काग्रेस, अपनी राय बहुत स्पष्ट शब्दोमे जाहिर करती रही है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३५४ पत्र : प्रभावतीको

१३ सितम्बर, १९३६

चि० प्रभा,

महादेवभाईसे तो मैंने कहा ही है कि तुझे पत्र लिख दे। मै कल सेगाँव आ गया। कमजोरी है। और सब ठीक है। अभी दूध और फलोपर ही हूँ। मीराबहन अपनी झोपडीमे चली गई है। फिलहाल बा यहाँ नही है। वह शायद देवदासके पास दिल्ली जायेगी। लीलावती मगनवाडीमे है। मनु गोमतीके पास। शायद वह बा के साथ जाये। इसका यह मतलब हुआ कि यहाँ बलवन्तसिह, मुन्नालाल, प्यारेलाल और खानसाहब है। बहुत सम्भव है कि नानावटी आयें। मगनवाडीका रसोईघर विद्यार्थियो के रसोईघरके साथ मिला दिया गया है और इस तरह बहुत-से लोग छुट्टी पा गये है। इसके सिवाय लोग भी उतने नही बचे।

अमतुस्सलाम आई है। शायद शामको बम्बई जायेगी।

जयप्रकाशको तेरा तार दिखा दिया था, किन्तु वह कोई ऐसा आदमी तो है नहीं कि मेरे या किसीके रोकने से रुक जाये। आज चला गया होगा। पिताजी यही हैं। उन्हे सख्त बुखार आ गया है। डॉक्टर जाँच करेगा। जयप्रकाशको खास कोई दर्द हुआ था, वह ठीक हो गया। राजेन्द्रबाबू तो अभी यही रहेंगे।

कान्ति पढने के लिए बम्बई चला गया है।

बोल, काफी खबरे दे दी न?

तू कैसी है? क्या खाती-पीती है? सिरमे दर्द होता है क्या? दूध मिलता है या नही? फलाके बारेमे भी लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अभी तेरा २-९-३६ का पत्र पढा। मेरा पत्र २२ दिनसे नही मिला, यह कैसे हो सकता है? यह ठीक है कि मै अपनी बीमारीके दौरान नही लिख पाया था किन्तु वह तो दस दिनतक ही। कान्तिके साथका पत्र तो मिला ही नही। तुझपर क्रोधित कैसे हो सकता था? या अप्रसन्न भी कैसे हो सकता था? मुझे तो कोई ऐसा प्रसग याद नही आता जब तूने क्रोध या अप्रसन्नताका कारण दिया हो। पत्र भटक जाये, यह तो हो सकता है। यह भी हो सकता है कि मै लिख न पाऊँ। लेकिन यह कभी मत सोचना कि मै गुस्सेके कारण लिखना बन्द कर दूंगा। बुखारके बाद मेरा वजन १०८ हो गया है। यह ठीक ही माना जायेगा। आगेसे तू कान्तिके नाम न लिख कर मेरे ही नाम लिखना। कान्तिका पता है — सत्याग्रह छावनी, विले पार्ले, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे। अपनी उदासी दूर कर डालना। मुझे नियमसे लिखना। मेरे जन्म-दिनकी गुजराती तारीख इस बार १२ अक्तूबरको पड रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५४) से।

३५५. पत्र क० मा० मुंशीको

१३ सितम्बर, १९३६

भाई मुशी,

"भलु थयु भागी जजाल, सेहेजे मलीया श्रीगोपाल।"[1] हम एक हजारकी जमानत देकर 'हस' या उसके किसी वशजका पोषण नही करना चाहते। 'हस'[2] तो क्षीर-भोजन करनेवाला ठहरा। काका साहबका सुझाव ठीक जान पडता है। किन्तु त्रैमासिकके लिए क्या जमानतकी जरूरत नही होती? यदि जरूरत होती हो तो यह भी उचित नही होगा। तुम दोनो मजेमे होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६०५)से, सौजन्य क० मा० मुशी

१ नरसी मेहताके भजन की पंक्तियाँ, "भली भई भाग्यो जजाल, सहज मिल गये श्रीगोपाल।"

२ हस पर श्लेष है।

३५६ पत्र : लीलावती आसरको

सेगाँव
१४ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

नानावटीने मुझे यह दुःखदायी खबर दी है कि तू रो-रोकर आसमान सिर पर उठाये है। अगर तू वहा रहते हुए मेरी बात नही मानेगी तो सेगाँव आनेकी घडी लम्बी खिचती चली जायेगी। मैंने तेरे सुन्दर अक्षरोंमे लिखे हुए पत्रकी आशा की थी। उसके बदले मिला यह दुःखदायी समाचार! यह कैसी बात है? बात समझ और जो कहता हूँ, सो कर। तू मुझे दुःख ही देना चाहती है तो मैं लाचार हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४४)से। सी० डब्ल्यू० ६६१९ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

३५७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१४ सितम्बर, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

तुमको बुखार आया तो इस दफा मुझको भी आया। देखे अब क्या होता है। मेरा खुराक सिर्फ दूध या दही, मुसबी और लसून है।

कातने परसे तुमारा विश्वास उठ गया तो दुःखद बात है। वह तो बडा यज्ञ है लेकिन दलील नही करूंगा।

ब्रह्मचर्यका व्रत दुबारा लेना है तो लो परतु स्वादको नही जीता है तो ब्रह्मचर्यका शुद्ध पालन अशक्य-सा समझा जाय। तुमारे वर्धा आनेकी तो जरूरत नही है। वहा मैं शायद ही जाता हू। सेगाँव रहने के कारण[1] नही आ सकते हो।

अच्छे हो जाओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८८)से।

१ अर्थात्, "रहनेके खयालसे"।

३५८ पत्र हीरालाल शर्माको

१४ सितम्बर, १९३६

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत मीला। तुमारे चाहिये ऐसे आदमी मेरे पास एक भी नही है। ऐसे आदमी तुमारे ही पैदा करना होगा।

गावमे रहने का तुमारा क्रम मुझको मुद्दल नही जचता। इतने पैसे खर्च कर देहातीओमे प्रचार काम अभी नही हो सकता। मेरे तरफसे इस कार्यक्रममे कोई मदद की आशा न की जाय। अब भी मेरी सलाह है कि तुमारे बगैर पैसे आरभ करना, देहातमे बैठ जाना और अपनी शक्तिका अदाज निकालना। लेकिन मै देखता हु तुम हो आकाशगामी [और] मे हु इस जमीनका कीडा और जमीनसे मेरे पैरोको अलग करना नही चाहता। इसलिए हम दोनोके मार्ग इस समय तो भिन्न नजर आते है। इसलिए तुमारा खत घनश्यामदासजी के सामने रखने की मेरी इच्छा नही है।

सतीशबाबुके पास जाकर क्या करोगे? उनके [1] को अब और [2] पाप करवा रहा हु। ४२ मे से १२, और हो सके तो इससे भी [ज्यादा], कम करवा रहा हू।

जाहेर है कि देहातोके तुम जानते नही हो। "मीडवाईफ" का काम पुस्तकसे कैसे सीखोगे? तो भी मुझे पुस्तकोकी फेहरीस्त भेजोगे तो मै अवश्य भेजूगा।

मुझे दु ख है कि तुमको कोई सतोषजनक उत्तर नही दे सकता हु। लेकिन दिलकी बात ही कहु ठीक है ना?

मै तो बुखार यही छोडकर अस्पताल गया था। काफी "कोनीन" लीया।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ और २ साधन सूत्रमें अस्पष्ट है।

३५९ पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

प्रसन्नताकी बात है कि तुम्हारा अँगूठा लगभग ठीक हो चला है। परन्तु अभी मैं और प्रतीक्षा करूँगा। घावमे पानीका निकलना रोकना काफी नही, उसका बनना बन्द होना चाहिए। मेहरबानी करके उसके साथ खिलवाड मत करो। अगर तुम्हे आलस्य लगे और तुम रोजमर्राके काम न करो, तो मुझे कोई आपत्ति नही है। लेकिन तुम ठीक न हुई हो लेकिन फिर भी अपनेको धोखा देकर मान बैठो कि तुम स्वस्थ हो, ऐसा मत करना।

मेरी तो कितनी इच्छा है कि तुम ताईको वहाँ कुछ समय रोक रखो। उन्हे मेरा स्नेह।

अभीतक मैने 'स्टेट्समैन' का लेख नही पढा है। वह मेरे पास है। देखूँगा कि उसका क्या किया जा सकता है।[1]

शम्मीको मैने एक लम्बा-सा पत्र[2] भेजा है। मुझे पत्र भेजने की चिन्ता मत करो। यदि तुम्हे पत्र लिखने मे प्रसन्नता हो और मन हलका होता हो तो बेशक प्रतिदिन लिखो, परन्तु श्रम मत उठाना। अब चूँकि मै जानता हू कि तुम्हे एक-दो दिनका अन्तर देकर पत्र लिखने की छूट है, इसलिए तुम्हारा पत्र न आने पर मैं किसी प्रकारकी दुश्चिन्ता नही करूँगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४२)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९८ से भी

१ देखिए "जीवन-धर्म", २६-९-१९३६।

२ उपलब्ध नहीं है।

३६०. पत्र : मीराबहनको

१५ सितम्बर, १९३६

चि० मीरा,

कल जहाँ मिले थे वही तुमसे मिलने की आशा की थी, ताकि तुम्हे बैलगाडी न लाने का कारण बता दू। मै उस स्थलको देखने तब जाना चाहता था जब वहाँ पैदल जाया जा सके। देखे, कल क्या होता है। क्या तुम वहाँ अपने लिए दही जमाने को तैयार हो? वैसे यदि इच्छा न हो तो मत जमाओ।

आशा करता हूँ कि तुम्हारी और पुरीकी अच्छी निभ रही होगी।

अब वर्षा सब-कुछ नष्ट कर रही है। जैसी प्रभुकी इच्छा!

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२७)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९३ से भी

३६१. पत्र : लीलावती आसरको

१५ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

तू अभीतक निकम्मी बनी है। जो जरा-सा बोझ उठाने को कहा गया है सो नही उठा रही है। तू किस मिट्टीकी बनी है, इससे यही जाहिर होता है। मैने तुझसे कहा है कि तू यहाँ आकर मुझे एक घटे सुख दे सकती है, किन्तु रोने या झगडने के लिए तू यहाँ नही आ सकती। तू जैसे-जैसे हठ करती है वैसे-वैसे तेरा सेगाँव आना दूर होता जाता है, यह समझ ले। अगर इसे तूने न आने का उपाय माना हो, तो तू जान। यह कैसी क्रूरता है कि तू मेरी शान्तिके लिए भी पाँच मील दूर रहने को तैयार नही है!

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४५)से। सी० डब्ल्यू० ६६२० से भी, सौजन्य लीलावती आसर

३६२ पत्र : कान्तिलाल गांधीको

१५ सितम्बर, १९३६

चि० कान्ति,

तेरा कार्ड आज ही मिला। मै ठीक हूँ। थोडी कमजोरी है, चली जायेगी।

अमतुस्सलाम तेरे लिए १५० रुपये दे गई है। मैंने तो इसे उसीके खातेमे जमा करवा दिया है। उसके पास अपनी कौडी भी कहाँसे आई? अपने भाइयोंके बल पर नाचती है। भाई जितना कमाते है उतना खा डालते है। उसके पास पैसा हो तो भी तू उससे भीख क्या माँगे? किसीको माँ बनाया तो सेवाके लिए या स्वार्थ के लिए? तेरी स्वार्थ-वृत्ति मुझे तो ठीक नही लगती। तू यह वृत्ति छोड दे तो अच्छा है। जब देवदास तुझे खर्च दे रहा है तो तेरा इस तरह भीख माँगते फिरना अच्छा नही है। तुझसे मैंने तो यह कहा कि तू मेहनत करके कमा और पढ। हार क्यो मानता है? अमतुस्सलाम वहाँ जा रही है। उसने मुझे मना कर दिया था, इसलिए मैने उससे कुछ नही कहा, लेकिन अगर तू उससे इतना कह सके तो अच्छा होगा "अधिक विचार करने पर मुझे ऐसा लगा कि देवदासके सिवाय मुझे आपसे या किसी औरसे पैसा नही लेना चाहिए।" यह तेरे मनसे ही न उपजे तो मत कहना। अमतुस्सलामसे सख्त बात मत कहना, न उसे ताने मारना। तू अपने मनकी करते हुए भी विवेक या नम्रता मत छोडना। वह बहुत दुखी है।

शरीर सँभालकर जितनी मेहनत करना चाहे, करना। हाथसे बनाकर खाने मे कोई मेहनत नही पडती। इसके लायक समय बचाकर, सन्तोषके योग्य भोजन करना। मुझे पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३०४)से, सौजन्य कान्तिलाल गांधी

३६३. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

१५ सितम्बर, १९३६

चि० जेठालाल,

मुझे कुछ ऐसा खयाल है कि मै तुम्हारे ७ अगस्तके पत्रकी पहुँच तो लिखवा ही चुका हूँ। अस्पतालसे छुट्टी पाकर यहाँ आ गया हूँ। कमजोरी लगती है। कुछ लिखता हूँ, कुछ लिखवा देता हूँ। इन दिनो नानावटी यहाँ आ गये है, इसलिए लिखवाना आसान भी हो गया है। बीमारीके बारेमें तो 'हरिजन', 'हरिजन-सेवक' या 'हरिजनबन्धु'[1] मे देख ही लोगे, इसलिए मै अधिक नही लिखूँगा। तुम्हारे पत्रसे औजारोके

[1] देखिए पृ० ३२०-२२।

बारेमे हिम्मत बँधी है। मेरे सामने बडा सवाल यह है कि तुम्हारे पाससे भारी औजार मँगाने मे उनका किराया ही कीमतसे अधिक तो नही हो जायेगा। तुम वहा जो कोशिश कर रहे हो, वैसी ही कुछ कोशिश मै यहाँ कर रहा हूँ। इस गाँवमे एक ही लुहार है। वह बेचारा बहुत समझदार नही है। मैने उससे हालमे ही एक पुरानी रेतीके तीन चाकू बनवाये हैं। मेहनताना उसने जो माँगा सो दे दिया। किन्तु मेरा मन इसीसे नही मान सकता। मुझे लिखना कि तुम कौन-कौन-सी चीजे बेचना चाहते हो। उनकी फेहरिस्त, कीमत और वर्धातक का किराया भी लिखना। यह कहना जरूरी नही है कि तुम्हारी चीजे निकलवा सकूगा, तो निकलवाने मे मदद करूँगा। तुमने तफसीलसे लिखे पत्रकी बात कही है, वह पत्र अभीतक तो नही मिला। अब लिखना। फिलहाल तुम वहाँ कौन-कौन हो? क्या-क्या करते हो?

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८५६)से। सौजन्य नारायण जेठालाल सम्पत

३६४ पत्र: चन्द त्यागीको

१५ सितम्बर, १९३६

भाई चद त्यागी,

तुम्हारा पत्र कई दिनोसे मेरे सामने पडा है लेकिन आजतक मै उसको पहूच नही सका। बलवीरके बारेमे तुमने खबर अच्छी दी है। मै उसे मेरे पास नही बुला सकता हू क्योकि देहाती जीवन व्यतीत करने की बडी कोशीश कर रहा हू। इस देहातमे मेरे पास रहने की जगह भी नही है। न मैं यहाका कुटम्ब बढाना चाहता हू। मै साबरमती इत्यादि जगहमे कर सकता था, वह करने की अब न शक्ति रही है न ईच्छा रही है। देहातकी मेरी साधना परिमित कुटुम्बको रखकर ही हो सकती है। यदि जीवनदोरी आगे चलनेवाली है तो भविष्यमे क्या हो सकता है वह तो ईश्वर ही जाने। राजकिशोरी तो मुझे बिलकुल भूल ही गई है न? कभी लिखती भी नही है। क्या करती है? कितना खर्च करती है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३३)से। सी० डब्ल्यू० ४२८१ से भी, सौजन्य चन्द त्यागी

३६५ पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सेगाँव, वर्धा
१६ सितम्बर, १९३६

चि० अमला,

तुम तो माना मुझे बिल्कुल ही छोड़ गई। भला क्या? मुझे अपना सब हाल बताओ।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३६६ पत्र : मीराबहनको

१६ सितम्बर, १९३६

चि० मीरा,

भोजनकी घंटी बज गई है। तुम आज बाहर मत निकलना। मैं आ रहा हूँ। तुम कल सेगाँव आ जाओगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६५)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८३१ से भी

३६७ पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगाँव, वर्धा
[१७ सितम्बर, १९३६ के पूर्व][१]

बापा,

तुम्हे लिखूँ-लिखू कर रहा था कि तभी ककलभाई तुम्हारा पत्र ले आये। ककलभाई या बलवन्तभाई से मिला तो नही हूँ। अभी मिलने योग्य परिस्थिति नही है। मिलने की जल्दी भी नही है। जो काम जमा हो गया है उसमें से थोडा-थोडा निबटा रहा हूँ। ज्वर घोडेकी गतिसे आया, शक्ति चीटीकी गतिसे आ रही है। यह ईश्वरकी शिकायत नही है, उसके इशारे वही समझे। वह शक्ति देता है तो लेगा क्यो नही?

ककलभाई और अमृतलालके बीच मेल कराने के लिए अल्मोडा क्यो जाना पडेगा? लाठी मारो तो पानी दो हिस्सोमे नही बँट जाता। इनमे तो मेल था ही। सवाल है कि क्या अमृतलालने अपने मनके साथ मेल साध लिया है? मुझे उसे सार्वजनिक जीवनमे फिरसे खीचने की उतावली नही है। उसका मन साफ होने की उतावली मुझे है। इसीलिए जैसे ही मैंने सुना, तुरन्त पत्र लिखा था। यदि उसका मन साफ हो जाये तो वह अल्मोडेमे नही पडा रहेगा। मै तो सावजनिक और व्यक्तिगत जीवनमे भेद नही मानता। चाहे जितना होशियार आदमी चरित्रहीन हो तो उसकी गदगीके छीटे सार्वजनिक जीवनपर तो पडते ही है। हम अगर अपनी आँखोसे यह न देख पाये तो ऐसा नही है कि छीटे उड न रहे हो। इसलिए मेरा तो दृढ अभिप्राय यह है कि जो लोग अमृतलालका भला चाहते है और सावजनिक जीवनकी उन्नति चाहते हैं उन्हे चाहिए कि वे अमृतलालको निर्दोष बन जाने दे। उसे प्रलोभनमे डालकर वापस खीचने से उसकी और सावजनिक प्रवृत्तिकी हानि ही होगी। मेरा ऐसा ही विश्वास है।

मुझे लगता है कि मैं वालुजकरके बारेमे अपनी बात नही समझा पाया। जो रकमे मेरे नामपर चढी हुई हैं उनमे मैंने जो पैसा अपना बना लिया है उसमे से उसे देना है। मेरी धारणा है कि इस बातमे कौसिलकी राय लेना जरूरी नही है। ठीक है न? किन्तु यदि मुझे ठीक याद न हो तो मेरी गलती सुधार देना। इसमे तो मुझे कोई हर्ज नही दिखता कि बात कौसिलके सामने रखी जाये। किन्तु कौसिल ऐसी रकमोको किस आधारपर पास कर सकती है?

१ पत्रपर दी गई प्राप्ति तिथिके आधारपर।

रुक्मिणी पागल तो है ही। दोष-मात्र पागलपनकी निशानी है, प्रसिद्ध लोम्ब्रोसो[1] ऐसा ही कह गये हैं। किन्तु स्त्री कुभार्या कब कहलाती होगी? कुभार्या शब्दको ही छोड दे तो अलग बात है। मेरी सहानुभूति मलकानीकी तरफ जाती है। रुक्मिणीके प्रति जो दया-भाव मनमे आता है, वह अलग तरहका है।

क्या अमतुस्सलामको फिर वहाँ रख सकते हो? यदि वह शुभ हेतुसे वहा रहते हुए भी विघ्नरूप लगती हो तो मुझे बताने मे सकोच मत करना। नीलम बच गई, यह ईश्वरका अनुग्रह है। आँकडोकी प्रतीक्षा करूँगा। पत्र काफी लम्बा हो गया।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७०)से।

३६८. पत्र . लीलावती आसरको

१७ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

कलम न होने का बहाना खूब मिला। इसके साथ कलम भेज रहा हूँ। तू 'गीता' की किस प्रतिको अपनी कहती है सो तो मुझे नही मालूम, किन्तु जो मिली है सो तुझे भेजता हूँ। कनु कलम बनाना जानता है। तू भी सीख लेना। श्लोक तूने ठीक लिखे है, किन्तु उनका अर्थ जानती है या नही?

कागज हाथका बना काममे लाना चाहिए। कलम हाथकी बनी और कागज मिल का, यह कैसा हिसाब? तू बिलकुल स्वस्थ हो जायेगी, मुझे तभी सन्तोष होगा। यदि तू दिलरुबा न बजाती हो तो नानावटीके लिए भेज देना। बजाती हो तो भेजना बिलकुल जरूरी नही है।

मैंने जो सुझाव भेजे थे[2], उनकी एक प्रति बनाकर मुझे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८०)से। सी० डब्ल्यू० ६५५२ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१ इटलीके चिकित्सक और अपराधविद् ऐसरे लोम्ब्रोसो।

२ देखिए "पत्रका अश", १२-९-१९३६।

३६९ पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव

१८ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

सिर्फ दो-एक वाक्य ही लिखूगा। तुम्हारे भेजे सेब सबने स्वादसे खाये। यह और भेजने का इशारा नही है।

तुमने लडकियोका[1] जो ध्यान रखा, उसके लिए खान साहब बहुत कृतज्ञ है। वे चाहते है, तुम प्रयत्नपूर्वक आगे बढकर उनको मित्र बना लो और उनका सही मार्गदर्शन करो। यह रहा उनका पत्र।

मुझे खुशी है कि अब शम्मी तुम्हारा इलाज कर रहे है। अब तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगी। भली मूर्खाकी तरह खुशीसे उनकी आज्ञाका पालन करो।

ढेरो प्यार।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९०)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६३९९ से भी

३७० पत्र : कान्तिलाल गांधीको

[१८ सितम्बर, १९३६][2]

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मुझे अच्छा लगा। शुक्रवारकी सुबहके दस तो [कब-के] बज गये। इस समय चार बजे है। अब रातके दस बजेतक यमराजकी प्रतीक्षा करूँगा।[3] यह तो तू जानता ही है कि मै उनके स्वागतको तैयार बैठा हूँ।

फोटोग्राफरके ५० रुपये मै अवश्य दे दूंगा। मै ये रुपये कहाँ भेजू?

अन्य चीजोके बारेमे तूने जो लिखा है उसे मै समझ गया हूँ। तेरे चले जाने[4] से मुझे चाहे कितना भी दुख हुआ हो, किन्तु मैंने तुझसे आशा तो छोडी ही नही है।

१ डॉ० खान साहबकी लड़की मेहरताज और भतीजी मरियम।

२ मनु और कस्तूरबा के दिल्ली जाने के उल्लेखके आधारपर। वे १९ सितम्बरको दिल्ली गई थीं, देखिए "पत्र अमृतकौरको", २०९१९३६। इसके अलावा, पत्र शुक्रवार को लिखा गया था और १८ सितम्बर शुक्रवार को ही पड़ा था।

३ देखिए "पत्र अमृतकौरको", २१ ९ १९३६।

४ डॉक्टरी पढ़ने लिए, देखिए "पत्र कान्तिलाल गांधीको", ७-९ १९३६।

मैंने तेरा पत्र फाड दिया है।

अमतुस्सलामके बारेमे तू अवश्य अधिक जानता है। यदि तू मुझे कुछ खास लिखना चाहता हो तो लिखना। पैसोके बारेमे तो उसने मुझसे जो कहा सो मैंने लिखा था। अब तू जो कहता है उसपर मैं अक्षरश विश्वास करता हूँ।

सरस्वतीके बारेमे मैं समझता हूँ। मुझे विश्वास है कि तू ऐसा काम नही करेगा जिससे तुझे कलक लगे। भगवान् तुझे तदनुसार शक्ति दे।

मैं तुझसे अक्सर विस्तृत पत्रोकी आशा नही करूँगा। लेकिन हर हफ्ते एक पोस्टकार्ड तो लिखेगा न? कभी विस्तृत पत्र भी लिखना।

बा और मनु कल दिल्ली जा रही है।

अब डाकका वक्त हो गया है, अत इतना पर्याप्त है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३८८)से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

३७१ पत्र : लीलावती आसरको

रात ८-२५, १८ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

तेरे अन्तिम वाक्यसे मै डर गया हूँ। यदि तू एक वर्ष बाद स्कूलमे भरती होना चाहे तो अभीसे भरती हो जाना अच्छा है। पढ तो कभी भी सकते है, किन्तु अगर सेगाँवसे निराश होकर भागे और पढने बैठ जाये तो तुझे और मुझे यह बात दु खद लगनी चाहिए। अपने मनको टटोल, मूर्खता छोड। विद्या प्राप्त करने की अपनी भूखको तृप्त कर। सेगाँवमे शुष्कता और मेरे गुस्सेके सिवाय क्या रखा है? तू इसे सहन नही कर सकेगी, ऐसा डर तो मुझे लगता ही रहता है। तेरे हितकी बात सोचने मे मेरा बहुत समय जाता है। यह बात मुझे नही खटकती। किन्तु अगर अन्तमे निराश होकर मेरा त्याग जरूरी हो जाये तो यह तेरे और मेरे विचारसे असह्य होगा। तुझे सेगाँव आना ही हो तो कब आना है, यह तेरे हाथमे है। मेरी शर्ते बार-बार पढ और उल्लासके साथ उसपर अमल कर। अपने मनमे से द्वेष-भाव निकाल डाल। रोज जिसके साथ रहना पडता है यदि तुझे वही व्यक्ति खटकता हो तो तू मेरे साथ सुखी कैसे हो सकती है? तू यहाँ शान्त कैसे रह सकेगी? क्या यह बात समझने मे सरल नही है? सही बात करने मे कभी भी शर्म क्यो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४६)से। सी० डब्ल्यू० ६६२१ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

३७२ टिप्पणियाँ

ताराबहन मेरी चेजलीके बारेमें

विदेशसे आनेवाली प्राय हर डाकमे मेरे पास स्व० मेरी चेजलीके सगे-सम्बन्धियो और मित्रोके पत्र आते रहते है। इनमे उनके अनेक गुणोका वणन रहता है। कई सज्जन उन अनेक प्रकारके उपकारोका वणन करते है, जो स्व० ताराबहनने उनपर किये थे। कुछ लिखते है कि उन्होने हमे फलाँ-फला सहायता देने का वचन दिया था, और कुछ ताराबहन द्वारा छोडे गये एक या अनेक वसीयतनामोका भी उल्लेख करते है। हालाँकि महादेव देसाई इन सब पत्र भेजनेवालोको अपने सीमित समयमे जितना उनसे बन पडता है तफसीलवार जानकारी देने की कोशिश करते है, फिर भी तमाम सम्बन्धित लोगोके लाभके लिए यह जाहिर कर देना जरूरी है कि अपनी शोचनीय मृत्युके कुछ ही समय पहले उन्होने मेरे नामपर जो वसीयतनामा लिख दिया था, वह कानूनदा मित्रोकी रायमे भारतीय उत्तराधिकार अधिनियमके अनुसार जायज नही मालूम होता। पर अगर यह साबित भी हो जाये कि वह जायज है, तो भी उनके सगे-सम्बन्धियो और मित्रोकी अनुमतिके बगैर उनकी सम्पत्तिका उपयोग हिन्दुस्तानी ग्रामोद्योगोके लिए करने की मुझे जरा भी इच्छा नही है, यद्यपि यह काम इधर उन्हे अत्यन्त प्रिय था और इसके लिए वे एक गुलामकी तरह काम करते-करते वीरोचित मृत्युकी गोदमे सदाके लिए सो गई। इस बातकी बहुत ही कम सम्भावना है कि स्व० ताराबहनकी वह सब सम्पत्ति मेरे हाथ आ जायेगी, जिसका वे अपने जीवन-कालमे किसी प्रकारका विनियोग नही कर गई है। पर अगर ऐसा हुआ तो उसे हाथ लगाने से पहले मै उन तमाम वचनो या वादोकी जाँच करूँगा जो उन्होने पश्चिममे किये, और उन्हे पूरा करने की कोशिश भी करूँगा। बैंकसे उनके नामपर आये हुए कई चेक मेरे पास पडे हुए है, जिनका भुगतान भी नही हुआ है। उनके परिवारके बहन-भाइयोको, जिनकी सख्या, मै देखता हूँ, बहुत बडी है, मेरी यह सलाह है कि उनमे जो सबसे नजदीकी हो, वे राज्यसे इस सम्बन्धका एक कानूनी अधिकार-पत्र लेकर मेरे पास भेजे ताकि मै और कुमारी मेरी बार हमारे पास रखी हुई ताराबहनकी चीजे उन्हे सौप सके। मेरे पास तो अनभुने चेक पडे हुए है और मेरी बारके पास उनके छोटे-मोटे कुछ जेवर है। हिन्दुस्तानमे आने पर अपनी जरूरते उन्होने इतनी कम कर दी थी कि शायद ही ऐसी कोई चीज बची हो, जिसकी कोई कीमत आ सके। अपने जीवन-कालमे उन्हे जो-कुछ मिला, उन्होने ग्राम-सेवाके लिए मुझे दे डाला। उस स्वर्गीय उपकारशीला देवीसे सम्बन्ध रखनेवाली बातोके विषयमे मेरे पास तो इतनी ही जानकारी है। आशा है, यह तमाम सम्बन्धित-जनोके लिए काफी होगी।

तिलका ताड

अम्बेडकर-मुजे योजनापर मैने जो रुख प्रकट किया है[1] उसके बारेमे अफसोस जाहिर करते हुए मेरे दो मित्रोने मुझे पत्र लिखा है। उनकी दलील सक्षेपमे यह है

> **यह तो निश्चय ही आप तिलका ताड बना रहे है। गुरु नानक वैसे ही सुधारक हिन्दू थे जैसे अन्य हिन्दू-पथोके सस्थापक। सिख तो सब तरह और सब मानोमें हिन्दू ही है। उनकी सस्कृति भी हिन्दुओकी सी है। हरिजन अगर अपनेको सिख कहलाना चाहे, तो इसे आप धम-परिवर्तन क्यो कहते है।**

ऐसा मालूम पडता है कि ऐसी राय रखनेवाले ये आपत्तिकर्त्ता अकेले ही है। अपनी इच्छासे चौदह बरस बाहर रहने के बाद जब मै १९१५ के उपरान्त किसी समय वापस हिन्दुस्तान आया, तो किसी कामसे मुझे पजाब जाने का इत्तिफाक हुआ था। वहाँ सिखोकी एक सभामे भाषण करते हुए मैने कहा कि मेरी रायमे वे हिन्दू ही है और हिन्दुओ के एक सुधारक पथमे ही शामिल है। इसपर एक प्रतिष्ठित सिख मित्रने मुझे एक तरफ ले जाकर कहा कि सिखोको हिन्दू कहकर आपने अनजाने ही उन्हे चोट पहुँचाई है। इस चेतावनीके बादसे मैने उन्हे कभी हिन्दू नही कहा, क्योकि मेरे या अन्य कुछ व्यक्तियोके मानने से कुछ नही होता। असल बात तो यह है कि वे खुद अपनेको क्या मानते है। सिखोको पृथक् निर्वाचन प्राप्त है। डॉ० अम्बेडकर भी सिखोको हिन्दू नही मानते। वह तो निश्चित रूपसे धम-परिवतन चाहते है। सिख अगर हिन्दुओका ही एक सम्प्रदाय हो, तो फिर [पूना] समझौतेमे किसी परि-वतनकी कोई जरूरत ही नही है, क्योकि हिन्दू तो अपना सम्प्रदाय बदलकर भी हिन्दू बना रह सकता है। इसके अलावा सामूहिक रूपसे सब हरिजनोके फिरकेको न तो डॉ० अम्बेडकर और न रावबहादुर राजा या दूसरा कोई व्यक्ति ही एकदम कलमके एक झटकेसे बदल सकता है। धर्म तो असलमे वैयक्तिक विषय है, जिसका निर्णय हरएकको खुद ही करना होता है। अतएव ऐसा कोई भी व्यक्ति, जो धर्मको पवित्र मानता है, डॉ० अम्बेडकर और मुजे द्वारा प्रस्तुत की गई योजनामे साझीदार नही हो सकता।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-९-१९३६

१ देखिए "एक खतरनाक योजना", २२-८-१९३६।

३७३ मेरी बीमारी

अभी हालमे मुझे जो मलेरिया बुखार आया था, उसके बारेमें कुछ कहकर पाठकोका समय लेने की मेरी जरा भी इच्छा नही थी। पर इस सम्बन्धमे मैंने प्रार्थनापूण हृदयसे एक निश्चय किया है, जिसे पूरा करने की शक्ति वही सवशक्तिमान् देगा। इस निश्चयमें कुछ मित्रोका भी सम्बन्ध आता है, इसलिए यहाँ उसके विषयमें मुझे कुछ लिखना पड रहा है।

मै तो प्राकृतिक चिकित्साका पक्का हिमायती हूँ। इसीलिए वर्धाके अस्पतालमे दाखिल होना मेरी इच्छा और स्वभावके बिलकुल विपरीत था। अगर यह सब मुझ पर छोड दिया जाता तो जहाँतक बनता, मै प्राकृतिक चिकित्साके अनुसार अपना इलाज कर भी लेता। पर अगर मै ऐसा करता, तो कुछ मित्रोके दिलको, जो मेरे आसपास थे, चोट पहुँचे बगैर न रहती। मै जानता था कि इसमे जमनालालजी के सरपर भी कम जिम्मेवारी नही थी, क्योकि मै उनके घर अर्थात् वर्धाके नजदीक एक देहातमें आकर बसा हूँ, हालाँकि इस गाँवके चुनावमे तो उनका जरा भी हाथ नही था। इस गाँवका चुनाव तो मीराबहनने किया था, और उसको इसलिए चुना गया था कि वहाँ ज्यादातर बस्ती हरिजनोकी है। दूसरे, वह वर्धासे न तो बहुत दूर है और न ऐसा नजदीक ही। जब मीराबहन सेगाँवमे बसने के लिए गई, तब मैंने एक घोषणा की थी। उसीका पालन करने के लिए मुझे सेगाव आना पडा। जमनालालजी कुछ हदतक और सरदार तो पूरी तरह मेरे अभी किसी गाँवमे जाकर बैठने के खिलाफ थे। फिर, इस सेगाँवमे जाने के तो सभी विरोधी थे। पर मैंने कह दिया कि मै तो सेगाँवमे जाकर बसन के लिए अपनी इस घोषणाके अनुसार वचनबद्ध हूँ और इस सारे विरोधको किसी तरह हटाकर मै सेगाँव चला आया। नि सन्देह, वह वचन तो मुझे प्रिय था ही, क्योकि मेरा हृदय तो गाँवोमे ही है। मेरी दिली इच्छा तो यह थी कि वहाँ जानेपर मै पूरे एक सालतक कही बाहर न जाऊँ। सब ऋतुओमे वही रहूँ। पर सेगाँवमे जाकर बसने का निश्चय करने के पहलेसे ही दुर्भाग्यवश दो-एक कामोका भार मेरे सिरपर ’है। उसके सिलसिलेमें ही वर्ष खत्म होने से पहले ही मुझे अपना काम छोडकर बाहर जाना पडेगा। इसलिए मित्रोसे मेरा अनुरोध है कि अब इस अवधिमे वे और अधिक बाधा न डाले। मेरे लिए तो यह एक साधना है। गाँवोकी समस्या मेरी नजरमे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है। उसे आगे टालना अपने अस्तित्वको खतरेमे डालने के समान ही है। हिन्दुस्तान शहरोमे नही, गाँवोमे बसता है। इस ग्रामोद्योग-आन्दोलनका मार्गदर्शक और सचालक मै माना जाता हूँ, जिसे बम्बईमे काग्रेसने स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान

किया था।[1] मै ऐसे किसी आन्दोलनका मार्ग-दर्शन नही कर सकता जिसमे मै खुद सीधा जी-जानसे नही कूद पडूँ। मगनवाडी गॉव तो है, लेकिन बडा गॉव है, जो मुझे शिक्षा और प्रेरणा नही दे सकता। मेरी तो एक ऐसे गाँवमे बसने की इच्छा थी जिसमे ग्राम-जीवनकी सवसामान्य कठिनाइयॉ और समस्याएँ मौजूद हो। सेगॉव ऐसा ही एक गॉव है।

तो, अगर अपनी शिक्षा और प्रत्यक्ष अनुभव पाने के अवसरको छोडकर मेरे लिए कही बाहर जाना उचित नही, तो फिर स्वास्थ्यके लिए भी मुझे कही नही जाना चाहिए। दूसरे गॉवोकी तरह सेगॉवको भी मलेरिया और देहातकी दूसरी बीमारियोका पूरा हिस्सा मिला है। उसकी आबादी ६०० है। पर शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति बचा हो जो इस मौसममे मलेरिया या पेचिशका शिकार न हुआ हो। मीराबहन और मैंने अबतक कोई २०० मरीजोका इलाज किया होगा। इनमे से अधिकाश मलेरिया और पेचिशके ही मरीज थे। आहारमे कुछ साधारण हेर-फेरके साथ कुछ मामूली दवाइयोसे हमारा अच्छी तरह काम चला। गॉवके लोग बडे-बडे अस्पतालोमे नही जाते। वे तो मामूली दवाखानोमे भी नही जा सकते। वे या तो गाँवके नीमहकीमो से इलाज करवाते है, या फिर झाड-फूकका सहारा लेते है और इसी तरह अपनी जिन्दगी काटते है। मुझे कुछ मामूली रोगोका कामचलाऊ ज्ञान है। हालॉकि जब-जब मुझे जरूरत हुई, हमेशा डॉक्टर मित्र मेरी सहायता करने के लिए उत्सुक रहते है, फिर भी मैंने कई बार उनकी सहायताके बगैर अपना इलाज किया है। अगर मै 'महात्मा' न कहा जाता, तो शायद मेरी इस बीमारीकी खबर भी किसीको न मिलती। बुखार मुझे बहुत कम आता है। पिछली बार जब मुझे बुखार आया, जिसे लगभग १२ वर्ष हो गये, उस समय भी मैंने खुद ही अपना इलाज किया था। इसलिए अगर कही मुझे फिर मलेरिया या और कोई तकलीफ हुई तो स्वास्थ्य-सुधारके लिए अब तो मुझे सेगॉवसे बाहर और भी नही जाना चाहिए। अगर डॉक्टर या वैद्यकी सहायताकी वैसी जरूरत आ ही पडे, तो मुझे उतने से ही सन्तोष मान लेना चाहिए, जो बगैर शोर-गुलके और बिना सेगाँवसे बाहर गये मिल जाये। मै भाग्यवादी हूँ और मानता हूँ कि मौतकी घडी कोई टाल नही सकता। अच्छीसे अच्छी डॉक्टरी सहायता भी बडे-बडे बादशाहो और चक्रवर्ती सम्राटोको कालके पजोसे नही बचा सकी है। फिर मै तो गाँवोका एक विनम्र सेवक बनने का प्रयास कर रहा हूँ। मुझे तो ऐसे ही इलाजसे सन्तोष मान लेना चाहिए जो मामूली देहातियोको प्राप्त हो सकता है। अगर मै स्वास्थ्य-सुधारके लिए कही बाहर जाऊँ तो मै यह देखने का मानो एक अवसर गॅवा देता हूँ कि जब तन्दुरुस्ती खतरेमे होती है, तब गॉवोके लोग क्या करते है।

मुझे हालमे जो मलेरिया हुआ, उसने मुझे इस निश्चयपर जल्दी पहुचा दिया कि मै इस बातका गहराईसे अध्ययन करूँ कि सेगाँवसे यह मलेरिया किस तरह

१ अक्तूबर, १९३४ में, देखिए खण्ड ५९।

जल्दी भगाया जा सकता है। मेरे आसपास तमाम खेतोमे पानी भरा रहता है। फसले सड रही है। आप जमीनपर चलना चाहे तो घुटने-घुटनेतक कीचड मिलेगा। सौभाग्यसे मेरी सुविधाके लिए जमनालालजी के खेतोमें से एक पक्का रास्ता बना लिया गया है, जिसकी वजहसे किसी तरह आदमी वर्धासे सेगाव आ-जा सकता है। इस रास्तेके कारण मनुष्य और पशुओको भी काफी आराम हो गया है। कुछ मित्रोकी सलाह मानकर अगर मै बरसातके बाद सेगाव जाता, तो पिछले दो महीनोकी भारी वर्षाका यह अनमोल अनुभव मुझे कहाँ मिल सकता था? अबतक मैंने जो-कुछ देखा है, उससे तो मेरा यह निश्चय पक्का हो गया कि मुझे कभी सेगाँव नही छोडना चाहिए, चाहे प्राण भी क्यो न खतरेमे हो। मित्रोसे भी मेरा यही अनुरोध है कि वे मेरे इस निश्चयके पालनमे मेरी सहायता ही करे और मेरे साथ परमात्मासे वे भी प्रार्थना करे कि वह खुद मुझे भी इस निश्चयपर डटे रहने का बल दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-९-१९३६

३७४ पत्र: अमृतकौरको

सेगॉव
२० सितम्बर, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

मेरी अहिंसाको स्वय पूर्णत अपनाये बिना ही यदि तुम उसका पक्ष-प्रतिपादन करती रहोगी तो इस बातका भय है कि ताईकी ऑखोमे तुम्हारी साख खत्म हो जायेगी। परीक्षाकी घडी उपस्थित होनेपर हमारे अन्दरका हिंस्र पशु हमारे ऊपर हावी हो जायेगा, इस बातसे हमारी स्थिति मे कोई अन्तर नही आता, बशर्ते कि हमारे अन्दरका हिंस्र पशु जिस समय जगा हुआ हो उस समय भी हमे इस बातका ज्ञान रहे कि हम गलत कार्य कर रहे हैं। तथ्य तो यह है कि शका और सन्देहके इस युगमे हमें अपनी स्थितिके ऊपर पूरा भरोसा कभी नही रहता। हमे निरुत्तर कर देनेवाला कोई आकर्षक तर्क हमे उलझनमे तो डाल देता है परन्तु उससे अपनी बुद्धि पर हमे जो अहकार है, वह कम नही होता। अहिसा, सन्तति-निग्रह आदिके प्रश्न चिरन्तन प्रश्न है। इसलिए अन्तत तुम्हारे लिए यही अच्छा होगा कि मेरे विचारोके बचावमें कुछ कहने का कभी प्रयास न करो। यह तो मुझे पता है कि जहाँतक तुम्हारे अपने विचारोका सवाल है, तुम किसीके भी सामने उनका अच्छी तरह पक्ष-समर्थन कर सकती हो। मै नही चाहता कि मेरे साहचर्यके कारण लोगोकी दृष्टिमे तुम्हारी असाधारण योग्यताका मूल्य घट जाये। बल्कि मै तो यह

चाहूगा कि कहा जाये कि वर्षा आना आरम्भ करने के बाद भी तुम्हारे शरीर या बुद्धिमे कोई ह्रास नही हुआ है।

मुझे प्रसन्नता है कि शम्मी अब तुम्हारे एक्जीमाका इलाज कर रहे है। तुम्हे अपने पावोके विषयमे दु ख नही करना चाहिए। क्या यह अच्छा नही कि अन्दरका विकार अब बाहर निकल रहा है? ध्यान रहे कि इलाज ऐसा हो जो रोगको दबाये नही बल्कि मिटा दे।

आशा है, पृष्ठ ४ को पढने मे तुम्हे कोई कठिनाई नही होगी। यदि तुम उसको इसीका अश समझोगी तो कोई कठिनाई नही होगी। तुम मेरा तात्पर्य समझ गई होगी।

निकटतम सम्बन्धियोमे भी कुछ लोग निर्लज्ज हो सकते है। मै भी उसी श्रेणीका हूँ। इसलिए जबतक मै मँगवाऊँ नही, थर्मस मत भेजना। मै तुम्हे विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे काफी गर्म पेय मिल जाते है। इस विषयमे तुम्हे चिन्ता करने की आवश्यकता नही है।

तुमसे मै पूणत सहमत हूँ कि स्त्रियाँ पुरुषोकी अपेक्षा अच्छी परिचारिकाएँ होती है और छोटी-छोटी बातोका ज्यादा ध्यान रखती है। परन्तु आधुनिकाओके लिए भी यह बात लागू होती है या नही, यह तो तुम मुझसे अधिक अधिकारसे कह सकती हो।

तुम्हारे इधर हालके पत्रोसे मुझे कुछ चिन्ता होती है। तुम फिरसे अधिक श्रम करने लगी हो। जब भी तुम्हे शारीरिक या मानसिक थकान हो, उस समय 'ना' कहना सीखो।

बा और मनु कल दिल्ली चली गई। लीलावती अभी भी मगनवाडीमे है। आज मीराको बुखार आने की पारी तो थी परन्तु इस समय तक नही आया है।

खान साहब और मैने तुम्हारे भेजे सेब बडे स्वादसे खाये।

अच्छा, आज अब बस।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९१) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०० से भी

३७५ पत्र : महादेव देसाईको

२० सितम्बर, १९३६

चि० महादेव,

लिफाफे भेजना।

अमतुस्सलामके बारेमे डॉ० शाहसे पूछना कि वह कैसी है, क्या करती है, क्या अच्छी हो जायेगी, आदि।

क्या तुमने बम्बईसे आते रहनेवाले पार्सलमे कुछ खट्टे नीबू भी रखने के लिए लिख दिया था? अभीतक तो नही आये।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' मे प्रकाशित बा का पत्र पढा। इसमे बा की वेदना तो है ही, देवदासकी वेदना भी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४८८) से।

३७६ पत्र : अमतुस्सलामको

२० सितम्बर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

कैसी मूर्ख है! तेरे खत कोई पढता नही है। और पढे तो तुझे उसमे शरमाने की क्या बात है? तेरा एक्सप्रेस खत देरसे मिला, इसलिए तेरा काम सफल नही हुआ, ऐसा ही माना जायेगा न? तेरे अक्षर पहचानकर ही उसे किसीने पढा नही। लेकिन तेरी मूर्खता दिखाने के लिए महादेवको मैने पढकर सुनाया और हम दोनो हँसे।

तू गुजराती या हिन्दीमे क्यो लिखती है? जरूर उर्दूमे लिख। तेरे अक्षर साफ है। मुझे पढने मे जरा देर लगेगी, उसकी फिक्र नही।

कान्तिके लिए तू पैसे दे और वह बात मै उससे न कहूँ, यह मै कैसे समझ सकता हूँ? तूने अपन साथ इस बारेमे चर्चा करने की मनाही की थी। उसे मैने माना। कान्तिको जरूर मैने फटकारा। तब कान्तिने लिखा कि तेरी माँग अभी की न थी। बाकी तो तू अपने-आप दुःखी हुआ करेगी तो मै क्या करूँगा?

ऑपरेशनका जो तय हो वह बताना।

सान्ताक्रुज पो० आ० का खत मिला? अब तो खतकी शिकायत नही है न? जरा तो सयानी बन। जरा तो हँस। तू अपने-आप जो दुखी होती है, इससे तेरी कोई खूबी जाहिर नही होती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८)से।

३७७ पत्र घनश्यामदास बिडलाको

२० सितम्बर, १९३६

भाई घनश्यामदास,

परमेश्वरी, पारनेरकर, सरयूप्रसाद, दिनकर और धर्माधिकारीको तीन दिन दिये। पेट भरके बाते की। सबके अभिप्राय भिन्न है। पारनेरकर डेरोका कब्जा लेने के लिये तैयार नही है। परमेश्वरीके १६ सालका प्रयोग मिटा देना अच्छा नही लगता है। पूर्ण निणय मै नही कर सका हूँ क्योकि इस कामको खतम करने मे दो-तीन मास तो चले ही जायेगे। मेरा अभिप्राय है कि परमेश्वरीको और रु० २००० डीसेम्बर ३१ के खर्चके लिए दिये जाये। फसल बोने की कुछ बात है सो तो बोने का मैने कह ही दिया है। जैसे रु० ५०० दिये है ऐसे ही रु० २००० उसको दिये जाय और अत जो कुछ भी हो रु० २५०० काम पर फर्स्ट चारज रहे। इतनेमे हमारे कही भी मिलकर अतीम निणय कर लेना चाहिये। अकतुबर २५को[1] तो मुझे बनारस जाना ही होगा। जमनालाल भी वही होगे। परमेश्वरीको मैने यह भी कहा है कि वह गवरमेट एक्स-पर्टका अभिप्राय लेवे।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०२३ से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ भारत माता मन्दिरके उद्‌घाटन के लिए।

३७८ पत्र जी० एस० एन० आचार्यको

[२१ सितम्बर, १९३६ के पूव][1]

मुझे बिलकुल ज्ञान नही था कि आन्ध्रदेशमे हिन्दी-प्रचारके विरुद्ध कोई आन्दोलन है। परन्तु मै भी भिन्न-भिन्न प्रान्तोकी समृद्ध भाषाओको स्थान-च्युत करने के प्रयासका विरोध करूँगा। ऐसा कोई उद्देश्य नही कि हिन्दी उनका स्थान ग्रहण करे, बल्कि उद्देश्य यह है कि अन्तर्प्रान्तीय सम्पकके माध्यमके रूपमे हिन्दी उनकी पूरक बने। अत हिन्दीका प्रचार प्रान्तीय भाषाओके विकासमे बाधक नही होगा, प्रत्युत उन्हे अधिक समृद्ध करेगा।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९३६

३७९ पत्र . अमृतकौरको

सेगॉव, वर्धा
२१ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

तुम्हारा एक्जीमा मिटना ही चाहिए। परन्तु कैसे, यह मुझे पता नही। क्या शम्मी इस बातका समर्थन करेगे कि जिस भागपर एक्जीमा है वहाँ पहले हलकी भापका सेक दिया जाये, फिर बफकी पट्टी रखी जाये? यदि उचित समझो तो इसकी चर्चा उनसे करके देखो। फिर भी तुम्हे परेशान नही होना चाहिए, क्योकि यह तो एक चर्म-रोग है। अगर इसपर सोचना छोड दोगी तो यह रोग ज्यादा जल्दी ठीक हो जायेगा। मेरा कितना मन करता है कि मै इस समय तुम्हारे पास होता, पर वह तो असम्भव है।

फील्डेनसे[2] मेरा अभिवादन कहना ओर मेरी ओरसे बताना कि अपने स्वास्थ्यको खतरेमे डालकर वे जितना काम कर रहे है उसका कोई औचित्य नही है। उन्हे छुट्टी लेकर अपना स्वास्थ्य शीघ्र सुधार लेना चाहिए। और कडे मलेरियाका असर तो बडा बुरा बताया जाता है।

१ जिस रिपोर्ट में यह पत्र दिया गया है, वह दिनाक "२१ सितम्बर, १९३६" के अन्तर्गत छपी थी।

२ लॉयनेल फील्डेन, ऑल इंडिया रेडियोके प्रथम महानिदेशक।

पता नही तुम्हे महादेवने यह गप्प बताई या नही कि पिछले शुक्रवारको सुबह १० बजे हृदय-रोगसे मेरी मृत्यु होनी थी।[1] यह सूचना किसी विद्वान् पुरुषने बडे गम्भीर भावसे जमनालालजी को दी थी, जिन्होने मुझे सब-कुछ बताया। उन्होने इस सूचनाको हँसीमे उडाने की कोशिश तो की, परन्तु बेचारे डॉ० महोदयको यहा रात बिताने को भेजे बिना न रह सके। डॉ० महोदय अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न करने के गोरव से तो वचित रह गये परन्तु उनकी उपस्थिति बहुत काम आई, क्योकि उस दिन सयोग से मीराको खूब तेज बुखार था।

आशा है, मेहमानोके आगमनसे तुम्हारे कमजोर शरीरपर बहुत भार नही पडा होगा। मै चाहता हूँ कि तुम सर्दीके मौसममे कही छिपकर रह सकती। शिमलासे तो और कोई भी पहाड अच्छा रहेगा। एक बार महाबलेश्वर या ऊटी आजमाना क्या असम्भव है?

सप्रेम,

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९२) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०१से भी

३८०. पत्र: भूलाभाई झ० देसाईको

२१ सितम्बर, १९३६

भाईश्री भूलाभाई,

ससदीय चुनावका पूरा भार उठाये — पैसेका और कामका भी। आप खुद तो अधिकसे-अधिक पैसा देगे ही, साथ ही दूसरोसे भी दिलवायेगे। यह काम मुख्य रूपसे आपका ही है। बादमे दूसरोका है।

धीरू और मधुरी मजेमे होगे। दोनोको आशीर्वाद।

बापूके वन्देमातरम्

मूल गुजरातीसे भूलाभाई देसाई पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

---

१ देखिए "पत्र कान्तिलाल गाधीको", १८-९-१९३६।

३८१ पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२१ सितम्बर, १९३६

भाई घनश्यामदास,

मेरा अभिप्राय दिन प्रतिदिन दृढ होता जाता हे कि सब प्रातो को हरिजन सेवा के बारे मे अपने २ प्रातो मे आवश्यक धन इकट्टा करना चाहीए। मध्यवर्ती केन्द्रसे पैसे जाय और प्रातो का काम चले वह काम चिरस्थायी कभी नही हो सकता है और उससे हमको सवर्ण हिदु दिल की परिस्थिति का भी पूरा ख्या[ल] नही मिलेगा। मजबूर होकर हमारे कामको कम करना पडे उससे अच्छा यह होगा कि हम अपनी मर्यादा को पहचान ले।

इसका सार यह होता है कि आज ही सब प्रात अपना बजेट उपरोक्त दृष्टि से देवे और उसे देखकर हम प्रत्येक को जो सहाय एक-दो वषके लिये दे सके सो देवे। मै हमारे काय को सिर्फ धार्मिक दृष्टिसे देखता हू। इसलिए हमारे कार्य का विस्तार धार्मिक भावना के त्यागी सतके मिलने पर निर्भर रहेगा। धन उनके पीछे २ चलेगा। धनके पीछे वे नही आवेगे। यदि यह बात हमारी काउसिलके सामने स्पष्ट नही हुई है तो दुर्भाग्यकी बात है।

इस बातका आखरी फैसला करने के लिये अगर काउसिलकी बैठक वर्धा रखना आवश्यक समझा जाये तो रखी जाये।

आपका,
मोहनदास गाधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ८०२२)से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

३८२ पत्र जोहरा अन्सारीको

२१ सितम्बर, १९३६

प्यारी बेटी जोहरा,

तुम्हारे निकाह[1] पर मै तो नही आ सकता हूँ लेकिन मेरी रूह तो तुम्हारे साथ होगी ही। तुम दोनोके लिए मेरी दुआऐं उस रोज मिलेगी। खुदा तुम दोनोको उमर दराज करे ओर दोनोको खुश रखे।

बापुकी दुआ

महात्मा, भाग ४, पृ० ११२-१३ के बीच प्रकाशित उर्दूकी प्रतिकृतिसे

३८३ पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सेगाँव, वर्धा
२२ सितम्बर, १९३६

चि० अमला,

मुझे खुशी है कि तुमने गुजराती और हिन्दीका अभ्यास चालू रखा है। भला तुम्हे यह क्यो लगा कि मुझे अब तुम्हारे हिताहितमे कोई रुचि नही रही ? यह भी खुशीकी बात है कि तुम अब कुछ बडे मकानमे हो। तुम्हे अपनी बीमारीसे पिड छुडाना ही है। तुम्हारी माँ के आने मे अडचने पड रही हैं, यह बडे दु खकी बात है। खैर, हम आशा रखे कि अन्तत वे आ पायेगी।

स्नेह।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ २५ सितम्बरको शौकतसे। देखिए "पत्र अमतुस्सलामको", २५ ९ १९३६।

३८४ पत्र : अमृतकौरको

२२ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

एक ही दिन एकके-बाद-एक तुम्हारे दो पत्र आये। मुझे पता है, मेरे पत्रोंसे तुम्हें सुख मिलता है, इसलिए यथासम्भव शीघ्र लिखता रहता हूँ।

मेरी बडी इच्छा है कि दिसम्बर और उसके उपरान्त तुम्हें अपनी देखरेखमें रखूं, परन्तु पहले तुम्हारा एक्जीमा ठीक हो जाना चाहिए। सरदार वल्लभभाई वहाँ २४ तारीखको पहुँचेंगे। मैंने उनसे कहा है कि तुम्हें देशमुखको[1] दिखला दें। वे सब रोगोंकी अच्छी जानकारी रखते हैं। शायद वे सही उपचार बता सकें। विश्वास करता हूँ कि शम्मी इसका बुरा नहीं मानेंगे।

शम्मीको तो मैं अवश्य लिखूंगा ही कि तुम्हें दिसम्बरसे फरवरीके बीच मेरे पास रहने दें। परन्तु मैं अभी लिखना नहीं चाहता, या तुम जब कहोगी तभी लिखूँगा।

तुम्हारे पता भेजते ही मैं बन्द होनेवाला चरखा भेज दूंगा। उसे खास कहकर बनवाना होगा।

अपने पत्रोंके विषयमें तुम्हारा कहा मैं समझ गया। तुम्हारी इच्छाका अक्षरशः पालन होता है।

मुझे तो लगता है, तुम शम्मीकी इच्छानुसार मास लेना शुरू कर दो। तुम्हें औषधके रूपमें मास लेने से तो इनकार नहीं होगा। अभी तुम्हारे अन्दर वैसी स्वतन्त्र विवेक-बुद्धिका विकास नहीं हुआ है। यह विकास धीरे-धीरे और स्थिर रूपसे होने दो। यदि मैं मासका औषध-रूपमें भी धर्म मानकर प्रयोग नहीं करता तो तुम मान सकती हो कि यह मेरी एक जीवन-व्यापी साधना है, जिसका आरम्भ मैंने स्वतन्त्र और खूब अच्छी तरह सोच-विचारकर किया था। खैर, यदि शम्मीको पूरा भरोसा है कि वे तुम्हें ठीक कर लेंगे, तो मैं आग्रह करूँगा कि तुम इस मामलेमें उनकी बात मान लो। लेकिन जो असम्भव हो उसकी आशा तो उनसे भी नहीं रखनी चाहिए।

सप्रेम,

डाकू

श्री राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले
शिमला डब्ल्यू०

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४३) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६८९९ से भी

1. डॉ० पंजाबराव देशमुख।

३८५ पत्र: लीलावती आसरको

२२ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

'पृथ्वीवल्लभ'[१] पुस्तक पूरी करके तुझे भेज रहा हूँ। तू ध्यानसे किन्तु जल्दी पहुँचाना, और बादमें जो विचार तुझे सूझे वे मुझे बताना। यह पुस्तक काका साहबकी है। इसमें दाग न पडे, निशान भी मत लगाना। इसमें जो निशान हैं वे मैंने नहीं लगाये हैं। दूसरेकी पुस्तकमें कभी निशान नहीं लगाने चाहिए।

कल तेरा पत्र और श्लोक मिले। श्लोकोंका अर्थ समझनेके लिए समय न दिया जाये तो उनका अर्थ कैसे लगा सकती है? मनको थोडी तकलीफ तो देनी चाहिए न? यह तो मैंने तुझे कमसे-कम और सरलसे-सरल काम सौंपा है। आज भी तू स्वप्नमें दिखी, यह कितने दुःखकी बात है? कितना अच्छा होता यदि मुझे तेरी चिन्ता न करनी पडती!

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४७) से। सी० डब्ल्यू० ६६२२ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

३८६ पत्र: जयन्ती एन० पारेखको

२२ सितम्बर, १९३६

चि० जयन्ती,[२]

तेरा पत्र पढने लायक समय भी आज ही मिल सका। उसे पढनेके तुरन्त बाद कातते हुए यह जवाब लिखवा रहा हूँ। तूने पत्र अपने जन्म-दिवसपर लिखा था। तू दीर्घायु हो और ऐसा काम कर कि जिससे पूर्वजों और देशका नाम उज्ज्वल हो। टुकडीके बारेमें तेरा तर्क समझ गया, वह ठीक है। किन्तु टुकडीको कभी भी भंग नहीं किया गया। जो इसमें विश्वास करते हैं उनके लिए तो वह आज भी मौजूद है। किन्तु मुझे यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि ऐसा माननेवाले लोग बहुत थोडे हैं। तू अब मुक्ति माँगता है, सो मैं तुझे दे रहा हूँ। यों इसके पहले अगर मुझे फुरसत मिले तो मैं थोडी बातचीत कर लेता। किन्तु यह केवल मेरे मनके सन्तोषके

१. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीका गुजराती उपन्यास।

२. एक आश्रमवासी, जो बादमें साम्यवादी हो गये थे।

लिए हे। कई बार यह सन्तोष मुझे छोडना पडा है। इस बार भी ऐसा ही किये लेता हूँ। तेरी अन्तरात्मा जो-कुछ कहे, अवश्य तू वही करना। तेरी उन्नति इसी बातमे है। इतना ही याद रखना चाहिए कि अन्तरात्मा जो-कुछ कह रही है, उसे भली भाँति समझ लिया जाये। खूनी आदमी अन्तरात्माकी आवाज सुनकर खून करता है, इसी तरह व्यभिचारी व्यभिचार करता है और चोर चोरी करता है, किन्तु हम ऐसी प्रेरणाको आत्माका अन्तर्नाद नही कह सकते। अनुभवी लोगोने इसकी यह मयादा बाँध दी है कि अन्तर्नादका आश्रय वही लोग ले सकते है जिन्होने उससे सुनने की शक्ति प्राप्त कर ली है। प्राय इस बातको स्पष्ट रूपसे समझा नही जाता और इसलिए धमके नामपर प्राय लूटपाट की जाती है। किन्तु तुझे तो यह बात विस्तारसे समझाना जरूरी नही है। मुझे बीच-बीचमे लिखते रहना। मेरा पत्र-व्यवहार तो बहुत-से समाजवादियोके साथ होता रहता है। गुजरातके समाजवादी बन्धुओके साथ मेरा पत्र-व्यवहार नही है। यदि मै अपनी ओरसे इस प्रकारके पत्र-व्यवहारके लिए पहल करने चलू तो मेरी धज्जियाँ उड जाये। जो मुझे लिखते है मै उन्हे उत्तर दे देता हूँ। आजकल तो मै इस कामको भी सक्षिप्त बना रहा हूँ। कारण यह है कि फिलहाल मेरी वृत्ति सेगाँवमे डट जाने और उसीमे डूब जाने की है। मेरा यह विचार पूरी तरहसे सफल न हो तो भी मै जितना कर सकता हूँ उतना तो मुझे करना ही चाहिए न? और मै वैसा कर रहा हू। इसलिए थोडा-बहुत पत्र-व्यवहार इस कारण बन्द हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६३) से।

३८७ पत्र : नारणदास गाधीको

सेगाँव, वर्धा
२३ सितम्बर, १९३६

चि० नारणदास,

मै कोशिश तो कर रहा हूँ कि किसी-न-किसीको भेज सकूँ। सरहदी गाधी तो कही नही भेजे जा सकते। इसलिए तुम्हारी कठिनाई समझ पा रहा हूँ।

तुम जो नाम सुझाना चाहो, सो तो सुझाते ही रहना। सोराबजी ने कितना पैसा भेजा था, यह बहीमे क्यो नही मिलता? डर्बनसे तकाजा आता ही रहता है। शायद छगनलाल [गाधी] को मालूम है। शायद छगनलाल जोशीको भी मालूम है। बही तो है ही। कोई भी उसमे छानबीन करके जानकारी पा सकता है। हमारे पास बहियाँ है ही कितनी? इसमे क्या मुश्किल है?

इसके साथ जयसुखलालका पत्र भेज रहा हूँ। उसमे छगनलाल जोशीकी शिकायत की गई है। मैने उन्हे लिखा है कि उन्हे चाहिए कि मुझे जोशीको शिकायते

बता देने की अनुमति दे। उन्होने अनुमति दे तो दी है, किन्तु यह भी कहा है कि मै वह पत्र तुम्हारे मार्फत भेजू और तुम्हारी राय भी जान लूँ। इसलिए पत्र तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। अपनी राय जरूर सूचित करना। यदि तुम अनुचित न समझो तो यह पत्र जोशीको दिखाकर कहना कि वह अपना उत्तर मुझे लिख भेजे। यदि तुम चाहोगे तो मै स्वय यह पत्र जोशीको भेज दूँगा।

अपने जन्म-दिनपर तो तुम हजारो आशीर्वाद मिले, मान सकते हो। मैंने तो तुमसे बडी आशाएँ रखी है। वे फलीभूत भी हुई है और आगे भी होगी। सच्ची परीक्षा तो मेरे न रहनेपर ही होगी न? मै ऐसा मानकर बैठा हूँ कि तुम उस परीक्षामे उत्तीण होओगे।

मुझे ३० तारीखको अहमदाबाद पहुँचना है। वहासे उसी दिन नडियाद चल देना पडेगा। उसके पहले बुजुर्गोके दर्शन कर लेने की इच्छा प्रबल होती जा रही है। इसलिए जहाँतक बनेगा, वहाँ झाँक लेने की कोशिश करूगा। बुजुर्गोका आशीर्वाद लेकर चला जाऊँगा। कोई धूम-धाम मत करना, किसीको खबर मत देना। मुझसे कोई दूसरा काम न लिया जाये। बहुत हुआ तो एक रात रहूँगा। सम्भव है, समय ही न रहे और सुबह पहुँचू, रातको चला जाऊँ। मेरे लेखे यह तीथयात्राके सिवाय और कुछ नही है। तुम भी मेरा कोई और उपयोग करने का विचार छोड देना। नानालाल, जोशी वगैरह तो जान ही लेगे। यो तो शुक्ल साहबको भी सूचित करना पडेगा। किन्तु सब यही समझे कि मेरा राजकोटका आना-न आना बराबर है। सम्भव है, तब खान साहब भी मेरे साथ रहे। उस समय उनका उपयोग किया जा सकता है। किन्तु पहलेसे इसकी डोडी नही पीटनी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५०५ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

३८८ पत्र : कान्तिलाल गाधीको

२३ सितम्बर, १९३६

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। अमतुस्सलामके बारेमे तुझे दु खी नही करना चाहता। तू वहाँ जाकर मिल आया, इससे मुझे सन्तोष है।

मच्छरदानी काममे लाता है, यह ठीक ही किया। किन्तु चाहे जितनी सुविधाएँ लेनेपर भी ज्वर नही आयेगा, ऐसा मानकर मत चलना। पढने-लिखने मे मर्यादाका पालन करना। दिन-भर अभ्यास किया हो, तो फिर रातमे आँखोको कष्ट क्यो देना चाहिए?

सरस्वतीके बारेमे लिखना भूल गया था। इस विषयमे रामचन्द्रनसे पूछूँगा और फिर खबर दूगा।

देवदासको तो लिखता ही रहता होगा। बा को भी छोटी-मोटी चिट्ठी लिखने से वह प्रसन्न रहेगी। मैंने तुझे लिखा या नही कि बा और मनु देवदासके पास गई है? अमृतलाल और प्यारेलाल आनेवालो मे नये है। लीलावती अभी मगनवाडीमे ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३०६)से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

३८९ पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२३ सितम्बर, १९३६

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत देका के बारेमे मुझको महादेवने दिया। देका का खत मैंने पढ लिया। दैवयोगमे शकरलाल भी यहा है। उनसे भी बाते कर ली। देका पर जो खत मैंने लिखा है[1] उसकी नकल इसके साथ है। उससे पता चलेगा कि तुम्हारे देका के बारेमे चिंता करने की कोई कारण नही है। कुछ दिनोके पहले मैंने तुमको खत लिखा था, वह मिला होगा। माताजी का स्वास्थ्य खराब होने का पढकर दु ख हुआ। अब अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४४)से।

१ उपलब्ध नहीं है।

३९० पत्र : सुन्दरलालको

२३ सितम्बर, १९३६

प्रिय सुन्दरलाल,

तुमने अच्छा किया जो मुझे यह पत्र लिखा।[१] मैने मौलाना अब्दुल हक का वक्तव्य नही देखा है, उसका केवल कुछ अश देखा था। उस वक्तव्यकी एक प्रतिलिपि मुझे भेज दो।

इस सम्बन्धमे मैने जो-कुछ किया है वह केवल शुद्ध भावनासे। मेरी स्थिति हू-ब-हू वही है जो १९२० मे थी। मेरा प्रयास यह रहा है कि नामके बारेमे सहमति हो जाये। इसी कारण मैने काग्रेससे 'हिन्दुस्तानी' शब्दको पास करवाया। हिन्दी साहित्य सम्मेलनमे मै ऐसा नही कर सका, इस कारण इन्दौरमे 'हिन्दी' शब्दके तात्पर्यका स्पष्टीकरण करवाया। अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलनमे[२] मै इससे एक कदम और आगे बढा। मेरा उद्देश्य वही था, यानी हिन्दुओ तथा मुसलमानो द्वारा प्रयुक्त भाषाके दो स्वरूपोको एक नाम देना और उन्हे वास्तवमे एक भाषा बना देना।

तुमने स्वय लिखा है कि 'उर्दू' नाम देने के विशेष कारण थे। इस विषयमे कोई भी मशा थोपने का मेरा कोई इरादा नही था।

मैने व्याकरणके सम्बन्धमे जो कहा, उसे भी तुम स्वीकार करते हो। यदि हिन्दी लेखक दूसरे प्रकारकी भूले करते है तो उससे मेरे कथनका न तो खण्डन होता है न वह गलत सिद्ध होता है।

इस समय जो गलतफहमियाँ है वे निश्चय ही दूर हो जायेगी। क्योकि वे बिलकुल निराधार है। उर्दूको छोड देने की मेरी कतई कोई इच्छा नही है। मै उसका पर्याप्त मान करता हूँ और उसको काफी महत्त्व देता हूँ। प्रतिदिन उर्दूकी कोई-न-कोई चीज पढता हूँ। अनेक मुसलमान भाई-बहनोको उर्दूमे खत लिखता हूँ। मुझमे पर्याप्त धैर्य है।

१ सुन्दरलालने अपने पत्रमें इस बातपर खेद प्रकट किया था कि हिन्दी-उर्दू विवाद जैसे मुख्यत साहित्यिक मामलेको साम्प्रदायिक प्रश्न बनाया जा रहा था। दोनोंके व्याकरण और मुहावरोकी तुलना द्वारा सुन्दरलालने यह दिखाया था कि दोनों भाषाएँ मूलत एक ही हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि उर्दू और हिन्दीके लेखक एक आम भाषा हिन्दुस्तानीके निर्माण और विकासमें बाधक हो रहे है और उसके व्याकरणमें उलझनें डाल रहे थे। उन्होंने यह भी दर्शाया था कि 'हिन्दी' या 'उर्दू' दो में से कोई भी शब्द इस आम भाषाका ठीक बोध नही कराता।

२ नागपुरमें २४ और २५ अप्रैल, १९३६ को, देखिए खण्ड ६२, पृ० ३७०-७३।

मेरे विचारमे, मैने तुम्हारी सब बातोका स्पष्टीकरण कर दिया है। यदि कुछ और शकाएँ बचे तो फिर देख लेगे। इतना लिखने को भी मुश्किलसे कुछ क्षण निकाल पाया हूँ।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च]

एक बात और। तुमने जो वाक्य उद्धृत किये है उनकी भाषा मेरी नही है। तुमने उन्हे कहाँसे लिया?[1]

[अग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ९-१०-१९३६

३९१ प्रस्तावना 'गीतापदार्थकोष' की[2]

सेगाँव, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३६

काकासाहबने अपने "दो शब्द" मे बताया है कि यह कोष बारह वष पहले तैयार हो गया था[3] और जैसा होना चाहिए वैसा न होने के बावजूद अब क्यो प्रकाशित हो रहा है।

जिन्हे मेरे नामसे प्रकाशित ['गीता' के] अनुवादमे[4] कुछ भी रस है, उनके लिए यह कोष सहज ही आवश्यक हो जाता है। सम्भव है, दूसरे गीताभ्यासियोके लिए भी यह कोष उपयोगी हो। उनको मेरा यह सुझाव है कि यदि 'पदाथकोष' मे दिया हुआ अथ उन्हे न रुचे और दूसरा अर्थ अधिक प्रिय मालूम हो, तो उसे वे उसीमे नोट कर ले। ऐसा करने से उनकी अपनी मनोभिरुचिका कोष बहुत थोडे परिश्रमसे तैयार हो जायेगा। और ऐसे गीताभ्यासी अगर अपना पसन्द किया हुआ अथ मुझे लिख भेजेगे तो मै उनका आभार मानूगा।

ज्यो-ज्यो मै 'गीता' का अभ्यास करता हूँ, त्यो-त्यो मुझे उसकी अनुपमता अधिकाधिक मालूम होती जाती है। मेरे लिए 'गीता' आध्यात्मिक कोष है। मै जब कार्याकायकी दुविधामे पड जाता हूँ, तब मै इसीका आश्रय लेता हूँ, और अबतक इसने मुझे कभी निराश नही किया। यह सच्ची कामधेनु है। पहले नित्य एक श्लोक, फिर

१ मूल पत्र हिन्दीमें था, जो उपलब्ध नही है।

२ यह प्रस्तावना पुस्तकमें 'वाचनारने विनती' (पाठकों से निवेदन) से तथा २५ १० १९३६ के **हरिजनबन्धु**में "गीतारूपी कामधेनु" शीषकसे भी प्रकाशित हुई थी।

३ गाधीजी ने **गीतापदार्थकोष** १९२२ २४ के दरम्यान यरवडा जेलमें तैयार किया था। देखिए खण्ड २५, पृ० १६५।

४ **अनासक्तियोग**, देखिए खण्ड ४१ पृ०, ९२-१६७।

दो, फिर पाँच, फिर नित्य एक अध्याय, फिर चौदह दिनमे पारायण, और इधर अन्तमे कुछ वर्षोसे सात दिनका पारायण हममे से कुछ लोग करते आ रहे है, और खास-खास दिन खास-खास अध्यायका पाठ प्रात काल साढे ४ बजेके लगभग सुनते है। कुछ लोगोने, जो बहुत थोडे है, १८ अध्याय कठ कर लिये है। वारके अनुसार सबेरेकी दैनिक प्रार्थनामे यह क्रम चलता है

शुक्रवार १, २
शनिवार ३, ४, ५
रविवार ६, ७, ८
सोमवार ९, १०, ११, १२
मगलवार १३, १४, १५
बुधवार १६, १७
गुरुवार १८

इस प्रकारके विभागके विषयमे इतना ही कहना पर्याप्त है कि इसके पीछे एक विचारश्रेणी रही है। इस रीतिसे मनन करना अनुकल पडता है, ऐसा अनुभव है।

शुक्रवारसे पारायण क्यो शुरू हुआ, यह प्रश्न हो सकता है। कारण इसका इतना ही है खासे समयतक हमारा चौदह दिनका पारायण चलता रहा। यरवडा जेलमे सात दिनके पारायणका विचार मेरे मनमे आया और शुक्रवारको वह विचार कार्यरूपमे परिणत हुआ, इस प्रकार तबसे पारायण-सप्ताह शुक्रवारको शुरू होता है।

पारायणकी बातको यहाँ स्थान देनेमे दो हेतु है। एक हेतु तो यह बताने का है कि 'गीता'-भक्ति आजकल हममे से कुछ लोगोको कहाँतक ले गई है, और दूसरा हेतु है, पाठ करनेवालो को अभ्यासके लिए प्रोत्साहित करने का मार्ग बताना।

पर 'गीता'का गान करके ही हम निहाल नही हो सकते। 'गीता' धम का दशन करानेवाला कोष है, आत्माकी गुत्थियोको सुलझानेवाली एक प्रचड शक्ति है, दुखियोका आधार है, मूर्च्छासे जगानेवाली है—ऐसा जो मानता है, उसे ही 'गीता'-गान मदद दे सकता है। बिना अर्थ समझे हुए 'गीता'-गान स्वतन्त्र रीतिसे मनुष्यका कल्याण करता है, ऐसा कहने का मेरा यहाँ बिलकुल आशय नही। उचित प्रयत्नसे पाले हुए तोतेको 'गीता' अवश्य कठ कराई जा सकती है, पर इससे तोतेको या उसके शिक्षकको रत्ती-भर भी पुण्य प्राप्त होनेवाला नही है।

'गीता' जीवित, जीवन देनेवाली, अमर माता है। दूध पिला-पिलाकर पालने-वाली माता किसी दिन दगा देकर चली जायेगी। असख्य माताएँ अपनी सन्तानको खतरोसे बचाने मे असमर्थ पाई जाती है, ऐसा हमारे देखने मे आता है। किन्तु गीता-माताकी शरण लेनेवाला भयकर खतरेमेसे बच जाता है। यह नित्य जागृत रहती है। कभी दगा नही देती। पर जैसे बगैर माँगे माँ भी नही परोसती, उसी तरह गीता-माता भी बिना माँगे कुछ नही देती। वह किसीको गोदमे लेने से पहले उसकी कडी परीक्षा लेती है, पूर्ण भक्तिकी अपेक्षा रखती है। कोरी भक्ति भी काम आनेकी

नही। वह तो अनन्य भक्ति चाहती है। इसलिए जो उसे सर्वार्पण करने के लिए तैयार नही, उसे शरण देने से वह साफ इनकार कर देती है।

भौतिक विज्ञानके अभ्यासीको जब वह उसके पीछे पागल हो जाता है तब कही उसका कुछ दर्शन मिलता है। एम० ए०, बी० ए० होने की इच्छा रखनेवाले दिन-रात पढते ही रहते है, इसके पीछे पैसा भी खर्च करते है, शरीर भी क्षीण करते है। इस तरह प्रयत्न करनेवालोमे से सभी विद्यार्थी पहली बारमे पास नही होते। उत्तीर्ण न होनेवाले, निराश न होते हुए, बार-बार प्रयत्न करते है और उत्तीर्ण होनेपर ही शान्त होते है। और अन्तमे --?

गीतामृतका पान करने के लिए तो इन प्रयत्नोकी अपेक्षा बहुत अधिक प्रयत्नकी आवश्यकता होनी चाहिए, और है ही। पर इस अमृत-पानकी गरज कितनोको है? अगर गरज है तो तन-तोड प्रयत्न करने के लिए कितने तैयार होते है? हम यह जानते है कि मेरी बताई हुई दृष्टिसे 'गीता' की भक्ति करनेवालो की सख्या नही के बराबर है। तो भी यह सभी स्वीकार करते है कि 'गीता' समस्त उप-निषदोका दोहन है। कोई हिन्दू बगैर उसके ज्ञानके नही होना चाहिए। पर आज तो धम-मात्रकी कीमत घट गई है। इसके कारणोमे उतरने का यह प्रसग नही। इस निवेदनमे मैने तो, 'गीता-पदाथ' प्रकाशित हो रहा है, इस निमित्तसे जिज्ञासुओका ध्यान 'गीता'-रूपी रत्नकी ओर खीचने का और यह बतलाने का प्रयत्न किया है कि उसका सदुपयोग किस तरहसे हो सकता है। यह प्रयत्न सफल हो!

मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]
गीतापदार्थकोष, पृ० तीन से छह

३९२. पत्र : अमृतकौरको

२४ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

दाहिने हाथको कुछ आराम देने के लिए यह पत्र बाये हाथसे लिख रहा हूँ।

लगता है, तुम सामर्थ्यसे अधिक काम कर रही हो। तुम्हे इससे बचने का कोई मार्ग ढूँढ निकालना चाहिए।

अखबारकी कतरन तो हास्यास्पद है। वे लोग तो झूठके बिना जी ही नही सकते। देखते-देखते वे तुम्हे हवामें विलीन कर देगे! तब तुम सब जगह बिना किसी सगी-साथीके उडती फिरोगी और यदि उडती-उडती सेगाँव आ पहुँची तो मुझे तुम्हारे लिए एक कोना देने की भी आवश्यकता नही रहेगी। परन्तु एक कठिनाई होगी, तुम तो मात्र बयार-जैसी सूक्ष्म होगी, तब तुम्हे पहचानूंगा कैसे? खैर, जबतक

तुम्हे अशरीरी अस्तित्व मिलेगा, मेरी भी छठी सज्ञा विकसित हो चुकी होगी, जिससे तबकत मै वायवी प्राणियो — या अप्राणियो — को पहचान लूँगा।

क्या तुम्हे ऐसा नही लगता कि मुझे बकवास लिखने के अतिरिक्त और कोई काम ही नही है? मै तो तुमसे गपशप करना चाहता था। मै हमेशा तुम्हारे एक्जीमा पर उपदेश नही देना चाहता, और उस बेचारी कतरनने मुझे इस पत्रके लिए विषय-वस्तु प्रदान कर दी।

सेब फिर आ पहुचे हैं। क्या ये भी तुम्हारे ही बागके है?

सप्रेम,

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९३) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०२ से भी

३९३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

२४ सितम्बर, १९३६

चि० अम्बुजम,[1]

तुम्हारे भेजे फल नियमसे आ रहे है और उनका सही उपयोग हो रहा है।

मै शनिवारको सेगाँव वापस आया। मै अच्छा हूँ पर कमजोरी अभी भी बनी हुई है। मेरा बस चले तो यहाँसे कही बाहर जाना पसन्द ही न करूँ।

तो, श्रीमती रगसामीने तुम्हे हिन्दी-कार्यके लिए २,००० रु० दिये है।

किची अच्छा होगा और उसके माता-पिता भी। और तुम?

तुम्हारा 'रामायण' का पाठ जारी है, यह जानकर खुशी हुई।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ सम्बोधन हिन्दीमें है।

३९४. पत्र : अल्बर्ट हेनरी वेस्टको

२४ सितम्बर, १९३६

फीनिक्सका प्रयोग तो मेरे लिए एक जीवन-व्यापी कार्य था। इसलिए यदि तुम कभी भारत आ सको तो देखोगे कि मैं फीनिक्ससे भी सादे ढगसे रहता हूँ। मेरे सामने उस समय जो आदर्श था, वह बराबर कायम रहा है, यही नही, अब उसका अर्थ और भी विस्तृत हो गया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

३९५. पत्र : बलवन्तसिंहको

२४ सितम्बर, १९३६

चि० बलवन्तसिंह,

तुम्हारा खत मिला है। क्या जानू यह कब मिलेगा? यहा तो सब ठीक चल रहा है। रोज छाछ होती है और मक्खन निकलता है। २॥ सेरमे से आज १४ तोला निकला, उसका घी १० तोला। प्यारेलाल इस बारेमे उस्ताद बन गया है। मुन्नालाल दुध की देखभाल कर रहा है।

आज तो बहुत पानी आया।

किशोरलाल का खत इसके साथ है। अब तो ठीक है, दुर्बलता काफी है।

महाराजसे[1] कहो उनका खत मिली गया था।

हा, सफाईका काम भी अच्छी तरह सिखा दो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८७) से।

१ संत तुकडोजी महाराज, बलवन्तसिंह मोजहारीमें इनके आश्रममें पिंजाई, कताई आदि सिखाने गये थे।

३९६ पत्र एम० एस० केलकरको

२५ सितम्बर, १९३६

भाई आइस,[1]

तुम्हे क्या कहूँ ? मैं तो बहुत चाहूँगा कि तुम मेरे पास रहो, परन्तु ज्योतिषमे तुम्हारे गहरे विश्वासके बावजूद मुझे तुम्हारी उपचार-पद्धति पर कोई आस्था नही है। तुम्हारी यह धारणा भी कि मुझे तुम्हारे उपचारसे लाभ हुआ था, सही नही है। तुम्हारी सारी कोशिशोके बावजूद मुझे अन्तत ऑपरेशन कराना ही पडा।[2] तुमने साबरमतीमे कितने ही रोगियोका इलाज किया, परन्तु छोटी मनुको छोडकर, जिसने कच्चे अडे खाये, किसीको भी स्थायी लाभ नही हुआ। इतने वर्षोसे तुमने जमकर कोई पक्का काम करने का प्रयास किया तो है, परन्तु अभीतक लुढकते पत्थरके समान अस्थिर ही हो। मुझे तो भय है कि तुम आत्म-वचनासे ग्रस्त हो। अब भी अपनी मर्यादाको पहचान लो। मै जानता हूँ तुममे गुण और शक्ति है। इनको बेकार जाते देखकर मुझे दुख होता है।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य महादेव देसाई

३९७. पत्र : बाल द० कालेलकरको

सेगाँव, वर्धा

२५ सितम्बर, १९३६

चि० बाल,

तुझे फिर प्रमाणपत्रोकी धुन कैसे लग गई ? किन्तु माँगता है तो ले, भेजता हूँ।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१७८) से।

१ बर्फ, इन्हें यह सम्बोधन इसलिए दिया गया कि ये बर्फ (आइस) द्वारा रोगोंका उपचार करते थे।
२ २० जनवरी, १९१९ को, देखिए खण्ड १५, पृ० ७६।
३ देखिए अगला शीर्षक।

३९८ प्रमाणपत्र : बाल द० कालेलकरको

२५ सितम्बर, १९३६

मै काकासाहब कालेलकरके छोटे पुत्र, चि० बालको अच्छी तरह जानता हूँ। साबरमती आश्रममे एक प्रकारसे इसका लालन-पालन मेरी देख-रेखमे ही हुआ है। यह तीव्रबुद्धि, मिलनसार और खुशमिजाज है। इसे खूब पढ-लिखकर सेवा करने की अभिलाषा है। चि० बालने २१ दिनके[1] दूसरे उपवासके दरम्यान और अन्य अवसरो पर मेरी बहुत अच्छी सेवा की है। यह हमेशा मेरे आशीर्वादोका अधिकारी रहेगा।

मोहनदास गाधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१७७) से।

३९९ पत्र · अमतुस्सलामको

२५ सितम्बर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तू मूर्ख तो है ही, पगली भी है। तेरे खतमे पागलपन भरा है। तेरे मन कोई अच्छा आदमी है ही नही। तेरा डॉ० गिल्डरवाला खत मिला है। तेरा एक भी उर्दू खत उन्होने खोला नही है, पढा भी नही है। पिछले खतमे कुछ खानगी नही था, इसलिए वह मैने महादेवको पढ सुनाया। माँ-बापको अपने मूख बच्चोकी मूर्खता दिखाने मे शर्म काहे की? माँ-बापको इतनी भी छूट नही?

डॉ० गिल्डरवाले खतका जवाब मैने तुरन्त दिया था। उसमे लिखा था कि डॉ० गिल्डरको दिखाने की जरूरत पडी ही, तो वह हो जायेगा। एक खत बारीके पते पर थियोसॉफिकल लॉज भेजा था। वह मिला? तेरे एक भी खतका जवाब न लिखा हो, ऐसा नही हुआ। लेकिन तुझे खत न मिले तो मै क्या करूँ? अगर तू कहे तो सर्टिफिकेट ऑफ पोस्टिंग लू। बेकार अपने-आप क्यो दु खी हुआ करती है?

जोहरा और शौकतकी शादी आज दिल्लीमे है। बिलकुल खानगी रहेगी।

मुझे बराबर खत लिखती रहना। उर्दूमे ही लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९) से।

1. ८ से २९ मई, १९३३ तक, देखिए खण्ड ५५।

४०० पत्र तारावहन एन० मशरूवालाको

२५ सितम्बर, १९३६

चि० तारा,

तुझे क्या कहूँ? तुझे उपालम्भ देना मुझे पसन्द नही है। फिर भी तू अगर वचनका पालन नही करती तो यह असह्य जान पडता है। तू तो मुझे हर अठवाडे अपना हिसाब भेजनेवाली थी न? वह कहा है? जो पत्र लिखा उसमे भी हिसाब नही है। इतनी ढीली क्यो रहती है? सावधान कब बनेगी?

डॉक्टर अमनको लिखती है या नही? पढने के विचारसे भी तुझे यह सम्बन्ध बनाकर रखना था। अगर तोड दिया हो तो मेरी सलाह है कि इसे फिरसे जोड ले। मैने तो अभी हार नही मानी है। मेरे पाससे तू रोज नई बाते पूछती रह सकती है, किन्तु लगता है कि तुझे शरीर सुधारने की चिन्ता नही। उस तरफ दिलचस्पी कौन पैदा करायेगा? ईश्वरकी दी हुई सम्पत्तिको सुरक्षित रखना धर्म है। उसे अक्षुण्ण रखकर उसका उपयोग करना चाहिए। किन्तु जान पडता है कि तूने तो अपने सारे दरवाजे बन्द कर डाले है। यह ठीक नही है। तुझमे शक्ति है, सेवाभाव है, खरापन है, पवित्रता है, किन्तु एक प्रकारकी हठ कहो, जडता कहो या कुछ भी कहो——कोई त्रुटि है, जो तेरी शक्तिको खिलने नही देती। इस त्रुटिको ढूँढकर यदि तू दूर करने का प्रयत्न करे तो अच्छा हो। तू अपने मनमे जो ताला लगाये बैठी है, उसे खोल।

सूत मिला। जिन्होने कातने मे भाग लिया, उन्हे बधाई। माता-पिता मजेमे होगे। अमनकी किताब या दवाइयोकी पेटीका कोई उपयोग करती है या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२८) से। सी० डब्ल्यू० ५००४ से भी, सौजन्य कनुभाई एन० मशरूवाला

४०१ पत्र लीलावती आसरको

२५ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

तू सेगाँव आनेके लिए उतावली हो उठी है, यह ठीक नही है। अभी तो तू अपने अक्षरोपर भी काबू नही पा सकी है। तू अपने मनसे पूछ कि क्या मुन्ना-लालके साथ, बलवन्तसिंहके साथ, मीराबहनके साथ, शान्तिसे रह सकेगी? इन दिनो तो यहाँ पूर्ण शान्ति है। किसीके झगडेकी परेशानी नही है, इसलिए शान्ति भग होनेके भयसे मै काँप उठता हूँ। तू खुद शान्त होकर विचार करना और बताना। इस बीच तू वहाँ काम तो कर ही रही है। तेरा मन भी शान्त है। महादेवको तेरी बडी मदद है। उसे इस मददकी आवश्यकता भी है, इसलिए ऐसा लगता है कि तू ठीक जगहपर है। इसका यह अथ मत लगा लेना कि मै तुझे सेगाँवमे रखना ही नही चाहता। मै तुझे बुलाना चाहता हूँ, किन्तु शान्ति-भगकी जोखिम उठाकर नही। मै यहाँ बैठकर तेरे मागदशनका प्रयत्न तो करता ही हूँ। इससे अधिककी आशा तू क्यो रखती है? तुझे धैर्यपूवक इस बातका विचार कर लेना चाहिए कि तू यहाँ शान्तिसे रह सकेगी या नही। यह निश्चय करनेमे भी तू महादेवका समय मत लेना। तू अपने मनमे ही इसे सोचना-विचारना और जो सूझे सो मुझे लिखना।

तेरा पाँव ठीक हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४८) से। सी० डब्ल्यू० ६६२३ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४०२ पत्र : गोपीनाथको

२५ सितम्बर, १९३६

भाई गोपीनाथजी,[१]

[२] अब मुझे बताइये मलेरियामे आयुर्वेदीय ओषध कोई इतना ही असरकारक है जैसा क्वीनीन ? ऐसा कौन-सा औषध है जो अग्रेजी दवाओसे निश्चयपूवक बहुत ज्यादा असरकारक है ? देहातोमे मेरी तीव्र इच्छा दूसरी ही होते हुए मुझे क्वीनीन, सोडा, परमेगनेट, आयोडीन [३]का सहारा लेना पडता है।

बापुके आशीर्वाद

गुजराती, ३-१-१९३७

४०३ पत्र कृष्णचन्द्रको

२५ सितम्बर, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

पिताजी के देहात से दु ख होना स्वाभाविक है। हिदु [सती पत्नी][४] के बारे मे तुमने लिखा ऐसा ही है। तुमारे तो माताजी को आश्वासन देना ही।

ब्रह्मचर्य पालन का प्रयत्न छोडने की बात तो है ही नही। कल्याणकृत की दुर्गति तो है ही नही ऐसी 'गीता' माताकी प्रतिज्ञा है।[५] शनिश्चर के उपवास से लाभ प्रतीत हो तो अवश्य करो।

सबकुछ देखभाल कर ही किया जाये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८९) से।

१ आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिका प्रचार करनेवाली हिन्दी पत्रिका **आरोग्य दर्पण**के सम्पादक। यह पत्र **गुजराती आरोग्यने दर्पण**के नवम्बर १९३६ के अंकसे उद्धृत किया था।

२ और ३ साधन सूत्रमें छूटा हुआ है।

४ अस्पष्ट है।

५ **भगवद्गीता**, ६ ४०।

४०४. पत्र · श्रीमन्नारायण अग्रवालको

२५ सितम्बर, १९३६

भाई श्रीमन,

'नये युग का राग' मै पढ गया हू। कविताए मुझको अच्छी लगी है। हेतु स्पष्ट और निमल है। काव्य की दृष्टिसे मै कुछ भी अभिप्राय देने योग्य अपने को नही मानता हू। तुम्हारी कृति को प्रगट करने के बारे मे तो कवि लोग ही अभिप्राय दे सकते है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

इतना लिखने मे मैने कितना समय लिया? क्योकि मै जानता ही नही था, क्या लिखू।

पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९९

४०५ जीवन-धर्म

कैनन शेपर्डके युद्ध-विरोधी आन्दोलनकी 'स्टेट्समैन'ने जो टीका की थी, उसके जवाबमे[1] मैने कुछ दलीले पेश की थी। 'स्टेट्समैन'मे उनके प्रत्युत्तरमे अब एक सुविचारित लेख प्रकाशित हुआ है। इस लेखमे मेरे पक्षका खण्डन करने का बडी चतुराईसे यत्न किया गया है।

लेखक कहता है कि 'भगवद्गीता' उसके पक्षका समर्थन तो करती है, लेकिन आतकवादियोके पक्षका नही। किन्तु सजन द्वारा अपने मरीजपर किये जानेवाले बलप्रयोगकी तरह जो बलप्रयोग उससे प्रभावित व्यक्तिके फायदेके लिए नही है, ऐसे बलप्रयोगकी वैधता एक बार स्वीकार कर लेनेपर ऐसी कोई विभाजक रेखा नही खीची जा सकती कि अमुक बलप्रयोग सही है और अमुक गलत। इसी 'महाभारत' मे, जिसका कि 'गीता' एक छोटा-सा अध्याय-मात्र है, एक जगह रातमे किये गये कुछ निर्दोष लोगोके वधका इतना दारुण और विस्तृत वर्णन है कि अगर हमे इस सभ्य युगके युद्धोका अनुभव न होता, तो उसे वास्तविक दृष्टिसे अविश्वसनीय ही समझा जाता। यह तथ्य भयानक भले ही हो किन्तु सत्य है

१ देखिए "अहिंसा परमो धर्म", ५-९-१९३६।

कि आतकवादियोने बिलकुल ईमानदारी ओर सच्चे दिलसे तथा अत्यन्त तकसगत ढगसे अपने सिद्धान्त और नीतिके समर्थनमे 'गीता' का उपयोग किया है। उनमे से कुछएक को तो वह कठस्थ भी है। बात केवल इतनी-सी है कि 'गीता'का मै जो अर्थ लगाता हूँ उसका उनके पास सिवा इसके और कोई जवाब नही कि मेरा अर्थ गलत है और उन्हीका अर्थ सही है। पर इसका उत्तर तो समय ही देगा कि किसका अथ ठीक है। 'गीता' कोई निरी सैद्धान्तिक पुस्तक नही है। वह तो एक ऐसी जीती-जागती, किन्तु मूक मार्गदर्शिका है, जिसके निर्देशोको वही समझ सकता है जो धैर्यपूर्वक प्रयत्न करता रहे।

'स्टेट्समैन' का लेखक इसके बाद कैनन शेपडकी तुलना अर्जुनके साथ करता है। निस्सन्देह, यह उपमा गलत है और जल्दबाजीमे दी गई है। अर्जुन पाण्डवोकी सेनाका अधिपति था। अपने सामनेके उस भयकर दृश्यपर विचार करते ही वह किंकर्तव्यविमूढ हो गया। वह खूब अच्छी तरह जानता था कि सेनाधिपतिकी हैसियतसे उसका क्या धम था। वह जानता था कि उसे अपने ही चचेरे भाइयोसे युद्ध करना था। वास्तवमे, उसकी मूर्च्छाका कारण तो उसकी क्षणिक दुर्बलता ही थी। अगर वह अपने कर्त्तव्यसे मुँह मोडता तो समरभूमिमे एक विचित्र गडबडी और अव्यवस्था पैदा हो जाती, और साथ ही, उसकी अपनी और उसके असख्य मित्रो तथा अनुगामियोकी भी बदनामी होती। उसे तो भयकर नर-हत्यामे अपने साथियो-सहित भाग लेना ही था, इसके लिए उसने अपनेको और अपने साथियोको भी प्रशिक्षित कर रखा था। ऐसी जगह पर यह कल्पना करना बिलकुल बेकार है कि अगर कही सचमुच एकाएक उसके हृदयमे यह प्रकाश उदित हो जाता कि उसे मन, वचन और कर्मसे अहिसाका पालन करना चाहिए तो क्या होता।

पर हम आशा करे कि इस अनमोल चीजने डिक शेपड और उनके साथियोके हृदयमे स्थान पा लिया है। जो हो, जहाँतक मुझे पता है, उनकी बात अर्जुनसे बिलकुल भिन्न है। वे किसी ऐसी सेनाके नायक तो है नही जो युद्धके लिए मैदानमे व्यूहबद्ध खडी हो। उनके लिए स्वजन-परिजनका कोई भेदभाव नही है। उनके लिए तो सब मनुष्य — चाहे वे किसी वर्ण या देशके हो अथवा अपनेको कुछ भी कहते हो — बराबर है। शुद्ध अन्त करणसे 'गीता' का — जो उनके लिए सबसे बडी जीवन-पुस्तक है — सम्यक् अध्ययन करके अन्तमे वे इस नतीजेपर पहुँचे कि अपने निजी और स्वदेशके स्वार्थके लिए भी वे किसी मानवबधुको चोट नही पहुँचा सकते, और इसलिए वे युद्धमे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूपसे भाग नहीले सकते। अब स्वभावत अगला कदम उहोने यह उठाया है कि वे अपने पडोसियोके बीच शान्ति या मनुष्यमात्रके प्रति प्रेम और सद्भावका प्रचार कर रहे है। अर्जुनने कभी भी ऐसी स्थिति नही अपनाई थी।

लेकिन 'स्टेट्समैन' के लेखकका धनुष तो अनेक प्रत्यचाओसे युक्त है। उसकी सबसे जोरदार दलील तो यह है कि वह अहिंसा अथवा प्रेम-धर्मको मानव-धर्म स्वीकार

ही नही करता। और अगर अहिसा या प्रेम-धर्म सचमुच हमारा जीवन-धर्म नही है तब तो मेरी सारी दलीले निस्सार है। फिर तो एक से बढकर एक युद्ध होते ही रहेगे। और मै यह सिद्ध नही कर सकता — और अपने दैनिक कार्यक्रममे से कुछ समय निकाल-कर किसी अखबारमे लेख लिखकर तो हरगिज नही — कि अहिसा ही हमारे जीवनका आदि स्रोत और अन्तिम उद्देश्य है। पर मै कुछ ऐसे सुझाव जरूर देने की हिम्मत करता हूँ जो इस परम धर्मको समझने मे सुगमता पैदा कर सकते है। सबसे पहली बात तो यह है कि आजतक जितने भी महापुरुष हुए है उन सबने न्यूनाधिक जोरके साथ इसका उपदेश दिया है। अगर अहिसा या प्रेम हमारा जीवन-धम न होता, तो इस मृत्यु-लोकमे हमारा जीवन कठिन हो जाता। जीवन तो मृत्यु पर प्रत्यक्ष और सनातन विजय-रूप है। अगर मनुष्य और पशुके बीच कोई मौलिक और सबमे महान अन्तर है तो वह यही है कि मनुष्य दिनोदिन इस धर्मका अधिकाधिक साक्षात्कार कर सकता है, और अपने व्यक्तिगत जीवनमे उसपर अमल भी कर सकता है। ससारके प्राचीन और अर्वाचीन समस्त स त पुरुष अपनी-अपनी शक्ति और योग्यताके अनुसार इस परम जीवन-धमके ज्वलन्त उदाहरण रहे है। निस्सन्देह यह सच है कि हमारे अन्दर छिपा हुआ पशु कई बार सहज विजय प्राप्त कर लेता है। पर इससे यह सिद्ध नही होता कि यह धम मिथ्या है। इससे तो केवल यह सिद्ध होता है कि यह आचरणमे कठिन है। और यह क्यो न हो? जो उच्चतामे सत्यके समकक्ष है वह कठिन नही होगा तो क्या होगा? जिस दिन उसका आचरण हमारे लिए सहज, सरल और सावभौम हो जायेगा, उस दिन स्वर्ग-लोक इस भूमिपर ही अवतीर्ण हो जायेगा। यो तो मै जानता हूँ कि स्वर्ग और पृथ्वी सब हमारे ही अन्दर है। हम पृथ्वीसे तो परिचित है। पर अपने अन्दरके स्वगसे हम बिलकुल अपरिचित है। अगर हम यह मान लेते है कि कमसे-कम कुछ लोगोके लिए प्रेमका आचरण व्यावहारिक है, तो यह कहना धृष्टता होगी कि दूसरे लोग इसपर अमल कर सके, इसकी सम्भावना भी नही है। हम जानते है कि हमारे पूर्वज, जो बहुत अधिक पहलेके नही कहे जा सकते, मनुष्यका मास खाते थे। उनमे और भी कई ऐसी बुराइयाँ थी जिन्हे हम आज घृणाकी दृष्टिसे देखते है। नि सन्देह उन दिनो भी डिक शेपर्ड-सरीखे लोग रहे ही होगे, और लोगोने उनका मखौल भी उडाया होगा, बल्कि उन्हे काठमे भी डाल दिया होगा, क्योकि लोगोमे वे ऐसी बेहूदा बातोका प्रचार करते होगे कि मनुष्यको मनुष्यका मास नही खाना चाहिए। आधुनिक विज्ञानका युग तो ऐसी घटनाओके उदाहरणोसे भरा पडा है कि जो बात कल असम्भव मालूम हो रही थी, वही आज सम्भव हो गई। पर अध्यात्म-विज्ञानकी सफलताओके मुकाबलेमे भौतिक विज्ञानकी सफलताएँ बिलकुल नगण्य-सी है। और अध्यात्म-विज्ञान का सारा मर्म एक ही शब्द 'प्रेम' मे छिपा हुआ है, और यह प्रेम ही हमारे जीवनका धर्म है। मै जानता हूँ कि यह कोई ऐसी चीज नही है जिसे दलीलोसे सिद्ध किया जा सके। यह तो उन लोगोके प्रत्यक्ष जीवनसे सिद्ध हो सकती है, जो परिणामोकी ओरसे निरपेक्ष बनकर इस धर्मका अपने जीवनमे

पालन करते है। बगैर कुर्बानीके ससारमे कोई सच्चा लाभ हासिल नही हो सकता। और चूकि इस धर्मको प्रत्यक्ष कर दिखाना खुद ही सच्चेसे-सच्चा लाभ है, इसलिए उसके लिए कुर्बानी भी सबसे बडे दर्जेकी दरकार होगी।

मेरी दलीलोके उत्तरमे 'स्टेट्समैन'के लेखकने जो दूसरी दलीले पेश की है उनका जवाब देनेकी कोई आवश्यकता नही, क्योकि अगर इस नियमकी सचाईको वे मानते है, तो उनकी सारी दलीले निस्सार है। और अगर वे इस नियमको नही मानते या उसकी सचाईमे उन्हे सन्देह हो, तो उनकी दलीले सही है।

पर चलते-चलते एक बात और साफ कर दू। व्यक्तिगत या राष्ट्रीय लाभसे रहित जो सम्मान मिलता है उसे लेखक तुच्छ समझता है। वह कहता है "जब कोई राष्ट्र अपनी इच्छासे ही अपना नाश कर ले तब फिर उसका सम्मान कहा रह गया?" पर यहाँ मेरे लिए अपना नाश स्वय करने या दूसरेके द्वारा नष्ट किये जानेका तो कोई प्रश्न ही नही है। यहाँ प्रश्न है उस राष्ट्रका जो अपने सम्मानकी रक्षाके लिए निर्भयतापूर्वक डटकर खडा हो जाये और "दूसरेके द्वारा अपना नाश होने दे।" उदाहरणके लिए, हिन्दुस्तानको ही लीजिए और इस स्थितिकी कल्पना कीजिए कि हिन्दुस्तान पर शत्रु चढाई करने आते है, और आक्रमणकारियोके सामने आत्म-समर्पण न करने का सकल्प लेकर, उनपर उँगलीतक उठाये बिना, एक एक हिन्दुस्तानी अपनी जान दे देता है। वह स्त्री, जो किसी शोहदेके पापी प्रस्तावोके विरोधमे अहिसापूवक अपने प्राणोकी बलि दे देती है, अपनी तथा स्त्री-जातिकी इज्जतकी ही तो रक्षा करती है। जब बालक प्रह्लादने ईश्वरमे अपनी श्रद्धाका त्याग करने से बार-बार इनकार किया तब उसने अहिसापूर्वक अपने प्राणोको सकटमे डालकर अपने सम्मानकी ही रक्षा की थी। मसीहाने भी अपनी श्रद्धा और धमको तिलाजलि देने के बजाय एक चोर-डाकूकी मौत मरना पसन्द करके अपने और मानव-जातिके सम्मानकी रक्षा की।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २६-९-१९३६

४०६ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२६ सितम्बर, १९३६

मूर्खारानी,

अच्छा, यदि वह न टूटनेवाला थर्मस आ गया तो वापस नही करूँगा। चूकि मैं तुम्हारे सब पत्र फाड देता हू, इस कारण धोखेसे महमूदाबादका पता भी नष्ट हो गया। दूसरे कागज पर लिख भेजो।

शिमलामे अपना मकान है, केवल इसीलिए ग्रीष्मकाल वही बिताना निश्चय ही "मूर्खता" है। तुम्हे गर्मीके लिए दूसरा पहाडी स्थल ढूंढना चाहिए, जहाँ तुम वास्तवमे स्वास्थ्य-सुधार कर सको।

अहिसाका एक गुण याद रखो। अहिसा बोलती कम है, सादे ढगसे चुपचाप काय करती रहती है। यह बुद्धिको नही छूती, सीधे हृदयको भेदती है। अहिसा जितनी ही बोलती या तर्क करती है उतना ही उसका प्रभाव कम होता जाता है। पैरवीके अभावमे मुकदमा हार जाने से मत डरो। प्रत्यक्ष हारमे वास्तविक जीत निहित हो सकती है। बोलना बहुधा कमजोरीका लक्षण होता है।

यदि शम्मी तुम्हारे लिए मास खाना आवश्यक बताते है तो इसे आजमा कर देखो। यदि इस समय झुकना ही कर्त्तव्य है तो इससे तुम्हारे निरामिषाहारकी नीव और पक्की हो जायेगी।

सप्रेम,

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९४) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०३ से भी

४०७ पत्र जे० सी० कुमारप्पाको

२६ सितम्बर, १९३६

प्रिय कु०,

जाजूजीने अपना त्यागपत्र भेजा है। लिखा है कि यदि मेरी सहमति हो तो इसे समितिके सामने रख देनेके लिए तुम्हे दे दू। मै इस सम्भावना पर बहुत खुश नही हूँ। हालाँकि जाजूजीमे अपनेको नई परिस्थितियोके अनकूल ढाल लेनेकी काफी क्षमता है, छोडनेका यह [1] ढग [2] मै नही समझता कि उनका हटना सघके हितमे होगा। मै चाहता हूँ कि तुम स्थिति पर केवल इसी दृष्टिसे विचार करो। भारतनके साथ मशविरा कर लो, फिर मुझे अपना मत बताओ। अभी मै इस कागजको रोक रखता हूँ। मै जाजजीसे भी कह रहा हू कि वे इसी दृष्टिसे इसपर विचार करे।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१११)से।

४०८ पत्र . छगनलाल जोशीको

२६ सितम्बर, १९३६

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। भगियोकी समस्या ठीक ही सुलझ गई। तुमने जो पत्र माँगा है, सो वापस भेज रहा हूँ।

चन्दूलालके[3] बारेमे आश्चय होता है। मैने तुम्हारे पत्रका वह अश भेज दिया है और उत्तर माँगा है।

तुम्हारा काम अब पटरी पर आ गया होगा। आना ही चाहिए। अब कम लोग रह गये है।

तुम सबसे मिलनेकी आशा रखता हूँ। मुझे तो केवल कर्त्तव्यवश वहाँ आना है। इसलिए ढोल मत पीटना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५४०)से।

१ और २ साधन-सूत्रमें यहाँ कई शब्द मिट गये है।

३ चन्दूलाल बेचरभाई पटेल, गोंडल राज्यके तत्कालीन शिक्षा अधिकारी। हरिजन बालकोंको शालाओंमें अलग बैठानेकी व्यवस्था पर गांधीजीने आश्चर्य माना था।

४०९ पत्र अमतुस्सलामको

२६ सितम्बर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा पेन्सिलसे लिखा हुआ खत मैं ही पढ गया। अभी तेरा तार मिला है। डॉ० शाहके नाम खत भेजता हूँ। वे अगर वहाँ न हो तो उनका खत डॉ० जीवराज को तू दिखा सकती है। और कोई जरूरत हो तो मुझे तार करना।

तू मूख है। अपने आप दुखी होती है। जान-बूझकर लोगो पर शक करती है। बुखारमे भाग जाने की क्या जरूरत थी? चिट्ठी लिखकर कान्तिको क्यो नही बुलाती? सेगावमे अभी तुझे या किसीको रखने की मेरी हिम्मत नही है। मुझे जरा स्थिर हो जाने दे।

मेरी बात तू क्यो नही मानती?

बारी बम्बईसे बाहर जायेगे, तब तू क्या करना चाहती है?

बम्बईमे ही तेरे लिए दूसरा बन्दोबस्त करूँ? घरमे कौन-कौन है?

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०)से।

४१०. पत्र · क० मा० मुशीको

२६ सितम्बर, १९३६

भाई मुशी,

आप काकासाहबके प्रगाढ परिचयमे आ रहे है और इसलिए वे आपकी रचनाओको पढने का अवसर निकाल रहे है। उन्होने 'पृथ्वीवल्लभ' पढा और मुझसे पढकर अपनी राय देने का आग्रह किया। चार दिन पहले मैंने इसे पढा और अब अपनी राय सूचित कर रहा हूँ। काकासाहब भी इसे पढ लेगे। आपने अपनी अन्य पुस्तके जेलमे ही भेज दी थी, किन्तु मै उनमे से वहाँ कुछ पढ नही पाया। आपने उस समय भी मुझसे राय माँगी थी। 'पृथ्वीवल्लभ' मन लगाकर पढ गया। उसमे से एक भी पात्र मुझे जँचा नही। मुज-जैसा होने की इच्छा भी नही हुई। ऐसा किसलिए? यदि आप कहे कि पात्र जैसे थे वैसे ही चित्रित किये गये है, तो यह बात ठीक नही बैठती। इस पचरगी दुनियामे कुछ तो अच्छे होगे ही। पाखण्डहीन और वफादार कुछ-न-कुछ लोग तो होगे ही। मृणालको तो आपने बिलकुल तोड कर रख दिया, बेचारी

विलास रसनिधिके आगे मोम हो कर रह गई। पुरुष इतने धूर्त हो सकते है? और चालीस वर्षकी असुन्दर स्त्री भी पुरुषकी मोहक बातोमे आकर क्या अपनेको इस प्रकार उसके हाथकी कठपुतली बनने दे सकती है? आदमी किताबे किसलिए पढता है? केवल आनन्द लेने के लिए? कैसा आनन्द? कालिदासने ऐसा नही लिखा। शेक्सपियर की छाप भी मेरे ऊपर ऐसी नही पडी। मै उनसे कुछ सीख सका। आपसे क्यो नही सीख सकता? आपका व्यक्तित्व मुझे प्रिय और आकर्षक लगता है। मै आपकी तरफ खिचा हूँ। मैंने आप दोनोके पाससे बहुत-कुछ पाने की आशा बाध रखी है। आपकी सर्वोत्तम कृति 'पृथ्वीवल्लभ' ही गिनी जाती है न? मैं उसमे आपके व्यक्तित्वका दर्शन क्यो नही कर सका? काकासे इस सवालका जवाब पाने की मुझे आशा नही है। वह तो आपसे ही मिल सकता है। किन्तु जवाब तुरत देने की कोई बात नही है।

अब थोडा मजाक कर लू। आपका अन्तिम वाक्य कुछ इस तरहका है "मुजकी देह हाथीके नीचे कुचल कर रोटी-जैसी बन गई।" रोटी शब्द तो ठीक लगा, किन्तु क्या आपने इस बातपर भी विचार किया कि शरीर [कुचलकर] रोटी-जैसा नही बन सकता। 'छुदो'[1]-जैसा बन गया कहे तो ठीक हो भी सकता है। शरीर कुचलकर भुर्ता हो सकता है, चूण बन सकता है, रोटी-जैसा नही बन सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६०६) से, सौजन्य क० मा० मुशी

४११. पत्र : प्रभावतीको

२६ सितम्बर, १९३६

चि० प्रभा,

अनियमित होने का तेरे लिए कोई कारण ही नही है। खुद अपने मे शक्ति आने के पहले तेरी स्थिति मै जान ही लेना चाहता हूँ।

मेरी शक्ति लौट रही है। इन दिनो खुराक घटा दी है। दूध तीन पावतक लेता हूँ। फलोमे मोसम्मी, सूखे बेर (प्रून), एकाध बार चीकू और अन्य फल लेता हूँ। आराम ठीक करता हूँ।

तू चाहे जितना सेवा-कार्य क्यो न करती हो, उसमे से आधा घटा कटि-स्नानके लिए जरूर निकाल सकती है, निकालना। खाने के बारेमें भी लापरवाही नही चल सकती, यदि इस ओर ध्यान नही दिया तो तू खटिया पकड लेगी।

१ कूट-कूटकर बनाया हुआ लोंदा।

पिताजी के साथ मेरी ठीक बात हो गई। जयप्रकाशको ५० रुपये देना तय हुआ है। इस बारेमे वही अधिक लिखेगा, ऐसा माने लेता हूँ। मीराबहन भी मेरे साथ है। ठीक होती जा रही है। अब वर्षा समाप्त हो गई, ऐसा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८२) से।

४१२ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

अगर लहसुन अच्छी तरह चबाया न जाये तो बिना हजम हुए ही निकल जायेगा। इसलिए उसे खूब कूट लेना चाहिए। रातको सोने से ठीक पहले एक औंस दहीके साथ लहसुन ले लो या खाते समय ही।

देहातियोंके लिए अपनी रेडियो-वार्त्ताकी एक प्रतिलिपि मुझे भेजो।

तुम मेहरताज और मरियमके लिए जो इतना-कुछ कर रही हो, उसके लिए खान साहब विशेष रूपसे धन्यवाद कहलाते हैं। मुझे खुशी है कि वे तुम्हारे प्रभावमें आ रही हैं।

क्या नवीन तुम्हें कभी पत्र लिखता है?

बहुत देर हो गई है, अधिक नहीं लिखूँगा।

सप्रेम,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४४) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०० से भी

४१३. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ सितम्बर, १९३६

चि० अमतुल,

तुझे खुश करना बहुत मुश्किल है। मैंने तुझे रोज खत लिखा है। पहला पता तूने पोस्ट मास्टरका दिया, वहाँ खत भेजा। बादमे ईस्टर विला के पतेपर भेजा। तुझे खत न मिले, सो भी मेरा कसूर है? जो मेरे बसका न हो वह काम अगर मै न कर सकू, तो वह भी मेरा कसूर? बोल, अब तुझे कैसे रिझाऊँ?

डॉ० गिल्डरको अभी दिखाने की जरूरत मै नही मानता। एक को ठीक से आजमा लेने के बाद हम दूसरे के पास जाये, यही हमारे लिए ठीक रहेगा। यदि तू चाहे तो मैं डॉ० गिल्डरको भी लिख दूंगा। डॉ० जीवराजसे तू मिले तो उन्हे और जिसे दिखाना ठीक लगे, उसे दिखा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५१) से।

४१४. पत्र अमतुस्सलामको

२७ सितम्बर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा कार्ड मिला। तुझे दु ख भोगना पडता है, यह मुझे बिलकुल अच्छा नही लगता। लेकिन इसका क्या उपाय? जब तू डॉ० शाहके यहाँ जाती है, तब तेरे साथ कोई रहता है? वे बराबर ध्यान तो देते है न? तू मुझे बराबर ब्योरेवार लिखती रहना। बारी है या गये? तू अपने-आप जो दु खी होती है, इसका तो कोई इलाज नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२) से।

४१५. पत्र : लीलावती आसरको

२७ सितम्बर, १९३६

चि० लीलावती,

यदि मैं तुझे तेरे पूरी 'गीता' लिख लेनेपर ही बुलाना चाहूँ तो तुझे रोज सौ श्लोक लिखन को कहूँगा और इससे 'गीता' का बहाना भी समाप्त हो जायेगा। मुझे शान्ति भग होने का भय लगता है। मै यह भी नही कहना चाहता कि कसर तुझमे ही है। किन्तु तू तो केवल चरित्र-गठनके लिए ही मेरे साथ रहना चाहती है, इसलिए मैंने तुझसे अधिकसे-अधिक आशा रखी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८१) से। सी० डब्ल्यू० ६५५३ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४१६ पत्र महादेव देसाईको

२७ सितम्बर, १९३६

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ गाडोदियाका २०० रुपयेका चेक भेज रहा हूँ। इसे फिलहाल तो सेगाँव-खातेमे जमा करवाना है। इसे जमनालालजी के यहाँ ही तो भेजा जायेगा न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४८५) से।

४१७. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

२७ सितम्बर, १९३६

भाई लक्ष्मीनारायणजी,

दोनो जल चिकित्सामे तल्लीन हो गये हैं यह देखकर मुझको बडा ही आनद होता है। ऐसे ही भले हमेशा चलता रहे। ऐसी एक शुद्ध पारमार्थिक प्रवृत्ति मिल गई है जिसमे दोनोकी इतनी श्रद्धा जमी हुई है और जिसमे दोनोकी शक्तिका एक-सा व्यय हो सकता है यह मुझको बहुत ही कल्याणकर प्रतीत होता है। प्रात कालका कटिस्नान जब मलेरिया हुआ तब भी करता था। घुमने [का] भी होता था। अब कटिस्नान तो चल रहा है। लेकिन समय दस बजेका कर लिया है। प्रात कालकी प्रार्थना के बाद मै सो जाता हू। दस बजे कटिस्नान के बाद घूमने का नही बनता है। यो तो दिन-भर मे दो दफा घूम लेता हूँ। घर्षण-स्नान नही बन सकता है। क्योकि आदत छूट जाने से गुह्येंद्रिय की चमडी जैसी ऊपर लानी चाहिये वैसी नही जा सकती है। जब आप लोगोका पहिला पत्र आया था तब ही मैंने प्रयत्न कर लिया था। चमडी है तो अविच्छिन्न और बरसो के पहले मै घर्षण-स्नान करता भी था। सोने के समय पेट ऊपर मिट्टी बाधने का मैने आरभ नही किया है। पहले तो मै बहुत दफा मिट्टी का प्रयोग करता था। अब कुछ और कारण नही तो भी आप लोगोके प्रेमके कारण मिट्टी का भी प्रयोग कर लूगा। नैसर्गिक उपचार करनेवाला कोई सज्जन मुझे मिल जाय तो मै अवश्य अपने साथ रक्खू और लोगोमे उसका प्रचार करु। ऐसा सज्जन अबतक तो नही मिला है। जितने हिदुस्तान मे हैं उनमे से अधिकतर ने जल-चिकित्सा को पैसे कमाने का साधन कर रक्खा है। आपके मौलवी साहब-जैसे थोडे हैं। वे अपने धधे मे से मुक्त नही हो सकते है। ऐसी हालत में क्या किया जाय? २०० रुपयेका चेक मिल गया है। देखू सेगाव मे उसका क्या उपयोग कर सकता हू। सेगाव में तीन चोथाई हिस्सा जमनालालजी का है। सेगाव में जो-कुछ भी द्रव्य उनको मिल जाता है वह सब-का-सब सेगाववासियो की सेवा के लिए खर्चने का अधिकार मुझको दे रक्खा है और वह द्रव्य पर्याप्त है ऐसा मानता हू। ऐसी हालत मे आपके २०० रुपये का खर्च सेगाववासीयो के हिताथ कब और कैसे कर सकूगा यह सब इस समय तो बता नहीं सकता।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६२४) से।

४१८ पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सेगाँव, वर्धा
२८ सितम्बर, १९३६

चि० अमला,

तुमने तो गुजरातीमें इतनी प्रगति कर ली है कि मुझे लोभ हुआ कि तुम्हारी जो कुछ-एक भूले है, उन्हे सुधार दू।

मैं बिलकुल ठीक हूँ। तुम भी अपने लिए ऐसा दावा कर सकती तो क्या बात थी!

आशा करता हूँ कि तुम्हे शीघ्र ही अपनी माताजी के विषयमे और उनकी ओरसे भी अच्छे समाचार मिलेगे।

खानेके मामलेमे अपने साथ कजूसी मत करो। तुम्हे खूब फल और सलाद खाना चाहिए।

जिस मित्रसे तुम्हारा तात्पर्य है, वह भली प्रकार है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४१९ पत्र : नारणदास गाधीको

२८ सितम्बर, १९३६

चि० नारणदास,

सन्देश सलग्न है। मातुश्रीसे[1] कहना कि मैं उनकी और पिताजी की[2] गोदमे सिर रखने के लिए बच्चेकी तरह व्याकुल हूँ। अहमदाबाद तक जाऊँ और उनके दर्शन न करूँ, यह असह्य जान पडता है। इसलिए यदि प्रभुकी इच्छा हुई तो समझो कि मैं जरूर पहुँचूँगा। तिथि २७ के आसपास की होगी।

तुम्हारा काम तो २ से १२ तारीखके बीचमे कोई आये, तभी चलेगा। मैं सोच रहा हूँ। तुम्हारे मनमे कोई दूसरा नाम हो तो तारसे भी सूचित कर सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५०६ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ और २ देवकुँवर और खुशालचन्द गाधी

४२० पत्र : महादेव देसाईको

२८ सितम्बर, १९३६

चि० महादेव,

इसके साथ तीन लेख भेज रहा हूँ। इनमें जो पसन्द न आये उसे रद कर सकते हो। मनमें जो सोच रखा था उसे लिख डाला। ८ बजे कलम ली थी और १० बजे छोडी। फाइल साढे सात बजे हाथमें ली थी। हार्डिकरका लेख पढने और ठीक करने में, राजाके लेखका सक्षेप करने मे और मदुरईके जजोके निर्णयमे से जरूरी अश छाटने मे[१] आधा घटा लग गया।

नारणदासको किसी नामाकित सावजनिक कार्यकर्त्ताकी जरूरत है। किसे भेजे? तुम्हे कोई नाम सूझता है क्या? काका, जाजूजी, कुमारप्पा, लक्ष्मीदास, मलकानी — इनमें से किसीकी बात सोच सकते हो? क्या बापा जा सकेंगे? क्या कोई बहन ध्यान मे है? मीरा अच्छी हो जाये तो उसे ही भेज दे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मगनका पत्र[२] हवाई डाकसे भेजना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४८६) से।

४२१ पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२८ सितम्बर, १९३६

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमको डेकाके बारेमे मेरा खत[३] मिल गया होगा। मुझको अच्छा है। अमतुलसलाम यहा नही है। मगनवाडीमे दो-तीन दिन रही। सेगावमे कभी नही। अब मुबईमे है, माताजी के बारेमे तो मैंने तुमारे महादेव परके खतमे ही पढ लिया था। अब अच्छा होगी। तुमारी तबीयत कैसी है?

तुमको मेरे खत मिलते जाते है ना?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४३) से।

१ देखिए "जगलीपनका अवशेष", ३-१०-१९३६।

२ मगनलाल पी० मेहताको लिखा यह पत्र उपलब्ध नही है।

३ देखिए पृ० ३३४।

४२२ पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२९ सितम्बर, १९३६

मूर्खा रानी,

तुम्हारे दो पत्र एक साथ मिले।

खान साहब बहुत प्रसन्न है कि तुम लडकियोका इतना ध्यान रख रही हो।

तुम्हे अब शम्मीकी बात मान लेनी चाहिए और जिस प्रकारका मास वे बतायें, खाना चाहिए। अभी झुकने मे तो शोभा है। परन्तु यदि परिस्थितिसे विवश होकर मानोगी तो बिलकुल भी शोभा नही रहेगी। और तब कोई सयम सम्भव नही होगा। यह कोई तर्क नही है कि चूँकि जब तुम मास खाती थी तब भी बहुत अल्प मात्रामे ही खाती थी, इसलिए मास खाने से तुम्हारे शरीर पर कोई प्रभाव नही पडेगा। तुम्हे धार्मिक दृष्टिसे तो कोई आपत्ति नही है, इसलिए मै चाहता हूँ कि मेरा कहना मानकर फौरन शम्मीसे कह दो कि जो-कुछ खुराक उचित समझे, बतायें। घूमना-फिरना शुरू करने से पहले तुम्हारा एक्जीमा ठीक हो जाना चाहिए।

मै देखता हूँ कि दिसम्बरमे तुम मेरे पास नही आ सकती। देखे, जनवरी और फरवरीमे क्या सम्भव है। परन्तु यदि तुम्हारा अहमदाबाद आना सम्भव हो तो कांग्रेस-अधिवेशनके समय फैजपुर भी आना होगा। तुम जालधर कब जाओगी?

शिमलामे ही अपने लिए अलग एक छोटा-सा घर बनवाने का तुम्हारा विचार असगत कल्पना है। यदि ऐसा घर हो तो तुम तो चूर-चूर हो जाओगी। तुम्हारे शरीरमे इतनी शक्ति नही कि मेहमानोका ताँता बँधा रहे और तुम आतिथ्य करती रहो। मीराका बुखार तो उतर गया परन्तु वह अभी पूरी तरह ठीक नही हुई है। दो-चार दिनोमे बिलकुल ठीक हो जायेगी। मेरी शक्तिमे धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है।

कटि-स्नान चालू रखना और घर्षण-स्नान भी लेकर देखो। यह कैसे किया जाता है, सो मै तुम्हे समझा चुका हूँ। तिपाईपर पानीके बाहर पाँव रखकर बैठो। पानीकी सतह तिपाईके समान हो और हलके-हलके एक मुलायम तौलियेसे गुप्ताग पोछो। इसका अद्भुत लाभ बताया जाता है। यह स्नान अलगसे लेना चाहिए।

सप्रेम,

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०१ से भी

४२३ पत्र: नारणदास गांधीको

२९ सितम्बर, १९३६

चि० नारणदास,

मुझे मेरे जन्म-दिनका भान ही नही होता। मै तो उसे केवल चरखा-जयन्तीके रूपमे ही देखता हूँ। तुम भी इस दिनके प्रति जो दिलचस्पी रखते हो वह इसलिए नही कि तुम मेरे आत्मीय हो बल्कि इसलिए कि चरखा मुझे जितना प्रिय है, उतना ही तुम्हे प्रिय है और तुम उसे अपने आसपास अधिक गतिशील बना सकते हो। आजके शिथिल वातावरणमे यह एक कठिन काम है। नीरस भी कहा जा सकता है। अविचल निष्ठा कठिनको सरल और नीरस लगनेवाली बातोको सरल बना देती है। तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे वातावरणको चरखेकी शक्ति समझने मे समर्थ बनाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५०७ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

४२४. पत्र: जयकृष्ण पी० भणसालीको

२९ सितम्बर, १९३६

चि० भणसाली,

तुमने महादेवकी बात मानकर मेरे पास मानो गुफामे आकर बैठ जानेका विचार छोड दिया, यह तो बहुत ही अच्छा किया। तुम जहाँ हो वही तुम्हारी गुफा है। एक और बात सुनो। तुम्हारी बगलमे जो फोडा है उसमे शायद केवल मिट्टीसे लाभ न हो सके। सामान्य पोलटिस लगा लेने दो, इसके न पकनेका मै कोई कारण नही देखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४२५ पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
३० सितम्बर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा खत तरगोसे भरा है। तू न भाइयोकी बात मानती है, न मेरी। झोपडी क्यो? ऊटी क्यो जाना चाहिए? सेहत बम्बईमे ही सुधारनी चाहिए। माँ का घर सच्ची झोपडी है। डॉ० शाह जो मेरे खतसे नही करते है, वह अगर पैसेसे करेगे तो मुझे नीचा देखना होगा। उनको जो ठीक लगता है वह करते है, ऐसा समझकर उनसे इलाज करवाना चाहिए। यही मेरी सलाह है। वे नाकका पूरा इलाज कर ले, बादमे होमियोपैथीका इलाज कराना हो तो जरूर कराना।

तेरे उर्द खत कही खोये तो नही ही है। मैंने जवाब तो दिये ही है। मेहर-ताज वही वकीलके स्कूलमे पढेगी। लाली पचगनी हाई स्कूलमे गया है। अगर तू धीरज नही छोडेगी, तब तो सब ठीक हो जायेगा। तू अगर राजकोट जाना चाहे तो वहाँ की हवा अच्छी है। बालकृष्ण आजकल वहाँ रहते है। उनको ठीक लगता है। तेरा खत मैंने खुद पढा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५३) से।

४२६. पत्र : लीलावती आसरको

३० सितम्बर, १९३६

चि० लीला,

तेरी लीला अपरम्पार है। कल तूने लिखा, "मिल्गी तब बात करूँगी।" आज लिखती है, "आपका पत्र नही मिला।" अक्षर भी कितने खराब? तू चाहे तो अभी राजकोट मत जा। जब हम काशी जाये जब तू वहाँ चली जाना और जब हम अहमदाबादसे निकले तब राजकोटसे हमारे साथ हो लेना। तू यही चाहती है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४८७) से।

४२७ पत्र . अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३६

मूर्खा रानी,

दाँतका दद ठीक हो जाने की खबर देते हुए तुमने जो छोटा सा पत्र लिखा, उसे देखकर मुझे खुशी हुई। मै दन्त-चिकित्सककी रिपोटका बेसब्रीसे इन्तजार करूँगा।

आखिरकार टूट न सकनेवाला थमस आ ही गया। देखे, यह भी दूसरे थमसो की गतिको कब प्राप्त होता है।

आधेसे ज्यादा सेब खाने लायक नही थे। जाहिर है, अब वे इतने पिलपिले पड गये है कि यहाँ-वहाँ भेजने लायक नही रह गये है। इस तरह पैसा बहाने मे कोई मजा आता है क्या? तुम इस तरह जितना पैसा बचा लोगी, सब मेरे खातेमे क्यो न जमा करा दो। जरूरत पडनेपर उससे अच्छे फल खरीदे जा सकते है। प्रस्ताव इतना सटीक है कि एक मूख तकको पसन्द आ जाना चाहिए!!!

अभी तो मै तुमको इससे ज्यादा समय नही दे सकता, क्योकि मुझे नानावटी[1] की देखभाल करनी है। वह बुखारमे पडा है और बुखार किस किस्मका है, यह मै अबतक समझ नही पाया हूँ।

सस्नेह,

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०२ से भी

४२८. पत्र · प्रेमाबहन कटकको

१ अक्तूबर, १९३६

चि० प्रेमा,

तेरे दोनो पत्र मिले। अन्तिम पत्र कल मिला। उसके पहले दिन मुझे अच्युत पटवर्धनको इनकार लिखना पडा। नारणदासने रेटियाबारसके[2] लिए माँग की थी। उसे भी स्वीकार नही कर सका। अब क्या तू चाहती है कि तेरे लिए अपवाद करूँ। तू समझ ले कि अभी खान साहबका सार्वजनिक भाषणो आदिके लिए कही न

१ अमृतलाल नानावटी।
२ चरखा द्वादशी, भारतीय पचागके अनुसार गाधीजी की जन्म-तिथि।

निकलना ही हमारे आदर्शकी दृष्टिसे अच्छा है। हम दोनो धीरे-धीरे एक-दूसरेको पहचान रहे है। तो मै मुक्त हूँ न?

तेरे पहले पत्रका उत्तर तो फुरसतसे दिया जा सकेगा। अभी तो ढेर-का-ढेर काम निकल आया है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तू किसी बहनकी खोज कर। खुर्शीदबहनको फुसला।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७८८) से।

४२९ पत्र · एफ० मेरी बारको

१ अक्तूबर, १९३६

चि० मेरी,

बस, अब सोने जा रहा हूँ। यह पक्ति बस तुम्हारे दो प्रेम-पत्रोकी प्राप्ति-सूचना देने के लिए। बडी मजेदार बाते लिखी है तुमने।

तुम दोनोको स्नेह।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९८) से। सी० डब्ल्यू० ३३९८ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

४३० पत्र . महादेव देसाईको

[२ अक्तूबर, १९३६ के पूर्व][1]

चि० महादेव,

तुम जब आये तब काफी देर हो गई थी, फिर भी तुम्हे लौट जाना पडा, यह मुझे बिलकुल अच्छा नही लगा। किन्तु तुमसे ठहर जाने का आग्रह करने की हिम्मत भी नही पडी। नतीजा यह हुआ कि तुम दोनो खूब थक गये और रातके ११ बजे पहुँचे। इस मौसममे रातको किसीको यहाँ सुला लेने की मेरी इच्छा नही होती। नानावटीको लगातार बुखार बना हुआ है। मलेरिया नही है, हो सकता है, टाइफायड हो। मै उससे पार पा लूगा। वहाँसे डॉक्टर भेजने की जरूरत नही है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९७) से।

१ देखिए "पत्र महादेव देसाईको", २-१०-१९३६।

४३१. पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
२ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा पत्र मिलते ही जवाब दे रहा हूँ। साथमे वदूदके[1] लिए भी एक पत्र[2] है। उसमे तुझे मेरी सलाह मिलेगी। मै जल्दीमे हूँ इसलिए ज्यादा नही लिखता। तू विचारपूर्वक कदम उठाये तो अच्छा होगा। तुझे बहुत-से रोग है। नखका इलाज तुरन्त करना ही चाहिए। नाकके बारेमे शाह जैसा कहे वैसा करना ठीक होगा। लेकिन यदि तुझे होमियोपैथीका इलाज कराना हो तो वही करा। अहमदाबादमे बहुत-से डॉक्टर है और राजकोटमे भी है। अगर वर्धा तुझे पसन्द ही न आये तो मेरी नजर तो राजकोट पर जाती है। वहाँ तू सुखी होगी, तेरा मन शान्त रहेगा। तुझे किस तरह शान्ति और सुख द, यही विचार मुझे परेशान करता रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५४) से।

४३२. पत्र : लीलावती आसरको

२ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

तू लीलावतीसे लीला कैसे हो गई, यह तो तूने देख लिया। अब तू लिली बने, उससे पहले मुझे योग्यता हासिल करनी पडेगी। यदि मुझमे योग्यता होती तो मुझे तेरे साथ बहस थोडे ही करनी पडती। सगे हुए बिना सगा बन पाना कठिन होता है। कागजके बारेमे जो तुझे ठीक लगे सो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८२) से। सी० डब्ल्यू० ६५५४ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१ अमतुस्सलाम का भतीजा।

२ यह पत्र उपलब्ध नही है।

४३३ पत्र · महादेव देसाईको

सेगाँव
२ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

अपने सन्तोषके लिए यदि तुम डॉक्टरको लाना चाहो तो ले आना। अमतुलका पत्र आज चला जाये तो अच्छा हो। बाकी सब तुम्हारे आनेपर। अभी तो यहाँ राजेन्द्र बाबू आदिकी मण्डलीके सब लोग जमे हुए है। नानावटीका बुखार अभी नही उतरा, लेकिन वह प्रसन्न है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४८९) से।

४३४ पत्र महादेव देसाईको

२ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

क्या कवीश्वर-सम्बन्धी फैसला 'टाइम्स' मे मिला? 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु' और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' नवीनको भेजे जाते हैं न? कान्तिने भी तो माँग की है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९०) से।

४३५. जगलीपनका अवशेष

हमारा यह रोजका दुखद अनुभव है कि हिन्दुस्तानमे ऐसे बहुत-से पति हैं, जो अपनी पत्नियोको पशुधन या अन्य किसी माल-असबाबकी तरह एक प्रकारकी सम्पत्ति समझते है और इसलिए ऐसा मानते है कि उन्हे अपनी स्त्रियोको उसी तरह मारने-पीटनेका हक है, जिस तरह वे अपने पशुओको मारते है। मगर मुझे स्वप्नमे भी यह खयाल नही था कि अदालते भी इस पाशविक आदतका समर्थन करेगी। यह तो एक मित्रने मेरे हाथमे जब एक अखबारकी कतरन दी, तब मुझे पता चला। इसमे मदुरईके एक सेशन जजका फैसला था, जिसमे उन्होने यह स्वीकार किया था कि पतिको कानूनन यह हक है कि वह अपनी पत्नीको पीट सकता है। सद्भाग्यवश मामलोकी फेहरिस्तको देखते-देखते अचानक एक अग्रेज जजने मदुरईके सेशन जजके इस

विचित्र निर्णयका किस्सा पढा और फौरन अभियुक्त पतिसे नोटिस द्वारा पूछा कि वह अपने अपराधका कारण बताये। यथासमय मामला न्यायमूर्ति पाण्डुरगराव और के० एस० मेननके सामने पहुँचा और उन्होने इसपर अपना फैसला दिया। नीचे मै इसका जरूरी हिस्सा[1] देता हूँ

शायद इस मामलेमें इतना ही कहना काफी होगा कि यद्यपि विद्वान् जजको इस विषयमें व्यक्तिगत रूपसे, वे जैसी चाहे, वैसी राय रखने का अधिकार था, पर न्यायासन पर बैठकर यह घोषणा करना उनके लिए उचित नहीं था कि अगर स्त्री बेहूदा बरताव करे, और किसी तरह बदतमीजीसे पेश आये, तो पतिको यह हक हासिल है कि उसे पीटे और इस तरह सजा दे। ताजीराते हिन्दमे ऐसा कोई हक स्वीकार नहीं किया गया है और न सामान्य अपवादोमें पत्नीको पीटने के हकका ही कहीं जिक्र है।

अगर यह अदालत इस फैसलेको निराधार और गलत न करार दे तो कोई भी यह कल्पना कर सकता है कि सेशन जजके आसनसे किये गये ऐसे ऐलान का कितना भारी दुष्परिणाम हो सकता है। इसलिए हमें यह जरूरी लगा कि हम साफ-साफ शब्दोमे कह दे कि विद्वान् जजने पतिका इस मामलेमें जो हक बताया है, वह सर्वथा निराधार है, ताकि भविष्यमें इस फसलेकी आडमें या इसके भरोसे कोई अपनी पत्नीको पीटे नहीं।

बडी शमके साथ हमे यह कबूल करना पडता है कि पढे-लिखे पतियोके दिमागसे भी यह खयाल हटा नही है कि उन्हे यह हक है कि वे अपनी स्त्रियोको माल-असबाबकी तरह अपनी सम्पत्ति मानकर उनसे चाहे जैसा व्यवहार कर सकते है और जब दिलमे आये, पीट भी सकते है। क्या ही अच्छा हो, अगर इस फैसले से वे समझ जाये कि स्त्रियोके साथ यह बरताव तो हमारे जगलीपनका अवशेषमात्र है!

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१०-१९३६

१ यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे है।

४३६ हिन्दू-धर्मकी शिक्षा

इग्लैंडमे कैनन शेपडके नेतृत्वमे चलनेवाले शान्ति-आन्दोलन पर हालमे ही लिखे गये मेरे लेखोके[1] सिलसिलेमे एक मित्र लिखते है

मेरा तो यह मत है कि 'गीता' का उपदेश जिस सन्दर्भमें दिया गया है उसका, तथा श्रीकृष्ण और अर्जुनकी प्रारम्भिक बातचीतका विचार न करे, तो भी हिन्दू-धर्म निणयात्मक रूपसे यह नही कहता कि जहाँ सुसगठित आक्रमणके प्रतिरोधका सवाल हो वहाँ भी अहिंसासे ही काम लिया जाये। अपने तमाम उत्कृष्ट धमग्रन्थोको ऐसी अहिंसापरक व्याख्या करने मे तो हमें बहुत अधिक खींचतान करनी पडेगी। नि सन्देह, दया-भाव अथवा प्रेम-भावको हिन्दू-धर्मने सबसे ऊँचा धर्म बताया है। पर उसका भाव, आप या ये शान्तिवादी जो उपदेश दे रहे है, वह तो हरगिज नहीं है। और इस उद्देश्यसे हर चीजको रूपक बना देना तो ठीक नहीं होगा।

मैंने अपनी 'अनासक्तियोग' नामक 'गीता' की भूमिकामे[2] यह स्वीकार किया है कि 'गीता' कोई अहिंसाका प्रतिपादन या युद्धकी निन्दा करने के लिए लिखा हुआ ग्रन्थ नही है। नि सन्देह वतमान हिन्दू-धर्म भी युद्धका ऐसा निषेध नही करता जैसा कि मैं कर रहा हूँ। और जहाँतक हमे पता है, जिस रूपमे हिन्दू-धर्मका पालन भूतकालमे किसी भी समय किया जाता रहा है, उसमे भी युद्धका ऐसा निषेध नही है। पर मैंने तो केवल 'गीता' की शिक्षा और हिन्दू-धमके सिद्धान्तोका एक नवीन किन्तु स्वाभाविक और न्यायसगत अर्थ जनताके सामने पेश किया है। और धर्मोकी बात छोड भी दे, पर हिन्दू-धर्म तो निरन्तर विकास करता आया है। 'कुरान' या 'बाइबिल' की तरह उसका कोई एक निश्चित धमग्रन्थ नही है। उसके धमग्रन्थोमे विकास और वृद्धि होती रही है। खुद 'गीता' को ही लीजिए। उसने कर्म, सन्यास, यज्ञ इत्यादिका बिलकुल भिन्न अर्थ प्रतिपादित किया है। हिन्दू-धर्मके अन्दर उसने नया जीवन डाल दिया है। आचारका उसने एक मौलिक नियम बताया है। 'गीता' मे जो कहा गया है वह पुराने धमग्रन्थोमे अन्तर्निहित नही था, ऐसी बात नही है। किन्तु 'गीता' ने उन भावोको प्रकट रूपसे भाषाबद्ध कर दिया है, जो उन ग्रन्थोमे गर्भित थे। मैंने ससारके कई धर्मोका श्रद्धापूर्वक अध्ययन और मनन किया है, और खासकर 'गीता'-प्रतिपादित हिन्दू-धर्मके पालनका अपनी शक्ति-भर पूरा यत्न भी किया है। अपने इस अध्ययन और अनुभवके आधार पर, किन्तु किसी प्रकारकी

१ देखिए "अहिंसा परमो धर्म", ५-९-१९३६ और "हमारे अस्तित्वका नियम", २६-९-१९३६।
२ देखिए खण्ड ४१, पृ० १२९।

खीच-तान किये बिना, हिन्दू-धर्म का एक व्यापक और विशाल स्वरूप जनताके सामने रखने का मैने यत्न किया है। यह इस धर्मका वह रूप नही है जो इसके असख्य धर्मग्रन्थोमे दबा पडा है, बल्कि वह सजीव रूप है, जिसका दर्शन अपने दु खी बालकको सान्त्वना देनेवाली मातामे होता है। और मेरा यह दावा है कि इसमे मैने कोई नयी बात नही की, अपने पूव पुरुषोके चरण-चिह्नोका ही मैने इसमे अनुगमन किया है। हम जानते है कि एक समय हमारे पूर्वज क्रुद्ध देवी-देवताओको प्रसन्न करने के लिए यज्ञमे प्राणियोकी बलि देते थे। उनके वशजोने, जो कि हमारे नजदीकी पूर्व-पुरुष थे, 'यज्ञ' का भिन्न अर्थ किया। उन्होने यह बताया कि यज्ञमे बलिदान प्राणियोका नही, हमारे अधम विकारोका हो और वह क्रुद्ध देवी-देवताओको प्रसन्न करने के लिए नही, बल्कि अपने अन्तस्तलमे विराजमान प्रभुको प्रसन्न करने के लिए हो। मेरा तो यही मत है कि 'गीता'-धमकी निश्चित शिक्षा यही है कि हम सब शान्तिकी उपासना करे, चाहे इसके लिए हमे अपने प्राण भी अपण कर देने पडे। मानव-जातिकी यह सर्वोच्च आकाक्षा है।

'महाभारत' और 'रामायण' दो ऐसे ग्रन्थ है जिनको करोडो हिन्दू जानते है ओर अपने माग-दशनके लिए पढत भी है। वे रूपक है, यह तो भीतरी प्रमाणसे ही सिद्ध है। माना कि उनमे अधिकाशमे ऐतिहासिक व्यक्तियोका ही वर्णन है। पर फिर भी इससे मेरे पक्षको कोई बाधा नही पहुँचती। प्रत्येक महाकाव्यमे सत और असत् शक्तियोके बीच चलनेवाले सनातन सघषका वर्णन होता है। जो भी हो, यह तो मै स्वीकार नही कर सकता कि मैने पहलेसे अपने कुछ विचार बना लिये है और उनका समर्थन करने के उद्देश्यसे मै हिन्दू-धम या 'गीता' की खीच-तान करना चाहता हूँ। मै तो कहता हूँ कि मेरे विचार वास्तवमे 'गीता', 'रामायण', 'महाभारत' और उपनिषदोके ही अध्ययनका परिणाम है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१०-१९३६

४३७. स्वैरताकी ओर

एक युवकने लिखा है

ससारका कायाकल्प करने के लिए आप चाहते है कि प्रत्येक मनुष्य सदाचारी बन जाये। परन्तु आपकी बात ठीक-ठीक मेरी समझमें नहीं आ रही है। आखिर इस सदाचारसे आपका क्या अभिप्राय है? यह केवल यौन प्रवृत्तियो तक ही सीमित है या इसमें मनुष्यके समस्त आचरणका समावेश होता है? मुझे तो ऐसा शक है कि सदाचारकी आपकी बात केवल यौन प्रवृत्तियो तक ही सीमित है, क्योकि आप अपने पूँजीपति और जमींदार दोस्तोको तो कभी यह बताने का कष्ट नहीं करते कि वे किस तरह अन्यायपूर्वक मजदूरो

और किसानोका पेट काट-काटकर अपनी जेबें भरते रहते हैं, लेकिन युवको और युवतियोकी यौनाचार-विषयक गलतियोपर उनकी निन्दा और ताडना करते हुए आप कभी थकते नहीं, और सदा उनके सामने ब्रह्मचर्य-व्रतका आदर्श उपस्थित करते रहते ह। आप भारतीय युवकोका मानस समझने का दावा करते है। मै किसीका प्रतिनिधि होने का दावा नहीं करता, लेकिन एक स्वतन्त्र युवकके नाते मै आपके इस दावेको चुनौती देने का साहस करता हूँ। आजके मध्यम वर्गका युवक-समुदाय किन परिस्थितियोसे गुजर रहा है, लम्बी बेकारी, जीवनको कुचलनेवाले सामाजिक रीति-रिवाजो और सह-शिक्षणसे उत्पन्न प्रलोभन उसकी कैसी दुदशा कर रहे है — इसकी सही और पूरी जानकारी आपको है, ऐसा मालूम नही होता। यह सब पुराने और नये विचारोके बीच चल रहे सघर्षका परिणाम है और इसमें युवकोके पल्ले सामान्यतया दु ख और पराजय ही आई है। मै आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करता हूँ कि आप युवकोके प्रति दया-भावसे काम ले और उन्हे आचारकी अपनी अतिशय शुद्धतावाली कसौटीपर न कसे। मै तो ऐसा मानता हूँ कि यदि भोगतृप्ति दोनोकी सहमति और पारस्परिक प्रेमके साथ की जाये तो वह नैतिक ही है, चाहे वह विवाहके दायरेमें, यानी अपनी पत्नीके साथ हो या उसके बाहर। सन्तति-नियमनके कृत्रिम उपायोकी शोधके बाद विवाहकी प्रथाका यौन आधार नष्ट हो गया है। अब तो उस प्रथाकी उपयोगिता इतनी ही रह गई है कि उससे सन्तानकी रक्षा और उसके कल्याणका ध्येय सधता है। ये बातें सुनकर शायद आपके दिलको चोट पहुँचेगी, पर मै आपसे यह प्राथना करता हूँ कि आजकलके युवकोको भला-बुरा कहते समय कृपया अपनी युवावस्थाको आप मत भूलिए। आप स्वय क्या कम कामी थे? आप कितना विषय-भोग करते थे? सम्भोगके प्रति आपकी यह घृणा शायद आपकी इस अति का ही परिणाम है। इसीलिए अब आप ऐसे सन्यासी बन रहे है और इसमें आपको पाप नजर आता है। अगर तुलना करें तो मेरा खयाल है कि आजकलके कई युवक इस विषयमें जरूर आपसे ज्यादा अच्छे साबित होगे।

इस तरहके अनेक पत्र मेरे पास आते है। इन नौजवान भाईसे मेरा परिचय हुए लगभग तीन महीने हुए होगे, परन्तु इतने थोडे समयमे ही, जहाँतक मुझे दिखाई देता है, ये परिवर्तनकी कई अवस्थाओमे से गुजर चुके है। अब भी वे एक गम्भीर परिस्थितिसे ही गुजर रहे है। ऊपर जो उद्धरण दिया गया है वह एक लम्बे पत्रसे लिया गया है और यदि मै इस पूरे पत्रको तथा उनके अन्य पत्रोको भी प्रकाशित कर दूँ तो इससे उन्हे प्रसन्नता ही होगी। लेकिन मैने ऊपर जो अश दिया है वह कितने ही युवकोके विचारो और प्रवृत्तियो को प्रकट करता है।

बेशक, युवको और युवतियोसे मुझे सहानुभूति है। अपनी जवानीके दिनोकी भी मुझे अच्छी तरह याद है। मुझे देशके युवको और युवतियोमे आस्था है। इसीलिए उनकी समस्याओपर विचार करते हुए मै कभी थकता नही।

मेरे लिए तो सदाचार, नैतिक नियम और धर्म एक ही बात है। आदमी अगर पूरी तरहसे सदाचारी हो परन्तु धार्मिक न हो तो उसका जीवन बालूपर खडी की गई इमारतकी तरह समझिए। इसी तरह सदाचारहीन धर्म भी दूसरोको दिखाने-भरके लिए होता है और आपसमे सिर-फुटौवलका कारण बनता है। सदाचारमे सत्य, अहिसा और ब्रह्मचय तीनो आते है। मनुष्य-जातिने आजतक सदाचारके जितने नियमोका पालन किया है, वे सब इन तीन सर्वप्रधान गुणोसे सम्बन्धित है या उन्हीसे प्राप्त हुए है। और दूसरी ओर अहिसा तथा ब्रह्मचयकी उत्पत्ति सत्यसे होती है, और सत्य मेरे लिए प्रत्यक्ष ईश्वर ही है।

सयम-पालनके बिना स्त्री या पुरुष अपना नाश ही करेगा। इन्द्रियोपर कोई नियन्त्रण न होना बिना पतवारकी नावमे सवार होने-जैसा है। ऐसी नाव अपने रास्तेकी पहली ही चट्टान से टकराकर टूट जाती है। इसीलिए मै सयमपर इतना जोर देता हूँ। पत्र-लेखकका यह कहना ठीक ही है कि सन्तति नियमनके कृत्रिम उपायोके आ जानेसे विषय-भोग-सम्बन्धी विचारोमे परिवतन हो गया है। यदि पारस्परिक सम्मतिसे सम्भोग — चाहे वह विवाहके दायरेमे हो या उसके बाहर, और इसी दलीलको थोडा और बढा दिया जाये तो ऐसा भी कह सकते है कि चाहे वह पुरुष और पुरुष अथवा स्त्री और स्त्रीके बीच ही क्यो न हो — नीतिमय बन जाता है, तब तो यौन सम्बन्ध-विषयक नीतिके नियमोकी बुनियाद ही नष्ट हो जाती है और युवकोके लिए फिर सचमुच "दु ख और पराजय" के सिवा और कुछ बाकी नही रहता। भारतमे ऐसे अनेक युवक-युवतियाँ मिलेगे जो पारस्परिक सहमति पर आधारित भोग-वासनाके जिस पाशमे वे अपनेको कैद पाते है, उससे छुटकारा पाना चाहते है। यह वासना मनुष्यको गुलाम बनानेवाले प्रबलतम नशेसे भी ज्यादा प्रबल है। यह आशा रखना व्यर्थ है कि सन्तति-नियमनके कृत्रिम उपायोका उपयोग केवल सन्तानकी सख्या मर्यादित करने के लिए ही होगा। सुष्ठु और पवित्र जीवनकी आशा तभीतक है जबतक कि यौन क्रियाका सम्बन्ध स्पष्टत बहुमूल्य नये जीवनके निर्माणसे है। इसमे विकृत यौन क्रिया और, उससे कुछ कम अशमे, स्व-पर-स्त्रीका भेद न करनेवाली स्वैरतापूण यौन सम्बन्धके लिए भी कोई अवकाश नही है। यौन क्रियाको उसके स्वाभाविक परिणामसे विच्छिन्न कर दिया जाये तो घृणित स्वैराचारके लिए रास्ता खुल जायेगा तथा अप्राकृतिक वासना-तृप्तिका यदि अनुमोदन न होने लगे तो कमसे-कम उसे कोई पाप न मानकर माफ तो किया ही जाने लगेगा।

यौन-समस्यापर किये जा रहे इस विचारसे चूंकि मेरे अपने अनुभवोका भी सम्बन्ध है, इसलिए जिन पाठकोने मेरी 'आत्मकथा'[1] के अध्याय नही पढे है वे

१ देखिए खण्ड ३९।

मेरी विषय-लोलुपताके बारेमे कही इस पत्र-लेखकके-जैसे ही निष्कर्ष न निकाल ले, इसलिए उन्हे सावधान कर देना ठीक होगा। सबसे पहली बात तो यह है कि मै चाहे कितना ही विषयी रहा होऊँ, परन्तु मेरी विषय-वासना अपनी पत्नी तक ही सीमित थी। फिर, मै एक बहुत बडे सम्मिलित परिवारमे रहता था, जिससे रातके कुछ घटोको छोडकर हमे एकान्त कभी मिलता ही नही था। तेईस वर्षकी अवस्थामे ही मै केवल भोगके लिए सम्भोग करने मे समाये दोषके प्रति जागरूक हो गया था। और सन १८९९ मे[१] यानी जब मै तीस सालका था, मै पूण ब्रह्मचयकी प्रतिज्ञा लेनेका निश्चय कर चुका था। मुझे सन्यासी कहना गलत होगा। मेरे जीवनके नियामक आदश तो सारी मनुष्य-जातिके द्वारा ग्रहण किये जाने के लिए प्रस्तुत है। मैने उन्हे अपने क्रमिक विकासकी अवस्थासे गुजरकर प्राप्त किया है। मैने हरएक कदम पूरी तरह सोच-समझकर गहरे मननके बाद उठाया है। ब्रह्मचर्य और अहिसा दोनो अपने व्यक्तिगत अनुभवसे मुझे प्राप्त हुए और अपने सावजनिक कर्त्तव्योको पूरा करने के लिए उनका पालन मेरे लिए नितान्त आवश्यक हो गया। दक्षिण आफ्रिकामे एक गृहस्थ, एक बैरिस्टर, एक समाज-सुधारक अथवा एक राजनीतिज्ञकी हैसियतसे मुझे जो एकाकी जीवन व्यतीत करना पडा, उस जीवनमे अपने उपर्युक्त कर्त्तव्योको पूरा करने के निमित्त मेरे लिए यह जरूरी हो गया कि मै कठोर सयमका पालन करूँ तथा स्वदेश-बन्धुओ और यूरोपीयो दोनोके साथ अपने व्यवहारमे सत्य और अहिसाका कडाईसे आचरण करूँ। मै एक मामूली आदमीसे अधिक ऊँचा होने का दावा नही करता। मुझमे उससे भी कम योग्यता है जितनी सामान्य मनुष्यमे होती है। मेरे इस अहिसा और ब्रह्मचर्य-व्रतके पालनमे भी कोई बधाई देने लायक बात नही, क्योकि वे तो वर्षोंके निरन्तर प्रयाससे मेरे लिए साध्य हुए है। मुझे तो इसमे जरा भी सन्देह नही कि मैने जो सिद्धि प्राप्त की है उसे हर पुरुष और हर स्त्री प्राप्त कर सकती है, बशर्ते कि वह भी मेरी ही तरह प्रयत्न करे और अपने मनमे मेरी-जैसी ही आशा और आस्था लेकर चले। आस्थाहीन कार्य अगाध समुद्रकी थाह लेने का प्रयत्न करने-जैसा है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१०-१९३६

१ लेकिन गांधीजी ने वास्तवमें ब्रह्मचर्य व्रत १९०६ में लिया, देखिए खण्ड ३९, पृ० १६१।

४३८ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
३ अक्तूबर, १९३६

मूर्खा रानो,

डॉ० देशमुखने, दिन ढलने पर ही सही, तुम्हारी जाँच की, यह जानकर बडी खुशी हुई। हमे उम्मीद रखनी चाहिए कि तुम उनके नुस्खेसे लाभ उठाओगी।

प्राकृतिक चिकित्सासे शम्मीकी चिढ या तो एक ढोग है या फिर उसकी जडमे अज्ञान-जनित पूर्वग्रह है। अन्सारीने तो इसे हमेशा पसन्द किया।

मुझे तो बहुत अच्छा लगेगा कि तुम खराब सेहत लेकर ही यहा मेरे पास चली आओ और मै तुमको भली-चगी बना दू। लेकिन तुमको अधीर नही होना चाहिए। धैर्य और सतत प्रयत्नके बिना कोई भी व्यक्ति अपनी बाहरी अथवा अन्दरूनी खामियोसे उबर नही सकता।

इस एक्जीमाको लेकर तुम जो इतना सिर धुनती हो, मुझे लगता है कि कही यह कुछ दिनके लिए थोडी शक्ल बिगडने की वजहसे ही न हो। मेरा अनुमान अगर ठीक है तो रूपका तुमको कितना मान है। इससे छुटकारा पाने के लिए तुमको निश्चय ही मेरे पास आना पडेगा। और यहा कमसे-कम तुमको अपने दागो या ऐसी किसी भी चीजका हर समय खयाल नही बना रहेगा। यहाँ तुम्हे अपने समकक्ष लोगोका साथ नही मिलेगा। जो भी हो, इस बीमारीको लेकर तुम्हारे लगातार घुलते रहने से मुझे चिन्ता होती है। मै चाहता हूँ कि तुम इससे ऊपर उठ सको। कर सकती हो ऐसा? डटकर प्रयास करो और इस गन्दी चीजको भूल जाओ।

जाहिर है, मै जब अपने बारेमे कुछ नही कहता तो तुमको समझ लेना चाहिए कि मै भला-चगा हूँ। लेकिन एक बीमार साथीकी परिचर्या करनी पड रही है — नानावटीकी, जो एक श्रेष्ठ कार्यकर्त्ता और अच्छा गवैया है। वह मगनवाडीमे रसोईका काम सँभाले हुए था। लगता है, उसे हलका-सा टाइफाइड है। उसको केवल सन्तरेका रस या शहद और गरम पानी दिया जा रहा है। कटि-स्नान और एनिमा भी रोज ले रहा है। वह अपनी शारीरिक शक्ति बनाये हुए है और काफी प्रफुल्लित रहता है। मुझे आशा है, वह हफ्ते-भरमे ठीक हो जायेगा। आज पाँचवाँ दिन है। तुम जानती ही हो कि मुझे परिचर्या करना बहुत अच्छा लगता है। मुझे उसमे थकान महसूस नही होती। प्यारेलाल रसोईका काम देखता है। वह तो जैसे न कभी थकता है और न उसे नीद ही आती है।

सरदार आज यहाँ पहुँचनेवाले हैं।

सस्नेह,

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४७) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०३ से भी

४३९. पत्र अमतुस्सलामको

३ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

कल तो बहुत जल्दीमे पत्र लिखा था। आज भी जल्दी तो है ही। मेरे सामने डॉनावटी बुखारसे खटियामे पडा है। उसको गीली चादरमे लपेटा है। तबीयत सुधारने के लिए त्रिवेन्द्रम जाने मे मेरी अनुमति नही मिलेगी। वहाँकी आबोहवा अच्छी नही मानी जाती। वहाँकी खुराक भी तेरे लिए ठीक नही है। वहा तुरन्त कुशल डाक्टर भी नही मिलते। और तेरे लिए वह इतनी दूर है कि सेहत सुधारकर ही तू वहाँ जा सकती है। तू चगी हो जाये और सरस्वतीसे मिलने जाये, तो इसमे मुझे जरा भी आपत्ति नही है। तुझे क्या करना चाहिए सो तो मै लिख चुका हूँ। कान्तिके लिए मेरे आशीर्वाद तो सदा है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५) से।

४४० पत्र महादेव देसाईको

३ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

इसके साथ [भेजने के लिए] कुछ तार भेज रहा हूँ। सरदारकी कोई खबर है? मोतीहारीमे शायद तारघर नही होगा।

कुछ पत्र भी भेज रहा हूँ।

जवाहरको यहाँसे दस बजे रवाना कर दूंगा, क्योकि यहाँ बीमारी चल रही है, इसलिए मैं कल किसीको भोजन कराने की स्थितिमे नही रहूँगा। तुम तो कल यहाँ आ ही रहे होगे। मैंने मान लिया है कि सरदार आज तीसरे पहर अवश्य आयेगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तार कुमारप्पा अथवा भारतनको दिखला लेना, जिससे कोई भूल न रह जाये। यदि महादेव यहाँके लिए रवाना हो गया हो, तो कनु तार भेजे और पत्र डाकमे डाले। जिनकी नकल करना जरूरी हो, उनकी नकल कर ले।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९१) से।

४४१ पत्र : देवदास गांधीको

३ अक्तूबर, १९३६

चि० देवदास,

बा के पत्र मे[1] मै तेरा दुख देख रहा हू। बा का दुख तो मै जानता ही था। किन्तु इस सबको अपरिहार्य मानकर इसका सोच नही करना चाहिए।[2] और यह कौन कह सकता है कि हरिलालके पतनमे जाने-अनजाने मेरा अथवा हम दोनो माता-पिताका कैसा और कितना हाथ रहा। "तुख्मे तासीर"[3], इस कथनमे एक पूरा शास्त्र छिपा हुआ है। गुजरातीमे भी ऐसा ही है "वड तेवा टेटा, बाप तेवा बेटा।"[4] जब ऐसे विचार मनमे आते है, तब हरिलालको दोष देने का मन नही होता। मेरे अपने ऊपर क्रोध करने से भी क्या होगा? उस समयके अपने विषयी मनकी मुझे याद है। दूसरी बातोको खोज पाना कठिन है। ईश्वरकी सूक्ष्म गतिको कौन जान सकता है? हम तो प्रसिद्ध दृष्टान्तोके आधारपर कुछ सिद्धान्त ही स्थिर कर सकते है।

बा के पत्रपर निजी अथवा सावजनिक पत्रोमे कोई आलोचना हुई हो तो बताना।

तेरी तबीयत कैसी रहती है? कुछ सुधार हो रहा है क्या?

लक्ष्मीका क्या हाल है? बा प्रसन्न रहती है या खिन्न? मनुडीका क्या हाल है?

कान्ति अपने अध्ययनमे डूब गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०३७) से।

१ हरिलाल गांधीको लिखा गया।
२ **भगवद्गीता**, २/२७।
३ जैसा बीज वैसा पौधा।
४ जैसा वृक्ष वैसा फल, जैसा बाप वैसा बेटा।

४४२ पत्र · कस्तूरबा गांधीको

३ अक्तूबर, १९३६

बा,

इस बीच तेरा पत्र नही आया। क्या बीमार पड गई थी? अब तो सब ठीक हो गया होगा। मीराबहन ठीक है। कमजोर तो है। बुखार नही है। नानावटीको थोडा बुखार है, लगता है, दो-एक दिनमे उतर जायेगा।

अखबारमे तेरा पत्र पढा। यह सब लिखने का कारण क्या है? उसके आधार पर एक अंग्रेज बहनने तुझे पत्र लिखा है। वह पत्र देवदाससे समझ लेना और उसे जवाब लिखा देना। लीलावती समय-समयपर महादेवके साथ आती रहती है। सब ठीक चल रहा है।

अब वहाँ सबकी तबीयत ठीक होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०३८)से।

४४३. पत्र प्रभावतीको

३ अक्तूबर, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र विचलित कर देनेवाला है। एक तरफ तो दूध और फलके बारेमे तू जो कहती है, वह सच जान पडता है और दूसरी तरफ यह खुराक न मिलने के कारण तेरा बीमार पडना भी नही पुसाता और यदि तू बीमार पड जाये तो डॉक्टर और दवापर जो खर्च होगा, उसमे यह बची हुई सारी रकम खच हो जायेगी। धमका पालन इतना कठिन है। मेरा तुझे अधिक पैसे भेजना भी उचित नही है और इस प्रकार तेरा अधिक दूध और फल खाना भी उचित नही है। मै इतना ही कह कर शान्त हो जाता हूँ कि यदि तू किसी प्रकार अधिक दूध और फल खा सके तो खा। भगवान् तेरी रक्षा करेगा। तेरी चिन्ता करनेवाला भला मै कौन हूँ?

तेरा यह कहना ठीक ही है कि तू जो-कुछ करती है, मुझसे पूछकर ही करती है। तेरा यह कहना भी ठीक है कि ऐसा तू मेरी आज्ञासे करती है। तू जो-कुछ कर रही है, वैसा करना तेरा स्पष्ट कत्तव्य है। इसको देखते हुए मै तुझे और दूसरा-कुछ करने की आज्ञा भी क्या दूँ? लेकिन जबतक तू अपने कुटुम्बकी सेवामे लगी

रहेगी तबतक तुझे २५ रुपये कैसे दिये जा सकते है? इसलिए जयप्रकाशके लिए ही २५ रुपये और प्राप्त करने का निश्चय किया है। और तदनुसार भेजने के लिए कह भी दिया है। तुझे पूरी तरह आराम लेना चाहिए और थोडा घूमना-फिरना भी चाहिए। आशा है, तू तेल और मसाला तो नही खाती होगी। आटा चोकरवाला ही होता है न? तुझे पत्तीदार भाजी क्या मिलती है? और तुझे जो गुड मिलता है वह अच्छा तो होता है न?

अपने बारेमे तो मै तुझे लिख ही चुका हूँ। आजकल दूध, फल और सब्जी लेता हूँ। कही फिर बुखार न आ जाये, इस डरसे मैने रोटी खाना शुरू नही किया है। इधर मैने अपना वजन तो नही लिया है, क्योकि उसकी कोई व्यवस्था यहाँ नही हो सकी है। बा अभी देवदासके पास है और मनु भी वही है।

पिताजी से तेरे बारेमे और क्या बात कही जा सकती है? वे तेरे स्वभावकी प्रशसा कर रहे थे और तुझसे प्रसन्न थे। हाँ, २४ तारीखको मै काशी[1] पहुँचूगा और वहाँसे २६ को राजकोटके लिए निकलूँगा। राजकोटमे नारणदासके माता-पिताके दर्शन करके अहमदाबाद और वहाँ तीन दिन ठहरकर सेगाव पहुँच जाऊँगा। तू काशी थोडे ही आनेवाली है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८३)से।

४४४ बातचीत · जवाहरलाल नेहरूसे[2]

[३ अक्तूबर, १९३६][3]

यही कारण है कि तुम्हे बादशाह कन्यूट बनाया गया है, ताकि तुम इस कामको औरोसे ज्यादा बेहतर ढगसे कर सको।[4]

जवाहरलाल नेहरू लेकिन क्या इससे कोई अच्छा तरीका नहीं है? क्या यह जरूरी है कि यह सब आप खुद ही करें?

नही तो और कौन करे? पासके गाँवमे जाकर देखो तो पाओगे कि ६०० मे से ३०० लोग तो बीमार है। क्या उन सबको अस्पताल जाना चाहिए? हमे अपना इलाज आप ही करना सीखना है। हम अपने ही पापोका फल भोग रहे है। बगालमे

१ शिवप्रसाद गुप्तके आमन्त्रणपर गाधीजी को भारतमाता मन्दिरका उद्घाटन करना था।

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

३ **हरिजन**, १७१०१९३६के अकमें प्रकाशित महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में बताया गया है कि सरदार पटेलके साथ जवाहरलाल नेहरू ३ अक्तूबरको सेगाँव गये थे।

४ जवाहरलाल नेहरूने रोगियोंकी शुश्रूषा स्वय करने के गाधीजी के आग्रहकी तुलना इग्लैडके राजा कैन्यूट द्वारा समुद्रके ज्वारको रोकने के प्रयत्नसे की थी।

जलकी समस्यापर प्यारेलालने जो लेखमाला लिखी है, उसमे तुमने देखा होगा कि मलेरिया, हैजा और दूसरी तमाम बीमारियाँ हमने खुद पैदा की है। व्यक्तिगत दृष्टान्त पेश न करे तो फिर इन बेचारे गाँववालोको और किस तरह उस सम्बन्धमे कुछ सिखाये ?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-१०-१९३६

४४५ बातचीत : अमृतलाल ठा० नानावटीसे[1]

[३ अक्तूबर, १९३६ के पश्चात्][2]

तुम अगर इसलिए जाना चाहते हो कि तुम्हारे खयालसे अस्पताल या काका साहबके घर चले जाने से तुम अपने माता-पिताको ज्यादा खुश कर सकोगे, तो तुमको अवश्य चले जाना चाहिए। मै एक स्ट्रेचर तत्काल मँगवाकर तुमको वहाँ पहुँचवा सकता हूँ। लेकिन अगर तुम मेरी सुविधाके खयालसे जाने की सोच रहे हो तो मै तुमको बतला दू कि यह मेरे प्रति तुम्हारा ईमानदारीका व्यवहार नही होगा। कोई भी बेटा अपने बापकी सुविधाके खयालसे उसे छोड जाने की बात नही सोच सकता। अगर पुत्रके मुँहसे दबी जबान भी ऐसी कोई बात निकल जाये तो उससे पिताके मनको गहरी ठेस लगेगी। और यहाँ तो इस तरहका कोई खयाल करने की जरूरत भी नही है। यहाँ मुझे, जितनी मै चाहूँ, उतनी मदद मिल सकती है और मै तुमको फिरसे स्वस्थ बना सकता हू, यह बात उतनी ही अच्छी तरह जानता हूँ जितनी अच्छी तरह, जब बा दक्षिण आफ्रिकामे मौतके दरवाजे तक पहुँच चुकी थी[3] तब, यह जानता था कि मै सेवा-शुश्रूषा करके उसे बचा लूगा या जितनी अच्छी तरह मुझे यह मालूम था कि अपने बेटे मणिलालको मै उस टाइफाइड बुखारसे जिन्दा बाहर खीच लाऊँगा जो ४२ दिनतक आता रहा था।[4] डॉक्टरोने मुझे दोनो ही मामलोमे गम्भीर चेतावनी दे दी थी और साफ कह दिया था कि उनकी मृत्युके लिए मै ही

१ महादेव देसाईने अपने "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में इस बातचीत का विवरण इस भूमिकाके साथ दिया है "[अमृतलाल नानावटीकी] हालत देखकर स्पष्ट ही हम सब कुछ चिन्तित हो रहे थे और काकासाहब, मैं तथा अन्य मित्र सोच रहे थे कि उन्हें अस्पताल ले जायें, जिसके दो लाभ रहेंगे — एक तो यहाँकी चिचपिच कम होगी और गांधीजी की व्यस्तता तथा चिन्ता कम हो जायेगी और दूसरे, मरीजको चिकित्सीय सुविधा अधिक सुलभ हो जायेगी। हमने यह प्रस्ताव जब गांधीजी के सामने रखा तो मरीजको अस्पताल ले जाने की बातपर वे बिलकुल सहमत हो गये पर उनका आग्रह था कि दो एक बातोंका स्पष्टीकरण हो जाना चाहिए।"

२ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में दी गई जानकारीके अनुसार।

३ देखिए खण्ड ३९, पृ० २४६-४९।

४ देखिए खण्ड ३९, पृ० १९०९२।

जिम्मेदार होऊँगा। लेकिन मैं उनकी बलि देने के लिए उतना ही तैयार था जितना कि उनको बचा लेने के लिए चिन्ताकुल और उनकी परिचर्यामें सतर्क था। ईश्वरने मेरी आस्थाकी परीक्षा जरूर ली, लेकिन उसने मुझे उस परीक्षाको झेलने की शक्ति भी प्रदान की। चूंकि तुम एक वीर पुरुष हो इसलिए मैं तुमको बतला सकता हूँ कि यदि नौबत आ ही जाये तो मैं तुमको खो देने से भी कतई नहीं डरता, लेकिन इतना मैं जानता हूँ कि तुमको इससे बाहर निकालने के लिए जितना भी कुछ करना चाहिए वह सब मैं कर रहा हूँ। इसलिए तुम अगर मेरे ऊपर तरस खाकर मुझे छोडकर जाने का फैसला करो, तो यह मेरे प्रति और स्वयंके प्रति भी तुम्हारा ईमानदारीका व्यवहार नहीं होगा। मैं यह बात तुम्हारे सामने इतने स्पष्ट रूपमें इसलिए रख रहा हूँ कि हम लोग सत्याग्रही हैं और यह जरूरी है कि हम अपने प्रत्येक कार्यके उद्देश्यों और प्रेरणाओंके बारेमें विवेकपूर्ण ढंगसे विचार कर लें और हम न तो अपने-आपको धोखेमें रखें न दूसरोंको।

नानावटीको इसका उत्तर देने में कोई कठिनाई नहीं पडी "मैं केवल आपके खयालसे जाने की सोच रहा हूँ। मुझे लगता है कि मुझे आपकी इतनी चिन्ता का कारण नहीं बनना चाहिए। वैसे मैं जानता हूँ कि संसारमें अन्यत्र कहीं भी मेरी इससे अच्छी परिचर्या और इससे अधिक स्नेहपूर्ण देखभाल नहीं हो सकती।" और उन्होंने वहीं बने रहना पसन्द किया।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१०-१९३६

४४६ पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
४ अक्तूबर, १९३६

चि० कान्ति,

तेरा पत्र कल शामको वर्धा पहुँचा, इसलिए मुझे आज सुबह मिला। इतवार होते हुए भी तेरे मनकी शान्तिके लिए मैंने जो तार भेजा था, वह भी तुझे मिला होगा।

लम्बा पत्र नहीं लिख सकता, क्योंकि दो बीमारोंके बिस्तरोंके बीच बैठा हूं। बलवन्तसिंह और नानावटी बुखारकी चपेटमें आ गये हैं।

तू बडी मुसीबतमें पड गया है, उससे मुक्त तो हो ही जायेगा। धीरज और हिम्मत रखना। नम्रता किन्तु दृढतापूर्वक उससे मिलने से इनकार करना। कहना कि बापूका हुक्म है। मैं उसे भी लिख रहा हूँ[1] कि तुझसे बिलकुल न मिले, न तुझे

१ देखिए अगला पत्र।

तग करे। उससे तग आकर अहमदाबाद जाने की जरूरत नही है। वह तो ऐसी है कि वहाँ भी तेरे पीछे चली आयेगी। मैंने ही उसे अहमदाबाद अथवा राजकोट जाने का सुझाव दिया है। बीमारीकी हालतमे त्रिवेन्द्रम जाने को मना कर दिया है।[1] वह तेरे पीछे चाहे जहा जाये, उससे न मिलने मे ही तेरा निस्तार है।

किन्तु किसी और कारणसे यदि तेरा मन अहमदाबाद जाने को करता हो, तो शौकसे जा। मगनभाईके साथ रहना। दीवान बलूभाई [अपने स्कूलमे] तेरा स्वागत करेंगे। देवदास तेरी फीस देंगे। तू तो बस आनन्दसे और शान्तिपूवक अपना अध्ययन कर। मै अमतुस्सलामको तुझे तग नही करने दूँगा। मुझे लिखते रहना। उतावलीमे कोई कदम न उठाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३०७) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी

४४७ पत्र: अमतुस्सलामको

४ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

आज कान्तिका बहुत ही दु खद पत्र मिला। वह लिखता है कि तू उसे छोडती ही नही। घटो समय बरबाद करती है और निकम्मी बाते करती है, हालाँकि उसके पास एक मिनटका भी समय नही है।[2] मैंने तुझे खास तौरसे कहा था कि कान्ति चाहे तभी तू उससे मिल सकती है। मैंने कान्तिको तुझसे मिलने को मना कर दिया है, और तुझे भी कान्तिसे मिलने को मना कर रहा हूँ। कान्तिका तो जो होनेवाला होगा सो होगा। तू उसकी चिन्ता मत कर। बस तू चगी हो जा।

मुझे लिखना कि तू अब उससे नही मिलेगी। उसे कुछ लिखना हो तो मुझे लिखना। मेरा कल का पत्र मिला होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५६)से।

१ देखिए "पत्र अमतुस्सलामको", ३-१०-१९३६।
२ कान्ति गाधी मैट्रिककी परीक्षाकी तैयारी कर रहे थे।

४४८ पत्र अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
५ अक्तूबर, १९३६

मूर्खा रानी,

शहदकी एक, और सेबोकी दो टोकरियाँ पहुँच गई है, साथमे दो गिलास भी।

मुझे पूरी उम्मीद है कि देशमुख तुमको फिर देखेंगे।

निश्चय ही मै अब मासके बारेमे तुम्हारे साथ ओर सिर खपानेवाला नही हूँ। मै तुम्हारे औचित्यानौचित्यके विचारका सम्मान अवश्य ही करना चाहता हूँ।

मै दक्षिण आफ्रिकी शिष्ट-मण्डलके[1] तुम्हारे अनुभव सुननेके इन्तजारमे हू।

फिलहाल मुझसे लम्बे पत्रोकी उम्मीद मत रखना। दो लोग काफी बीमार है और अब मीरा फिर पड गई है। वह समझ नही पा रही है कि अपना पथ्य किस तरहका रखे। समझता कौन है? मूख लोग समझते हो तो समझते हा।

सस्नेह,

डाकू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०४ से भी

४४९ पत्र जे० एच० हॉफमेयरको

५ अक्तूबर, १९३६

प्रिय श्री हॉफमेयर,

आपका हार्दिकतापूर्ण पत्र[2] पाकर बडी प्रसन्नता हुई। मुझे पूरी आशा है कि इस देशमे आप अपने समयका लाभदायक उपयोग कर पा रहे है और आप जिन लोगोके सम्पकमे आ रहे है, वे आपका उचित सत्कार करते है।

मुझे इस बातका खेद रहेगा कि भारतमे आपके इतने सारे मित्र है [और आप उनसे मिल रहे है] किन्तु हम शायद बिलकुल ही न मिल पाये।

इस जानकारीमे शायद आपकी रुचि हो कि मै जिस कागजपर लिख रहा हूँ, वह हाथका बना है और मैं इसपर गाँवमे सुलभ नरकटकी कलमसे लिख रहा

१ और २ देखिए "पत्र - पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको", १३ ९ १९३६।

हूँ। आपको भारतके कुछ प्रतिनिधि गाँवोको देखे बिना भारतसे नही जाना चाहिए। हा, ऐसी आशा रखना तो मेरे लिए मूखतापूर्ण ही होगा कि आप वर्धा और सेगाव आकर देखे कि हम भी किस प्रकार अपना एक छोटा-मोटा प्रयत्न यहाँ कर रहे है।

आपको और आपके साथियोको स्नेह-वन्दन।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई

४५० पत्र महादेव देसाईको

५ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

जितनी सामग्री तैयार हो सकी, उतनी भेज रहा हूँ। लेख अभी लिख रहा हूँ। उसे पूरा करना चाहूँ तो कनुको अभी एक घटा और रोकना पडेगा। इसलिए यदि कोई आदमी यहाँ आया तो उसके हाथ भेजूगा, या विशेष वाहकके साथ आज शामको या कल सवेरे। मै आज तो बीमारोके बीच किसी प्रकार काम कर रहा हूँ। सरदार यदि नारणदासको १२वी-१३वी तारीख दे, तो काठियावाडके कार्यकर्त्ता बुलाये जाये। उनकी इच्छा जानकर तदनुसार नारणदासको लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मुझे कुछ डाक तो भेजनी ही पडेगी, इसलिए आदमी तो वहाँ जायेगा ही।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९४) से।

४५१ पत्र : नारणदास गाधीको

५ अक्तूबर, १९३६

चि० नारणदास,

फिलहाल तुम्हे मेरे पत्रकी आशा नही करनी चाहिए। मीरा ओर नानावटी बहुत सख्त बीमार है। उनकी सेवामे मेरा पूरा दिन निकल जाता है। जमना[1] भी मेरे पत्रकी आशा न करे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

प्रेमाका पत्र इसके साथ है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५०८ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

४५२ पत्र छगनलाल जोशीको

५ अक्तूबर, १९३६

चि० छगनलाल,

जयसुखलालके बारेमे तुम्हारी कैफियत मिली। उससे मुझे पूर्ण सन्तोष है। तुम्हारे विरुद्ध बहुत-सी जगहोसे शिकायते आई है। किन्तु उनमे से बहुत-सी शिकायतो पर मैने विश्वास ही नही किया। जिनपर विश्वास किया, उनके बारेमे मैने तुमसे बातचीत कर ली। मै तुम्हारा पत्र जयसुखलालको[2] भेज दूंगा।

चन्दूलालका विस्तृत उत्तर मिला है। उसका उत्तर तुम सीधे भेज देना। या फिर नकल करने का समय बचाने के लिए मुझे भेज देना।

अब तो हम मिलेगे ही, हालाँकि जिस दिन मै वहाँ पहुँचूंगा, मेरी इच्छा उसी दिन भाग आने की है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५४१)से।

१ नारणदासकी पत्नी।

२ देखिए "पत्र जयसुखलाल गाधीको", ६-१० १९३६।

४५३ पत्र . महादेव देसाईको

[५ अक्तूबर, १९३६][1]

चि० महादेव,

सलग्न सामग्री पूरी करके प्रह्लादके साथ भेज ही रहा था कि तुम्हारी बदूककी गोली आई। लेकिन वह फुस्स हो गई। तुम्हारा शुभ सन्देश पढकर मै हँसा। आजकल यहा हसने को समय जो नही मिलता। मेरी टिप्पणीमे[2] तुम्हारी आलोचना है, यह तो मेरे मनमे भी नही था। मीराबहनने जब उस ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया, तब भी मैने कहा, "महादेव क्या कर सकता है?" मेरी टिप्पणी रद करके अपनी टिप्पणी देना। इसमे मुझे क्या आग्रह हो सकता है? कुछ न दो, तो भी मै तो निभा ले जा सकता हू। प्रस्तुत अकमे भी ऐसी भूल रह गई है। उसे तो मै सुधारूँगा भी नही। तुम जितनी समझते हो, उससे बहुत अधिक शक्ति मुझमे ऐसी बातोकी उपेक्षा कर जाने की है। किन्तु तुम ठहरे कवि, सो भी पतली चमडीके, इसलिए बात-बातमे क्षुब्ध हो जाते हो। इसकी दवा मै कहाँसे लाऊँ? 'यह टिप्पणी इस तरह लिखी जाये, तो कैसा हो?'— इतना ही पूछ लेते तो भी काम चल जाता। इसके लिए इतना बतगड क्यो? लेकिन जो हुआ, सो हो गया। "आदत जो पड जाये भला वो दूर कहाँ होती है?" लीलावतीकी सफाई देना व्यर्थ है। वह यहाँ आई, यह तो उसके दोषके सिर सेहरा बँध जाने-जैसा हुआ। किन्तु ज्यो ही वह[3] बीमार पडा, त्यो ही उसने उसकी देखभालका काम खुद ही अपने हाथमे क्यो नही ले लिया? सच तो यह है कि उसपर जो दया की जाती है, उसके बोझके नीचे वह दब गई है।

देखो, अब कभी नाराज न होना। मैने अनुचित कहा हो तो सुधारना। लेकिन दु:ख मत करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मैकएरिसनका भाषण भेज रहा हूँ। इसका पहला अनुच्छेद हटाकर बाकी सब दे देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९२)से।

१ देखिए "पत्र महादेव देसाई को", ५ १० १९३६ और ६ १०-१९३६ तथा "पत्र लीलावती आसरको", ६ १०-१९३६।

२ कदाचित् यहाँ आशय "एक सुधार" १०-१०-१९३६ से है

३ प्रभुदयाल, देखिए अगला शीर्षक।

४५४ पत्र महादेव देसाईको

सेगाव, वर्धा
६ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

पत्रके साथ इतनी डाक तो भेज ही रहा हूँ। कल रात लिख चुका था। नानावटीका बुखार आज भी नही उतरा। आज तो उसे काफी कमजोरी लग रही है। बलवन्तसिहका बुखार उतर गया है। मीराबहन फिर बीमार पड गई और उसकी बीमारी गहरी मालूम होती है। उसके आँचलमे फोडा-सा हो गया है, वह शय्या-ग्रस्त है।

लीलावतीने हालमे जो आघात दिया, उससे मुझे बहुत दुःख हुआ है। आखोके सामने पडे हुए बीमारको वह भूल सकती है, यह तो मैने कभी नही सोचा था। तुम उसे प्रोत्साहन देते हो, ऐसा मुझे लगता है। तुम्हीने क्यो उसे प्रभुदयालकी सेवा मे नियत नही किया? कनु रात-भर जागा। सवेरे तीन बजे भणसालीने देख लिया और उसे छुट्टी दी। कनुसे मैने लिखकर पूछा, तब उसने इतनी बात कही। उसने यह भी कहा कि वह बातोमे तुम्हारा बहुत वक्त लेती है। मुझे लगा कि उसके मनमे अनेक शिकायते है। मुझे तो समय नही मिलता, और फिर मै तो लगभग गूगा हूँ। तुम उससे मालूम करना। झूठी दयासे उसका सुधार नही होगा। उसका रोग गहरा है। कही भी अनुशासन नही माना, यह तो वह खुद ही कहती है।

मेरे लिफाफे फिर खत्म हो गये। मुझे आठ बडल क्यो नही भेज देते? कितने ही पत्र मुझे बिना लिफाफेके भेजने पडे। काड तो बेहिसाब है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९३)से।

४५५ पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

६ अक्तूबर, १९३६

चि० अम्बुजम,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे भेजे फल मुझे नियमित मिल रहे है। उनकी कीमत बतानी पडेगी। यदि फल महँगे है तो मुझे तुमसे नही लेने चाहिए। भेटमे मिले तब भी मुझे फल ऐसी जगहसे मँगवाने चाहिए जहाँ वे सस्ते हो। आजकल यहाँ तीन व्यक्ति बीमार है।

तुम्हारी दलील सही भी है और गलत भी। मै अन्धविश्वाससे ज्यादा महत्त्व अस्पतालको दूंगा। एक बीचकी राह भी है——समझदारीसे घरेलू इलाज किया जाये

१ सम्बोधन हिन्दीमें है।

और फिर पूरे विश्वासके साथ उसके परिणामकी प्रतीक्षा। राजाओंको भी मरना पड़ता है। हजारोंकी मृत्यु अस्पतालोंमें होती है। यह सब भाग्यकी बात है। जीवन की डोर तो ईश्वरके हाथोंमें है। हम लोग उसके नियमोंका अनुसन्धान करके उनका पालन ही कर सकते हैं। मुझे ऐसा सम्भव नहीं लगता कि कभी वह समय भी आयेगा जब प्रत्येक ग्राम-वासी चाहे तो अस्पतालमें अच्छी चिकित्सा पा सके। हाँ, मैं इतना अवश्य सोच सकता हूँ कि ऐसा समय आयेगा जब उसे घर बैठे सही सलाह मिल जाया करेगी। लेकिन वह दिन भी अभी बहुत दूर है।

आशा है, तुम सब स्वस्थ होगे।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५६. पत्र : नन्दलाल बोसको

६ अक्तूबर, १९३६

प्रिय नन्दलाल बाबू,

आपके पत्रके लिए अपना आभार प्रकट करने और आपको यह बतलाने के लिए ही बस एक पंक्ति लिख रहा हूँ कि इस महीनेकी १३ तारीखको आप जब चाहे तब मुझसे मिल सकते हैं। आप अपने आने की तिथि महादेवको तार द्वारा सूचित कर देने की कृपा करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गां०

श्री नन्दलाल बोस
मार्फत – रवीन्द्रनाथ ठाकुर
६, द्वारकानाथ ठाकुर लेन
जोड़ासाँको, कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७७८)से।

४५७ पत्र ग्लैडिस ओवेनको

६ अक्तूबर, १९३६

प्रिय ग्लैडिस,[1]

तुम्हारी शुभकामनाएँ पाकर मुझे प्रसन्नता हुई।

तुम अजीब औरत हो। तुमको उन्ही दिनो छुट्टी लेनी थी जिन दिनो मुझे यहाँ नही रहना है। मै २२ तारीखको रवाना होकर ५ नवम्बर तक यहाँ पहुँचनेवाला नही हूँ। मै २४ और २५ [अक्तूबर][2] को काशीमे रहूँगा। लिखना कि तुम कब आ सकती हो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१९३)से।

४५८ पत्र रेहाना तैयबजीको

६ अक्तूबर, १९३६

प्रिय रेहाना,

तुम्हारा मर्म-स्पर्शी पत्र मिला। निश्चय ही, मै तुम्हारी और अम्माजान की रायसे सहमत हूँ। तुम्हारा पहला पत्र मिला तो मै यही नही समझ सका कि अपने समाजकी वर्त्तमान अवस्थामे अन्तर्जातीय विवाहकी बात अम्माजानने मान कैसे ली। हमीदा इतनी अच्छी लडकी है कि मुझे पूरा भरोसा है, वह तुम्हारी और अम्माजानकी रायके खिलाफ खडी नही होगी। मैं समझता हूँ, उसको लिखा मेरा पत्र[3] तुमने देख ही लिया होगा। अब शकरलालसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ और जरूरी हुआ तो प्रबोधको भी लिखूगा। कोई नयी बात हो तो मुझे लिखती रहना।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६५०) से।

१ बनारस के थियोसॉफिकल सोसाइटी स्कूल की अध्यापिका।
२ साधन सूत्रमें "नवम्बर" दिया गया है।
३ यह उपलब्ध नहीं है।

४५९ पत्र लीलावती आसरको

६ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

लीलासे [फिर] लीलावती हो गई, यह क्या कम लीला है? कही तू लिली हो जाती, तो न जाने मेरा क्या हाल होता?[1] तेरा निर्णय मुझे पसन्द है। मुझसे चिपटे रहना तेरी शक्तिके बाहर था। तू जहाँ भी होगी, मेरे आशीर्वाद तो तेरे साथ रहेंगे ही। मुझसे दूर भले रह लेना, मुझे एकदम भूल मत जाना।

मुझे छोडने का तेरा कारण अजीब है। तू काहेकी क्षमा माँग रही है? तूने क्या अपराध किया है? यदि किया है, तो उसका प्रायश्चित्त मुझे छोड देने मे नही, बल्कि दृढतर निश्चयपूर्वक मुझसे चिपटे रहने, तदनुसार आचरण करने तथा आगे अधिक सावधानी बरतने मे है। किन्तु विचित्र कारणसे भी किया गया निणय सदा स्वीकार करने के योग्य होता है। यही बात तेरे निणयके विषयमे भी है। तू जो भी कदम उठाये, महादेवसे परामर्श करके उठाना। कल तूने मेरी नाराजी देखी, किन्तु क्या उसमे मेरा असह्य दु ख नही देख सकी, मेरा प्रेम नही पढ सकी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४९)से। सी० डब्ल्यू० ६६२४ से भी। सौजन्य लीलावती आसर

४६०. पत्र : जयसुखलाल गांधीको

६ अक्तूबर, १९३६

चि० जयसुखलाल,

इस पत्रके साथ तुम्हारी शिकायतका जवाब भेज रहा हूँ। मै तो पूरी तरह मानता हू कि छगनलालका इनकार करना ठीक है। मेरे खयालमे नारणदासका भी यही मत है। कमसे-कम तुम्हारा समथन तो वह नही ही करता। अब तुम्हे या तो अपने आरोप सिद्ध करने चाहिए या फिर अपने मनको साफ कर लेना चाहिए। छगनलालमे दोष है, किन्तु मेरा विश्वास है कि जिस दोषका आरोप तुम उसपर लगा रहे हो, वह नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/३)से।

१ देखिए "पत्र लीलावती आसरको", २-१०१९३६।

४६१ पत्र हीरालाल शर्माको

६ अक्तूबर, १९३६

चि० शर्म्मा,

दो दर्दी तो मेरे पास ही है। दोनो को बुखार। एक को आठ दिन से है, ९९ से नीचे गया ही नही। दूसरा है सीमला मे। ऐसो का कया करोगे? दूसरे दर्दी भी यो तो काफी है। घर के सब अच्छे होगे।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६० के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

४६२ पत्र . महादेव देसाईको

६ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ जितनी लिखी जा सकी उतनी डाक भेज रहा हूँ। पूरी तो न जाने कब तैयार होगी। लीलावतीने जलेपर नमक छिडका है। फिर भी उसका निर्णय बिलकुल सच्चा है। मेरे साथ वह कभी सुखसे नही रह सकती। उसको अपने भविष्यके लिए मार्गदर्शन चाहिए।

यहाँ तो लगता है, बडी गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है। मीराबहनका बुखार साफ-साफ पलटा हुआ बुखार है। इस बार बुखार खतरनाक मालूम होता है। नानावटीकी तबीयत भी ठीक तो नही ही है। लगता है, वह भी मन-ही-मन निराश हो रहा है। जैसी भगवान्की इच्छा!

पत्रोमे नन्दलाल बोसको लिखा एक कार्ड है। शायद लेट फीस देकर भेजना ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९५) से।

४६३ पत्र · अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३६

मूर्खा और विद्रोहिणी दोनो,

तुम्हारा ही कोरा कागज बाकायदा भरकर लौटा रहा हूँ। खुर्दबीनोका इस्तेमाल शुरू भी हो गया है। उनका इस्तेमाल तरह-तरहके कामोके लिए किया जाता है—जैसे कि मरीजोकी और साथ ही साँपोकी जॉच के लिए भी। साँपोके दो जिन्दा नमूने मुझे फिर मिल गये है।

हाँ, नानावटी मेरे पास ही है। तीन लोग एक साथ बीमार चल रहे है—मीरा, नानावटी और बलवन्तसिंह। बलवन्तका बुखार उतर गया है। बाकी दोनो तो ठीक हो ही नही रहे है। उतार-चढाव के साथ उनका बुखार कायम ही रहता है। दोनोकी परिचर्यामें बडी सावधानीकी जरूरत है। जल-चिकित्सा चल रही है और उनको फलोके रसपर रखा जा रहा है। अभीतक ऐसा कुछ नही है जिसके कारण चिन्ता हो जाये।

शिमलामें भी, जाहिर है, उतनी हारी-बीमारी तो है ही जितनी और सब जगह रहती है और मै जब पहली बार वहाँ गया था तो लोगोने मुझे बताया था कि वह जगह रतिज रोगोके लिए बदनाम है। लेकिन जो लोग चाहे वे वहाँ पहाडोकी हवाका लाभ उठा ही सकते है। इसलिए यदि वहाँकी आबोहवा तुमको अनुकूल पडे तो तुमको वहाँ जबतक शम्मी चाहे तबतक रुकना चाहिए। मँगनवालका[1] ग्राम-सुधार कार्य तबतक अपने ढगसे चलता रहेगा।

मै अहमदाबाद जानेपर देखूंगा कि महिलाओके मतभेदोके सिलसिलेमे क्या-कुछ किया जा सकता है। लेकिन मै उम्मीद नही बँधा सकता। वहाँके हालात मै जानता हूँ। तुमने मुझे जो लिखा है उससे तो लगता है कि मृदुलाकी[2] ओरसे तुमको अपने पत्रका उत्तर नही मिला। पर वह निश्चयपूर्वक कहती है कि उसने तुमको पत्र लिखकर अपने घर आने के लिए आमन्त्रित किया है।

खानसाहब कहते है कि लडकियाँ तुम्हारा साथ चाहती है, यही काफी है। वे कहते है कि तुमने उनको जो स्नेहपूर्ण आमन्त्रण दिया है उसके लिए वे आभारी है। वे न तो चाहते है और न उनको ऐसी अपेक्षा ही है कि तुम उन्हे कुछ सिखाओ। खानसाहब बीमार तो नही पडे। मैने सुझाया था कि वे अपने दाँतोकी

१ पंजाब में एक स्थान।
२ मृदुला साराभाई।

जाँच करा ले और इसके लिए उनको नागपुर भेज दिया था। एक दाँत निकाल दिया गया था।

सस्नेह,

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४८) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०४ से भी

४६४ पत्र लीलावती आसरको

८ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

तेरा पत्र मिला। नागपुर जाने मे अस्थिरता है, महादेवके पास रहने मे स्थिरता है। इसलिए अगर उसके पास रहे तो अच्छा होगा। महिलाश्रमकी जीवनचर्या निबाह सके तो वहाँ रह। किन्तु मुझे भय है कि तू उसे निबाह नही सकेगी। इतना जान ले कि मैने अभी तुझसे आशा छोडी नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३५०) से। सी० डब्ल्यू० ६६२५ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४६५. हरिजन-सेवकोका कर्त्तव्य

जबसे हरिजन सेवक सघकी स्थापना हुई है, प्रधान कार्यालय अपनी प्रान्तीय शाखाओकी खुले हाथो सहायता करता रहा है। और यह बिलकुल ठीक भी था। पर अब नि सन्देह वह समय आ गया है, जब शाखाओको अपने पैरोपर खडे होकर स्वाश्रयी बन जाना चाहिए। यह करते हुए उन्हे अपने कायक्रमको छोटा करना पडे तो भी कोई चिन्ताकी बात नही होगी। प्रत्येक प्रान्त बल्कि प्रत्येक जिले और प्रत्येक तहसीलका काम स्थानीय सवर्णोकी सक्रिय सहायताका द्योतक होना चाहिए। क्योकि सघका प्रधान उद्देश्य तो यही है कि वह सवर्णोके हृदयपर असर डाले और उसमे आवश्यक परिवर्तन कर दे। मान लीजिए कि प्रधान कार्यालय दो-तीन सुधारकोसे एक करोड रुपया एकत्र कर लेता है और उसकी सहायतासे देशमे हरिजन बालक-बालिकाओके लिए पाठशालाएँ और छात्रालय खोलने की गरजसे सारे हिन्दुस्तानमे अपनी शाखाएँ स्थापित कर देता है, लेकिन इससे कही अस्पृश्यता-रूपी अभिशापका अन्त थोडे ही नजदीक आ सकता है। क्योकि सवर्णोंका हृदय तो ज्यो-का-त्यो पत्थर-सा

कठोर बना रहेगा। इसके विपरीत फर्ज कीजिए कि हमे एक पाई भी खर्च नही करनी पडती है और सद्भाग्यसे अचानक सवर्णोका हृदय पलट जाता है, अस्पृश्यताका पाप एक भूतकालकी चीज बन जाता है, तब तो सघका सारा उद्देश्य सफल हो जाता है। उस दशामे तो प्रत्येक पाठशाला, देवालय और अन्य सस्थाओके द्वार हरिजनोके लिए भी उसी भाँति खुल जायेगे, जिस तरह कि आज वे सवर्णोके लिए खुले हुए है। कोई नही कह सकता कि वह शुभ दिन कब आयेगा। शायद हमारी आशासे जल्दी आये। शायद देरसे भी आये। पर यह जब भी आये, हरिजन सेवक सघका उद्देश्य है यही। उसका उद्देश्य यह तो हरगिज नही है कि हरिजनोके लिए अलग-अलग पाठशालाएँ, मन्दिर, कुएँ वगैरह वह बनवाता रहे और इस तरह हम अस्पृश्यताकी उम्र बढाते रहे। बेशक, मन्दिर, कुएँ और पाठशालाएँ तो खुद हम भी अभी बनवा ही रहे है, पर बनवाते है उसी उद्देश्यको पूरा करन के लिए। इन चीजो का बनवाना हमारे लिए जरूरी तो इसलिए हो गया कि सवर्णोके हृदयमे परिवर्तन बहुत धीरे-धीरे हो रहा है।

सुधारकोकी सख्या जरूर बढ रही है। पर वे केवल अपने बीचसे छुआछूतका पाप हटाकर और इस तरहकी घोषणाएँ करके ही अपनेको कृत्यकृत्य न समझ ले। यह परिवर्तन उनके आचरणमे भी नजर आना चाहिए। हरिजन-कायके लिए कुछ आर्थिक सहायता करना इस परिवर्तनका एक प्रत्यक्ष प्रमाण और हरिजन-सेवाके कार्यक्रमका एक आवश्यक अग होगा, पर अगर कही यह एक ऐसी चीज बन जाये जो मुट्ठी-भर लोगोतक ही सीमित हो और ये लोग महज अपने दिलको समझाने के लिए ही उदारतापूर्वक रुपये-पैसेकी सहायता कर दिया करते हो तो वह मेरे बताये महान् आदर्शका चिह्न नही हो सकता। इसीलिए सघका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने कार्यक्रमके इस बुनियादी हिस्सेकी ओर अपनी शाखाओका ध्यान आकर्षित करे और शाखाओका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे इसके महत्त्वको महसूस करते हुए अपने-आपको पूरे तौरपर स्वावलम्बी बनाने की तैयारीमे लग जाये। असल मे, प्रान्तीय सघोपर धीरे-धीरे यह भार डालना शुरू भी कर दिया गया है कि वे खुद ही अपनी सस्थाओकी आर्थिक सहायता करे, पर अब तो इस सम्बन्धमे निश्चित और आखिरी निर्णय करने का समय आ गया है।

जबतक तमाम कार्यकर्त्ता यह अनुभव नही कर लेते कि यह आन्दोलन मुख्यतया धार्मिक है, तबतक पूर्ण स्वावलम्बनका हमारा यह लक्ष्य पूरा नही हो सकता। इस देशमे हम ऐसी चीजोपर खुले दिलसे खच करते है जिन्हे लोग धार्मिक समझते है। अगर इसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण देखना चाहे तो वह हमारे तीथस्थानोकी एक बार सैर कर ले। धार्मिक कार्योके निर्वाहके लिए स्थापित दानकी निधियोके इतिहास का अगर हम अध्ययन करे तो हमे यह जानकर दु ख होगा कि किस तरह लाखो-करोडो भोले-भाले लोग इन सस्थाओको अतुल धनराशि अर्पण कर देते है और इस बातकी परवाह तक नही करते कि उसका उपयोग किस तरह हो रहा है। अगर उन्हे यह विश्वास हो जाये कि जिस चीजके लिए वे दान कर रहे है, वह धार्मिक है

तो इतना उनके लिए काफी है। हरिजन-सेवक जिस उद्देश्यसे सेवा कर रहे है, वह शुद्धतम अर्थमे सम्पूर्णतया धार्मिक है। अगर अपने अगीकृत कार्यमे उन्हे पूरी श्रद्धा हो, तो वे पर्वतोको भले ही विचलित न कर सके, पर इतना धन तो अपने आसपास से जरूर इकट्ठा कर सकते है कि जिससे उनकी सस्थाओका काम चल जाये।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १०-१०-१९३६

४६६ एक सुधार

मुझे मालूम है कि 'हरिजन' मे अकसर छपाईकी भूले रह जाती है। हर सप्ताह शुद्धि-पत्र देना पण्डिताऊपन नही तो कष्टसाध्य तो होगा ही। 'हरिजन' जिन कठिन परिस्थितियोमे प्रकाशित किया जा रहा है, उनको देखते हुए मेरे सामने समस्या यह है कि इसका प्रकाशन बन्द कर दूँ या नियमित रूपसे होनेवाली छपाईकी भूलोके बावजूद प्रकाशित करता रहूँ। और जबतक काफी सख्यामे ग्राहक इन भूलोको बरदाश्त कर रहे है तबतक मैने दूसरा रास्ता ही अख्तियार किये रहने का निश्चय किया है। लेकिन २६ सितम्बरके अकमे "द लॉ ऑफ आवर बीइग" ("जीवन-धर्म") शीर्षक लेखमे दो भारी भूले है जिन्हे सुधारना जरूरी है।[1]

जान पडता है कि गलतियोकी शुरुआत वर्धामे हुई, जहाँ टाइपिस्टने सेगाँवसे भेजी पाण्डुलिपिको पढने मे भूल कर दी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १०-१०-१९३६

४६७ पत्र . अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१० अक्तूबर, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

इधर कुछ दिन मै तुम्हारी तरफ ध्यान न देनेपर विवश था। सन्तोष इसी बातका है कि तुम्हे नही लिखा तो लगभग किसीको नही लिखा और अपना सारा समय बीमारोको देता रहा। मै अभी नही कह सकता कि उनकी हालत सुधर रही है। रोज ही बुखार धीरे-धीरे चढ रहा है। अभीतक कोई खतरा नही दिखाई देता। लेकिन दोनो बहुत कमजोर हो गये है। यदि उनके शरीरमे जीवनशक्ति पर्याप्त हुई, तो वे बिलकुल चगे हो जायेगे। चिन्तित न वे है और न मै ही। आज सिविल सर्जन उनको देखने आये थे। उनकी केवल जल-चिकित्सा चल रही है।

१ देखिए "जीवन धर्म", २६-९-१९३६। हिन्दी में भूलों को सुधारकर अनुवाद दिया गया है। भूल सुधार यहाँ नहीं दिया जा रहा है क्योंकि हिन्दी खण्डकी दृष्टि से वह अनावश्यक है।

मै तुम्हारा रेडियो-प्रसारण[1] अभी-अभी पूरा पढकर उठा हूँ। तुमने गाँवोके अपने अनुभवोको बडे सुन्दर ढगसे पेश किया है। दूसरा हिस्सा इतना सन्तुलित नही है।

तुम्हारा कहना है कि "प्राचीन व्यवस्था नष्ट हो चुकी है।" यदि नष्ट हो चुकी हो तो फिर पुनरुद्धारका सवाल ही कहाँ उठता है? लेकिन बादमे तुमने खुद ही दिखाया है कि अधिकसे-अधिक यही कहा जा सकता है कि वह सड-गल गई है, नष्ट नही हुई है।

और फिर तुमने शुरुआत गलत सिरेसे की है—सडको तथा मकानोके निर्माणसे। ये कौन कर सकता है? सफाई निश्चय ही पहली चीज है।

इसपर तो हम सहमत भी थे!! और तुमने उसीसे शुरू भी किया। लेकिन तुम यदि इतनी मामूली-सी चीजको याद रख सकती तो फिर मूर्खा रानी कैसे कहाती? और फिर तुमने कोई ऐसा स्पष्ट विभाजन भी नही किया कि कौन-से काम जनता खुद और कौन-से सरकार कर सकती है और उसे करने चाहिए। इससे ज्यादा तो तुम नही चाहती हो न? और तारीफकी तो तुमको जरूरत ही नही। उससे तो तुम अघा गई होगी।

यदि तुम सिर्फ दो महीने मेरे पास रहने की अनुमति पा जाओ, तो मुझे आशा है कि मै तुम्हारा काया-कल्प कर दूंगा। डॉक्टरी दृष्टिसे यह एक्जीमा निश्चय ही बडी चिन्ताकी चीज है। लेकिन मै इसके बारेमे इतनी हताशा महसूस नही करता। जाहिर है, यदि तुम बिलकुल चगी न हो तो तुमको अहमदाबाद नही जाना है।

इधर कुछ दिनोसे तुम्हारे भेजे सेब पिलपिले नही रहते और सब अच्छी हालतमे मिलते है। तुमको मुझे यह बताना चाहिए कि हर बार भेजे गये फलोकी कीमत कितनी पडती है और उनपर रेल-भाड़ा कितना लगता है। शहद भी बिलकुल हिफाजतसे आ गया। कल मैने सारा निबटा दिया। बडा बढिया था।

मुझे लॉयनेलका कोई पत्र अबतक नही मिला है।

खान साहब जितने फल खा सकते है, उनके पास है। मुझे सेब तुम और अम्बुजम भेज देती हो—मेरी जरूरतसे ज्यादा—मोसम्बियाँ बम्बईसे आ जाती है और सतरे यहीसे।

सस्नेह,

तानाशाह

[पुनश्च]

खान साहब १४ तारीखको दिल्लीके लिए रवाना होगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७४९) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६९०५ से भी

१ ग्रामीण-महिलाओं के नाम।

४६८ पत्र : देवदास गांधीको

१० अक्तूबर, १९३६

चि० देवदास,

पूरी विचारश्रेणी बा की है,[१] यह जानकर प्रसन्न हुआ। उसमें ऐसी शक्ति तो है ही। पत्र तो अच्छा है ही। डॉ० महमूदने लम्बा पत्र लिखा है। इस पत्रके साथ है, पढकर फाड डालना। तूने इतना लम्बा पत्र लिखा है, इससे क्या यह समझना चाहिए कि अब तू ठीक-ठीक लिख सकता है? दो बीमार मेरा बहुत वक्त ले लेते हैं। यह वक्त देना मुझे अच्छा भी लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०३५) से।

४६९. पत्र . वैकुण्ठभाई ल० मेहताको

१० अक्तूबर, १९३६

भाई वैकुठ,

कल ही सुना कि लल्लूभाई[२] फिर बीमार पड गये हैं। जहाँ आप-जैसे सेवक शुश्रूषामें लगे हो, वहाँ सब प्रकारसे कुशल ही होगा। आशा है, अबतक तो आराम आ गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कृषि-विभागके बारेमें शकरलालसे बात कर ली है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३६३) से।

१ देखिए "पत्र कस्तूरबा गांधीको", ३-१०१९३६।

२ वैकुठभाई के पिता लल्लूभाई शामलदास।

४७० पत्र प्रभावतीको

१० अक्तूबर, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। मेरी तो अवश्य ही ऐसी इच्छा है कि तू मुझे काशीमे मिले। किन्तु इसे धर्मके विरुद्ध जाकर पूरा नही करना है। यदि तू वहाँसे मुक्त नही हो सकती, अथवा यदि मुक्त हो सकती है किन्तु जयप्रकाशकी इच्छा न हो, तो तेरा आना अनुचित माना जायेगा और मेरी इच्छा भी धर्म-विरुद्ध ही मानी जायेगी। अत यदि उपर्युक्त दो शर्तोकी रक्षा करके तू आ सके तो मुझे अच्छा लगेगा। मेरी इच्छा तो यह भी होती है कि इस समय तू मेरे साथ होती तो कितना अच्छा होता। किन्तु यह इच्छा भी धर्म-विरुद्ध ही मानी जायेगी, क्योकि अभी तेरा धर्म वही रह कर जो सेवा तू कर रही है, सो करना है। मेरे पास मीराबहन और नानावटीकी खाटे पडी है। दोनो बहुत बीमार है। ऐसे समय तू हो, तो मुझे बहुत मदद मिले। किन्तु मै ऐसी इच्छा कैसे कर सकता हूँ? यो तो महादेव हो, तो भी मदद मिले। किन्तु उसकी उपस्थितिकी इच्छा करना भी अधम है। उसके सामने वह धर्म है, जो मैने उसे सौपा है। ऐसा ही दूसरोके विषयमे भी है। अब तो तू इच्छाकी बात समझ गई न? हमारी सारी इच्छाएँ भगवान् कहाँ पूरी होने देते है?

इस सारे काममे मेरी तबीयत ठीक रहती है। अभीतक यही बात मेरे स्वभाव मे रही है। बीमारोकी देखभालके समय भगवान् मुझे चगा रखते आये है। इस बार भी ऐसा ही होगा, यही आशा सँजोये हुए हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८४) से।

४७१. पत्र : लीलावती आसरको

सेगाँव, वर्धा
प्रात ५ बजे, ११ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

देखना, तेरे बारेमे मुझे जो डर है, उसे सच मत कर देना। यहाँ आने के बन्धनसे छूटी, यानी क्या सब बन्धनोसे छूट गई? क्या श्लोकोकी नकल करना बन्द कर दिया? तेरा मतलब यह तो नही है कि अब किसी भी दिन तू यहा नही आ सकती? दिलरुबा-वादक[1] तो इस समय खटियासे लगा है। तो क्या बाजा अब तेरे पास भेज दूँ? और भी तेरी अनेक चीजे यहाँ पडी है, उनकी सूची भेज दे तो उन्हे भी भेज दूँ अथवा तू ले जा। जैसा ठीक लगे, वैसा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३५१) से। सी० डब्ल्यू० ६६२६ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४७२. पत्र अमतुस्सलामको

११ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

मै तेरा पत्र ध्यानसे पढ गया हूँ। तू अपने निश्चयपर दढ रहना। बम्बई मत छोडना। मुझसे जो मदद चाहिए सो माँग लेना। खुश रहना और अपनी तबीयत सुधार लेना। तबीयत सुधार लेने के बाद भले तू सेगाँव आ जा। इस गावमे तो तीन चौथाई हरिजन है। मेरे पास हरिजन ही है। वे मौज करते है। उनकी तबीयत भरके सेवा करना। अब और क्या चाहिए? लेकिन यह याद रखना कि यदि बीमार पडी तो तुझे फिर बम्बई जाना पडेगा। तू अपने-आप बीमार पडती है। अपना नख तुरन्त ठीक करा लेना।

कान्तिके बारेमे मेरा कलका पत्र मिला होगा। यदि तू उसपर प्रसन्नतापूर्वक अमल करेगी तो तू, मै और कान्ति सुखी होगे। मुझे याद करने की अपेक्षा यदि खुदाको याद करती तो तू जो चाहती है वह जरूर मिल जाता। अब भी ऐसा ही कर। मुझे भूल, कान्तिको भूल, सरस्वतीको भूल। केवल ईश्वरका ध्यान धर। इसका

१ मतलब अमृतलाल नानावटी से है, जो उस समय बीमार थे।

यह अथ नही कि तू मुझे छोड दे या मै तुझे छोड दूँ। लेकिन इसका यह अर्थ तो है ही कि मेरे प्रति तेरा जो विशेष रुझान है उसे छोडकर सिर्फ खुदाका ही भरोसा कर। यदि ऐसा करेगी तो तू जरूर सुखी होगी और शान्ति भी मिलेगी।

खुदाको याद करके रोने मे तो एक अर्थ है। मनुष्यको याद करके रोने से आँखे खराब होनेके सिवा और कुछ नही मिलता। अगर मेरी माने तो वही धीरजसे पडी रहना।

वदूद से कहना, अब उसे अलग से नही लिखता। यह भी रातको आठके बाद लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५७) से।

४७३. चर्चा : मारवाडी विद्यालयके विद्यार्थियोके साथ[1]

१२ अक्तूबर, १९३६

गाधीजी ने विद्यार्थियोसे कहा कि उनको प्रधानाचाय श्रीयुत आर्यनायकमके योग्य बनना चाहिए। श्रीयुत आर्यनायकमने जमनालालजी के आमन्त्रणपर सस्थाका कार्य-भार सँभालना स्वीकार किया है। उन्होने कैम्ब्रिज और लन्दन और बादमें शान्तिनिकेतनके अपने कार्य-कालमें विशिष्ट सफलताएँ प्राप्त की है। अब वे अपनी धर्मपत्नीके साथ वर्धा आ गये है। उनकी पत्नी भी सस्कृतकी बडी विद्वान् है और वे बनारस विश्व-विद्यालयकी एक प्रतिष्ठित स्नातिका है। उनको जमनालालजी द्वारा ही खडी की गई सस्था, महिला विद्यालयका कार्य-भार सौंपा गया है। गाधीजी ने विद्यार्थियोसे कहा कि वे अपनेको प्रधानाचार्य ही नहीं, जमनालालजी के भी योग्य बनायें। [गाधीजी ने आगे कहा]

वे [जमनालालजी] बहुत पहले ही जाति और सम्प्रदायके बन्धनोको तोड चुके है, और हालाँकि यह सस्था केवल मारवाडियोके दानके बलपर ही खडी हुई है और इसीलिए इसको यह नाम दिया गया है, पर जमनालालजी को तबतक सन्तोष नही होगा जबतक इसके द्वार सभी जातियो और धर्मोंके बालकोके लिए नही खोल दिये जाते। वे इसके कार्यमे तबतक कोई रुचि नही लेगे जबतक वे इस सस्थाका वर्त्तमान सकुचित रूप बदलनेका — इसके द्वार अन्य हिन्दुओकी ही तरह हरिजनोके लिए और हिन्दुओकी ही तरह मुसलमानोके लिए भी खोल देनेका — रास्ता नही निकाल

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। इस विद्यालयके प्रधानाचार्य और विद्यार्थी गांधीजी के जन्म-दिवस पर, जो गुजराती पचाँग के अनुसार १२ अक्तूबर को पडा था, उनसे मिलने आये थे।

लेते। उनके हृदयमे अस्पृश्यताके लिए और ऐसी भावनाके लिए भी बिलकुल गुजाइश नही है कि हिन्दू-धर्म अन्य किसी भी धर्मसे किसी भी तरहसे श्रेष्ठ है। उन्होने हिन्दुओकी सस्थाओकी जितनी सहायता की है उससे किसी भी कदर कम सहायता मुसलमानोकी सस्थाओकी नही की है। उनके अनेक मुसलमान मित्र है जिनको वे अपने सगे भाइयोकी तरह मानते हैं। मै आप हिन्दू ओर मुसलमान विद्यार्थियोसे कहता हूँ कि आप जमनालालजी के जीवनसे शिक्षा लेकर दूसरोके धर्मोका उतना ही सम्मान करे जितना जमनालालजी करते है और एक-दूसरेके साथ सगे भाइयो-जैसा व्यवहार करे। मै आपको एक बात बतलाता हूँ जो आप शायद नही जानते और शायद बहुत लोग नही जानते। अस्पृश्यता-निवारणके प्रति जमनालालजी के मनमे जो लगन है, साम्प्रदायिकताकी भावनासे वे जिस तरह मुक्त है और उनके मनमे सभी धर्मोंके प्रति जो समान आदर-भाव है, उसका कारण मै बिलकुल भी नही हूँ। कोई भी अपना विश्वास दूसरेके हृदयमे नही बैठा सकता। कोई व्यक्ति बस इतना ही कर सकता है कि किसीके अन्दर जो विश्वास पल रहा है, उसे निखारने मे वह उसकी कुछ सहायता कर दे। लेकिन जहाँतक जमनालालजी के अन्दर ये विश्वास उदित होने या इनके निखरने का सम्बन्ध है, मै इसमे उनकी कोई सहायता करने का श्रेय तक नही ले सकता। मुझसे उनकी मुलाकात होने के बहुत पहलेसे ही उनके ये विश्वास बन चुके थे और वे उनको अपने जीवनमे उतारने लगे थे। उनके इन आन्तरिक विश्वासोके कारण ही हम दोनो एक-दूसरेके निकट आये और उन्हीके कारण हम इतने वर्षोंसे परस्पर पूरा सहयोग करते हुए काम करते आ रहे हैं। आप बच्चोको ऐसे व्यक्तिके योग्य बनना पडेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २४-१०-१९३६

४७४. पत्र : अमतुस्सलामको

१३ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरे पत्र मिले। लेकिन मुझे बीमारोकी तीमारदारीसे एक मिनटकी भी फुरसत नही मिलती। नानावटी और मीराबहन टाइफाइडसे पीडित है। उनके पास रात-दिन किसीको बैठना पडता है। मुश्किलसे ही किसीको पत्र लिख सकता हूँ। अगर तुझे पूरी सुविधा मिले और तेरा शरीर जाने लायक हो तो जरूर मक्का शरीफ जा।

यदि तू किसी भी तरह अपना स्वास्थ्य सुधार ले तो बडी बात होगी। मै तो अच्छा ही हूँ। वजन तो लिया नही। साधन भी नही है।

डॉ० जीवराजके लिए पत्र[1] इसके साथ है। डॉ० गिल्डरके बारेमे भी लिख रहा हूँ।

फिलहाल ज्यादा पत्र पानेकी आशा छोड देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५८)से।

४७५. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
१३ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

जब तुम्हारा मस्तक मेरे चरणोमे ही है तो फिर तुम्हे भूलने की बात ही कहा उठती है?

मेरा खयाल है, लेख[2] जैसा है वैसा ही जाने दो। उसकी दलीलोका पूर्वानुमान करने की अपेक्षा स्वय उसे अपना असन्तोष प्रकट करने देना अधिक ठीक होगा। मै अपनी पुरानी दलील भूल गया था, तिसपर भी आज फिर वही अनायास मेरे मनमे उभर आई, तो मुझे लगता है, यह ठीक ही है। अत अच्छा है, लेख जैसा है वैसा ही जाये। मैंने कह तो दिया था न कि मेरे पास कोई सामग्री नही है। बीमारोकी वजहसे समय नही निकाल पाता, इसका मुझे दु ख नही है। शेष कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तुम्हारे हिस्से जो सेवा पडी है, उसीमे पूर्ण सन्तोष मानना चाहिए।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९६)से।

१ यह पत्र उपलब्ध नही है।
२ देखिए "अहिंसा की गुत्थियाँ", १७-१०-१९३६।

४७६. पत्र : प्रेमाबहन कटकको

सेगाँव
१४ अक्तूबर, १९३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू तो अब गगन-विहारिणी हो गई है। भले ही उड। परन्तु थककर गिरना मत।

मेरी अगल-बगलमे मीरा और नानावटीके बिस्तर है। दोनो आन्त्रज्वरसे पीडित है।

कहा जा सकता है कि मेरी डाक बन्द है। परन्तु तू अपनी छावनीके लिए मेरा जो आशीर्वाद माँगती है, वह तो है ही। मुझे आशा है कि सेविका होने के कारण तू बिना किसी आडम्बरके सेवा ही करेगी और समझेगी कि सेवाका पुरस्कार सेवा ही है।

मै तो यह नही जानता कि मुझे बम्बई जाना है। अहमदाबाद जाना भी अब तो अनिश्चित हो गया है। मीराको इस स्थितिमे छोडकर तो मै हरगिज नही जा सकता। यह कहा जा सकता है कि नानावटीकी तबीयत अब सुधारपर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८५)से। सी० डब्ल्यू० ६८२४ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

४७७ सन्देश : मिल-मालिक संघ और मजदूर-सघको[1]

[१५ अक्तूबर, १९३६ के पूर्व][2]

महात्माजी का कहना है कि उनको टाइफाइड बुखारके दो मरीजोकी देखभाल करनी है, फिर भी वे २१ अक्तूबरको दो घण्टेका समय देने को तैयार हैं। यदि मरीज काफी ठीक हो गये तो उनको २२ अक्तूबरको बनारसके लिए रवाना हो जाना है।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-१०-१९३६

१ मिल-मालिकों और मजदूरों, दोनों के सघों ने वेतन की कटौती के प्रश्न के सिलसिले में अपनी अपनी बात गांधीजी को समझाने के लिए उनसे अनुरोध किया था कि वे अपनी सुविधानुसार कोई तिथि निश्चित कर दें।

२ यह सन्देश "अहमदाबाद, १५ अक्तूबर" की तिथि पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४७८ पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
१६ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

कल अखबार नही आये। साथमे दो पत्र है। तार तो है ही। आज नानावटी की तबीयतमे बहुत सुधार कहा जा सकता है, सवेरे तापमान ९९ था। मीराकी तबीयतमे भी सुधार तो हुआ ही है, बहुत दिनोके बाद आज तापमान १०१ हुआ। लीलावतीके कपडे मैने किसीके साथ भेजे थे, मिले होगे। अब भी कुछ रह गया है क्या? हो तो लिखे, जिससे मै खोज निकालूँ। एक खूब फटी हुई बदरग साडी है जो बिलकुल सफेद हो गई है, क्या वह उसकी है? भणसालीका क्या हाल है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९८)से।

४७९ पत्र : अमृतकौरको

१६ अक्तूबर, १९३६

मूर्खा रानी,

थोडी फुरसत मिली है। सोचा कि तुमको कुछ शब्द लिखनेमे इसका उपयोग कर लूँ। मरीज चगे हो रहे है, हालाँकि बुखार अभी गया नही है। गाँवोके कितने लोग अस्पताल जा सकते है? मै चाहता तो दोनो मरीज अस्पताल चले गये होते। मैं अपने पिछले जीवनको और हालमे ही लिखे अपने लेखको[1] नकारे बिना ऐसा नही कर सकता था। ईश्वर जबतक मेरी इस देहसे इस धरतीपर काम कराना चाहता है, तबतक वह खुद ही इसकी हिफाजत करेगा। और जब अन्तिम घडी आ पहुँचेगी तब ससारके सारे चिकित्सक मिलकर भी मुझे नही बचा पायेगे।

सस्नेह,

तानाशाह

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०५ से भी

१ देखिए "मेरी बीमारी", १९-९-१९३६।

४८०. पत्र : विट्ठल ल० फडकेको

१६ अक्तूबर, १९३६

चि० मामा,

मुझे तुम्हारा पिछला पत्र याद नही पडता। फिलहाल तो पत्रोका अम्बार लग गया है, क्योकि दो रोग-शय्याओके बीच पडा हूँ। हालत तो ऐसी है कि गुजरातमे तीन दिनसे ज्यादा मै नही ठहर सकता। जो होगा, सब सरदारके हाथमे है। अभी कही जाने का उत्साह मेरे मनमे नही है। लेकिन सरदारको लिखो। बाकी तो तुम्हारा पत्र हाथ लगे तब या फिर जब तुम लिखो तब। अहमदाबादमे मुझसे कौन कितने मिनट लेगा, यह आज ही कैसे कहा जा सकता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३६) से।

४८१. पत्र महादेव देसाईको

१६ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

लगता है तुम काममे खूब व्यस्त हो। बुखार धीरे-धीरे कम तो होता जा रहा है लेकिन अभी आ रहा है।

साहित्य परिषद्के कागजोका यह ढेर कब पढूँ? उसे वापस भेज रहा हूँ। उसमे से सविधान तथा चन्द्रवदन-सम्बन्धी सामग्री निकाल ली है। और कुछ पढने लायक हो, तो भेजना। कार्यक्रम लिख भेजना। शायद पहले एक दिनके लिए राजकोट जाना होगा। वहाँसे शायद सरदार मुझे सीधे नडियाद ले जाये और ३० तारीखको तीसरे पहर अथवा शामको अहमदाबाद पहुँचूँ। मेरी राजकोट-यात्रा कौटुम्बिक यात्रा है, इसका उल्लेख कर देना। अभी तो रगढगसे ऐसा लगता है कि तुम्हे सेगाँवमे रहना पडेगा। पूरी बात सोमवार तक समझमे आयेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११४९९)से।

४८२. अहिंसाकी गुत्थियाँ

एक कॉलेजके प्रोफेसर और एक कक्षाके पचास विद्यार्थियोके दो प्रतिनिधि लिखते हैं[१]

आपको अवश्य ही पता होगा कि पियस और आर्यरत्न द्वारा सम्पादित इन्टरमीडिएटकी पाठ्य-पुस्तक 'मॉडेल्स ऑफ कम्पैरेटिव प्रोज' में, जो इस साल हिन्दुस्तानके अधिकाश इन्टरमीडिएट कॉलेजोमें पढाई जा रही है, आपकी 'द स्टोरी ऑफ माई एक्सपेरीमेंट्स विद ट्रुथ' में से एक पाँच पृष्ठका अध्याय दिया गया है। इसका शीषक "नॉन-वायलेंस" (अहिंसा) है। उसमें आपने इस विचारोत्तेजक सिद्धान्तकी और जीवनमें उसके प्रयोगकी चर्चा की है।

मेरी कक्षाके पचास विद्यार्थी और उनका अध्यापक, मैं भी, इस निबन्धके अध्ययन और चर्चामें कक्षाके कई घटे लगा चुके है। .

पर एक जगह तमाम विद्यार्थी और उनका अध्यापक, मैं भी, आपके विचार ठीक तरहसे नहीं समझ पाये है। मेरा मतलब आपके उस कथनसे है जहाँ आपने इसका जिक्र किया है कि युद्धके समय अहिंसाके अनुयायीको क्या करना चाहिए। आपके शब्द ये है[२] "दो राष्ट्रोके बीच युद्ध छिडने पर अहिंसा में विश्वास रखनेवाले व्यक्ति का धर्म है कि वह उस युद्धको रोके। जो इस धर्मका पालन न कर सके, जिसमें विरोध करने की शक्ति न हो, जिसे विरोध करने का अधिकार प्राप्त न हुआ हो, वह युद्ध-कार्य में सम्मिलित हो, और सम्मिलित होकर भी उसमें से अपने को, अपने देश को और सारे ससारको उबारने का हार्दिक प्रयत्न करे।" जरा आगे चलकर (यूरोपीय महायुद्धके समय अपने सामने उपस्थित तीन मार्गोंकी चर्चा करते हुए) आपने लिखा है " . अथवा उसके युद्ध-काय में सम्मिलित होकर उसका मुकाबला करने की शक्ति और अधिकार प्राप्त करना चाहिए। मुझमें ऐसी शक्ति नहीं थी। इसलिए मैंने माना कि मेरे पास युद्धमें सम्मिलित होने का ही मार्ग बचा है।"

हम अत्यन्त अनुगृहीत होगे, अगर आप इस विषयपर जरा अपने पुराने और मौजूदा विचार भी साफ-साफ और कुछ विस्तारसे लिखने की कृपा करें।

१ पत्र के कुछ अश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

२ देखिए खण्ड ३९, पृ० २६८।

मै नही कह सकता कि इस कॉलेज और इस पत्रपर सही करनेवालो के नाम अप्रकट रख छोडना जरूरी था या नही। विद्वान् प्रोफेसरने उत्तरके लिए टिकट लगा हुआ एक लिफाफा भी भेज दिया है। इसके तो मानी है कि मै खुद उन्हीको जवाब भेजूँ। पर मेरे पास समय कम है। और फिलहाल तो और भी कम है। क्योकि इन दिनो मै दो बडे प्यारे मरीजोकी परिचर्यामे लगा हुआ हूँ। पर 'हरिजन के पाठको से हर हफ्तेकी बातचीत करना भी तो मै नही छोडना चाहता। इसलिए अपने पत्र-प्रेषकोसे क्षमा मॉगते हुए मै तो "एक पथ दो काज" बना लेता हूँ।

पत्रमे उठाया गया प्रश्न बहुत ही महत्त्वका है और इसने मेरे सामने कई बार बडी कठिनाई खडी कर दी है। कठिनाई यह नही कि किसी खास प्रसगमे मुझे क्या करना चाहिए। नही, इसका निर्णय करने मे मुझे कोई कठिनाई नही होती है। कठिनाई होती है अहिंसाकी दृष्टिसे अपने आचरणका औचित्य सिद्ध करने मे, क्योकि अहिंसा और हिंसा दोनोके अनुयायी ऐसा आचरण कर सकते है जो ऊपरसे देखने मे समान लगे। ऐसे समय, कार्यका सच्चा अर्थ तो उसके उद्देश्यसे ही लग सकता है।

यह लिखते समय मेरे सामने न तो वह पाठ्यपुस्तक है, और न वह मूल गुजराती ही, जिससे अग्रेजीमे अनुवाद किया गया है। पर मैंने जो लिखा है, मुझे याद आ रहा है। और इससे भी बडी बात तो यह है कि जहाँतक मुझे पता है, अहिंसाके विषयमे आज भी मेरे वही विचार है जो पहले थे।

ऊपर उद्धृत अशमे मैंने जिस सर्वसामान्य सिद्धान्तका प्रतिपादन किया है, वह तो गत महायुद्धके समय मुझे जो रास्ता अख्तियार करना पडा था, उससे उपलब्ध हुआ था। मै अपनी जान तकको जोखिममें डालकर पूरे दिलसे युद्धमे शामिल हो गया था। जोखिमसे मेरा मतलब उन खतरोसे नही है जो कि युद्धमें कुदरती तौर पर होते है। असलमें, जिन दिनो मै कवायदोमे शरीक हो रहा था और छावनियोमे रहता था, प्लुरिसीसे बीमार था। बदनमे बडी कमजोरी थी, युद्धसे दो-तीन महीने पहले मैंने चौदह दिनका एक उपवास किया था, जिसके कारण मेरी शक्ति बेहद घट गई थी। अभीतक खोई हुई शक्ति लौट नही पाई थी। उस समय मेरा विश्वास था कि ब्रिटिश साम्राज्य कुल मिलाकर मनुष्य-जातिके लिए लाभदायक ही है। मै तो उन दिनो यह सपना देख रहा था कि उसे किसी दिन युद्ध-मार्गसे हटाकर शान्तिके मार्गका हिमायती बना लूँगा — और किसी हेतुसे नही तो कमसे-कम उसके अपने अस्तित्वको, भिन्न रूपमे ही सही, कायम रखने के लिए। पर मुझे अपनी मर्यादाका भी पूरा भान था। मैं तो एक नाचीज जर्रेके बराबर था। उसकी सामान्य नीतिका प्रतिरोध करने की जरा भी ताकत मुझमें नही थी। मैं युद्धमें शरीक होता या न भी होता, उसे मेरा विवशतापूर्ण सहयोग तो हासिल था ही, क्योकि मै ब्रिटिश नौसेना द्वारा रक्षित खाना खा रहा था, उसीकी छत्रछायामें व्यक्तिगत स्वतन्त्रताका उपभोग कर रहा था। इसलिए अगर मुझे किसी-न-किसी तरह युद्धमे सहायता करनी ही थी तो मुझे लगा कि अहिंसाके भक्तके रूपमे मेरे लिए बेहतर यही है कि मैं उसमें प्रत्यक्ष रूपसे भाग लेकर उसका जल्दी अन्त करने में सहायता करूँ। यह बिलकुल

मुमकिन है कि यह सब दुबलतासे ही उत्पन्न दलील रही हो, और मेरा दिल यह कह रहा था कि युद्ध एक बुराई है तो मुझे हर हालतमे उससे दूर ही रहना चाहिए था, चाहे इसके कारण मुझे भूखो मरना पडता या बागीकी मौत मरना पडता। खैर, न तब मैने वैसा सोचा और न आज सोचता हूँ।

यह एक बिलकुल अलग बात है कि आज, जबकि मै यह विश्वास ही नही करता कि यह साम्राज्य कुल मिलाकर कल्याणकर शक्ति है, तब, मेरा क्या रुख होगा।

अपने जवाबको अधिक साफ करने के लिए मै अपने जीवनसे ही एक और उदाहरण लेता हूँ। जब मै निरा बालक ही था, तभीसे मेरा हृदय और बुद्धि छुआ-छूतकी बुराईके खिलाफ बगावत कर रहे थे, पर चूँकि उस समय परिवारमे मेरी हस्ती बहुत ही तुच्छ थी, मै भी हरिजनोके प्रति चुपचाप उसी प्रकारका व्यवहार कर रहा था जैसाकि परिवार के अन्य व्यक्ति कर रहे थे, किन्तु आज मै वैसा नही कर सकता। कहने की जरूरत नही कि अपने व्यवहारका औचित्य मै उस समय दलीले देकर सिद्ध नही कर सकता था। मुझे उस समय यह नही लगा कि अपने इस व्यक्तिगत विश्वासको लेकर मै परिवारके साथ रह ही नही सकता।

बात यह है कि जीवनमे इसी तरह समझौते करते रहने पडते है। और चूँकि अहिंसा शुद्धतम और नि स्वार्थ प्रेम है, इसलिए उसे प्राय ऐसे समझौतेकी अपेक्षा रहती है। पर उसकी शर्तें साफ और कडी है। अहिसक व्यक्तिके समझौतेके आचरण के पीछे कोई स्वार्थ, किसी प्रकारका भय या असत्य नही होना चाहिए। और उससे अहिसा-धर्मकी सेवा होनी चाहिए। एक बात यह भी हो कि समझौता बाहरसे लादी हुई चीज न हो, बल्कि व्यक्तिके मनकी सहज प्रेरणासे उद्भूत हुआ हो।

शायद मेरे इस उत्तरसे उन प्राध्यापक महोदय और उनके विद्यार्थियोको सन्तोष न हुआ हो। पर इससे मुझे अचरज नही होगा। अपने ही कार्योका मुझे बार-बार हवाला देना पडता है, इसके लिए मै क्षमा चाहता हूँ। पर इसका कारण तो स्पष्ट है। मै कोई ऐसा व्यक्ति नही हूँ जिसने बहुत विस्तृत अध्ययन करके ज्ञानार्जन किया हो। अहिंसाके बारेमे मै जो-कुछ भी जानता हूँ, अपने अनुभवो और उन प्रयोगोसे ही जानता हूँ जो मै दुनियाकी नजरोके सामने सत्य-रूप ईश्वरसे डरते हुए विनम्र और शास्त्रीय ढगसे करता रहता हूँ।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १७-१०-१९३६

४८३ पत्र लीलावती आसरको

सेगाँव
१८ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

मै तेरा सन्ताप समझ रहा हूँ। यदि मुझमे हिम्मत होती तो मै तुझे आज ही बुला लेता। लेकिन तू धीरज धर। मै यात्रासे लौट आऊँ, तब तुझे सेगाँवमे रखूँगा। यदि महादेवको सेगाँवमे छोड जाऊँ, तो तू भी यहाँ रहना। यदि हम दोनो जाये तो तू राजकोट चली जाना, और जब अहमदाबादसे रवाना हो, तब हमारे साथ हो लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८३) से। सी० डब्ल्यू० ६५५५ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४८४. पत्र: रामेश्वरदास पोद्दारको

१८ अक्तूबर, १९३६

चि० रामेश्वरदास,

पारनेकर ने प्रदर्शनीमे गोसेवा विभाग के बारे में योजना भेजी है, मुझे अच्छी लगती है। यदि तुमारी शक्ति के बहार नही हो तो उसका खर्च रु० १३०० से १५०० तक का तुमारे उठाना उचित लगता है। कांग्रेस कमिटि के तरफसे रु० ५००० से अधिक नही लेना है सारे प्रदर्शनके लिए।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३) से।

४८५. पत्र : सैयद महमूदको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३६

प्रिय महमूद,

दो अनमोल मरीजोकी वजहसे मेरी सारी खतो-किताबत बन्द होकर रह गई है। यह खत मै किसी तरह वक्त निकालकर लिख रहा हूँ। हिन्दी-हिन्दुस्तानीके बारेमे अपने रुखकी सफाईमे कहने के लिए मेरे पास ज्यादा कुछ नही है। मेरा खयाल है कि तुम्हे इसका पूरा किस्सा मालूम नही है। मौलाना अब्दुल हकने तसवीर काफी तोड-मरोडकर पेश की है। मै हिन्दी सम्मेलनमे अभी साल-भरसे ही तो नही आया हूँ। उन्होने अपनी कान्फरेन्सकी सदारतके लिए मुझे जब पहले-पहल बुलाया था,[1] उसे अब दस साल होने आ रहे है। मैने तब हिन्दीके एक हिस्सेके तौरपर उर्दूको तसलीम करने की पैरवी की थी। मैने उस वक्त अपना जो नजरिया पेश किया था, वह १९०८ से भी पहले बन चुका था। साल-भर पहले इन्दौर कान्फरेन्समे[2] मै एक कदम और आगे गया, मैने उसकी एक परिभाषा मजूर करा ली थी, जिसमे उर्दू भाषा और लिपि शामिल थी। मेरे सारे कुसूरकी जड यही है न? उन्हे यह सब मालूम था? अगर मालूम था तो फिर तुम्हारी समझमे क्या नही आ रहा है? क्या मेरी गलती है कि मै उस सभाके लिए हिन्दी-उर्दूको या महज हिन्दुस्तानी को तसलीम नही कर सका? मै इस सवालके बारेमे 'हरिजन' मे काफी तफसीलसे लिख चुका हूँ।[3] उसे पढ लो और फिर भी अगर तुम्हे बात पूरी तरह ठीक न जँचे तो मुझे तफसीलसे लिखो। तब मै तुम्हे समझाने की कोशिश करूँगा। मुझे जो एक मसला बिलकुल ही सीधा-सादा लगता है, अगर उसके बारेमे भी मै तुम्हे कायल नही कर सका तो मुझे अपने-आप पर ज्यादा भरोसा नही करना चाहिए।

प्यार समेत,

बापू

डॉ० महमूद, बार-ऐट-लॉ
छपरा, बिहार

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०७९) से। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे भी, सौजन्य नारायण देसाई

१ गाधीजी ने २९ मार्च, १९१८ को हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर-अधिवेशन की अध्यक्षता की थी, देखिए खण्ड १४, पृ० २७७८१।

२ देखिए खण्ड ६०, पृ० ४८६-९२।

३ देखिए खण्ड ६२, पृ० ४१३ १५ और ४४० ४२।

४८६ पत्र : नारणदास गाधीको

१९ अक्तूबर, १९३६

चि० नारणदास,

पत्रिका सुधारकर भेज रहा हूँ। सही तारीख अब बादमे लिखूगा।

जवाहरलालजी[1] से भाषणके समय मिलना ठीक नही होगा। यदि वे घर पधारेगे तो मै अवश्य मिलूगा। [सूत्र] यज्ञ और प्रार्थना, दोनोके समय ठीक है। खान साहबके लिए मुसलमान भाइयोसे भेटकी व्यवस्था करना। सब लोगोसे मिलने के खयालसे कोई अन्य सम्मेलन भी——यदि हो सकता हो, अर्थात् सबकी इच्छा हो, तो——रख सकते हो। किन्तु मै उसमे भाग नही ले सकूगा। खान साहबके लिए ऐसा कुछ भी न हो सके तो कोई बात नही। जो हो, सो स्वाभाविक होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५०९ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

४८७ पत्र मणिलाल और सुशीला गांधीको

१९ अक्तूबर, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

मुझे तुम दोनोके पत्र पसन्द आये। मणिलाल, तुमने मेरी कमी बताई है, तो कोई अशिष्टता नही की। यह तुम्हारा कर्त्तव्य था। माता-पिताके दोष जानते हुए भी उनके प्रति आदरका भाव रखना, इसीको माता-पिताकी भक्ति कहते है। इस विषयमे यदि हरिलालको छोड दिया जाये तो तुममे से कोई अनुत्तीर्ण होनेवाला नही है। यो हरिलालका भी दोष क्या है? शराबकी धुनमें वह जो करता अथवा बोलता है, उसके लिए उसे उत्तरदायी कैसे माना जाये?

मै बीमारोसे घिरा हुआ हूँ, इसलिए लम्बा जवाब नही लिखूंगा। आज मीराबहन और नानावटी, दोनोकी तबीयत ठीक है।

मैंने तुम लोगोको जो शिक्षा दी, उसके बारेमे मुझे पश्चात्ताप नही है। इसी दिशामें और अधिक दे सकता तो मुझे अच्छा सन्तोष होता। तुम्हारा अहित होगा, यह समझकर मैंने तुम्हे अपने यज्ञमे नही होमा, हित समझकर होमा है। नतीजा बुरा

१ एक जैन साधु।

हुआ है, ऐसा भी मैं नही मानता। सोराबजी को[1] भेजने का विशेष उद्देश्य था। उसने वह उद्देश्य सिद्ध भी कर दिया। वह जीवित रहता, तो हम देखते। छगनलालको[2] तो विशेष कामके लिए ही तैयार होने को भेजा था। उसमे असफलता मिली, सो इसलिए कि उसे क्षयका भय हो गया और वह इग्लैंडसे लौट आया। तुम रिच[3] और पोलकको[4] क्यो भूलते हो? उन्हे भेजना भी सोद्देश्य था। तुम्हे न भेजना भी सोद्देश्य था। तुम समझदार हुए, तबतक मेरा पश्चिमी शिक्षाका मोह टूट चुका था। पैसेके अभावसे तुम्हे शिक्षा न दी हो, ऐसा नही था। डॉक्टरकी[5] थैली मेरे लिए खुली थी। जब रिचको भेजा, तब तो मैं भी पैसा खर्च कर सकता था। किन्तु जान-बूझकर तुम्हे अनुभवकी शालामे गढा, सेवाके क्षेत्रमे डाला। आजके युगको देखते हुए तुम्हे कलक रह जाये, यह मैं समझता हूँ। किन्तु उससे मेरी विचार-शैलीमे कोई परिवर्तन नही होता। तुम तो जानते हो कि मेरी निगरानीमे रखे गये यहाँके बालको और बालिकाओके साथ भी मैंने यही किया है। उसके विरुद्ध राधा, केशू, शकर, बाल, जयन्ती, कान्ति आदिने विद्रोह किया, उसकी मुझे चिन्ता नही है। इसमे मुझे, आज जो हवा बह रही है, उसकी ताकत नजर आती है, न कि अपनी विचार-धाराका दोष। यहाँ जो उत्तमसे-उत्तम काम करनेवाले लोग है वे पश्चिमी शिक्षा पाये हुए व्यक्ति नही है। महादेव-जैसे व्यक्ति, जिन्होने वह शिक्षा प्राप्त की है, मेरे पास अपनी उस शिक्षाके बूते नही, वरन् अपने अन्य गुणोके कारण है। मै जो उनकी शिक्षाका भी उपयोग कर लेता हूँ, तो यह कोई बडी बात नही है। कहा जा सकता है कि यह मेरी कार्यदक्षता है। महादेवसे मगनलालकी कीमत ज्यादा थी, यह महादेव खुद भी स्वीकार करेगा। मेरी फौजमे तुम्हे पढे-लिखे कितने दिखाई देगे? उनपर भरोसा करके बैठा होता तो मेरी क्या दशा होती? जोजेफ, दोनो गॉडफ्रे और बर्नार्डको भेजने मे मेरा हाथ था, यह तो तुम जानते होगे? वे आज कहाँ है? उन्होने कौन-से तीर मारे? बैरिस्टर, डॉक्टर बनाने की कला भी मैं जानता था। किन्तु वह कला फली-फूली नही। मेरी समझमे तो तुम सब भाई उस भ्रम-जालसे बच गये। वेस्ट[6] और सैमके[7] सम्बन्धमे जो अपवाद किया, उसमे तुम मेरी अहिंसा क्यो नही देख पाते? उनके प्रति उदारता न दिखाता तो उन्हे अथवा उन-जैसोको स्थान कैसे दे पाता? तुम जानते हो कि किचिन[8] जब बीमार थे, तब मैं उन्हे मास खाने के लिए प्रोत्साहित करता था। नतीजा यह हुआ कि अन्तमे उन्होने मासका सर्वथा त्याग कर दिया। बोअर युद्धमे मैंने अपने हाथसे अपनी टुकडीके मिस्तरियोको शराब

१ देखिए खण्ड ११, पृ० ३३०।

२ छगनलाल गांधी।

३ एल० डब्ल्यू० रिच, देखिए खण्ड ४, पृ० ३९७।

४ एच० एस० एल० पोलक।

५ डॉ० प्राणजीवन जगजीवन मेहता।

६ ए० एच० वेस्ट।

७ गोविन्दस्वामी, देखिए खण्ड ४, पृ० ४६२।

८ एच० किचन।

पिलाई, तथा अन्य लोगोको बीडी दी। यह सब करने मे विवेक-बुद्धिकी बहुत आवश्यकता होती है। अपने स्वयके प्रति जितनी कठोरता आवश्यक है, दूसरोके प्रति उतनी ही उदारता आवश्यक है।

यह पत्र जितना सोचा था, उससे अधिक लम्बा हो गया। कान्तिको तुम्हे कुछ नही भेजना है। देवदासने उसका सारा खर्च अपने ऊपर ले लिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५८) से।

४८८ पत्र बलवन्तराय के० ठाकुरको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३६

भाईश्री बलवन्तराय,[1]

मै इन दिनो दो बीमारोकी तीमारदारीमे लगा हू। थोडा-थोडा करके आपका पत्र कल शामको पूरा किया। पता नही, अहमदाबादमे मेरे किये क्या होगा। मै तो अपनेको इस सम्मेलनका अध्यक्ष होने के अयोग्य मानता हूँ। किन्तु महात्मा बना दिया गया हूँ, इसलिए शायद मै सब-कुछ कर सकता हूँ। आप अपने सुझाव क्या सुधारोके रूपमे भेजेगे? हम मिल सके तो मुझे अच्छा लगेगा, लेकिन वह मौका कैसे आयेगा? बम्बई तो मुझे आना नही है। मै तो भटकता-भटकता अहमदाबाद पहुँचनेवाला हूँ।

आशा है, आप कुशल होगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च]

आपका पत्र गुप्त रहेगा। मैने उसे फाड डाला है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२३८) से।

१ (१८६९-१९५२), गुजराती कवि और साहित्यकार

४८९. पत्र बनारसीदास चतुर्वेदीको

१९ अक्तूबर, १९३६

भाई बनारसीदास,

परभुदयाल ने तुमारे भाई के देहात की खबर दी। तुमारे मे ज्ञान है इसलिये आश्वासन की आवश्यकता कम है। जो रास्ते रामनारायण गये वही रास्ते हम सबको जाना होगा। समय का ही फरक है। उसमे शोक क्या? लेकिन हा, प्रेमीओ के मृत्युसे हमारी जिम्मेदारी बढती है और तुमारी तो बहूत ही बढ गई। ईश्वर ही ऐसे मौकेपर सच्चा मददगार है। वही तुमको मार्ग बतायगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५१६) से।

४९० पत्र · महादेव देसाईको

१९ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

आज तो मैंने काफी लिखा। बाबाने तो बडा काम किया। मीराका ताप आज ९८ है। अभी इससे अधिक नही हुआ। फिर भी उसे बेचैनी रहती है। मुँहमे लार नही बनती, चिकटापन रहता है। ग्लूकोज लेने अथवा फल खाने की भी इच्छा नही होती। और भी कुछ कसर है। मुझे सतरे या नीबू नही चाहिए। नीबू मुन्नालालने भूलसे मँगा लिये थे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५००) से।

४९१. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२१ अक्तूबर, १९३६

प्रिय विद्रोहिणी,

तुमने निश्चय ही 'हरिजन' के लिए मुझे बहुत बढिया सामग्री[1] दी है। महादेव तुम्हारा पत्र देखेगा। मै उसके कुछ अशोको समझदारीके साथ इस्तेमाल करूँगा। तब तुमको भी थोडा प्रचार-काय करना होगा, समाचारपत्रोको भी लिखना होगा और अन्य महिलाओसे भी वैसा करने को कहना होगा। यदि तुम महिलाए अपनी गरिमा और अपनी विशेष स्थितिको सचमुच समझ लो और मानवताके हितके लिए उनका पूरी तरह उपयोग करने लगो, तो तुम लोग मानवताको आजकी अपेक्षा कही बेहतर बना दे सकती हो। लेकिन पुरुषोने तुम लोगोको दासी बनाकर रखने मे सुख अनुभव किया है और तुम लोग खुशी-खुशी इस दासत्वको अपनानेवाली सिद्ध हुई हो, और अन्तमे स्थिति यहाँतक पहुँची है कि दास तथा दास-प्रभु दोनो मानवताको पतनके गर्तमे खीच ले जाने का अपराध एक होकर कर रहे है। तुम कह सकती हो कि बालपनसे ही मेरा विशेष कार्य यही रहा है कि नारीको उसकी अपनी गरिमा पूरी तरह अनुभव करने मे समथ बनाऊ। एक समय था जब मै स्वय भी दास-प्रभु था, लेकिन बा ने स्वेच्छासे दासी बनना मजूर नही किया और इस प्रकार मेरी आँखे खोल दी और मै अपने जीवनके महत् उद्देश्यको समझ सका। उसका काम तो उतने से ही पूरा हो गया। अब मै एक ऐसी नारीकी तलाशमे हू जो अपने जीवनके महत् उद्देश्यको पूरा कर सके। क्या तुम ऐसी नारी हो, क्या तुम ऐसी नारी बनोगी?

यदि शम्मी यूरोप जाने से सुखी और स्वस्थ हो सकता है पर तुम्हारे साथके बिना वहाँ जाने को तैयार न हो, तो तुम उसके साथ चली क्यो नही जाती? अधिक लिखने का समय नही है। कल तुमको एक लम्बा पत्र[2] लिखा था।

सस्नेह,

तानाशाह

[पुनश्च]

हाँ, तुम्हे नटेसनको निश्चय ही लिखना चाहिए।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५९७) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४०६ से भी

१ देखिए खण्ड ६४, "अश्लील विज्ञापन", १४-११-१९३६।
२ यह पत्र उपलब्ध नही है।

४९२. पत्र : लीलावती आसरको

२१ अक्तूबर, १९३६

चि० लीला,

मै इस बीच तुझे लिख नही पाया, किन्तु तेरी याद तो आती ही रहती है। शर्तोंसे मुक्ति माँगकर तूने अपने ऊपर बहुत अधिक बोझ लाद लिया है, इसका तो भान है न? तू स्वेच्छाचारिणी नही होना चाहती। तू तो सयमी है, और उस दिशामे प्रगति करना चाहती है। इतना याद नही रखेगी, तो समझना, तूने रोजकी किटकिट अपने सिर ले ली है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११७५७) से।

४९३. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

थोडी डाक भेज रहा हूँ। राजकुमारीका पत्र पढने के लिए भेज रहा हूँ। वापस लौटाना, 'हरिजन' के लिए चाहिए। अगले हफ्ते क्या लिखा जाये, क्या न लिखा जाये, यह प्रश्न खडा होगा। दोनो बीमार मजेमे हैं — 'सबनॉर्मल'। मीराबहनकी शिकायते आज कम हो गई हैं। उसे दही देता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५०१) से।

४९४. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अक्तूबर, १९३६

चि० महादेव,

शिवप्रसादको[1] तार कर सकते हो। कौन-कौन साथ आ रहे हैं, यह भी लिख देना। तुम अपना आना भी निश्चित ही समझो। साथ का पत्र राजाके[2] लिए है। स० को लिख देना कि मैंने राजाको लिखा है।

प्रेमचन्दजी[3] के सम्बन्धमे किस ढगसे लिखा जाये, मेरी समझमे नही आ रहा। वियोगी हरिको लिखे तो वे शायद सक्षेपमे कुछ लिख दे। हम लोग साहित्यिको पर सम्पादकीय टिप्पणी नही लिखते। किन्तु लल्लूभाईके[4] बारेमे थोडा विचार करने की आवश्यकता है। मेरा इरादा तो यहाँसे ६ बजे निकलने का है। वहासे कोई प्रबन्ध नही करना। सामान यहाँसे गाडीमे आयेगा। मै, जितना बनेगा, चलूगा। चलने की शक्ति है, ऐसा लगता है। जरूरत मालूम हुई तो गाडीमे बैठ जाऊँगा। रास्तेमे कमलाके[5] बालकको देखता आऊँगा। समय रहा तो मगनवाडीमे भी झाँक लूँगा। इसमे तुम्हे कोई परिवर्तन सुझाना हो तो सुझाना। बीमार मौज कर रहे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५०२) से।

४९५ पत्र · राधाकृष्ण बजाजको

२२ अक्तूबर, १९३६

चि० राधाकिसन,

विनयके[6] बारेमे खबर सुनी। कमलासे मिलने का मेरा बहुत मन है। वह यहाँ आये तो अच्छा हो। कल मै यहाँ ठेठ पाँच बजेतक काममे लगा रहूँगा। इसलिए यदि मै वहाँ आया भी तो मुझे दो-चार मिनटमे ही भागना पडेगा। कमलाको अब

१ शिवप्रसाद गुप्त।

२ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३ और ४ जिनका हाल में निधन हो गया था।

५ कमला नेवटिया, जमनालाल बजाज की पुत्री।

६ कमला नेवटिया का पुत्र।

वहाँ बँधे रहने की जरूरत नही है। यह पत्र यदि तुम्हे ठीक लगे तो कमलाको पढवा देना और या तो उसे यहाँ भेज देना अथवा स्वय ले आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१२१) से।

४९६. वक्तव्य . समाचारपत्रोंको

वर्धागज
२२ अक्तूबर, १९३६

सदाकी भाँति इस बार भी जन्म-दिवसके बधाई-सन्देश मुझे बहुत बडी सख्यामे प्राप्त हुए है। इन कृपालु मित्रोको अलग-अलग उत्तर भेजना मेरे लिए सम्भव नही है। इसलिए मै समाचारपत्रोके जरिये उनकी शुभकामनाओके लिए धन्यवाद दे रहा हूँ।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-१०-१९३६

४९७ पत्र अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
२३ अक्तूबर, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

तेरा पत्र अभी-अभी मिला। कान्तिका खुशखबरीवाला पत्र 'रेटिया बारस' [गाधी-जयन्ती] का था। उसमे था क्या जो तुझे भेजता? उसे फुरसत ही नही मिलती, इसलिए मै उसे तकलीफ नही देता।

तू अस्पताल गई, सो अच्छा हुआ। खुर्शीद बहनने लिखा था। यदि तू उसकी मदद करे तो मुझे अच्छा ही लगेगा।

मै खुद तो यात्रा नही करता। तीर्थस्थानोमे बहुत पाखण्ड चलता है। मक्का शरीफ हो आनेवाले बहुत-से लोगोको मै जानता हूँ। वे वहाँ जाकर स्वस्थ होकर लौटे हो, ऐसा मैने नही देखा। लेकिन तेरी श्रद्धा है, इसलिए मै तुझे क्यो रोकूँ? तू खुशीसे जा और ज्यादा दृढ, तन्दुरुस्त और निर्मोही (मोह-विहीन) होकर लौट आ। इससे ज्यादा और क्या कहूँ?

मै आज काशी जा रहा हूँ। मै वहाँ दो दिन रहूँगा और फिर कुछ घटे राजकोटमे रुकूँगा। ३० को अहमदाबाद पहुँचूँगा। बीमारोको अब बुखार नही है। तू जल्दी अच्छी हो जा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५९) से।

४९८ बातचीत : एक अंग्रेजके साथ[1]

[२४ अक्तूबर, १९३६ के पूर्व]

अभी उस दिन एक मित्रवत् अंग्रेजने गाधीजी से एक ऐसा प्रश्न पूछा जो मुझे कुछ विचित्र लगा "आप गुजराती है, आप गुजरातके है। तब आपने अपने काय और अपने प्रयोगोके लिए एक मराठी-भाषी प्रदेश क्यो चुना? और फिर वर्धा ही क्यो?" गाधीजी को भी यह कुछ कम विचित्र नहीं लगा, पर उन्होने शान्त भावसे उत्तर दिया

मै गुजरातका नही, समूचे भारतका हू। वर्धाको मैने इसलिए चुना कि वहा बहुत सारी सुविधाएँ सुलभ है। वहाँ जमनालाल बजाज है, जिनको मेरे कार्य और मेरे प्रयोगोके कार्यक्रममे बडी रुचि है, आर उन्होने मुझे ग्रामोद्योग सघक लिए अपना बहुमूल्य उद्यान ओर अपना उद्यान-कुटीर दे दिया। मैने वधाको सघका प्रधान कार्यालय बना लिया।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१०-१९३६

४९९ चतुर्दिक वृद्धि

महाराष्ट्र चरखा सघके श्री कृष्णदास गाधी मुझे सूचित करते है कि कतैयोकी मजदूरी बढने के कारण सूत बटनेवालियो की मजदूरीमे वृद्धि करना भी जरूरी हो गया है। इसलिए अब इस उद्देश्यसे प्रयोग किये जा रहे है कि खादीके मूल्यमे कोइ वृद्धि किये बिना सूत बटनेवाली महिलाओकी काय-क्षमता कैसे बढाई जा सकती है जिससे कि वे तीन आने प्रतिदिन तक कमा सके। इसलिए उन्होने दो तकुओवाला मगन चरखा इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है। यदि खादी-उत्पादनका काम करनेवाले सभी कार्यकर्त्ता कृष्णदास गाधी और ऐसे ही चन्द अन्य कायकर्त्ताओकी-जैसी भावनासे अनुप्राणित होकर काम करने लगे तो खादीके सभी विभागोकी मजदूरीमे जैसी चाहिए वैसी वृद्धि भी हो जायेगी और खरीदारोकी जेबोपर कोई अनावश्यक बोझ भी नही पडेगा। और यदि हम खादीके सभी दस्तकारोको पूरी मजदूरी देने मे सफल हो जाते हैं तो हमे अन्य सभी ग्रामोद्योगोको इस स्तरतक ले जाने मे कोई कठिनाई नही पडेगी। जरूरत इस बातकी है कि इसके लिए वैज्ञानिककी भावना अपनाई जाये,

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

जो किसी भी चीजको स्वत सिद्ध मानकर न चलेगा, जो दिमागी या शारीरिक सुस्ती या काहिलीको बर्दाश्त न करेगा, और जो अपने उच्च उद्देश्यमे अटूट आस्था रखकर चलेगा। आस्थाके बिना पूरा कार्य निर्जीव रहता है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१०-१९३६

५०० भैस बनाम गाय

यदि समय रहते गायोकी रक्षाके लिए उपाय नही किये गये तो जल्दी ही उनका नाश होनेवाला है। लेकिन गायकी रक्षाके काममे लगे लोगोसे एक प्रश्न अकसर पूछा जाता है। प्रश्न यह है कि यदि धार्मिक भावनाकी बात अलग रहने दे[1] तो क्या भैस रखना गाय रखने की अपेक्षा सस्ता नही पडता। इस विषयका विशेष नही, बल्कि केवल सामान्य ज्ञान रखनेवाले व्यक्तिकी तरह मैने बराबर साहस बटोर कर यह राय जाहिर की है कि कमसे-कम अन्तमे जाकर तो गाय रखना अपेक्षाकृत सस्ता ही पडता है, गाय और भैस दोनोकी एक साथ रक्षा करना असम्भव है, और अगर हम सिर्फ गायकी रक्षा करनेपर ही अपना ध्यान केन्द्रित कर दे तो भैसकी रक्षा सहज ही हो जायेगी। लेकिन यदि गायोकी नस्ल मिट गई तो भैसे कभी भी उसका स्थान नही भर सकेगी और जीविकाके लिए सघष करने तथा भूखकी ज्वाला को झेलते हुए अपने काममे लगे किसान, गाय तथा उसकी नर-सन्ततिसे वचित हो जाने से, एक ऐसी कठिनाईमे पड जायेगे कि फिर उनकी पस्ती दूर नही हो पायेगी। इस महत्त्वपूण समस्याके समाधानमे रुचि रखनेवाले लोगोके लिए मेरे एक मित्र द्वारा मेरे पास भेजी मॉण्टगुमरी डेरी फामसे सम्बद्ध सरदार दातारसिंह, एम० डी० डी० (इग०) की निम्नलिखित राय[2] सहायक सिद्ध होगी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१०-१९३६

१ यहाँ साधन-सूत्र में एक शब्द अधिक आ जाने से सन्दर्भ को देखते हुए अर्थ ठीक नही बैठता। अत उस शब्द को छोडकर अनुवाद किया गया है।

२ यहाँ नही दी जा रही है। इसमें यह बताया गया था कि किन कारणों से भैस आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है।

५०१ पत्र मार्गरेट स्पीगलको[1]

रेलगाडीमे
२४ अक्तूबर, १९३६

चि० अमला,

मीरा और नानावटी बीमार पडे थे, इसलिए उत्तर देनेमे विलम्ब हुआ।[2] अब वे पहलेसे अच्छे है। मै बनारसके रास्तेमे हूँ। लगभग ५ नवम्बरको मै सेगाव लौटूगा। मै ३० तारीखको अहमदाबाद पहुँच रहा हूँ और वहा कमसे-कम चार दिन रुकूगा। आशा है, तुम मेरे किये हुए सशोधन समझ गई होगी। हा, दूध और मक्खन तुम्हारे लिए जरूरी है और इसी तरह फल भी। अधिक खर्चसे बचनेके लिए इनको बतौर दवाके लो।

सस्नेह,

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

५०२ पत्र जेठालाल जी० सम्पतको

काशी जाते हुए रेलगाडीमे
२४ अक्तूबर, १९३६

चि० जेठालाल,

कहा जा सकता है, मीराबहन और नानावटीकी सार-सभालसे एक मिनटकी भी फुरसत नही मिलती थी। अब उनकी तबीयत ठीक है। काशी जा रहा हूँ, सो गाडीमे समय मिल गया है। तुम्हारे पत्र पढ गया हूँ। गृह-सदस्य (होम मेम्बर)को मैने खुद ही लिखनेका निश्चय किया है। देखे क्या होना है। मौका देखकर 'हरिजन' मे भी लिखूँगा। मै इस बातको छोड नही सकता।

निश्चय ही तुम प्रदशनीमे कारीगर ला सकते हो। किन्तु उन्हे लानेका खर्च तुम्हीको भुगतना पडेगा। इस बार प्रदर्शनी पर ५,००० से अधिक खच न करनेका निश्चय हुआ है, इसलिए सब अपने-अपने खर्चेसे आयेगे। प्रदर्शनीके दौरान रहने और खानेका खच कमेटी देगी। यदि खर्चा निकालकर नफा हुआ तो वह खर्च करनेवाले सभी लोगोमे बॉटा जायेगा। यदि तुम कुछ औजार लाओ या बनवाओ, तो मै २००

१ मार्गरेट स्पीगल के दिनाक १ अक्तूबर, १९३६ के गुजराती में लिखे गये पत्र के उत्तर में।
२ मूल में यह वाक्य गुजराती में है।

रुपये तकके औजार लागत पर २० प्रतिशत नफा देकर बिकवा दूँगा। इससे तुम्हे साफ ४० रुपयेका फायदा हो जायेगा। मुझे तो 'गाधी औजारो' की ताकत आजमानी है। दूसरी तजवीज भी कर ही रहा हूँ। जलगाँव वगैरह मे क्या हो सकता है, इसका पता भी तुम्ही लगाना। मुझे इतना समय कहाँ मिलता है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

५ से ९ नवम्बरके बीच मै वापस सेगाँव पहुँच जाऊगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८५७) से, सौजन्य नारायण जे० सम्पत

५०३. भाषण भारतमाता मन्दिर, बनारसमें[1]

२५ अक्तूबर, १९३६

इस मन्दिरमे किसी देवी-देवताकी मूर्त्ति नही है। यहाँ सगमरमर पर उभारा हुआ भारतका एक मानचित्र-भर है। मुझे आशा है कि यह मन्दिर सभी धर्मो, हरिजनो-समेत, सभी जातियो और विश्वासोके लोगोके लिए एक सार्वदेशिक मचका रूप ग्रहण कर लेगा और इस देशमे पारस्परिक धार्मिक एकता, शान्ति तथा प्रेमकी भावनाओको बढाने मे बडा योग देगा।[2]

इस तीर्थका उद्घाटन करते हुए मेरे मनमे जो भावनाएँ उमड रही है उनको मै शब्दोमे व्यक्त नही कर पा रहा हू। प्रेमकी पुकार टाली नही जा सकती। मै प्रेमकी पुकारपर ही अपने दो प्यारे-प्यारे मरीजोको और गाँवके अपने कामको छोडकर, सेगाँवसे चलकर यहाँ काशीमे आ गया हूँ। सत मीराबाईके शब्दोमे, प्रेम एक कच्चे धागे-जैसा कोमल, जरा-मे झटकेसे टूटनेवाला लेकिन स्वय जीवन-जितना ही मजबूत होता है। प्रेम लोगोको हजारो मील दूरसे खीच लाता है। मै भी शिवप्रसादके स्नेहके सामने टिक नही सकता था। मै इस तीर्थका उद्घाटन करने योग्य बिलकुल नही हूँ, परन्तु शिवप्रसादके स्नेहमे मै अपनी सीमाओ, अपनी अपात्रताको बिलकुल ही भूल गया हूँ।[3] इन शिवप्रसादको जबसे मै जानता हूँ, तबसे मै देखता हूँ कि गगातटको उन्होने अपना निवास-स्थान बना रखा है, और गगाजलसे अपनी देहको पवित्र रखने के

१ गाधीजी ने तीसरे पहर इस मन्दिरका उद्घाटन किया था। समारोहमें देशके सभी भागोसे आये हुए २५,००० से अधिक लोगों का विशाल समुदाय उपस्थित था, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, जैन, बौद्ध और हरिजन सभी शामिल थे।

२ यह अनुच्छेद **बॉम्बे क्रॉनिकल** से लिया गया है।

३ यहाँ **बॉम्बे क्रॉनिकल** का विवरण इस प्रकार है "गाधीजी ने साथ ही कहा कि वे मन्दिरका उद्घाटन करने के लिए उपयुक्त पात्र तो नही है, परन्तु पण्डित मालवीय के आशीर्वाद से बल पाकर उद्घाटन कर रहे है।"

बावजूद उन्होने अपने हृदयमे एक दूसरी ही गगाको स्थान दे रखा है। यह भावना और कल्पनाकी गगा इनके हृदयमे हमेशा बहती रहती है, और उसमे ये नित्य अवगाहन करते है। वे भावनाके घोडे भी गढते है और पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करते है। भावनाका बल ऐसा है कि यदि वह शुद्ध हो तो स्वर्गमे भी उडा ले जा सकता है, और अशुद्ध हो तो नरकमे भी ले जा सकता है। इनकी भारत-भक्तिकी भावना पूना-स्थित कर्वेके विधवाश्रममे उकेरे हुए एक नक्शेको देखकर मूर्त्तिमन्त हुई, और इसपर अपनी समुचित धनराशि खर्च कर डालनेका इन्होने विचार किया। जैसी इनकी भावना थी, वैसे ही इन्हे कलाकार भी मिल गये, शिल्पी और इजीनियर भी वैसे ही मिल गये। एक बार तो उन्हे अपने जीवनकी भी आशा नही थी, किन्तु भगवान्ने उन्हे जीवित रखा, और उनका स्वप्न, उनकी भावनाकी प्रतिमा आज हम अपने सामने खडी देख रहे है।[1]

आज सुबह जब मुझसे पूर्णाहुति सम्पन्न करनेके लिए कहा गया था और वेदमन्त्रोका पाठ चल रहा था, तब उसे सुनते हुए मुझे अपनी प्रातःकालीन प्रार्थनाका एक श्लोक याद आ गया, जिसका पिछले बीस वर्षोसे हम पाठ करते आ रहे है

समुद्र वसने देवि पर्वत स्तनमण्डले।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्य पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

हम आज जिसकी सेवाके लिए अपने-आपको समर्पित कर रहे है वह यही धरित्री-माता है। हमे जन्म देनेवाली माँ मर्त्य होती है, परन्तु हमे पालने-पोसने और जीवित रखनेवाली हमारी धरित्री-माताके साथ तो ऐसी बात नही है। धरित्री-माताका अन्त भी कभी आयेगा, परन्तु तब उसके साथ उसकी सारी सन्तान भी कालके गालमे समा जायेगी। इसीलिए वह हमसे अपने प्रति जीवनपर्यन्त निष्ठाकी अपेक्षा रखती है। शिवप्रसादने इस मन्दिरको बिना किसी भेदभावके सभी धार्मिक विश्वासोके लोगोको समर्पित किया है, वे सभी इसमे आराधना कर सकेंगे। उन्होने इसके लिए किसी भी तरहकी कोई शर्त नही रखी है। इस मन्दिरमे भारतमातासे प्रेम करनेवाले हर व्यक्तिका स्वागत होगा और वह यहा अपनी सामर्थ्य तथा अपने विश्वासके अनुरूप आराधना कर सकेगा। इसलिए मै शिवप्रसादका स्नेह-भरा आमन्त्रण अनसुना नही कर पाया। आइए, हम सब अपने विभेदो और मतभेदोको भुला दे, भारतमाताके चरणोपर उनकी बलि चढा दे और अपनी शुद्धतम भावनासे उसकी सेवामे जुट जाये। ईश्वरकी कृपासे शिवप्रसादका स्वप्न साकार हो गया है। ईश्वर इतनी अनुकम्पा और करे कि शिवप्रसादकी हार्दिक अभिलाषा भी पूरी हो जाये कि परस्पर जूझते सभी धार्मिक विश्वासो, भिन्न-भिन्न मतो और हितोकी आपाधापी बन्द हो जाये।

[1] यह अनुच्छेद **हरिजनबन्धु**से लिया गया है। आगेका अंश **हरिजन**में प्रकाशित "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है।

और ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि शिवप्रसाद इतने दीर्घजीवी हों कि अपनी आँखोंसे इस अभिलाषाको फलवती होते देख सकें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-१०-१९३६, **हरिजनबन्धु**, १-११-१९३६ और **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २६-१०-१९३६

५०४ भाषण बनारसमें

२५ अक्तूबर, १९३६

मेरे हाथों यह जो भेंट दिलवाई गई, वह अच्छी नहीं मालूम हुई।[1] इस कामके लिए मैं सर्वथा अनुपयुक्त हूँ।[2] न तो मैं कवि हूँ, न मैं हिन्दी भाषाको ही अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे तो किसी छोटे या बड़ेकी जयन्ती मनाना भी पसन्द नहीं है। यदि किसीकी जयन्ती मनानी भी हो तो तब मनानी चाहिए जबकि वह आदमी न रहे।

किसी महान् व्यक्तिको लोग कोई ऐसी पुस्तक भेंट करें जिसे मैं योग्यताके प्रमाण-पत्रोंका एक संग्रह कहना चाहूँगा, यह बात मेरे विचारसे धृष्टतापूर्ण नहीं तो सर्वथा अनुचित अवश्य है। इसलिए मैंने इस अभिनन्दन-ग्रन्थके लिए कुछ भी लिखने से इनकार कर दिया। लेकिन महात्मा शब्द तो न जाने कितनी निर्योग्यताओं का द्योतक है और मैं समझता हूँ, इसीलिए मुझसे यह ग्रन्थ भेंट करने को कहा गया। मेरा यह हार्दिक विश्वास है कि जबतक कोई आदमी जीवित है, तबतक वह कवि, अथवा महात्मा या अवतार-जैसी किसी उपाधिका पात्र हो ही नहीं सकता।[3]

रामचन्द्रजी जब जीवित थे तब वे अवतार नहीं माने जाते थे। तुलसीदासजी जब थे तब उनकी जयन्ती नहीं मनाई गई थी।

उनको अवतार हमने बनाया है। आखिर 'गीता'का यह सूत्र कि "कर्म करने पर ही तुम्हारा अधिकार है, उसके फलपर नहीं", कवियों और महात्माओं पर ही तो विशेष रूपसे लागू होता है। इसलिए अगर मैथिलीशरणजी ऐसा मानते हों कि वे भारतके एक महान् कवि हैं तब तो मुझे उनसे झगड़ना पड़ेगा।[4]

उसी तरह यह जयन्ती तब मनानी चाहिए थी, जब कवि न होते। वैसे समय में लोग जानते कि उनके लिए कुछ किया जा रहा है। लोग क्षमा करेंगे। मैंने तो जब पद्मनारायणजी सेगांव गये थे, यह कह दिया था कि किसी अच्छे कविके

१ मैथिलीशरण गुप्त की पचासवीं वर्षगाँठ पर गांधीजी ने उन्हें अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया था।

२ यह वाक्य **हरिजन**, ३१-१०-१९३६ में प्रकाशित महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है।

३ और ४ ये अनुच्छेद **हरिजन** से लिये गये हैं।

लिए सम्मतियोका लिखाना अच्छा नही। किसी सत्कविकी कृति कभी सम्मतिकी अपेक्षा नही करती। मैने यदि कभी गुरुदेवके लिए, मालवीयजी के लिए अथवा द्विवेदीजी के लिए कुछ लिखकर दिया है तो दबावसे ही। सच पूछो तो मेरी इच्छा कभी किसी महापुरुषके सम्बन्धमे लिखने की नही हुई।

यदि उस समय मैने गलती की थी तो क्या अब भी वही गलती करता रहूँ? यदि तुम भी कुछ दबाव डालो तो मै तुम्हे भी कुछ लिखकर दे सकता हूँ, पर स्वेच्छावश नही। मैथिलीशरणजी को मै अच्छी तरह जानता हूँ। उनके बारेमे कुछ नही लिखता, फिर भी हममे कोई गलतफहमी नही होगी। मै चिरगाँवमे उनका आतिथ्य भी स्वीकार कर चुका हूँ।

कवि किसीके निर्देश-इगितपर नही, बल्कि अपनी प्रेरणापर लिखता है। इसलिए वह प्रशसा पाने के लिए नही लिखता। उसका आनन्द और उसका पुरस्कार तो उसकी कृतिमे ही निहित होता है।[1]

सम्पादकके पच्चीस वष, पृ० ८६ तथा अग्रेजी साप्ताहिक **हरिजन**, ३१-१०-१९३६ से भी

५०५ पत्र मीराबहनको

काशी
२६ अक्तूबर, १९३६

चि० मीरा,

इससे पहले तुमको लिख नही पाया। अभी-अभी मुन्नालालकी माफत तुम दोनोके बारेमे शुभ समाचार[2] सुनने को मिला है। आशा है, तुम शरीर और मन दोनो दृष्टियोसे स्वस्थ होगी। यह तो हर्षका विषय है कि हमारे दोष हमारे लिए चेतावनियाँ बनकर प्रकट होते है। इसलिए पिछले दिनकी घटनाकी स्मृतिसे तुम्हे प्रसन्न ही होना चाहिए।

प्रभा यही है।

सस्नेह,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८३२ से भी

१ यह अनुच्छेद **हरिजन**से लिया गया है।

२ मीराबहन और अमृतलाल नानावटी बीमार चल रहे थे। यहाँ तात्पर्य उन्ही दोनों के स्वास्थ्यमें सुधार होने से है।

५०६ पत्र . अमृतलाल ठा० नानावटीको

२६ अक्तूबर, १९३६

चि० अमृतलाल,

अभी-अभी तुम्हारे बारेमे तार मिला। चगे होते ही चले जाना। मुझे पत्र लिखना।

काकासाहब यहाँ है। ताकत आ जानेपर दिलरुबा हाथमे लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७२१)से।

५०७ पत्र मुन्नालाल जी० शाहको

२६ अक्तूबर, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा तार अपेक्षित समय पर मिल गया। सब काम धीरजके साथ करना। वहाँ मेरी [1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९४) से। सी० डब्ल्यू० ७००२ से भी। सोजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१ साधन सूत्रमें अस्पष्ट है।

५०८ पत्र मोतीलाल रायको[1]

चलती गाडीमे
२६ अक्तूबर, १९३६

प्रिय मोतीबाबू,

आपका स्नेहपूर्ण तार और कर्जके सम्बन्धमे आपका पत्र दोनो मिले। जबतक पूरे कर्जका भुगतान नही हो जाता हम दोनोमे से किसीको भी सन्तोष नही हो सकता। मै अन्नदा बाबूका सबसे ताजा पत्र आपके पास भेज रहा हूँ। जो खादी पहुँचाई गई है उसका मूल्य यदि बाजार-भावपर तय नही किया गया है तो यह गम्भीर मामला माना जायेगा। और जबतक कर्जका भुगतान नही हो जाता, या कौसिलसे सन्तोषजनक समझौता नही हो जाता तबतक आप प्रमाण-पत्रकी माँग कैसे कर सकते है?

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४७)से।

५०९ पत्र एडमड और इवॉन प्रिवाको

सेगॉव, वर्धा, म० प्रा०,
भारतके पतेपर
२६ अक्तूबर, १९३६

प्रिय भक्ति ओर आनन्द,

तुम्हारा प्यारा-सा पत्र बस अभी मेरे हाथ आया है। मैने लोगोसे अपील तो की थी कि जहाँतक बन पडे मुझसे अधिक पत्र-व्यवहार न करे, लेकिन उन लोगोमे तुम्हे अपने-आपको शामिल करनेकी जरूरत नही। तुम-जैसे मित्रोसे, जिनसे मेरे सम्बन्ध सर्वथा अनौपचारिक है ओर जो दूर-देशोमे रहते है, पत्र पाकर मुझे बराबर खुशी होती है।

अपने कामके कारण तुमको वही रहना पड रहा है और इस कारण तुम लोग फिर भारत नही आ सकते—यह कोई दुखकी बात नही। जो हृदयसे एक हो, उनकी दैहिक दूरी कोई महत्त्व नही रखती।

१ प्रवर्तक सघ के।

सत्य और अहिसा अनेक तथाकथित वैज्ञानिक तथ्योसे कही अधिक सच्चे है। हाँ, उनपर अमल करना कठिन है। लेकिन यदि पहलेसे ठीक तैयारी की गई हो, तो यह उतना कठिन भी नही जितना देखने मे लगता है। पर हम तो जीवनके इस सर्वाधिक महत्त्वपूण तथ्यके लिए अपनी फुरसतके चन्द घण्टोसे अधिक कोई समय देते ही नही। किसको कितना महत्त्व देना चाहिए, इसपर हमे पुनर्विचार करने की जरूरत है।

तुमने मीराकी गम्भीर बीमारीके बारेमे पढा ही होगा। अब वह खतरेस बाहर है। कमजोर अब भी है।

यह पत्र चलती गाडीमे लिख रहा हूँ।

तुम दोनोको स्नेह,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३८) से।

५१० पत्र . मीराबहनको

रेलगाडीमे
२८ अक्तूबर, १९३६

चि० मीरा,

प्रवासके दौरान तुमको लिखा मेरा यह दूसरा पत्र[1] है और यह इतना ही बताने के लिए लिख रहा हूँ कि तुम मेरे मनमे सदा बसी रहती हो। आशा है, दोनोके स्वास्थ्यमे निरन्तर सुधार हो रहा होगा।

दिल्लीमे मै सारा दिन चुपचाप जुटकर काम करता रहा। बा हमारे साथ है। मनु देवदासके साथ रह गई है। इन दिनो दिल्लीमे बहुत मजेदार ठण्ड पड रही है। देवदास पहलेसे बहुत अच्छा है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च]

कल हम राजकोटमे होगे। ३० को अहमदाबादमे।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३६७)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८३३ से भी

१ पहले पत्रके लिए देखिए "पत्र मीराबहनको", २६ १० १९३६।

५११ पत्र सैयद महमूदको

रेलगाडीमे
२८ अक्तूबर, १९३६

प्रिय महमूद,

मैं यह चलती गाडीमे लिख रहा हू। उम्मीद है कि मेरा पिछला खत[1] तुम्हे मिल गया होगा। वह मैंने तुम्हारी टिप्पणीपर एक उडती हुई नजर डालने के बाद लिखा था। अब मैंने उसे गोरसे पढ लिया है। उसमे एक बडी तवारीखी गलती मौजूद है। उससे साफ झलकता है कि तुम समझते हो, यहाँ मुसलमानोकी काफी बडी सख्या बाहरसे आये लोगो और उनकी ही बादकी पीढियोके लोगोकी है। लेकिन सचाई इससे बिलकुल उलटी है। आज मुसलमानोकी भारी सख्या किसी वक्त इस्लाम कबूल कर लेनेवाले यहीके लोगा आर उनकी बादकी पीढियोकी है, और इसलिए उन लोगोकी है जिनको वैदिक सभ्यता और सस्कृति विरासतमे मिली है। आर प्रवासी मूल निवासियोके पूर्वजोकी उपलब्धियोपर गव क्यो न करे? तुम्हारी टिप्पणीमे और भी कई बडी-बडी गलतबयानियाँ और उनसे निकाले गये गलत नतीजे या गलत-सलत अटकले मौजूद हैं। मुझे लगता है कि उसे बडी जल्दबाजीमे तैयार किया गया है। काश कि मेरे पास उनकी तरफ तुम्हारा ध्यान दिलाने का समय होता! लेकिन मेरे पास इतना समय नही। तुम अपनी टिप्पणी दुबारा पढ जाओ तो शायद कुछ गलतिया तो तुम्हे खुद ही दिख जायेगी।

आखिरमे, मैं अब भी मुसलमानोके बिना स्वर्गमे जाने को तैयार नही ओर न एकता पैदा करने की मेरी कोशिशमे ही किसी कदर ढिलाई आई है। बात सिफ यह है कि मेरा तरीका अब जुदा हो गया है, लेकिन वह है ज्यादा ठोस और ज्यादा गहराईतक असर करनेवाला। नतीजा तो ईश्वरके हाथ है।

प्यार समेत,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०७८) से।

१ देखिए "पत्र सैयद महमूदको", १९१०१९३६।

५१२ पत्र कनु गाधीको

रेलगाडीमे, पालनपुर
२८ अक्तूबर, १९३६

चि० कन्हैया,

लगता है, अपने समकालीनोमे आजतक एक तू ही दृढ बना रहा। मेरा विश्वास है कि इससे तूने कुछ भी नही खोया। भगवान् तुझे ऐसी शक्ति दे कि तू सदा दृढ रह सके। तू दीर्घायु हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५१३ पत्र: मुन्नालाल जी० शाहको

रेलगाडीमे
[२][1]८ अक्तूबर, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम सबका काम बगैर खीचतानके चल रहा होगा। दोनो भाई आनन्दमे होगे। कल दिल्लीमे तुम्हारे पत्र और तारकी राह देखी, लेकिन कुछ नही मिला। अब देखू, राजकोटमे क्या होता है। आज नानावटीको अलगसे नही लिखता।

बलवन्तसिह मजेमे होगा और तुम दोनो दूध और शक्करकी तरह घुलमिल गये होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५९३)से। सी० डब्ल्यू० ७००१ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१ यह अक साधन-सूत्र में अस्पष्ट है। गाधीजी २७को दिल्ली में थे। इबारत से लगता है, यह पत्र उसके अगले दिन लिखा गया होगा।

५१४ भाषण हरिजन-सेवकोके समक्ष[1]

राजकोट
२९ अक्तूबर, १९३६

गाधीजी ने हरिजन-सेवकोसे कहा कि उनकी खोटके जो मामले मेरी नजरमे आये, उनको देखते हुए मेरा यह विश्वास पक्का हो गया है कि किसी भी हरिजन आश्रमको केन्द्रीय कार्यालयकी ओरसे वित्तीय सहायताकी कोई आशा नहीं रखनी चाहिए। हाँ, यदि वे राजी हो तो केन्द्रीय सस्थाके अनुशासन और नियन्त्रणमें भले ही रहे। उनमें आई खोटसे म इतना आशकित हो गया हूँ कि अब इन सस्थाओकी वित्तीय सहायताके लिए किसीसे भी आग्रह करने का साहस मुझमें नहीं रह गया है। इन सस्थाओका काय-भार सँभालनेवाले सभी लोगोका यह एक स्पष्ट कत्तव्य है कि वे जनता से कोई भी वित्तीय सहायता माँगने से पहले उसे अपने खरेपनके बारेमे आश्वस्त कर दें।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ७-११-१९३६

५१५ भाषण विट्ठल कन्या विद्यालय छात्रावास, नडियादमें[2]

३० अक्तूबर, १९३६

मुझसे इस अवसरपर भाषण करने के लिए आग्रह नही किया जाना चाहिए था, क्योकि यहा मेरी उपस्थिति ही यह बतलाने के लिए काफी है कि इस सस्थाको मेरा आशीर्वाद प्राप्त है। और मै जब गत वष यहाँ आधारशिला रखने आया था[3] तो मैंने इसको अपना आशीर्वाद दिया ही था। लेकिन अब चूकि मुझसे भाषण करने के लिए कहा गया है, इसलिए मै कहता हू कि मेरा आशीर्वाद कुछ शर्तोंक साथ है। मै इसके सचालको, अध्यापको ओर बालिकाओको भलीभाति समझा देना चाहता हूँ कि यह सस्था नैतिक आधारके बिना टिकी नही रह मकेगी। सभी काय-कर्त्ताओको नि स्वार्थ भावसे काम करना चाहिए और यहाँ जो शिक्षा दी जाये, वह

१ यह और इसके बाद के दो शार्षक महादव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत किये गये है।

२ जमनालाल बजाज ने छात्रावास का उद्घाटन किया था।

३ ३१ मई को, देखिए खण्ड ६१, पृ० १२६-२७।

सच्ची शिक्षा हो, अर्थात् ऐसी शिक्षा जो छात्राओके चरित्रके सर्वोत्तम गुणोको जगा सके, उनको विकसित कर सके। हममे से प्रत्येककी आत्मामे सद्‌गुण निहित रहते है, पर अध्यापकोको उनको मुखर बनाना पडता है। यह पवित्र काय वही अध्यापक कर सकते है जिनका अपना चरित्र निष्कलुष हो, जो सदा ही सीखने और अधिकसे-अधिक पूणता प्राप्त करने के लिए तैयार हो। बालिकाओको भी ग्रहणशील बनना पडेगा। उनको अपनी-अपनी खूबिया दिखाने की फिक्रमे न रहकर इस बातकी चिन्ता करनी चाहिए कि वे क्या करे जिससे उनके शिक्षकोको उनके सर्वोत्तम गुणोको विकसित करने मे सहूलियत हो। मुझे इस प्रकारकी सस्थाओका बडा कटु अनुभव रहा है, इस-लिए मै ऐसी नयी-नयी सस्थाओको आशीर्वाद देने मे हिचकता हूँ। मुझे तो इसमे भी शका है कि अध्यापकोको मेरे आशीर्वाद सचमुच दरकार है। मै कह सकता हूँ कि उनमे से कुछ तो मुझे समयसे पिछडा हुआ समझते है, ऐसा आदमी मानते है, जिसे वतमान युगकी भावना ओर आधुनिक प्रवृत्तियोकी कोई समझ नही और जो आजके युवकोको सम्बोधित करने योग्य बिलकुल नही है। ठीक है, ऐसा सोचनेवाले लोग मेरी कही बातोपर कान न दे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ७-११-१९३६

५१६ बातचीत छात्र-छात्राओसे

नडियाद

३० अक्तूबर, १९३६

विद्यालयकी[1] छात्राएँ गाधीजी के जन्म-दिवसपर काता हुआ अपना सूत उनको भेंट करने के लिए तीसरे पहर जमा हुईं। बोचासनके वल्लभ विद्यालयके छात्र भी वहाँ मौजूद थे। बालिकाओने १,२२,४७५ गज सूत भेंट किया, इतना ही नही, उनमें से ६० ने अपनी जरूरतके वस्त्रोके लिए वर्ष-भरमें १,००,००० गज सूत कातने की प्रतिज्ञा ली।

[गाधीजी] तुम लोग जानती हो कि आज तुम्हारे छात्रावासका उद्‌घाटन सेठ जमनालाल बजाजने किया है। तुमको उस भले इनसानके योग्य बनने की कोशिश करनी चाहिए। शायद तुम जानती हो कि वे एक भले इन्सान है?

[बालिकाएँ] हाँ, जरूर।

नही, "हाँ, जरूर" नही, "जी, हाँ।"

वे एकसाथ ऊँचे स्वरमें बोल पडीं "जी, हाँ।"

१ विट्ठल कन्या विद्यालय।

लेकिन वे अगर एक भले इनसान है, तो बाकी सब कैसे है?

सभी भले है।

तुम लोगोको छोडकर?

हम भी भली है।

सबकी-सब, एकदम सभी? बिलकुल पक्की बात?

जी, हाँ।

अच्छा, तो बताओ, तुममे से कोई झूठ बोलती है?

"हाँ, बोलती है।" — उनमें से कुछ बोलीं।

हमेशा या कुछ मौकोपर?

कुछ मौकोपर।

और क्या तुम झगडती नही?

झगडती है।

हमेशा?

"जी हॉ", उनकी यह आवाज खिलखिलाहटोमें दब गई।

हॉ, लेकिन मुझे कहना पडेगा कि तुम लोग भली हो, क्योकि तुम यह स्वीकार करने के लिए तैयार हो कि तुम कभी-कभी झूठ बोलती हो और आपसमे झगडती हो, और बाकी हम लोग भी बस इसी मामलेमे भले है। लेकिन उन लोगोको क्या कहोगी जो धडल्लेसे कहते फिरते है कि हर आदमीको सच बोलना चाहिए, पर वे खुद कभी सच नही बोलते?

वे पाखडी है।

बिलकुल सही है। हमे कभी पाखडी नही बनना चाहिए। एक प्रश्न और। तुम लोगोने वर्ष-भरमे एक लाख गज सूत कातने की प्रतिज्ञा की है। और तुमने प्रतिज्ञा तोड दी तो?

"ऐसी कोई आशका मत रखिए", उन्होने जोरदार विरोध प्रकट किया।

लेकिन अगर तोडी तो?

"हम जानती है, हम नहीं तोडेंगी", उन्होने और ज्यादा जोरसे प्रतिवाद किया।

पर मान लो कि तुम तोड देती हो तब?

(एक छात्रा) 'उपवास'!

कौन करेगा? मै या तुम लोग?

हम लोग करेंगी।

दूध और फलके सहारे उपवास?

जी नहीं। हम पानीके अलावा कुछ नहीं लेगी।

लेकिन तुम कितने दिनका उपवास करोगी?

जबतक हम अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार कोटा पूरा नही कर लेतीं।

बहुत सुन्दर। लेकिन इतना समझ लो कि यहाँ सम्वाददाता लोग भी बैठे है। वे हमारी इस बातचीतको छाप देगे और अगर तुम न कर पाई तो तुमको अफसोस होगा।

इसके बाद वल्लभ विद्यालयके लडकोकी बारी आई। ये धाराला जातिके छात्र है। वहॉ उनके पढने, रहने तथा खाने की निःशुल्क व्यवस्था है। अध्यापकने १२ अक्तूबरको धुनकर बनाई गई पूनियोसे काते गये सूतका बुना वस्त्र गाधीजी को भेंट किया, जिसके लिए धुनाईकी मजूरीके पैसोसे खरीदी गई कपासका उपयोग किया गया था। अध्यापकने कहा कि छात्र सडकोकी सफाई और झाड़-बुहारी भी करते हैं।

हर रोज?

नहीं, गाधीजी के जन्म-दिवसपर हमने ऐसा किया।

अच्छा, मै तुम लोगोसे कहता हूँ कि यदि तुम हर रोज ऐसा करो, तो सफाईकी दष्टिसे तुम बोचासनको एक आदश गाव बना दोगे ओर तुम खुद किसी दिन सरदार वल्लभभाई पटेल बन सकते हो। अगर तुम सरदार वल्लभभाई न बन पाओ, तो भी ऐसा तो माना ही जायेगा कि तुम लोगोने एक बहुत ही भला काम किया। लेकिन मेरी यह बात भी समझ लो कि तुम अगर सडकोकी सफाई नही करोगे तो तुम कभी भी सरदार वल्लभभाई नही बन पाओगे।

इसपर एक लडकेने कहा "लेकिन हमारा गाव एक बुरा गॉव है। वह इस योग्य नही कि उसके लिए इतना सब किया जाये। हम भले ही सडके साफ करते जायें, लोग उनको गन्दा करते ही रहेगे।"

नही, ऐसा मत कहो। सारे गाव इसी तरहके है, ओर हमारा यही कर्त्तव्य है कि वे सडकोको जितना ज्यादा गन्दा कर, हम उतने ही अधिक धैयसे अपने काममे जुटे रहे। ओर तुम लागोको यह नही भूलना चाहिए कि तुम गॉवकी ही सन्तान हो।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-११-१९३६

५१७. भाषण : नगरपालिका बालिका विद्यालयमें[1]

अहमदाबाद
३० अक्तूबर, १९३६

मेरा मन सेगाँवमे रमा हे। मुझे ऐसी चीजामे अब रुचि नही रही। वैसे, एक दूसरी ही दिशामे जीवनका मोड आने से पहले मै इनमें रुचि लिया करता था।

साथ ही उन्होने कहा कि नारी-शिक्षाको नारीत्वके विकासमे सहायक होना चाहिए, जिससे कि स्त्रियाँ अपना जीवन पवित्र बना सके।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-१०-१९३६

५१८ स्वयसेवक भगी

'भगी' शब्द सुनकर जैसा बहुत-मे लोग करते है, उसी तरह कोई पाठक भी बिदक न उठे। भगी शायद समाजका सबसे उपयोगी सदस्य होता हे। समाजका स्वास्थ्य कदाचित् उचित आहारसे भी अधिक सफाई-स्वच्छताकी ठीक व्यवस्थापर निर्भर करता है। कहने की जरूरत नही कि यहा मै भगी जातिका विचार नही कर रहा हूँ। मै तो उस पेशेका विचार कर रहा हूँ जिसका 'भगी' शब्दसे बोध होता है। मै भगीके पेशेको एक नेक पेशा मानता हूँ——जिन पेशोको "प्रतिष्ठा-जनक" माना जाता है उनसे भी अधिक नेक। ये प्रतिष्ठाजनक पेशे बडी आसानीसे कलकमय बन जा सकते है, लेकिन भगीका पशा नही।

बहरहाल, श्री अप्पा पटवधन, जो एम० ए० है, स्वयसेवक भगियोके दलके प्रधान बन गये है। वे इस दलको फैजपुरके काग्रेस-शिविरकी सफाईका काम करने के लिए खडा कर रहे है। स्वागत समितिके सामने सवाल यह था कि इस कामके लिए पेशेवर भगियोको रखा जाये या स्वयसेवक लाग ही इसे करे। किसीने कहा कि पिछली काग्रेसमे तो यह काम शहरके भगियोने ही किया था। लेकिन निणय स्वयसेवक भगियोके ही पक्षमे हुआ। और इस कामके लिए इससे अधिक योग्य व्यक्ति नही हो सकता था। अप्पा साहबने इस कामकी पात्रता प्राप्त की है, क्योकि वे लम्बे समयतक इसका प्रशिक्षण पा चुके है और इससे भी बडी बात यह है कि समाजके इस सार्वाधिक तिरस्कृत वगके प्रति उनके हृदयमे प्रेम है। और उनका

१ भवन के उद्घाटन-समारोह में।

यह प्रेम कोरी भावुकता नही रहा है। उन्होने भगियोके साथ मिलकर खुद भी सफाईका काम किया है और उन्हे मालूम है कि ठीक तरहसे सफाई करने का काम भी दूसरे विज्ञानोकी ही तरह एक विज्ञान है। उन्होने इस कामके लिए १८ वर्ष और उससे अधिक आयुके दो सो स्वयसेवकोकी नि शुल्क सेवा प्राप्त करने के निमित्त काम करने को उत्सुक लोगोसे प्राथनापत्र भेजने को कहा है। प्राथनापत्र ऐसे ही लोग भेजे जो काग्रेस-अधिवेशनके दौरान सारे पाखानो और शिविरकी सफाई राजी-खुशीसे करने को तैयार हो। वे ऐसे उत्साही नौजवान हो जो तमाशा या काग्रेस प्रतिनिधियाको काम करते हुए देखने की खातिर अपने कत्तव्यकी उपेक्षा न करे। उनके हिस्से तो यही गौरव-पद रहेगा कि प्रतिनिधियोको सफाई वगैरहकी पूरी सुविधा जुटाकर वे उनके लिए काम करना सम्भव बनाये।

महाराष्ट्र अच्छे और परिश्रमी कायकर्त्ताओका गढ है। इस कामके लिए दो सौ अच्छे और ईमानदार नौजवान जुटा पाना उस प्रान्तके लिए कठिन नही होना चाहिए। इसका मतलब यह नही कि दूसरे प्रान्तोके नौजवान प्राथनापत्र न भेजे। लेकिन और किसी बातकी खातिर नही तो मितव्ययिता की ही खातिर यह अच्छा होगा कि जिस प्रान्तमे काग्रेसका अधिवेशन हो, उसीमे से ऐसे कामके लिए नौजवान लोग मिल जाये, और जिस ताल्लुके या जिलेमे अधिवेशन हो, यदि उसी ताल्लुके या जिलेसे मिल जाये तब तो और भी अच्छा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-१०-१९३६

५१९ अपमान किसका?

एक हरिजन-सेवकके लम्बे पत्रसे मै निम्नलिखित अनुच्छेद उद्धृत कर रहा हूँ

> **अपनेको हिन्दू कहने मे शिक्षित हरिजनोकी चिढ दिन-दिन बढती जा रही है। कारण, अगर वे कहते है कि वे हिन्दू है तो फिर उन्हे अपनी जाति भी बतानी पडती है, और मनमे हीनताकी भावना होने के कारण यह बात उन्हे बडी अरुचिकर लगती है। अपनेको हिन्दू बताकर अपमान सहने की अपेक्षा अपनेको ईसाई कहना उन्हे अच्छा लगेगा। तो फिर उन्हे सिख या बौद्ध बनने को कहकर हम इस अपमानका अन्त क्यो न कर दें? क्योकि सिख और बौद्ध तो हिन्दुओ-जैसे ही है।**

सिख और बोद्ध हिन्दुओ-जैसे ही है, यह कहकर पत्र-लेखकने अपने पक्षका खण्डन आप कर दिया है। क्योकि अगर बात ऐसी हे तो हरिजनोको सिख या बौद्ध बनने की प्रेरणा देना व्यर्थ ही है। यह छूट तो हर हिन्दूको है कि वह अपनेको हिन्दू-धर्मके अनेक सम्प्रदायोमे से चाहे जिसका अनुयायी बताये। ऐसा करके भी वह हिन्दू ही रहेगा। और अगर कोई हिन्दू न चाहे या उसने जात-पाँतको त्याग दिया हो तो वह

अपनी जाति बताये ही क्यो ? बहुत-से हिन्दू जात-पाँतमे विश्वास नही करते। मैंने यह बताने की कोशिश की है कि जाति-प्रथा हिन्दू-धर्मका अग नही है। वर्ण जाति नही, वर्ग है। यदि कोई ब्रह्म-ज्ञानका उपदेशक है तो वह मजेमे अपनेको ब्राह्मण कह सकता है, यदि वह सैनिक है तो अपनेको बखूबी क्षत्रिय कह सकता है, अगर व्यापारी या किसान है तो वह बेखटके अपनेको वैश्य कह सकता है, और इसी तरह यदि वह सेवा-कार्य करता है तो अपनेको शूद्र कह सकता है। ये विभाजन जातिगत नही, वर्गगत है और इनका सम्बन्ध विभिन्न धन्धोमे है। अस्पृश्य नामका कोई वर्ग नही है। इसलिए कोई जरूरी नही कि अस्पृश्य कहा जानेवाला आदमी अपनेको अस्पृश्य बताये। वह चाहे तो कह सकता है कि हिन्दू-समाजने उसे अस्पृश्य माना है, लेकिन वह इस भेदको स्वीकार नही करता। यहा मै यह बता दू कि यद्यपि मुझे हिन्दू-समाजने बनिया जातिका माना है, मै बनिया नही हूँ, क्योकि जात-पाँतमे मेरा विश्वास नही है। लेकिन अगर मुझे अपनेको हिन्दू कहने के बाद कुछ और भी कहना हो तो मैंने अपनेको हरिजन कहना पसन्द किया है, सो इसलिए कि जहातक मेरे लिए शक्य है, मैंने हरिजनोके पक्षको अपना बना लिया है।

और हिन्दू-समाजने हरिजनको जिस वर्गमे रखा है, अपनेको उस वर्गका बताने मे उसका अपमान कहाँ है ? अगर इसमे अपमान है तो उस समाजका है जिसने अपने सदस्योको ऐसे दासोकी अवस्थामे पहुँचा दिया है जिन्हे बस्तीसे दूर उपेक्षित क्षेत्रोमे रहना पडता है और जिनसे समाजके सभी लोग दूर भागते हैं। और शिक्षित होने से तो हरिजनोमे यह अभिमान जागना चाहिए कि वे अपनेको सच्चे अर्थोमे हिन्दू कह सकते है, यद्यपि तथाकथित उच्च वर्णोने अपने जीवनसे धर्मको तिलाजलि देकर उनपर अवर्णनीय अत्याचार किये हैं। यदि अस्पृश्यता समूल नष्ट हो जाती है और हिन्दू-धर्म जीवित रहता है तो भावी इतिहासकार हिन्दू-धर्मके इतिहासमे हरिजनोको परम सम्मानका स्थान देगे। क्योकि तब यह माना जायेगा कि अपने ही सहधर्मियोके क्रूरतापूर्ण अत्याचारोके शिकार होकर भी वे अपने धर्मपर अडिग रहे। इसलिए किसी हरिजनको जब-जब यह बताना पडता है कि हिन्दू-समाजमे उसे कहाँ रखा गया है तब-तब अपमान उसका नही, बल्कि उसपर अत्यचार करनेवाले तथाकथित सवर्ण हिन्दुओका होता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-१०-१९३६

५२०. भाषण मजदूरोंकी सभा, अहमदाबादमें

३१ अक्तूबर, १९३६

सन् १९१८ मे कुछ मजदूर हडतालके बाद ढीले पड गये थे, थक भी गये थे। २१ दिनतक हडताल चलाना, शान्ति बनाये रखना, किसीको एक ककड तक न मारना, यह किसी भी मनुष्यके लिए एक कठोर परीक्षा थी। उस परीक्षामे २१ दिनतक आप लोग बिलकुल ठीक उतरे। बादमे, आपमे से कुछ ढीले पड गये। फिर जानते है कि मुझे क्या करना पडा, और उसका क्या परिणाम निकला था? आप लोग २१ दिनतक झडा लिये घूमते रहे थे, और उसके ऊपर "एक टेक" लिखा हुआ था। मै आपको रोज ईश्वरका स्मरण कराता और कहता कि ईश्वरको सामने रखकर ही सब कीजिएगा, अन्यथा मेरे लिए मरने का प्रसग आ सकता है। जो "एक टेक" आपके झडेपर है, वह हृदयमे भी है। आप लोग कुछ ढीले पड गये थे, तथापि आपने अपनी भूमिका ठीक अदा की थी। जिसको टेक निभानी हो उसे खूब विचार करके निश्चय करना चाहिए, अपनी मर्यादा अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए, अपनी शक्ति देख लेनी चाहिए। कहावत है कि चादर देखकर ही पॉव पसारने चाहिए। मजदूरोको यह क्या समझाना? आप तो हमेशा सिकुडकर ही सोते है। सात फुटकी खटिया तो सबको मिलनी ही चाहिए, फिर भले ही मजूरकी खटिया रस्सीसे बुनी हो, और अमीरका पल्ग रेशमसे। अमीरका पलग भले रँगा हुआ हो और मजदूरकी खाट बबूलकी लकडीकी बनी हो, पर पैर पसारकर सो सके, इतनी चारपाई तो सभीको चाहिए। मै जानता हूँ कि आज यह स्थिति नही है। आपकी कोठरीमें इतनी जगह ही कहाँ कि उसमे सात फुटकी खटिया समा सके? सम्भव है, कुछ लोगोके पास हो, पर अधिकाशके पास तो नही है। और फिर एक खटिया हो तो भी आपके घर इतने बडे कहाँ है कि उनमे आपकी मा, पत्नी, बच्चे और बहन, इन सबकी खाटे भी समा जाये? आप तो छोटी-छोटी कोठरियोमे रहते है। सर्दियोके मौसमकी तरह सिकुडकर ही आपको तो हमेशा सोना पडता है। पैर फैलाने तक की जगह नही है, यह तो आप जानते ही है। आज सभी बातोमे यही स्थिति है। हमारी शक्ति कुछ आकाशमे उडने की नही है। अब तो ऐसे-ऐसे आविष्कार हुए है कि आकाशसे बमका गोला गिरे तो हजारो आदमी मर जाये। पर यह शक्ति मुझे नही चाहिए। ऐसी शक्तिकी हम इच्छा भी नही करते। फूक मारकर हजारोका नाश करने की शक्ति मुझे मिलती हो तो भी मै उसे नही लूँगा। अगर हमने एक टेक पकडी है तो उसे अन्ततक निभाने की शक्ति हम अवश्य चाहते है। इतनी शक्ति मिल जाये तो काफी है। हम सब धरतीसे पैदा हुए है, और अपने मानकी रक्षा करते हुए हम धरतीपर रह सके, यही हमारी और आपकी टेक थी। बीस वर्ष

तक आपने यह टेक निभाई। अगर कल आप अपनी इस टेककी पूंजी खो दे तो बीस बरसकी कमाईसे हाथ धो बैठेगे। आपकी टेक तो मरते दमतक चलनी चाहिए, नही तो यह सारी कमाई धूलमे मिल जायेगी। आज भी ऐसे करोडपति है जो दिवालिया हो जाते है तो जहर खाकर मर जाते है। टेककी कीमत तो अरब-खरबसे भी ज्यादा है, इसकी कीमत कभी आँकी ही नही जा सकती। यह पूँजी आपने बीस साल जोड-जोडकर रखी है। ब्याज लगाया जाये तो यह दूनी या तिगुनी हो जाती है। पर हम सूदखोर नही है। मूलधन बना रहे, इतना ही काफी है। पर यह मूल पूँजी जिस दिन खो गई, उस दिन आपका दिवाला निकल जायेगा।[१]

आपके सामने असल सवाल यह है कि आप अधिक शक्तिशाली हुए है या मिल-मालिक। यदि मिल-मालिक पच-फैसला अस्वीकार कर दे तो आपको हडतालका आश्रय लेना होगा। उस हालतमें वे आपकी शक्तिकी परीक्षा लेना चाहेगे। मैं तो मिल-मालिकोसे यह कहना चाहता हूँ कि यदि आपकी शक्ति बढे तो उन्हे डरका कोई कारण नही है। किन्तु यदि उनकी शक्ति बढती है तो आपको डरने का कारण है।

मालिकोके ओर हमारे बीचमे क्या भेद है? उनकी शक्ति पैसा है और हमारी शक्ति मेहनत है। उनके पास पैसेका बल है, हमारे पास शरीरका बल है। वे पैसेके बलपर लडते है और हम मेहनतके बलपर। पूँजीके साथ अगर मेहनत न हो तो एक भी मिल न चल सके। आप और हम उनकी मिलोमे काम न भी करे, तो भी आपके भाई वहा जाकर काम करेगे। पैसेसे, धमकीसे, जोर-जबरदस्तीसे या डडेके बलसे उन्हे मजदूर मिल जायेगे, मगर मजदूरोके साथ उन्हे सहयोग तो करना ही पडेगा, नही तो उनकी मिले बन्द हो जायेगी। इसलिए चाबी तो आपके हाथमे है। भले ही वह मजदूर-महाजनके हाथमे न हो, पर आपके, यानी मजदूर वर्गके हाथमे तो है ही।

आप करोडो है, पर अगर आपके पास पूँजी न हो तो क्या करे? बुद्धि न हो और करोडो रुपये हो तो आप क्या करे? चलानेवाला भी चाहिए। मुझे कोई करोड रुपया दे दे तो भी मुझे यह व्यापार करना नही आयेगा। मै तो हरिजनोके कार्यमे या खादी पैदा करने मे उस रुपयेका उपयोग करूँगा। पर मै आदर्श मिल नही चला सकता। यह भी हो सकता है कि किसी मिल-मालिकसे आजिजीके साथ कहूँ कि एक मिल आप हमे दे दीजिए तो वह दे देगा। पर उसे चलाने की शक्ति हमारे पास नही है। मै चाहता हूँ कि यह शक्ति किसी दिन आपमे आ जाये। पर बीस वर्षमे यह नही आई और अगले बीस वर्षमे भी नही आयेगी। ऐसा हो सकता है कि कोई मजदूर इस योग्यताको प्राप्त कर ले, किन्तु वह उसका उपयोग दूसरे मजदूरोको अपना गुलाम बनाने के लिए ही करेगा। मतलब यह कि मजदूर-समुदायमे आज यह शक्ति नही है। आज यह शक्ति आ गई है, अगर आप ऐसा मानते हो,

१ अगला अनुच्छेद **हरिजन**में प्रकाशित महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है।

तो फिर आपको किसी नेताकी जरूरत नही। मै नही मानता कि वह शक्ति आ गइ है। जिस दिन यह शक्ति आ जायेगी, उस दिन कोई वाद नही रह जायेगा। आज अगर यह शक्ति आ गई हो तो आप स्वय पूँजीवादी हो गये। आपको आज अपनी पूजीका ज्ञान हो जाये तो मिल-मालिक और मजदूर एक हो जायेगे। मै ऐसे समय की कल्पना कर रहा हूँ कि हम अपनी "एक टेक" पर दृढ रहकर इस स्थितिको लाये। लेकिन मालिकोका सर तोडकर हमे यह नही करना है। वर्ग-विग्रहवादी चाहे जो कहे। उनका कहना अगर मेरी समझमे आ जाये तो सम्भव है कि मै वर्ग-विग्रहवादी हो जाऊँ। पर अगर मै वर्ग-विग्रहवादी हो जाऊँ, तब भी मेरे साथ वहाँ भी अनेक उपाधियाँ रहेगी — जैसे, अहिसा, सत्य आदि — यद्यपि मेरी रायमे ये उपाधियाँ नही बल्कि अमूल्य सिद्धान्त है।

मिल-मालिकोके साथ हमे लडना पडे तो भी उनसे द्वेष नही करना है। उनके साथ लडना ही हो तो इस तरह लडे जैसे कि आप माँ या अपनी स्त्री या बच्चोके साथ लडते-झगडते है। एक ही रक्त-मासके मनुष्योके साथ जिस तरह और जैसे प्रसगके लिए जितने प्रेम और वेदनासे तथा आदर और विनयसे हम लडते है उसी तरह मिल-मालिकोके साथ लडे। बीस सालमे जो सबक सीखा है उसपर आज भी कायम रहे। मिल-मालिक तो प्रतिपक्षी ठहरे। पर दूसरोका भी तो हमे विचार करना है। जिन्हे 'ब्लैकलेग्ज' कहते है, हमे उन द्रोहियोका भी विचार करना है। वे हमारी इतने बरसोकी मेहनत जरामे मिट्टीमे मिला देते है। उनके साथ लडने के बजाय हमे उन्हे विनय और प्रेमसे समझाना है। हो सकता है कि आपकी बात वे न भी माने। आपकी बात सुनकर वे चले जाये तो अच्छा है, आपके साथ हो जाये, तो बहुत ही बेहतर, पर अगर यह न हो तो भी हमे उन्हे सहन करना है।

यहाँ मजदूरोका एक दूसरा सघ भी है। उसने मुझे एक खुला पत्र भेजा है, जिसका भावार्थ यह है कि आप सब उस सघमे शामिल हो जाये, अन्यथा मजदूरोके दो सघ हो जायेगे। मै यह स्वीकार करता हूँ कि अहमदाबाद-जैसी जगहमे दो सघोके लिए स्थान नही है। आप बीस वषसे जो काम करते आये है उसे नष्ट कर डालना आसान है, उसकी रक्षा करना कठिन हे। उसे नष्ट ही करना हो तो साबरमती पासमे ही है। यह तो हो सकता है कि नये सघमे अध्यक्षका पद जल्दी मिल जाये, शायद कुछ सफलता भी मिले, पर आप लोग इस प्रलोभनमे न पडे। विग्रहवादी कह सकते है कि सहकार हानिकारक है। हमारे लिए तो पहला सबक सहकारका है। सरकारके साथ जब मैंने असहकार करने को कहा, तब यह तो था ही नही कि उसके साथ सहकार कभी किया ही न जाये। सरकारके साथ असहकार किया था, वह अन्तमे सहकार करने के लिए ही। सरकार जिस दिन सेवक हो जाये, उस दिन उसके साथ सहकार अवश्य किया जाये। उसी तरह ये लोग भी, यानी मिल-मालिक मित्र हो सकते है, पर तभी जब वे अपना वाद छोड दे।

आपके साथ तो मुझे सारी जिन्दगी रहना है। किसी समय दुर्भाग्यवश असह-कार करना पडे, तो वह भी बादमे सहकार करनेके लिए ही होना चाहिए। सहकार

न करे तो दोनोकी ही हानि है। आप भी नाहक परेशानीमे पडेंगे और मालिकोका भी नुकसान होगा। हमारा काम तो सबको मिलाने का है, अलगाने का नही। यह काम तो विग्रहवादियोका है।

पचोमे मै भी एक हूँ, इसलिए न्याय-अन्यायके विषयमे मै कुछ नही कहूगा। मै तो आशावादी हूँ। मै ऐसी आशा रखता हूँ कि आपको हडताल नही करनी पडेगी।[1] मालिकोने इस हदतक अपनी समझ-शक्ति साबरमतीमे नही फेक दी है कि वे कहे कि हम लड लेगे। यदि लडना बीस बरसतक हानिकारक समझा गया तो आज एक मिनटके अन्दर उसमे क्या अच्छाई आ गई? मै तो अन्ततक प्रयत्न करता ही रहूँगा, पर तानते-तानते चीज टूट भी जाती है, ऐसी हालतमे मै क्या करूँगा? तब मै यह समझूगा कि ईश्वर परीक्षा लेनेवाला है। मजूर एक टेकपर दृढ रहते है या नही, यह ईश्वर देखना चाहता है। आपकी टेक कच्ची है या सच्ची, यह सब मालूम पड जायेगा। जो शराबघरमे जाता होगा, जो जूआ खेलता होगा, वेश्यागमन करता होगा, वह क्या अपनी एक टेकपर दृढ रह सकेगा? हम तो आपके सेवक है। आपके लिए कष्ट भोगेगे। मार खानी होगी तो वह भी खा लेगे। हो सकता है कि हमे मार न खानी पडे, आपको ही खानी पडे। ऐसा हुआ तो हम आपकी सार-सँभाल करेगे। लेकिन अन्तमे बोझा तो आपको ही उठाना है। इस बोझको उठाने मे हमे आपकी मदद करनी है। जो भी करे बुद्धिका उपयोग करके करे, केवल श्रद्धासे नही।

मै ऐसा मानता था कि स्वराज्यकी चाबी मजदूरोके हाथमे है। पर अब मुझे लगता है कि वह केवल मजदूरोके हाथमे नही है। जबतक देशकी गरीबी दूर नही होती, तबतक स्वराज्य नही आ सकता। गरीबी मिटाने की सजीवनी बूटी सेगाँवमे है — गावोमे है। सेगॉव छह सौ लोगोकी आबादीका छोटा-सा गाँव है। वहाँ तीन चौथाई आबादी हरिजनोकी है। वहॉ रेलवे स्टेशन नही है। यह स्थान अस्पृष्ट है, ऐसा समझकर ही मै वहाँ बसा हूँ, मौज या शौकके लिए नही। मेरी मौज या शौक तो यही है कि हमारे ये गरीब, हमारे ये दरिद्रनारायण सुखी हो। उन्हे रोटी तक नसीब नही होती। और मिलती है तो खराब और सूखी रोटी और गन्दा नमक। इसका मै साक्षी हूँ। इन लोगोका दु ख किस तरह दूर हो, इसकी खोज करनी है। यह खोज यहॉ बैठकर कैसे हो सकती है? आप लोग तो उनकी अपेक्षा बहुत अच्छी स्थितिमे है। वहॉ न कोई चाल है, न कोई पाठशाला, न आपके-जैसा अस्पताल। वहाँ तो मीराबहनके लिए भी डॉक्टर ढूढे नही मिलता। सक्रामक रोगोके रोगी दोनो बाजू पडे है और उनके बीचमे हम। पर मेरा विश्वास दिन-दिन बढता ही जाता है।

१ इस भाषण की **बॉम्बे क्रॉनिकल**में प्रकाशित रिपोर्टमें यहाँ कहा गया है "उन्हें आशा थी कि मजदूरोको हड़ताल नही करनी पड़ेगी। मिल मालिक सघक अध्यक्ष सेठ कस्तूरभाई लालभाई आज उनसे मिलेंगे।"

आपकी मुक्तिकी चाबी सेगाँव-वासियोके पास है। आप अपने दु खको जानते हैं। पर जिन्हे अपने दु खोका ज्ञान नही, वे ही असलमे दु खी है। वे खुद गुलाम है और अपनी गुलामी भुला बैठे है। उनकी स्थिति ऐसी है कि उन्हे रोटीमे अगर आप घी दे तो उनका पेट दुखने लगे। सेगाँवसे ज्यो-ज्यो हम दूर जाते है त्यो-त्यो हमे गाँवोका शोषण ओर भी ज्यादा हुआ दीखता है। मुझे तो कोई सजीवनी बूटी मिल जाये तभी मै अपना मनचाहा सब कर सकता हूँ। मुझे कोई भाषण देने का शौक नही है। यदि आप मेरे बलपर लडेगे तो आपको निराशा ही हाथ लगेगी। मुझे भूल ही जाना चाहिए। मै अधिकाधिक दूर चला जा रहा हूँ और आप लोगोमे मेरी दिलचस्पी कम होती जा रही है। कारण, वह चाबी आपके पास नही है। उस चाबीकी खोजमे मुझे आपसे बहुत दूर जाना पडेगा। मेरे लिए कोई दूसरा आनन्द तो है नही। मेरा आनन्द तो एक ही बातमे है—ईश्वर-दर्शनमे है। यह दर्शन गरीबोमे ओतप्रोत होने से ही होगा। कगाल देशके गरीबोमे अगर मै ओतप्रोत हो जाऊँ तो सारी दुनियाके साथ ओतप्रोत हो सकता हूँ। सच्ची चाबी पाने के लिए ही मै दूर भागता जा रहा हूँ। मै तो बरसोसे देहाती रहा हूँ। मेरा मन देहाती ही है। वही मै अपना आनन्द लूटता हूँ। मुझे जो पुसाता है वह आपको नही पुसायेगा। आज तो मेरी परीक्षा हो रही है। सेगाँवमे एक वर्ष रह सकूँगा या नही, यह मै नही जानता, तब दूसरोसे क्या कहूँ?

मै बहुत आगे चला गया हूँ। मैने आपको अब यह नोटिस दिया है कि मेरे भरोसे मत लडना। मेरी जरूरत है, ऐसा तार आयेगा तब भी मै इनकार कर दूँगा। मिल-मालिक कहेगे तो भी इनकार कर दूँगा। कोई सेगाँव आये तो वहाँ मुझसे वह यथासम्भव सेवा ले सकता है। सेगाँव मेरी साधना है, सेगाँव मेरी समाधि है। वहाँके लोग मुझे ककड-पत्थर मारेगे तो भी मेरा डेरा वही रहेगा। पहले तो पानी भी नही मिलता था, पर अब ठीक-ठीक चल रहा है। लेकिन रास्ता साफ नही हुआ। इस कँटीले मार्गसे मै भागनेवाला नही। वहा भी मै सो जाऊँगा, और फूलोकी सेज मिले तो वहाँ भी सो जाऊँगा। लडना आपकी अपनी शक्तिपर निर्भर करता है। ईश्वरके नामपर लडेगे तो पार हो जायेगे, मेरे बलपर लडेगे तो गड्ढेमे गिरेगे। हम तो सब आपके सेवक है। जितनी हो सकती है आपकी सेवा करते है। लडना ही हो तो आप अपने और ईश्वरके बलपर लडना।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ८-११-१९३६ और **हरिजन**, ७-११-१९३६

५२१. भाषण : गुजराती साहित्य परिषद्मे

अहमदाबाद
३१ अक्तूबर, १९३६

भाई मुशीने आपसे जो कहा, वह सत्यसे भिन्न है। उन्होने आपसे यह कहा कि सन् १९२५ मे मैंने दृढतापूर्वक यह कह दिया था कि मै परिषद्का अध्यक्ष नही बनूगा और यदि ऐसा कोई अनुरोध मुझसे किया जायेगा तो मै असमर्थता प्रकट करूँगा। श्री मुशीकी इतनी बात सही थी। किन्तु उन्होने उतावलीमे यह भी कह दिया कि जितनी दृढतासे मैंने उस समय अध्यक्षका पद स्वीकार करनेसे इनकार किया था, इस बार उतने ही उत्साहसे उसे स्वीकार कर लिया है। यह बात गलत है, सत्यसे भिन्न है। उस बार मै इस पदके योग्य था ही नही। आज उस समयसे भी कम योग्य हूँ। यह पद स्वीकार करनेके लिए मै बिलकुल उत्सुक न था, तथापि मैंने उसे स्वीकार कर लिया है। किन्तु उत्साहसे किया है, ऐसी बात नही है। मै तो यहाँ इसलिए आ गया हूँ कि धर्म-सकटमे पड गया था। जिन मित्रोसे मै काम लेना चाहता हूँ, वे मित्र जब मुझपर कोई भार लादना चाहते है तब मै उसे स्वीकार कर लेता हूँ।

इसे स्वीकार करनेके बाद मै बीमार पड गया।[1] मैंने खबर भेजी कि मुझे कृपापूर्वक इस जिम्मेदारीसे मुक्त कर दिया जाये और अधिवेशनका कार्य वे लोग मेरे बिना ही निपटा ले। किन्तु मुझे तो 'महात्मा' माना जाता है न? इसलिए मेरी बात कौन सुनता? महात्माका पद मुझे किसके हृदयमे मिल गया है, यह तो भगवान् ही जाने। मै अपने हृदयमे तो अल्पात्मा ही हूँ। महात्माके शब्द बेकार सिद्ध हुए, मै बीमार पड गया और नही आ सका। फिर, एक दूसरी कठिनाई भी खडी हो गई। सेगावमे दो साथी बीमार पड गये और मुझे लगा कि यदि मै नही गया, तो मै अब अल्पात्माओका भी अल्पात्मा हो जाऊँगा। शास्त्र कहते है कि अमुक परिस्थितियोमे यदि हमने कोई काम करना स्वीकार किया हो तो उन परिस्थितियोमे परिवर्तन होनेपर उसे अस्वीकार भी किया जा सकता है। किन्तु मै तो अपनी बातका पालन अक्षरश करना चाहता हूँ। इसलिए मै आ गया। वे बीमार साथी भी बच गये है और आप मुझे यहाँ बैठा हुआ देख रहे है।

मुझे यह आशा थी कि परिषद्मे उपस्थित होनेसे पहले मै सारा सम्बन्धित साहित्य इकट्ठा करके पढ डालूँगा और इस अवसरके लिए भाषण तैयार कर लूगा। किन्तु मै तो आज दिवालिया हूँ। भाषण मै नही लिख सका और मैंने यह खबर पहुँचाई कि मुझसे लिखित भाषणकी आशा न की जाये। वहा परिस्थिति ऐसी नही थी कि मै बीमारोकी सेवासे छुट्टी ले लेता। बादमे मुझे यह आशा थी कि राजकोट

१. ७ दिसम्बर, १९३५ को, देखिए खण्ड ६२, पृ० १८०।

मे कुछ अवकाश मिलेगा, किन्तु वहा भी मै सारा समय व्यस्त रहा, एक क्षण भी खाली नही मिला। यहाँ आया तो देखा कि आग सुलग रही है — मालिको और मजदूरोके बीच झगडा चल रहा है। फिर ऐसी आशा थी कि रातको कुछ देख लूँगा, देखने के लिए मैंने सामग्री भी निकलवाई। किन्तु यहाँ आनेतक मै महत्त्वकी चर्चाओमे ही व्यस्त रहा ओर यहाँ मुझे जो-कुछ कहना है उसके विषयमे कोई छोटा-मोटा नोट भी नही लिख पाया। क्या आपकी परिषद्ने अपने अध्यक्ष-पदके लिए कोई इससे भी अधिक अयोग्य व्यक्ति कभी चुना था?

इसे बारहवाँ अधिवेशन कहा जा रहा है। कही ऐसा न हो कि मेरे हाथो इस अधिवेशनकी बारहवी[1] ही हो जाये? दुर्भाग्यवश मेरे ओठोपर यह अपशकुन-सूचक शब्द आ गया। किन्तु मै सौभाग्यशाली हूँ। जहाँ भी जाता हूँ वहाँ लोगोमे अनेक प्रकारकी आशाएँ जन्म लेती है। उन्हे लगता है कि मै कुछ नया कर दूँगा। लेकिन नया करने का मतलब तो वही हो गया न जो बारहवी करने का है। मेरे पास समाचारपत्रोकी कतरने आई है।[2] परिषद्के विधानमे सशोधन करने के लिए मेरे पास सशोधनके कोई बारह प्रस्ताव आये है। उन्हे मै पढ गया हूँ, किन्तु मै यहाँ सविधानका अध्ययन किये बिना ही आया हूँ। इसलिए यदि कोई विधि-शास्त्री कोई प्रश्न खडा करेगा तो मै उलझनमे पड जाऊँगा।

हमारे समक्ष आजके कार्यक्रममे बारह वस्तुएँ है। उनमे से एक मेरा भाषण है और यह सारा कार्य हमे साढे पाँच बजेके पहले निपटा देना है।

इतनी प्रस्तावनाके बाद अब मै, मुझपर जो बोझ लादा गया है, उसके लिए आपका आभार मानता हूँ। मालिक लात मार दे तो भी सेवक उससे यही कहता है कि मुझे खेद है कि मैंने भूल की और आपको मुझे लात मारनी पडी। मेरे तो ३० करोड मालिक है। उन्होने मुझे सेवक नियुक्त नही किया, मैंने स्वय ही यह मान लिया है कि मै इन ३० करोड स्वामियोका सेवक हूँ। इन ३० करोडमे आप भी है। और आपको तो स्वामी होने का दुहरा अधिकार है, क्योकि आपने मुझे सेवक नियुक्त भी किया है। तथापि मै यह आशा लेकर आया हूँ कि आप मुझे किसी-न-किसी तरह निभा लेगे।

मेरे विषयमे समाचारपत्रोमे जो-कुछ कहा गया है और जो कतरने मेरे पास भेजी गई है उन्हे तो मै नही पढ सका हूँ। किन्तु मेरे पास जो पत्र आये है उन्हे तो मुझे पढना ही चाहिए — और किसी कारणसे नही तो शिष्टाचारकी खातिर ही। मुझे "डेमोक्रेट" माना जाता है और मै हूँ भी। इसलिए ये लोग मुझसे कुछ आशा करते है। इन लोगोने यह कहा है कि परिषद्का सविधान मुशीका बनाया हुआ है। सविधानकी रचना उनका एकाधिकार माना जा सकता है। वे विधिशास्त्री है, इसलिए उन्होने उसकी रचना इस तरह की है कि हम उसकी एक

१ मृत व्यक्ति की बारहवीं तिथि का श्राद्ध।

२ अखबारोमें गुजराती साहित्य परिषद्के तथाकथित "अलोकतान्त्रिक" सविधानकी बड़ी आलोचना हुई थी और कहा गया था कि सविधान इतना कठोर ह या मुशीने उसे इतनी चतुराईसे गढ़ा है कि उसमें कोई सुधार हो ही नहीं सकता।

भी ईट इधर-उधर नही कर सकते, हाँ, आप उसकी एक-दो ईंटे हिलाये-डुलाये तो शायद कुछ हो सकता है। यह भी हो सकता है कि मै उनपर कुछ दबाव डालू और यहाँ-वहाँ जो परिवर्तन कराया जा सके, कराऊँ। इसके सिवा कुछ अन्य सुझाव भी मेरे पास आये। इन सुझावोको मै पचा नही सका।[1]

मै अपनेको "डेमोक्रेट" — लोकशासनमे विश्वास रखनेवाला — मानता हू। और ऐसा "डेमोक्रेट" तो इशारेमे यह समझ जायेगा कि लोकशासन कहाँ चल सकता है और कहाँ नही चल सकता। काग्रेसका सविधान जब पहली बार तैयार हुआ तो कुछ लोगोने कहा था कि हम काग्रेसकी सदस्यताके लिए चार आने क्यो दे? चार आने न देने का आग्रह रखनेवाले इन लोगोसे मैने यह कहा कि तब आप काग्रेसमे आना ही क्यो चाहते है। कल्पना कीजिए कि देशकी सेवाके लिए हम एक पीपुल्स बैंककी — बडे-बडे सेठ जिन्हे खोलते है वैसा नही बल्कि सचमुच एक लोकहितकारी बैंककी — स्थापना करते हैं। ऐसे बैंकमे लोगोका हित सिद्ध करने के लिए क्या हमे ऐसे ही व्यक्तियोको नही रखना होगा जो प्रामाणिक हो, योग्य हो, नि स्वार्थ हो और लोकहित चाहनेवाले हो। यदि ऐसी सस्थामे हम लोकशासनके सिद्धान्तके अनुसार लोगोको निर्वाचनके आधारपर रखना चाहे तो हमारा काम नही चलेगा। एक दूसरा उदाहरण लीजिए। कल्पना कीजिए कि हम हाई कोर्ट बना दे। तो क्या हम इस हाई कोर्टका सविधान लोकशासनके सिद्धान्तपर बनायेंगे? राम-राज्यमे भी हाई कोर्ट तो होगा ही। किन्तु शुद्धतम "डेमोक्रेसी" मे भी ऐसी सस्थाएँ होगी जिनमे "डेमोक्रेसी" के ही हितमे, हमे "डेमोक्रेसी" के नियमोके अनुसार नही, बल्कि किन्ही दूसरे नियमोके अनुसार काम करना होगा। मै तो यह जानता ही हूँ कि "डेमोक्रेसी" कहाँ चल सकती है, कहाँ नही चल सकती। इसीलिए मै कहता हूँ कि साहित्य परिषद्मे हम "डेमोक्रेसी" के सारे नियमोका अनुसरण नही कर सकते।

मुझे आपसे कुछ गम्भीर बाते भी कहनी है। लेकिन गम्भीर बात कहकर मै आपको रुलाना नही चाहता। ऐसा गाम्भीर्य मुझमे है भी नही। यह तो मुझसे फाँसीपर चढते समय भी नही होगा। इसलिए मै आपको हँसाऊ तब भी आपको मेरी बात ध्यानसे सुननी चाहिए।

मै "डेमोक्रेट" हूँ, तथापि मै यह कहता हूँ कि ऐसी परिषदे "डेमोक्रेसी" के नियमोके अनुसार नही चल सकती। उनमे "डेमोक्रेसी" का तत्त्व अवश्य होगा किन्तु उसके नियम नही होगे। आज जो बिलकुल अपढ है ऐसे बालक, स्त्रिया और वृद्ध भी एक दिन "डेमोक्रेसी" का अथ समझने लगेगे। उस दिनके आनेतक मै तो नही रह सकता किन्तु जो लोग तब भी जीवित होगे वे यह याद रखे कि ऐसी सस्थाओमे "डेमोक्रेसी" के नियम नही चल सकते। यदि उनमे ये नियम चलाये जायेगे तो वहाँ "डेमोक्रेसी" नही "मॉबोक्रेसी" — भीडशाही — होगी। इसलिए जिन्होने मुझे यह लिखा है कि यदि मै "डेमोक्रेसी" पसन्द करता होऊँ तो मुझे इतने परिवर्तन

१ अगला अनुच्छेद **हरिजन**में प्रकाशित अग्रेजी रिपोर्टसे लिया गया है।

कराने चाहिए, उनसे मै विनयपूर्वक यही कहना चाहता हूँ। लेकिन इसका यह अर्थ नही है कि इस सविधानपर मुशीका एकाधिकार है। इस सविधानको मैने पढ लिया है। मेरी ऐसी प्रसिद्धि है कि मै कोई भी सविधान अविलम्ब तैयार कर दे सकता हूँ। मै विधिशास्त्री तो हूँ नही इसलिए मेरी भाषा देहाती होती हे, लेकिन मै उसे ऐसा रूप देता हूँ कि विधिशास्त्री उसे समझ सकते है और सामान्य लोग भी उसे समझ लेते है। मैने अपनी बुद्धि अभी किसीको बेची नही है इसलिए मै कहता हूँ कि इस सविधानमे मुशीका कोई एकाधिकार नही है।[1]

अब दूसरी बात आप कहते है कि सविधान ऐसी चतुराईसे बनाया गया है कि उसमे कोई बिन्दु-विसर्गका भी परिवर्तन नही कर सकता। मै इस बातको नही मानता। ऐसा सविधान तो आजतक किसीने बनाया ही नही। आजतक ऐसा कोई व्यक्ति हुआ ही नही जो बिल्कुल नीरध्र सविधान बना दे। कोई भी सविधान हो, उसमे से चार घोडोवाली गाडी या मेरे-जैसोकी बैलगाडी जा ही सकती है। कैसा भी सविधान हो, उसमे न्यूनता तो रहेगी ही। पूणता, सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमत्ता तो ईश्वरमे ही हो सकती है। और ईश्वर भी महान् "डेमोक्रेट" है ही। वह कितना सहता है? उसकी सन्तान हम कितनी धोखा-धडी करते है! हम पूछते है कि हमे बताओ, ईश्वर कहाँ है। वह सर्वत्र है, सृष्टिके कण-कणमे व्याप्त है, फिर भी पूछते है। लेकिन ईश्वरको देखने की शक्ति ईश्वरने किसीको दी नही। उसकी इच्छा होने पर ही और जिसे वह चाहे वही उसे देख सकता है। उसके आँख, नाक, कान आदि नही है, किन्तु जिसे वह अपनेको देखने की शक्ति देता है उसके आगे वह प्रकट होता है। किन्तु यह शक्ति उसने अपने पास ही रखी है।

मुशी तो हममे से ही एक है और हम एक गुलाम राष्ट्र है। किन्तु रूस, इटली या अन्य कही भी ऐसा सविधान नही है जहाँ कि उस सविधानमे कोई परिवर्तन कराना चाहे पर करा न सके। हाँ, बन्दूकके बलपर आधारित सविधान अवश्य ऐसे हो सकते है। किन्तु ऐसे सविधानकी रचना तो कोई नही कर सकता कि फिर उसमे किसी प्रकारका परिवर्तन करने की आवश्यकता कभी पडे ही नही।

इस परिषदके सविधानमे जो लोग परिवर्तन कराना चाहते है उन्हे मेरा एक सुझाव है। सही किस्मके परिवर्तन इन दो दिनोमे नही कराये जा सकते। मै यहाँ चाहे जितनी अनिच्छासे क्यो न आया होऊँ, हूँ तो मै अध्यक्ष ही। अध्यक्षके अधिकार मै जानता हूँ और अध्यक्षकी जिम्मेदारियोको भी मै समझ गया हूँ। किन्तु वास्तविक अध्यक्ष है कौन?

आनन्दशकरभाईकी ओर देखकर

ये जो उपाध्यक्ष है, ये ही वास्तविक अध्यक्ष है। मै तो झूठमूठ ही अध्यक्ष हो गया हूँ। इन्होने मुझे पत्र लिखा था कि आप अध्यक्ष है तो सही पर मै आपकी रक्षा कर लूगा। इसलिए जो भी काम यहाँ होना है, यही उसे करायेगे। सविधान

१ अगले दो अनुच्छेद **हरिजन**में प्रकाशित अग्रेजी रिपोर्टसे लिये गये है।

दो दिनमे नही बदला जा सकता। आनन्दशंकरभाई पर भी इसका भार नही डाला जा सकता। अधिवेशन निष्फल न हो — और जबतक मै अध्यक्ष हू तबतक मै उसे निष्फल नही होने दूगा — इसलिए मुझे जैसा सूझेगा और अपनी सारी चतुराईका उपयोग करके मै सविधानमे सशोधन सुझाऊँगा। इसका यह अर्थ नही है कि ये सशोधन मै करा ही दूँगा। मै जो-कुछ सुझाऊँगा वह सविधानकी दृष्टिसे ही सुझाऊँगा। मै कभी किसी दिन किसी भी व्यक्तिसे ऐसी कोई बात नही कहता जिसमे किसी प्रकारका छल-प्रपच हो। मुझमे सीधी बात सीधी तरह कहने की शक्ति है। अत मै बिलकुल सीधी तरह जो सशोधन कराये जा सकते है, उन्हे बताऊँगा।

अब मै अपने भाषणपर आता हूँ। आप विद्वानोसे मै क्या कहूँ? सर चीनुभाईने मेरे विषयमे यह कह ही दिया है कि मै न तो विद्वान् हूँ और न साहित्यकार। किन्तु मै विद्यापीठका कुलपति हू। मैने [गुजरातीका] 'जोडणी कोश' तैयार कराया है। इस विद्यापीठके विषयमे सर चीनुभाईने भूतकालका प्रयोग किया। मै सर चीनुभाईसे यह कहने की अनुमति लेता हूँ कि विद्यापीठ तो आज भी है और हमेशा रहेगा। वह ऐसी सस्था नही है कि दो-चार दिन रहकर विलुप्त हो जाये। विद्यापीठ तबतक रहेगा जबतक हम स्वराज्यका मन्त्र जपते रहेगे, जबतक हमे स्वराज्यका मन्त्र याद रहेगा। जैसे जगम आश्रम होते है, उसी प्रकार जगम विद्यापीठ भी रहेगा। किसीने ढाई लाख रुपया हमे दिया, इससे विद्यापीठका एक मकान हो गया। किन्तु मकान न होता तब भी विद्यापीठ तो चलता ही रहता। जब हमारे पास पैसा नही था तब भी विद्यापीठ तो था। वह भूतकालमे था, वतमानमे चल रहा है और भविष्यमे चलता रहेगा। विद्यापीठका रूपान्तर होता रहा है और होता रहेगा। आज विद्यापीठमे गिडवानी[1] नही है, कृपलानी[2] नही है, काका नही है। आज उसमे देहाती लोग है। किन्तु क्या केवल विद्वान् ही विद्यापीठ चला सकते है? कोई मनुष्य भले देहाती हो, वह सहृदय होना चाहिए। उसके व्यवहारमे नाटकीय कृत्रिमता नही होनी चाहिए। काठियावाडमे एक जातिके लोग है जिन्हे "वालीडा" कहते है। उनसे जिसका भी अभिनय कराना हो वे उसीका अभिनय कर देते है। हमे ऐसे देहाती नही चाहिए। जिनका हृदय सचमुच देहाती हो ऐसे लोग ही विद्यापीठको चला सकेगे। विद्यापीठ अहमदाबादके गुड्डे-गुडियोके लिए नही है। भाई अम्बालालकी कन्या[3] उसमे आई है, यह अच्छा ही है। किन्तु विद्यापीठ ऐसा कोई डिपो नही है जिसमे गुड्डे और गुडियाँ आये, हम उनका शृगार करे और जैसे वे थे और थी, उसी रूपमे उन्हे माँ-बापको वापस सौप दे। विद्यापीठ तो देहाती स्त्री-पुरुषोको गढने के लिए स्थापित हुआ है। उसे उन्हे ठीक-ठीक गढना नही आता, किन्तु वह प्रयत्न करता रहता है ऐसे लोगोके लिए 'गीता' के छठे अध्यायमे यह[4] कहा गया है कि उनका कर्म

१ चोइथराम गिडवानी।
२ जे० बी० कृपलानी।
३ मृदुला साराभाई।
४ भगवद्गीता, ६/४०।

अकल्याण नही होता। यह भगवान्‌की प्रतिज्ञा है और सच्ची भावनावालो के विषयमे वह सफल होगी। विद्यापीठने भूतकालमे जो-कुछ दिया है उससे विद्यापीठको दान देनेवालो को अपने कियेका पूरा फल मिल गया है। सर चीनुभाई, मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि जिस प्रकार विद्यापीठने भूतकालमें अपने दाताओको उनके दानका पूरा मूल्य चुकाया है, उसी प्रकार वह भविष्यमे भी चुकाता रहेगा। और आप स्वय यह देखेंगे।

अब परिषद्के विषयमे साहित्य-परिषद् क्या करे? परिषद्से मैं क्या आशा रखू? काका कालेलकरने इसके विषयमे नौ पन्ने लिखकर मुझे दिये थे। उन्हे मैं पढ तो गया था परन्तु भूल गया हू। डाक्टर हरिप्रसादने भी पत्र भेजा था, किन्तु वह न मालूम कहा पडा है। होगा तो सुरक्षित, परन्तु यहाँ आते समय मुझे नही मिला। उन्हे फिर लिखकर देने को कहा तो उन्होने रातको मेरे सो जाने के बाद भेजा। वह भी यहाँ नही लाया। इस तरह उन्होने जो-कुछ चाहा, वह मैं नही दे सकता। यह मेरा दुर्भाग्य है। मुझे समय मिले तभी तो पकाऊँ और आपके लिए भोजन तैयार करूँ? किन्तु इस समय जो-कुछ कहता हू, वह मेरे लिए तो ठीक ही है। क्योकि जो हृदयसे निकलता है वही मैं कहता हूँ, मुलम्मा चढाये बिना कहता हूँ।

स्वागताध्यक्षने मेरा बोझ हलका कर दिया है। मैंने पहली साहित्य परिषद्मे जो-कुछ कहा था उसे उन्होने फिर कह सुनाया है, ताकि कही मैं आपको चाबुक न लगाने लगू। परन्तु अहिसाका पुजारी भी कभी चाबुक लगाता है? मेरे पास चाबुक नही हो सकता। उस समय मैंने तो नम्रता ही बताई थी। आज नरसिहरावभाई[1] यहाँ नही हैं, इसका मुझे बडा दु ख है। उनके साथ मेरा सम्बन्ध लगातार बढता गया है। वे आज यहा होते तो मैं बहुत खुश होता। और रमणभाईका[2] तो आज शरीर भी नही रहा। उनसे मैंने कहा था कि मेरे पासके कुएँपर चरसा चलानेवाला चरसिया जो भाषा बोलता है, उसका उसे पता नही होता। वह गाली देता है, इसका उसे पता नही होता। उसे मैं क्या कहूँ? जो कवि हो वह उसके पास जाये। मुशी ठहरे उपन्यासकार, वे तो नही जा सकते। कोई अद्भुत कलाकार ही उसके पास जाकर उसे समझा सकता है। [अवसर देखकर] दो शब्द यहाँ कहे, और दो वहाँ कहे और ऐसी भाषामे कहे कि वह अनायास समझ जाये।

हम साहित्य किसके लिए तैयार करे? कस्तूरभाई ऐंड कम्पनीके लिए या अम्बालालभाईके लिए या सर चीनुभाईके लिए? उनके पास तो रुपया है इसलिए वे जितने चाहे उतने साहित्यकार रख सकते है और जितने चाहे उतने पुस्तकालय कायम कर सकते है। परन्तु उस चरसियेका क्या हो? उस समय मेरे सामने वह अकेला ही था।

१ नरसिंहराव भोलानाथ दिवेटिया।

२. सर रमणभाई नीलकण्ठ।

और वह भी किसी वास्तविक गाँवका नही बल्कि कोचरबका था। कोचरब भी कोई गॉव ह? वह तो अहमदाबाद की जूठन है। वहाँ जीवनलालभाईका बँगला था। मेरे जैसा भूत ही वहॉ जाकर बम सकता था। वहाँ उन्हे ज्यादा किराया देनेवाला भी उस समय कौन मिलता? किन्तु मुझे यहॉ रखना था, इसलिए जीवन-लालभाईने बगला दिया और सेठ मगलदासने रुपया देनेको कहा। किन्तु आज तो उस चरसिये-जैसे बहुत लोग मेरे सामने मौजूद है। इस समय मै सेगाँवमे पडा हुआ हूँ। वहाँ ६०० मनुष्य है। उनमे १० आदमी भी मुश्किलसे ऐसे होगे जो पढ सके। दस कहने मे अल्पोक्ति हो तो पचास कहने को तैयार हूँ, परन्तु पचास कहने मे अतिशयोक्ति हो जायेगी। वहॉ मै क्या करता हूँ? विद्यापीठके कुलपतिका पद मुझे शोभायमान करना है। इसलिए मुफ्त पुस्तकालय खोला। वहॉ किताबे जमा करना शुरू किया। परन्तु पढ सकनेवाले दस लोगोमे से समझकर पढनेवाले तो दो-तीन ही होगे। और बहनोमे तो एक भी ऐसी नही जो पढ सके। वहाँ ७५ फीसदी हरिजन है।

वर्धाकी उन्हे छूत तक नही लगी। छूत लगी होती तो मै दूर चला जाता। वहॉ तो मलेरिया है किन्तु जहॉ मै जाऊँ वहा मलेरियाकी गुजर नही हो सकती। मलेरियाके साथ मेरा ऐसा करार है। वहाँ बहुत-से डबरे है। किन्तु एक धनी व्यक्ति[1] मिल गया, जिसने सडक बनवा दी है। छह महीने पहले जैसी हालत थी, वैसी हालतमे आनन्दशकरभाई-जैसे वहॉ आ भी नही सकते थे।

वहाँ मैने एक पुस्तकालय खोला है। उसमे साहित्य तो क्या हो सकता है? एक-दो लडकियोकी काममे ली हुई किताबे उनसे उधार ले ली। ये निकम्मी पाठ्य-पुस्तके तैयार करनेवालो के बारेमे बोलूँ, तो आपको खूब हँसा सकता हू और घटो बात कर सकता हूँ। किन्तु समय नही है।

वहाँका प्रदेश महाराष्ट्री ठहरा। वहॉ गुजरातकी-सी निरक्षरता नही है, परन्तु सेगॉवमे निरक्षरता है। वहॉ मेरे पास एक एल-एल० बी० है।[2] वह कानून भूल गया है। भूलसे एल-एल० बी० हो गया। वह गुजरातका है परन्तु थोडी-सी मराठी जानता है। मैने उससे कह दिया कि लोग समझ सके, ऐसी किताबे पढाओ और उनमे से जो पढाओ, उसे अपने ज्ञानसे और बढाओ। आजकलके अखबार तो है, पर वहॉके लोग उन्हे क्या समझे? उन्हे भूगोल पढाना है। वे रूसको क्या जाने? उन्हे क्या पता कि स्पेन कहॉ है? इन साढे तीन रुपयोकी किताबोके लिए घर ऐसा है कि बरसातमे वहॉ बैठ भी नही सकते। कोई दियासलाई डाल दे तो सुलग उठे। यह मीराबहनकी झोपडी थी। मीराबहन त्यागी है पर मूख है। मैने उससे कहा था कि जहॉ लोग पाखाने जाते हो वहाँ तू नही रह सकती। मै तो गाँवकी सीमापर ही रह सकता हूँ। मेरे देहातमे बसने की यह शर्त है कि मुझे साफ हवा, साफ पानी और साफ भोजन मिलना चाहिए। सौभाग्यसे मैं जहाँ पडा हू, उस तरफकी जमीनको लोग पाखानेके लिए इस्तेमाल नही करते। मीराबहनवाली उस

१ जमनालाल बजाज।

२ मुन्नालाल जी० शाह।

झोपडीमे हमने पुस्तकालय जमाया। ऐसे गाँवमे मै लोगोको क्या पढकर सुनाऊँ? मुशीका उपन्यास सुनाऊँ? श्री कृष्णलालभाईका 'कृष्ण-चरित्र' पढू? 'कृष्ण-चरित्र' मौलिक पुस्तक नही हे, अनुवाद है, फिर भी इस अनुवादको जब मैने पढा था, तब वह मुझे मीठा लगा था। मै इसे पढकर खुश हुआ था। किन्तु यह हमारा दुर्भाग्य है कि मै उनकी इस पुस्तकको भी सेगाँवमे नही चला सकता। पढे-लिखे लोग यह बात मेरे मुँहसे न सुने तो किसके मुहसे सुनेगे? सेगाँवसे मै एक भी लडकेको यहाँ नही लाया। किराया दू तो चला जाये। परन्तु यहाँ आकर क्या करे? तो भी मै उनका प्रतिनिधि हू, ऐसा प्रतिनिधि जिससे न तो उन्होने इसके लिए कहा है ओर न चुना ही है। तो उनके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मै गावोके लोगोके दिलका दर्द आपको सुनाता हूँ। यह सच्ची "डेमोक्रेसी" है। इन लोगोसे सीख-सीखकर मै आपसे कहता हूँ कि सच्चा स्वराज्य चाहिए तो यहाँ आइए। आपके लिए मै रास्ता साफ कर रहा हूँ। वहा काँटे तो बिछे ही है, परन्तु थोडे-से गुलाब भी मै लगा दूगा।

जब यह बात कहता हूँ तो डीन फेरर याद आता है। वह जबरदस्त विद्वान् था। मै मानता हूँ कि अग्रेजीमे बडे-बडे विद्वान् मौजूद है। मै अग्रेजोके साथ लड भले ही, परन्तु मै गुणग्राही हूँ। मुझे किसी अग्रेजसे या अग्रेजी भाषासे दुश्मनी थोडे ही है! डीन फेररको लगा कि जनताके सामने मुझे ईसाका जीवन लिखकर रखना है, किन्तु वह कैसे लिखा जाये? अग्रेजी भाषामे ईसाके जितने जीवन-चरित है वे सब वह पढ गया, किन्तु उसे सन्तोष न हुआ। फिर वह फिलिस्तीन गया। वहाँ 'बाइबिल' ली और उसमे दिये हुए जीवन-वृत्तान्तके अनुसार सब-कुछ अपनी आँखो देख लिया। फिर उसने श्रद्धाभावसे पुस्तक लिखी। इसके लिए उसने कितनी सामग्री इकट्ठी की, कितनी मेहनत की और कितने बरसोके बाद उसने यह पुस्तक लिखी! अग्रेजी भाषाकी वह अद्भुत पुस्तक हें। जब मैने नेटाल छोडा, तब एक पादरीने वह मुझे पढने को दी थी। अग्रेजी भापामे यह एक सुन्दर और सवमान्य पुस्तक है। इसमे जॉन्सनकी अग्रेजी नही है। डिकन्स-जैसी सुन्दर और सरल अग्रेजी है। यह पुस्तक आम लोगोके लिए लिखी गई है। तो क्या हमारे विद्वान् लोग 'रघुवश' पढकर, भवभूति पढकर, और अग्रेजी पढकर गाँवोमे जायेगे? ये पुस्तके पढते-पढते इन्हे क्षय हो जाये, सग्रहणी हो जाये या ब्लड-प्रेशर हो जाये, तो भी उन्हे पढने का लोभ तो रह ही जाता है। फिर ये गाँवके लिए पुस्तके तैयार करने बैठेगे, तो इनकी पुस्तके भी इनकी तरह रोगी ही होगी। ऐसे आदमियोका गावामे काम नही। नर्मदाशकरने कहा है, वैसे सभी बातोमे पूरे आदमीका वहाँ काम है। गाँवोमे थमस लेकर जानेवाले मेरे जैसे आदमीसे भी ज्यादा सच्चे देहातीकी तरह जाकर वहाँ रहनेवालो का काम है। वे ही वहाँके लोगोको जीता-जागता साहित्य दे सकेगे।

रविशकर रावल-जैसे लोग अहमदाबादमे बैठे-बैठे कूँची चलाया करते है। किन्तु गाँवोमे जाकर वे क्या करेगे? हाँ, उनके चित्रोकी प्रदर्शनी देखकर मेरी छाती फूल गई, क्योकि पहले यहाँ ऐसे चित्र नही थे। डॉ० हरिप्रसाद मुझे आजसे पहले भी

कुछ चित्र दिखाने ले गये थे, किन्तु तबसे अब बहुत ज्यादा प्रगति हो गई है। साहित्य चित्रोके जरिये भी दिया जा सकता है। किन्तु ये चित्र दूसरे ही होते है। यहाँ तो रविशकर रावल चित्रोमे शब्दोका ज्ञान पूरते थे। किन्तु सच्ची कला तो ऐसी होनी चाहिए कि वे चुप रहे तो भी मै उसे समझ सकू। मै शिक्षित होऊँ, रस्किन मैने पढा हो और फिर मै इनकी कला समझ सकू या ये समझाये तब समझूँ, तो इसमे कोई बडी कला नही। मुझे तो देहाती आखसे देखना है। फिर भी मेरी छाती इनके चित्रोको देखकर फूल गई। किन्तु मुझे लगा कि चित्र ऐसे होने चाहिए जो मुझसे बोले, मेरे आगे नाचे। ऐसे चित्र दुनिया-भरमे बहुत थोडे है। रोममे पोप के सग्रहमे मैने एक मूर्ति देखी, जिसे देखकर मै अपना भान भूल गया था। यह मूर्ति 'क्राइस्ट ऑन दि क्रास' (सलीबपर ईसा)की है। यह मूर्ति देखकर मनुष्य पागल हो जाता है। इसे समझाने को रविशकर रावल मेरे पास खडे नही थे। उसे देखकर ही मै स्तब्ध हो गया था। यह तो विदेशकी बात हुई। परन्तु कुछ साल पहले मै मैसूरमे बेलूर गया था। वहाँके पुराने मन्दिरमे नग्न अवस्थामे खडी एक स्त्रीकी मूर्ति देखी थी। वह मुझे किसीने बताई नही थी, परन्तु एकदम मेरा ध्यान उधर गया और मै आकर्षित हुआ। मै नग्न अवस्थामे खडी स्त्रीका वर्णन यहाँ नही करना चाहता, किन्तु चित्रका जो भाव मैने समझा, वह बताता हू। उसके पैरके सामने एक बिच्छू पडा है। उसका कवि बीभत्स नही था, इसलिए स्त्रीको उसने कपडेसे कुछ ढँक दिया है। वह काले सगमरमरकी मूर्ति है। उसे देखकर ऐसा लगता है कि कोई रम्भा है, जो बेचैन हो रही है। मै उसका वणन अपनी देहाती शैलीमे ही करता हूँ। मै तो देखता ही रह गया। वह अपने शरीरपर के कपडेको झटक रही है। कलाको वाणीकी जरूरत नही होती। मुझे ऐसा लगा, साक्षात् कामदेव यहाँ बिच्छू बनकर बैठा हे। उस स्त्रीके शरीरमे आग जल रही है। कविने कामदेवकी विजय होने दी है, परन्तु उस स्त्रीने आखिर अपने कपडेमे से उसे झाडकर फेक दिया है और उसकी जीत नही होने दी। उस स्त्रीके अग-प्रत्यगपर उसकी वेदना चित्रित है। रविशकर भले ही इसका कुछ भी अर्थ करे, किन्तु उनका वह शहरी अर्थ गलत होगा और मेरा देहाती अर्थ सच्चा।

मै क्या चाहता हूँ सो मैने कह दिया। इच्छा तो होती है कि इस चित्रमे और रग भरूँ। किन्तु जो इतने चित्रसे न समझ सके, वह कला-रसिक नही कहला सकता।

मैने जो इतनी बडबडाहट की हे उसके लिए मुझे माफ कीजिएगा। मेरे दिलमे आग जल रही है। इच्छा तो होती है कि अस्पष्ट खीची हुई लकीरोको मै पूरा कर दू, किन्तु मजबूरीसे खत्म कर देता हूँ। मुझे जो-कुछ कहना है, उसमे से थोडा ही मैने कहा। इस समय मेरा दिल रो रहा है। किन्तु मै आखमे से आँसू कैसे निकालू? खूब वेदना होते हुए भी मुझे तो हँसना हे। रोने के प्रसग आते है तब भी मै नही रोता। जी कडा कर लेता हूँ। परन्तु वह सेगाँव — वहाँके अस्थिपजर देखता हूँ[1]

१ यहाँ गाधीजी का गला भर आया था और वे कुछ देर के लिए रुक गये थे।

तो मुझे आपका साहित्य निकम्मा लगता है। आनन्दशंकरभाईसे मैने सो पुस्तके मॉगी। उन्होने मेहनत करके मुझे भेजी भी, परन्तु मै इन पुस्तकोका क्या करूँ? वहाँ किस तरह ले जाऊँ?

वहाकी स्त्रियोको देखता हूँ, तो ऐसा लगता है कि इन स्त्रियोका अहमदाबादकी स्त्रियोके साथ क्या सम्बन्ध है। वे स्त्रियाँ साहित्यको नही जानती, रामधुन गवाऊँ तो गा नही सकती? वे सॉप-बिच्छूकी परवाह किये बिना, बरसात, ठड या धूपका खयाल किये बिना, मेरे लिए पानी लाती है, घास काट लाती है, ईधन ला देती है, और मै उन्हे पॉच पैसे दे देता हू, तो वे मुझे अन्नदाता समझती है। वहा उन्हे पॉच पैसे देनेवाले अम्बालालभाई नही है। यह भारत अहमदाबादमे नही, सात लाख गावोमे है। उन्हे आप क्या देगे? उनमे से पॉच फीसदी ही लिख-पढ सकते है। मुश्किलसे सौ-दो सौ शब्दोकी उनके पास पूजी है। मै जानता हूँ कि उनके पास क्या ले जाना चाहिए। किन्तु मै आपसे कहकर क्या करूँ। कहकर बताने का मेरा विषय नही, जो कहकर बताऊँ। कलम तो मैने मजबूरन पकडी है। उसे लाचारीमे चलाता हूँ। आज बोल रहा हूँ, सो भी परिस्थितिवश। मै बरसोतक नही बोला। मित्रोने मुझे "डस" [मूर्ख] समझा। छोटी-सी मडलीमे भी मै नही बोल सका था। अदालतमे गया तो मुझे यह भी पता नही था कि "माई लॉड" कहूँ या क्या कहूँ। मुझे बोलना नही आता था। बैरिस्टर बन गया किन्तु देहाती। इसलिए बोलना छोड दिया। मैने यह सूत्र पकड लिया कि जितना हो सके उतना करूँ। मै जानता हूँ कि स्वराज्यकी कुजी मजदूरोके पास भी नही है। स्वराज्यकी कुजी तो देहातमे है। गॉव भी मै ढूढने नही गया। सत्याग्रह भी मै ढूढने नही गया था। इन गॉवोकी कई स्त्रियाँ आकर मुझे जबरन वरती है। किन्तु मैं उन्हे वरूँ तो मेरा एक-पत्नीव्रत जाता है। इसलिए मैने उन्हे माताएँ बनाया है। मै उन्हे माताके रूपमे ही देखता हूँ और पूजता हूँ। इस माताके मन्दिरमे मै आपको भी न्योता देता हूँ।

केशवलाल ध्रुवकी ओर देखकर

केशवलालभाई, मै आपको भी न्योता देता हूँ।

केशवलाल तो साथमें उतनी आयु भी दीजिए।

यह तो तब जब मै भी लम्बी आयु तक जिऊँ। हमारी आयुमे बहुत अन्तर कहाँ है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-११-१९३६, और **हरिजन**, १४-११-१९३६

५२२. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

अहमदाबाद
२ नवम्बर, १९३६

चि० मामा,

जिन हरिजन भाइयोको मेरे न आनेसे निराशा हुई हो, उन्हे मेरा धर्मसकट समझा देना। मेरा मन सेगाँवमे ही है। यहाँ तो मजबूरीमे ही आया हूँ। यहाँका काम निबटा कि तुरन्त सेगाँवकी ओर रवाना हो जानेवाला हूँ। कोई और अवसर भगवान देगे तो अवश्य गोधरा आने का प्रयत्न करूँगा।

मन्दिरके निमित्त जो पैसा हरिजन भाइयोने इकट्ठा किया है, उसे बचाकर रखने मे कोई दोष नही है। हाँ, पैसा अच्छी जगह रहना चाहिए। उसका महाजनी ब्याज मिलना चाहिए और उसे मूल पूजीमे जुडते रहना चाहिए। मन्दिरके बारेमे मेरी सादीसे-सादी कल्पना यह है कि कोई शुद्ध हृदयका पुजारी मिल जाये और जिस स्थानपर वह प्राथना कराये, वही मन्दिर है। इस कल्पनामे जितने चाहो उतने रग भरे जा सकते है। मन्दिरकी इमारत बनानेमे उतावली करके पैसा खर्च नही करना चाहिए। यदि पैसे हो तो मै ऐसा मन्दिर बनवाने मे पैसे अवश्य लगाऊँ जिसे ठाकुरद्वारे, पाठशाला, महाजनकी बैठक और धमशालाके रूपमे काममे लाया जा सके। बाकी हम यह तो समझते ही है कि हम सब अपने-अपने हृदयमे मन्दिर लिये घूमते है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३७) से।

५२३ भाषण : बारहवीं गुजराती साहित्य परिषद्की समापन-बैठकमें[1]

[अहमदाबाद]
२ नवम्बर, १९३६

सवप्रथम तो मुझे आप सबका आभार मानना चाहिए। सामान्यत सभापति आभार मानता ही है, किन्तु मै रूढिका पालन करनेके लिए आभार नही मानता। मै तो आपके प्रेमके कारण यहाँ आया हूँ। मै उतना समय भी आपको नही दे सका जितना मुझे देना चाहिए। मैने तो निरर्थक, बिना सोचे-विचारे अलिखित

१ इस भाषणका महादेव देसाई द्वारा तैयार किया गया सक्षिप्त सार २१ ११ १९३६ के **हरिजन**में भी प्रकाशित हुआ था।

भाषण[१] दिया, इसलिए मुझे आपसे क्षमा मागनी चाहिए। आपने मुझे निबाह लिया, इसके लिए मै आपका हृदयसे आभार मानता हूँ।

ऐसी बात नही कि मुझे सुन्दर निबन्ध पढना अच्छा न लगता हो। ऐसी अनेक वस्तुएँ है जिनका रस लेने की इच्छा मेरे मनमे रही है किन्तु जिसे मै तृप्त नही कर पाता। उनमे से कुछ रस सूख गये है और जो बाकी बच गये है, वे अवसर मिलते ही तबतक अपना सिर उठाते ही रहेगे जबतक मुझे "पर" के दर्शन नही हो जाते। आनन्दशकरभाईने मुझसे कहा कि यहाँ कवि-सम्मेलन हुआ था, जिसमे नवयुवकोने भी खुलकर भाग लिया था। इन्दोरके पुरातत्त्वके विषयमे जो भाषण यहाँ हुआ उसमे जाने की भी मेरी इच्छा थी। किन्तु न तो मैने वह भाषण सुना और न मै उस कवि-सम्मेलनमे गया। मेरी इन सभी त्रुटियोको आपने निबाह लिया, यदि यह आपकी उदारता नही तो और क्या है?

पुरस्कारोके लिए दिये गये दानके बारेमे सुनकर मुझे स्कॉटलैडको विशाल पुस्तकालय भेट देनेवाले कार्नेगीकी याद आई। स्कॉटलेडके प्रोफेसरोने उनसे कहा, "यदि दान देना है तो आप पुस्तकालयका आग्रह क्यो करते है? आपको अपने व्यापारके बारेमे जानकारी हो सकती है, इस मामलेमे आप क्या जाने?" मै भी अपने दानवीरोसे कहता हूँ कि यदि आपको ऐसा लगे कि आपके पैसोका उचित उपयोग होगा तो आप हमे बिना शर्त दान दे।

उपन्यासोकी तो आजकल बाढ आई हुई है। इन्हे पढना भी एक मुसीबत हो गई है। कुकुरमुत्तेकी तरह वे बाहर निकलते ही आते है। यदि आप यह जानना चाहे कि उपन्यास कैसे लिखा जाता है तो मै आपको बहुत-कुछ बता सकता हूँ। किन्तु सभ्य स्त्री-पुरुषोके सामने इसका चित्रण नही किया जा सकता। कल्पनाका घोडा तो किसी भी दिशामे दौडाया जा सकता है, क्योकि वह बेलगाम है। किन्तु हम इन उपन्यासोके बिना अपना काम चला सकते हैं। गुजराती भाषा उपन्यासोके बिना विधवा नही हो जायेगी। आज तो गुजराती भाषा विधवा ही है। जब मै दक्षिण आफ्रिका गया था तो अपने साथ कुछ गुजराती पुस्तके ले गया था, जिनमे टेलरका गुजराती व्याकरण भी था। वह मुझे बहुत ही अच्छा लगा था। इस बार भी परिषदके पहले दिन कलकी रातको मैने उक्त व्याकरण पढने को निकाला था। किन्तु पढने का समय कहाँ था? इस व्याकरणका उपसहार मुझे याद रह गया है। इसमे टेलर पूछता है "गुजरातीको अपूर्ण किसने कहा? सस्कृतकी सुन्दर कन्या यह गुजराती अपूर्ण कैसे हो सकती है?" और अन्तमे उसने कहा "यथा भाषक तथा भाषा।" यह गुजराती भाषाकी दरिद्रता नही बल्कि उक्त भाषा बोलनेवालो का दारिद्र्य गुजरातीमे दिखाई देता है। उस दारिद्र्यको उपन्यासोसे नही धोया जा सकता। 'नन्दबत्रीशी'-जैसी कुछ पुस्तके बढ जाने से हमारी भाषाका उद्धार थोड ही होनेवाला है?

१. देखिए "भाषण गुजराती साहित्य परिषद्में", ३१-१०-१९३६।

मै तो गाँवमे पडा हुआ हूँ, इसलिए गाँववालो की दृष्टिसे मै आपको यह बताता हूँ कि मुझे किन पुस्तकोकी भूख है। मैने मैट्रिकमे खगोल-विज्ञानकी पुस्तक पढी, किन्तु किसीने मुझसे आकाशकी ओर देखने को नही कहा। काकासाहब ठहरे रसिक व्यक्ति, वे तो यरवडा-जेलमे रोज आकाशके तारोको देखा करते थे। मुझे लगा, ये भला रोज क्या देखते होगे? किन्तु उनके जेलसे छूटने के बाद मैने भी पुस्तके मँगवाईं। मै गुजराती पुस्तक चाहता था और एक बेकार-सी पुस्तक मुझे मिली भी। किन्तु उससे मेरी भूख कैसे मिट सकती थी? क्या हम अपने गाँववालो को खगोलकी ऐसी पुस्तक नही दे सकते जिसे वे समझ सके?

किन्तु खगोलकी बात जाने दे, उन लोगोके लायक भूगोलकी पुस्तके भी कहाँ है? सच बात तो यह है कि हमने गाँवोकी ओर ध्यान ही नही दिया। हालाँकि हम अपने अन्न-वस्त्रके लिए गाँवोपर निर्भर रहते है, किन्तु उनसे इस तरह व्यवहार करते है जैसे हम उनके अन्नदाता हो। हमने उनकी आवश्यकताओके बारेमे कभी विचार ही नही किया। क्या कोई ऐसा दरिद्र देश है जो अपनी भाषाको छोडकर परभाषाके द्वारा अपना सारा काम-काज चलाता हो? इसीलिए हमारा देश दरिद्र और हमारी भाषा विधवा बनी रही। फ्रेंच या जर्मन भाषाकी ऐसी एक भी पुस्तक नही होगी जिसका अनुवाद उसके प्रकाशित होते ही अंग्रेजीमे न हो गया हो। बालकोके लिए उत्तम पुस्तकोके सार-सक्षेप बडी तादादमे तैयार होते है। गुजरातीमे इस तरहका क्या है? यदि ऐसा हो तो मै उसकी बलैयाँ लू।

मै इस सम्बन्धमे एक प्रस्ताव लाना चाहता था, किन्तु अब तो मै इस सुझावसे ही सन्तोष कर लूगा। मै अपने लेखकोसे कहता हूँ कि शहरके लोगोके लिए लिखने के बजाय अपनी मूक जनताके लिए लिखो। इस मूक जनताका स्वयनियुक्त प्रतिनिधि मै हूँ। उसकी ओरसे मै आपसे कहता हूँ कि इस क्षेत्रमे कूद पडिए। आप मनोरजक कहानियाँ लिखते होगे किन्तु उससे उसकी बुद्धिपर प्रभाव नही पडेगा। हमारे यहाँ एक ग्राम-सेवक विद्यालय है, जिसके अध्यापकसे मैने कहा कि उद्योग सिखाने से पहले उसमे काम आनेवाले औजारोका अध्ययन करो, बसूलेकी बनावटको समझो। यदि आप अपनी बुद्धिको विकसित करना चाहते हो तो ग्रामीण साधनोका अध्ययन करे, उनकी खूबियो और खामियोको समझे, और फिर उनके बारेमे लिखे। जिन लोगोका दिमाग ताजा है उन्हे गाँवोमे नयी-नयी चीजे देखने और जानने को मिलेगी। ऐसी बात नही है कि गाँवोमे जाने से आपकी बुद्धिका विकास रुक जायेगा। जो लोग ऐसा कहते है, उनसे मै कहूँगा कि वे अवरुद्ध मस्तिष्क लेकर ही वहाँ गये होगे। असलमे, बुद्धिके विकासका क्षेत्र गाँव ही है, न कि शहर।

कल मैने विषय-समितिके सामने एक बात कही थी। उसके बारेमे मै यहाँ भी कुछ कहूँगा। मुझे ज्योति सघकी ओरसे श्रीमती लीलावती देसाईका पत्र मिला था। हालाँकि उसकी भाषा मुझे नही रुची लेकिन उसका सार ठीक ही था। उक्त पत्रका भावार्थ यह था कि स्त्रियोके बारेमे जो-कुछ लिखा जाता है वह उन्हे चुभता है। आधुनिक साहित्यमे स्त्रियोका जो वर्णन मिलता है, वह विकृत है। ये बहने चिढकर

पूछती है कि क्या ईश्वरने हमे इसलिए गढा है कि पुरुष हमारे शरीरका वर्णन करे? जब हम मर जायेगी तो क्या आप हमारे शरीरमे मसाला लगाकर रखेगे? यह मान बैठने की जरूरत नही कि हम खाना बनाने और बरतन मॉजने के लिए सिरजी गई है। मुझे एक व्यक्तिने 'मनुस्मृति' मे से छाट-छॉटकर कुछ ककर भेजे है। स्त्रियोके बारेमे बुरेसे-बुरा जो कहा जा सकता है वह सब उन्होने 'मनुस्मृति' मे से खोज निकाला है। बेचारी कुछ स्त्रियाँ स्वय भी कहती है कि हम अबला है, गँवार है, ढोर है, तो क्या इस कारण यह वर्णन हर स्त्रीपर लागू हो सकता है? क्या ऐसा नही हो सकता कि 'मनुस्मृति' मे ऐसे गन्दे श्लोक किसी अन्य व्यक्ति द्वारा मिला दिये गये हो?

अब ये बहने पूछती है कि हम जैसी है, हमारा चित्रण वैसा ही क्यो नही किया जाता? हम न तो रम्भाएँ है, न अप्सराएँ और न गुलाम दासियाँ ही। हम भी आपकी तरह स्वतन्त्र इन्सान है। आप हमारा चित्रण पुतलियोकी तरह क्यो करते है? स्त्रियोके बारेमे बोलते हुए आपको अपनी माताका खयाल क्यो नही आता? एक समय ऐसा था कि मेरे पास झुण्ड-की-झुण्ड बहने रहती थी। दक्षिण आफ्रिकामे मै कोई साठ कुटुम्बोकी स्त्रियोका भाई और पिता बन बैठा था। उनमे रम्भाएँ और कुरूप स्त्रियाँ भी थी। हालाँकि वे स्त्रियाँ अनपढ थी किन्तु उनमे जो बहादुरी की भावना थी, उसे मैंने जगाया और वे पुरुषोकी तरह वीरतापूवक जेल गई।

मै आपसे कहता हूँ कि आप अपना दृष्टिकोण बदले। मुझे बताया गया है कि आजकलके साहित्यमे तो स्त्रियोकी स्तुति भरी हुई है। मुझे ऐसी झूठी स्तुति, उनके नेत्र, नाक, कान और अन्य अगोका वणन नही चाहिए। क्या आप अपनी माताके अगोका कभी वर्णन करते है? मै तो आपसे कहता हूँ कि जब आप स्त्रीके बारेमे लिखने के लिए कलम उठाये तो अपनी जननीको अपनी नजरके सामने रखे। यदि आप इस बातका विचार करते हुए लिखेगे तो आपकी लेखनीसे जो साहित्य निकलेगा वह, जैसे सुन्दर आकाशसे वर्षाकी बूदे झरती है, उसी तरह निसृत होगा और जैसे वर्षाकी बूँदे धरतीका पोषण करती है, उसी प्रकार वह भी स्त्री-रूपी धरतीका माताकी तरह पोषण करेगा। किन्तु आज तो आप बेचारी स्त्रीको शान्ति और प्रोत्साहन देने के बजाय उसे कुढाते है। उस बेचारीको लगता है कि मेरा जैसा वणन किया जाता है वैसी तो मै नही हूँ, वैसी मै कैसे बनू? क्या इस तरहका वर्णन साहित्यका अपरिहार्य अग है? क्या हमे 'उपनिषद्' 'कुरान', 'बाइबिल' मे कोई अश्लील बात पढने को मिलती है? क्या हमे तुलसीदासके ग्रथोमे ऐसी अश्लीलता नजर आती है? क्या ये महान् ग्रथ साहित्य नही है? क्या 'बाइबिल' साहित्य नही है? कहा जाता है कि अग्रेजी भाषा 'बाइबिल' के पौन भाग और शेक्सपियरके चौथाई भागसे बनी है। इनके बिना अग्रेजी भाषा कहा होगी, 'कुरान' के बिना अरबी कहाँ होगी और तुलसीके बिना हिन्दी कहाँ होगी? आप ऐसे साहित्यका सृजन क्यो नही करते? मैंने जो यह कहा है उसपर आप विचार करे, अभी विचार करे, और यदि वह आपको निरर्थक जान पडे तो उसे अस्वीकार कर दे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-१२-१९३६

५२४ प्रश्नोत्तर[1]

साबरमती
[२ नवम्बर, १९३६][2]

प्र० यह अस्पृश्यता दूर करनेका काम तो बहुत कठिन लगता है। इसे कैसे हल करें?

उ० चुपचाप और धीरजके साथ काम करते जाइए। पर अच्छा तो यह होगा कि मै आपको सुना दूं कि मै सेगाँवमे किस तरह काम कर रहा हूँ। मै उन्हे कभी उपदेश नही देता। बस, परिणामका खयाल किये बिना अपना काम किये जाता हूँ। सिर्फ एक शत है। अपने जीवनमे किसी भी रूपमे अस्पृश्यताको जरा भी स्थान न दीजिए। मैने तो यह निश्चय कर लिया है कि जितने भी हरिजनोको अपने आसपास एकत्र कर सकूँ, करूँ। वे सेवक बनकर आते है पर वे फौरन यह जान लेते है कि वे हमारे भाई है। हरिजनोके बीच भी हम किसी भेदभावको बरदाश्त नही करते। हालाँकि इस मूक सेवाका क्या परिणाम हो रहा है, इसका कोई ठोस प्रमाण मै आपको नही दे सकता, फिर भी मै इतना तो जरूर कह सकता हूँ कि तमाम हरिजनो और कट्टर हिन्दुओमे कोई अच्छा परिवतन होता साफ दिखाई दे रहा है।

प्र० हरिजन जहाँ अपना गाँव छोड़ना चाहते है, वहाँ भी गाँव छोडना उनके लिए कोई आसान काम नहीं है। कवीठाकी मिसाल तो सामने है ही। उन्हे काम कहाँसे मिलेगा?

उ० मै तो अब भी वही सलाह देता हूँ। उनसे यह कहते हुए शम आनी चाहिए कि आप इसी गाँवमे रहे और इसी तरह अत्याचार सहते रहे। उनके लिए काम ढूढना हमारे लिए असम्भव तो नही होना चाहिए। अपना गाँव छोडकर जानेवालो की सख्या बहुत बडी नही होगी।

प्र० पर मेहतरोकी हालत बहुत-सी जगहोमें बडी दयनीय है। नगरपालिकाओसे वे अपने प्राथमिक अधिकार कैसे प्राप्त करें?

उ० उन्हे सबसे पहले यह जान लेना चाहिए कि वे भी चाहे जैसी परिस्थितिमे सेवा करनेके लिए कोई बँधे हुए नही है। नगरपालिकाए अगर उनकी बात नही सुनती, तो वे काम छोड सकते है लेकिन दरअसल हमे उनके बीच बसकर उन्हे उनके हितकी बाते समझानी चाहिए, आखे मूँदकर उन्हे हडताल कर देनेके लिए नही भडकाना चाहिए। उन्हे यह मालूम हो जाना चाहिए कि उनके भी मित्र और भला चाहनेवाले कोई है। जहाँ दूसरोकी तरह उन्हे भी हडताल करनेका हक

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। ये प्रश्न हरिजन आश्रम, साबरमतीमें पिंजाई और कताई सीखने के लिए गुजरात तथा काठियावाड़ से आये कुछ हरिजन सेवकों ने पूछे थे।

२ तारीख गांधी १९१५-४८ से ली गई है।

हासिल है, वही उन्हे उसकी मर्यादाएँ भी जान लेनी चाहिए। उन्हे इस बातका एहसास करा देना चाहिए कि समाजकी सेवाके दूसरे तमाम कामोकी तरह उनका काम भी प्रतिष्ठायुक्त है। मुझे तो इसमे जरा भी सन्देह नही कि समाजके वे ऐसे सेवक है जिनकी सबसे अधिक उपेक्षा होती रही है। हम उनकी जितनी भी सहायता कर सके, उसके वे पात्र है।

प्र० हमारे आश्रमो और अन्य संस्थाओकी शोचनीय आर्थिक अवस्थाके विषयमे आपकी क्या राय है?

उ० हमारी आर्थिक नही, नैतिक अवस्था शोचनीय है। अभी हालमे नैतिक पतनकी जो घटनाएँ हुई है, उन्हे तो आप जानते ही है। समाजका सबसे बडा आधार तो पवित्रता है। ऐसा कोई आन्दोलन या प्रवृत्ति धनाभावमे बन्द नही हो सकती जो अपने कार्यकर्त्ताओकी चारित्रिक शुद्धताके मजबूत पायेपर खडी हो। फिर, हम गुजरातियोको यह भी समझ लेना है कि हमे हमेशा अपने यहाके धनवान लोगो पर ही निर्भर नही रहना चाहिए। हमें उनसे कम पैसेवालो के पास भी पहुचना है। इतने सारे भिखारियो, मन्दिरो आदिका गुजारा मध्यवित्त, बल्कि गरीब लोगोके ही दान-दाक्षिण्यसे होता है, फिर थोडे-से अच्छे कार्यकर्त्ताओके निर्वाहके लिए वे सहायता क्यो नही देगे? हमे दरवाजें-दरवाजे जाकर अपनी झोली फैलानी चाहिए। लोग अन्न दे तो वही ले लेना चाहिए, ताबेके सिक्के दे तो उन्हीको स्वीकार कर लेना चाहिए। लोग जैसा बिहार ओर महाराष्ट्रमे कर रहे है, आप भी वैसा ही करे। महाराष्ट्रमे पैसा-फड और मुष्टि-फड चलता है। यह सवर्ण हिन्दुओके बीच प्रचारका सबसे अच्छा तरीका होगा। लेकिन याद रखिए कि सब-कुछ अपने उद्देश्यके प्रति आपकी अखण्ड श्रद्धा, अपने कर्त्तव्यके प्रति परमनिष्ठा और आपके चरित्रकी शुद्धतापर निर्भर होगा। जबतक लोगोको हमारी निःस्वार्थताका पूरा भरोसा नही होगा तबतक ऐसे कार्योके लिए वे कुछ देनेवाले नही है।

प्र० जो हरिजन ईसाई हो गये है, लेकिन तब भी जिनकी अवस्था हरिजनोसे बेहतर नहीं है उनके बारेमें आपका क्या कहना है?

उ० अस्पृश्यताके मिटते ही सब-कुछ अपने-आप ठीक हो जायेगा। जब अस्पृश्यता नही रहेगी तब फिर वे अपनेको हिन्दूके अतिरिक्त कुछ कहे, इसका कोई कारण ही नही रह जायेगा। यह बात मै उनके बारेमे कह रहा हूँ जो नाम-मात्रको ही ईसाई बने है। यदि हम अपने दोष दूर कर ले तो फिर हमे ऐसी कोई चिन्ता करने की जरूरत ही नही रह जायेगी कि हरिजन अपना धर्म इस तरह बदल लेगे, मानो कोई अपना कपडा बदल रहा हो।

प्र० यदि अस्पृश्यता-निवारणके काममें सवर्ण हिन्दुओका सहयोग प्राप्त करना असम्भव है तो क्या ग्रामोद्योगके कार्यको हाथमे लेना ज्यादा अच्छा नहीं रहेगा?

उ० यह तो एक भ्रम ही है। सच मानिए कि जो लोग इस बहाने हरिजन-कार्य छोड देगे वे ग्रामोद्योगके लिए उससे भी कम ही काम कर पायेगे। आप गाँवमे बसकर हरिजनोकी बात न सोचे, यह असम्भव है, क्योकि वे समाजके असली आधार है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-११-१९३६

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली गाधी-साहित्य और गाधीजी से सम्बन्धित कागज-पत्रोका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती सगहालय, अहमदाबाद पुस्तकालय तथा सग्रहालय, जिसमे गाधीजी के दक्षिण आफ्रिकी तथा भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे है।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट' पटनासे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'गुजराती' बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजन' (१९३३-५६) रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक सघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित अग्रेजी साप्ताहिक, जिसका प्रथम अक गाधीजी की देखरेखमे १ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६) चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक सघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक, जो १२ माच, १९३३ को पहली बार पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजन-सेवक' (१९३३-५६) वियोगी हरि द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक सघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक, जो २३ फरवरी, १९३३ को पहली बार दिल्लीसे प्रकाशित हुआ था।

'इसिडेन्ट्स ऑफ गाधीजीज लाइफ' (अग्रेजी) चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा सम्पादित, वोरा ऐड क० पब्लिशस लि०, बम्बई, १९४९।

'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अग्रेजी) जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पादित, एशिया पब्लिशिग हाउस, बम्बई, १९५८।

'महात्मा लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गाधी', खण्ड–४ (अग्रेजी) डी० जी० तेन्दुलकर, विट्ठलभाई के० झवेरी एव डी० जी० तेन्दुलकर, बम्बई, १९५२।

'माई डियर चाइल्ड' (अग्रेजी) एलिस एम० बान्ज द्वारा सम्पादित, नवजीवन पब्लिशिग हाउस, अहमदाबाद, १९५६।

'गीतापदार्थकोष' (गुजराती) मोहनदास करमचन्द गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९३६।

'बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ६ गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'गांधीजी और राजस्थान' शोभनलाल गुप्ता द्वारा सम्पादित, राजस्थान राज्य गांधी स्मारक निधि, भीलवाडा, राजस्थान, १९६९।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' काका कालेलकर द्वारा सम्पादित, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'सम्पादकके पच्चीस वर्ष' देवीदत्त शुक्ल, कल्याण मन्दिर, इलाहाबाद, १९५६।

प्यारेलाल पेपर्स श्री प्यारेलाल, नई दिल्लीके पास सुरक्षित कागजात।

महादेवभाईकी हस्तलिखित डायरी स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ जून, १९३६ — २ नवम्बर, १९३६)

२ जून, १९३६ बगलोर। हरिलाल गाधीके धर्मान्तरणके सम्बन्धमे गाधीजी ने मुसलमान मित्रोके नाम अपील जारी की।

९ जून मसूरीमे अब्बास तैयवजीका निधन।

१० जून आदि-कर्नाटक सघके शिष्टमण्डलको गाधीजी ने मुलाकात दी। सायकाल कगेरीमे हरिजन-सेवकोके सम्मेलनमे बोले।

११ जून एम० वी० जम्बुनाथन्से मुलाकात।

१२ जून कगेरीमे हरिजन-सेवकोके सम्मेलनमे बोले। हिन्दी प्रचार सभाकी अध्यक्षता की। बगलोरमे विज्ञान-सस्थान देखने गये। बगलोरसे प्रस्थान।

१३ जून वर्धा जाते हुए मद्रास पहुँचे। निर्माणाधीन हिन्दी प्रचार सभा-भवन देखने गये।

१४ जून प्रातःकाल वर्धा पहुँचे।

१६ जून सेगाव पहुँचे।

२७ जून वर्धामे काग्रेस काय-समितिकी बैठक। गाधीजी वर्धा पहुँचे, लेकिन बैठकमे शामिल नही हुए।

२९-३० जून वर्धामे जवाहरलाल नेहरूसे चर्चा।

३ जून, से ४ जुलाई वर्धामे।

५ जुलाई वर्धामे भारतीय साहित्य परिषद्की अध्यक्षता की। सायकाल सेगाँव वापस।

१५ जुलाई रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी अध्यक्षतामे कलकत्तामे सार्वजनिक सभा, जिसमे साम्प्रदायिक निणयमे सशोधनका सुझाव रखा गया।

१७ जुलाई गाधीजी ने खादी-सेवकोको सन्देश दिया।

१९ जुलाई ग्राम-सेवक प्रशिक्षण विद्यालयके विद्यार्थियोसे मिले।

३० जुलाई हरिजन सेवक सघके निमित्त कोष-सग्रहके लिए जारी की गई अपीलका अनुमोदन किया।

२ अगस्त अब्दुल गफ्फार खाँ रिहा।

४ अगस्त धर्मानन्द कोसम्बी तथा अब्दुल गफ्फार खाँ गाधीजी से मिले।

११ अगस्त च० राजगोपालाचारीने काग्रेससे त्यागपत्र दिया।

१६ अगस्त च० राजगोपालाचारी और जवाहरलाल नेहरू गाधीजी से मिले।

२७ अगस्त गाधीजी अ० भा० च० सघकी बैठकमे शामिल हुए। जवाहरलाल नेहरूसे बातचीत की।

२८ अगस्त अ० भा० च० सघकी बैठकमे शामिल हुए। च० राजगोपालाचारीसे बातचीत की।

३० अगस्त जयप्रकाश नारायण गांधीजी से मिले। हरिलालने, जो मुसलमान बनने के बाद अब्दुल्ला कहलाते थे, इस्लामका प्रचार किया।

३१ अगस्त गांधीजी मलेरिया-ग्रस्त।

२ सितम्बर विश्व शान्ति सम्मेलनको सन्देश भेजा।

३-११ सितम्बर वर्धा अस्पतालमें।

१२ सितम्बर सेगांव वापस।

१७ सितम्बर नशेमें होनेके कारण मद्रासमें हरिलाल पर जुर्माना।

२१ सितम्बर जोहरा अन्सारीके विवाहपर गांधीजी ने आशीर्वाद भेजा।

२४ सितम्बर 'गीतापदार्थकोष' की प्रस्तावना लिखी।

३ अक्तूबर जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और राजेन्द्रप्रसाद गांधीजी के पास ठहरने आये।

७ अक्तूबर अ० भा० ग्रा० संघकी बैठक।

१२ अक्तूबर गांधीजी ने वर्धा-स्थित मगनवाडी विद्यालयके छात्रों और शिक्षकोंसे बातचीत की।

२३ अक्तूबर सेगाँवसे बनारसको रवाना।

२४ अक्तूबर बनारस पहुँचे।

२५ अक्तूबर बनारसमें। भारत माता मन्दिरका उद्घाटन-समारोह सम्पन्न किया।
मैथिलीशरण गुप्तकी स्वर्ण-जयन्तीपर उन्हें अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंट किया।
कला-भवन और नागरी प्रचारिणी सभा देखने गये।

२७ अक्तूबर दिल्ली पहुँचे।
बेगम अन्सारी तथा ब्रजकृष्ण चाँदीवालाकी रुग्ण माँ से मिले।
अहमदाबादको प्रस्थान।

२८ अक्तूबर अहमदाबाद पहुँचे।

२९ अक्तूबर राजकोट पहुँचे। चचेरे भाई खुशालचन्द गांधीसे मिले।
हरिजन-सेवकोंकी सभामें बोले।

३० अक्तूबर नडियादमें। विट्ठल कन्या विद्यालय छात्रावासके उद्घाटनके अवसरपर बोले।
अहमदाबाद पहुँचे। नगरपालिका कन्या विद्यालयके भवनका उद्घाटन किया।

३१ अक्तूबर मजदूरोंकी सभामें बोले। कला-प्रदर्शनी देखने गये।
बारहवीं गुजराती साहित्य परिषद्की अध्यक्षता की।

१ नवम्बर गुजरात विद्यापीठके दीक्षान्त-समारोहकी अध्यक्षता की।
गुजराती साहित्य परिषद्की बैठकमें शामिल हुए।

२ नवम्बर बारहवीं गुजराती साहित्य परिषद्के समापन अधिवेशनमें बोले।
सेगाँव जाते हुए बड़ौदाके लिए प्रस्थान।
बड़ौदामें तैयबजी-परिवारसे मिले।

शीर्षक-साकेतिका

विविध

साकेतिका

अ

आ

इ

ई

उ

ख

ग

झ

ट

ठ

ड

त

प

फ

ब

भ

म

ल

व

श

स

ह